

ममता कालिया के कहानी साहित्य में यथार्थबोध

A Thesis

Submitted in partial fulfilment of the requirements

For the award of the degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

IN

HINDI

By

MAMTA DEVI

42200220

Under the Supervision of

Dr. BRIJENDRA KUMAR AGNIHOTRI

26912



L OVELY
P ROFESSIONAL
U NIVERSITY

Transforming Education Transforming India

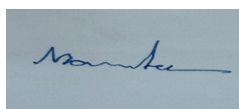
LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

PUNJAB

(2026)

DECLARATION

I, hereby declared that the presented work in the thesis entitled “**ममता कालिया के कहानी साहित्य में यथार्थबोध**” in fulfilment of degree of **Doctor of Philosophy (Ph. D.)** is outcome of research work carried out by me under the supervision of **Dr Brijendra Kumar Agnihotri** working as **Associate Professor** in the **School of Social Science & Languages** of Lovely Professional University, Punjab, India. In keeping with general practice of reporting scientific observations, due acknowledgements have been made whenever work described here has been based on findings of other investigator. This work has not been submitted in part or full to any other University or Institute for the award of any degree.



(Signature of Scholar)

Name of the scholar: **Mamta Devi**

Registration No.: **42200220**

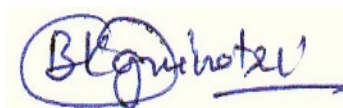
Department/school: **School of Social Sciences & Languages**

Lovely Professional University,

Punjab, India

CERTIFICATE

This is to certify that the work reported in the Ph. D. thesis entitled “ **ममता कालिया के कहानी साहित्य में यथार्थबोध** ” submitted in fulfillment of the requirement for the award of degree of **Doctor of Philosophy (Ph.D.)** in the **School of Social Sciences & Languages**, is a research work carried out by **Mamta Devi, 42200220** is bonafide record of his/her original work carried out under my supervision and that no part of thesis has been submitted for any other degree, diploma or equivalent course.



(Signature of Supervisor)

Name of supervisor: **Dr Brijendra Kumar Agnihotri**

Designation: **Associate Professor**

Department/school: **School of Social Sciences & Languages**

University: **Lovely Professional University, Punjab, India**

सारांश

यथार्थवाद साहित्य की एक महत्वपूर्व एवं प्रमुख विचारधारा है। साहित्य में मानव जीवन, और समाज के यथार्थ को सूक्ष्म तथा विस्तार से प्रस्तुत करने की क्षमता यथार्थवादी विचारधारा कहलाती है। साहित्य समाज का आईना होता है। समाज में घटित घटनाएं साहित्यकार द्वारा साहित्य का रूप ले लेती हैं। साहित्य उस समय के समाज का चित्र प्रस्तुत करता है जिस समय में उस साहित्य की रचना हुई होती है। समय के अनुसार समाज में परिवर्तन होता है तो साहित्यिक यथार्थ में भी परिवर्तन होता है। क्योंकि समय और समाज के बदलाव के साथ परिस्थितियों, समस्याओं और परिवेश में परिवर्तन होता है। इसी प्रकार समयानुसार कहानी की पृष्ठभूमि में भी अंतर हो जाता है। पहले कहानियां राजा-महाराजाओं के जीवन से प्रेरित होती थी। आज कहानी लेखन का माध्यम आज का समाज है। किन्तु समाज का यथार्थ साहित्य में दर्शाने से पहले साहित्यकार को समाज के यथार्थ का बोध होना और उस यथार्थ को अपनी रचनात्मकता के साथ साहित्य में सावधानीपूर्वक दर्शाने की समझ होनी चाहिए।

साहित्य में अनेक धाराएँ होती हैं। शोध का विषय सुनिश्चित करना एक कसौटी होती है जो सीमित अध्ययन की दृष्टि से स्पष्ट एवं सुनिश्चित हो। इन सब बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए मेरे शोध निर्देशक से विचार-विमर्श के पश्चात उनके मार्गदर्शन में मैंने साहित्यकार ममता कालिया के कहानी साहित्य में यथार्थबोध का अध्ययन करना चुना और यह विषय मेरी रुचि के अनुसार रहा।

एक यथार्थवादी साहित्यकार ही समाज की वास्तविकताओं को अपनी अनुभूतियों के अनुसार साहित्य के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत करता है। समाज की त्रुटियों, कमियों, समस्याओं तथा कुरीतियों का यथार्थ अंकन साहित्य में करना अत्यंत आवश्यक और महत्वपूर्ण होता है। ताकि समाज इन सब के प्रति अवगत एवं जागरूक हो और समाधान की दिशा में अग्रसर हो। ममता कालिया का हिंदी साहित्य के यथार्थवादी साहित्यकारों में विशेष स्थान है। यथार्थ का जीवंत चित्रण इनके लेखन की प्रमुख विशेषता है। ये सामाजिक यथार्थ का बोध रखती हैं और इसका वर्णन अपने साहित्य द्वारा पाठकों के सम्मुख रखने में सक्षम हैं।

ममता कालिया के कहानी साहित्य का अध्ययन एवं मूल्यांकन करने से यह स्पष्ट होता है कि इनके साहित्य में सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक संदर्भों के साथ मानवीय मूल्यों और संबंधों का बोध रखती है जिसका वर्णन इनके साहित्य में स्पष्ट दिखाई देता है। अवश्य ही इस शोध प्रबंध से पाठक अपने परिवेश से अवगत होंगे और सही परिवर्तन की ओर अग्रसर होंगे। एक साहित्यकार के जीवन काल और उसके रचना संसार को समझ पाना और उसे समझ कर साहित्यकार के लेखन कार्य को कितना सही है यह निर्णय या निष्कर्ष दे पाना एक शोधार्थी के लिए कठिन कार्य है।

ममता कालिया के कहानी साहित्य का अध्ययन एवं विश्लेषण करने के बाद यह कह सकते हैं कि इन्होंने भारतीय सामाजिक-जीवन, जन-जीवन की भावनाओं, समस्याओं एवं परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण किया है। विषय के सम्यक विवेचन के लिए विषय को छः अध्यायों में विभक्त किया गया है। इस शोध के प्रथम अध्याय में यथार्थवाद के स्वरूप एवं विकास, यथार्थ और यथार्थवाद का अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूपों को विस्तार पूर्वक प्रस्तुत किया गया है। यथार्थबोध को जानने के लिए यथार्थवाद की मूलभूत परिस्थितियों एवं उद्भव के साथ पश्चिमी और हिंदी साहित्यकारों के यथार्थवादी विचारों का उल्लेख किया गया है। ममता कालिया के यथार्थबोध और व्यक्तित्व को वर्णित किया गया है। इनके जन्म और पारिवारिक पृष्ठभूमि साथ शिक्षा, विवाह, वैचारिक अवधारणा, साहित्य लेखन की प्रेरणा व पारितोषिक विवरण का वर्णन किया गया है। साहित्यक-सृजन के सोपान में इनके कहानी संग्रहों के साथ उपन्यास, संस्मरण, कविता संग्रह, नाटक, अनुवादन एवं संपादन का वर्णन किया गया है।

द्वितीय अध्याय में ममता कालिया के कहानी साहित्य में सामाजिक संदर्भ और यथार्थबोध को चित्रित किया गया है। इसमें सामाजिक संरचना, सामाजिक संदर्भ, पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री जीवन संघर्ष के साथ सामाजिक ढांचे में परिवार और स्त्री की स्थिति, सामाजिक व आर्थिक असमानता का चित्रण किया गया। ममता कालिया की कहानियाँ स्त्री-जीवन और स्त्री-पुरुष संबंधों को प्रमुखता से प्रस्तुत करती हैं। पुरुष: प्रधान समाज में लड़की को पराया धन समझ कर उसके जन्म पर शोक मनाया जाता है और पुत्र के जन्म पर पुत्र को वश वृद्धि का प्रतीक मानकर खुशियाँ मनाई जाती है जिससे समाज में अनेक कुरीतियों और असमानताओं का सामना स्त्री को करना पड़ता है।

समाज में बढ़ते शहरीकरण और आधुनिकता का प्रभाव दर्शाया गया है। आधुनिकता और शहरीकरण ने संयुक्त परिवारों को एकल परिवार में बदल दिया है जिससे सबसे ज्यादा बच्चों और बुजुर्गों का

जीवन प्रभावित हुआ है। ममता कालिया के कहानी साहित्य में वर्णित जीवन की सच्चाई के यथार्थ को आधार बना कर सामाजिक संदर्भ को विश्लेषणात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। इनकी कहानियों का मूल्यांकन करते हुए इनके द्वारा कहानियों में दर्शाई गई समस्या की गहराई और समाधान की सम्भावनाएँ, व्यंग्य, आलोचना का वर्णन संवादों की सम्भाविकता के साथ किया गया है।

लेखिका की कहानियों के आधार पर समाज, धर्म-व्यवस्था, संस्कृति, वर्ण-व्यवस्था, सामाजिक परिवेश तथा ममता कालिया की साहित्यिक भाषा का वर्णन किया गया है। इस अध्याप में समाज के समूह एवं संस्थाओं तथा सामाजिक मानदंड एवं सामाजिक बदलाव का कहानियों के आधार पर विस्तार से वर्णन किया गया है।

शोध प्रबंध के तृतीय अध्याय में ममता कालिया के कहानी साहित्य में वर्णित सांस्कृतिक संदर्भ और यथार्थबोध को चित्रित किया गया है। मानदंड किसी भी संस्था को अनुसासित और नियंत्रित करने के लिए आवश्यक होते हैं। परिवार को सुचारु रूप से चलाने के लिए प्रत्येक परिवार के अपने कुछ मानदंड होते हैं। ये कभी संस्कृति पर, तो कभी रीति-रिवाजों के तहत निर्धारित होते हैं। कई बार यहीं रीतियां विकृत होकर कुरीतियों का रूप ले लेती हैं। ममता कालिया के कहानी साहित्य में वर्णित सामाजिक और पारिवारिक मानदंडों का वर्णन कहानियों का आधार पर किया गया है। लेखिका ने समाज की समस्याओं के साथ समय के अनुसार समाज में आए सामाजिक, आर्थिक, स्त्री-पुरुष संबंधों के बदलाव को कहानियों में प्रस्तुत किया है, इसका कहानियों के आधार पर वर्णन किया गया है।

प्रत्येक संस्कृति के लोगों के लिए उनकी संस्कृति मूल्यवान और आवश्यक व मार्गदर्शक भी होती है। संस्कृति वहां के लोगों, धर्म, संस्कारों, मान्यताओं परम्पराओं, रीति-रिवाजों तथा भाषा आदि से निर्मित होती है। संस्कृति इन्हीं मानदंडों पर आधारित होती है। ममता कालिया के लेखन में भारतीय समाज और संस्कृति के अनेक पहलू अत्यंत संवेदनशीलता और गहराई के साथ उजागर होते हैं। इनकी कहानियां मध्यम वर्गीय जीवन की जटिलताओं, स्त्री की अस्मिता, पारिवारिक संरचनाओं, सामाजिक मान्यताओं और आधुनिकता से टकराते मूल्यों का चित्रण करती हैं। लेखिका की कहानियों के आधार पर भारतीय समाज की सांस्कृतिक परंपरा आधुनिकता के संघर्ष का वर्णन किया गया है। किस प्रकार समाज परंपरागत मूल्यों और आधुनिकता के बीच संघर्षरत है। संस्कृति के नाम परंपरा,

मर्यादा, कर्तव्य और संस्कारों के बीच फंसी स्त्री- जीवन की वास्तविकता का वर्णन लेखिका की कहानियों के आधार पर किया गया है।

भारतीय समाज की भाषाई विविधता का समावेश लेखिका की लेखन कला को प्रामाणिकता प्रदान करता है। ममता कालिया की रचनाओं में इनका भाषा-ज्ञान, विभिन्न भाषा शैलियों का प्रयोग, भाषा में सरलता, सुंदरता, वास्तविकता तथा रोचकता का सुंदर समन्वय स्पष्ट दिखाई देता है, इसका वर्णन भी इस अध्याय में किया गया है। सांस्कृतिक प्रतीकों और मान्यताओं के बीच मध्यवर्ग के जीवन संघर्ष, सामाजिक रुढ़ियों और आधुनिकता के बीच के संघर्षों का वर्णन कहानियों के आधार पर किया गया है। लेखिका ने अपने कहानी साहित्य में भारतीय परिवारों और विवाह संस्कार का विस्तार से अभिव्यक्तिकरण किया है। आधुनिक युग में शिक्षा, नौकरी और संबंधों के बढ़ते तनाव के कारण संयुक्त परिवारों का विघटन और एकल परिवारों की समस्याओं को दिखाया गया है।

सांस्कृतिक मूल्य शिक्षा और वैश्वीकरण के प्रभाव से आए बदलाव के कारण पुराने रीति-रिवाजों और आधुनिक सोच के संघर्ष को लेखिका की कहानियों के आधार पर वर्णित किया गया है। सांस्कृतिक पहचान के साथ परंपरागत मूल्य एवं मान्यताओं का भारतीय समाज में विशेष महत्त्व है। इन सभी का वर्णन सांस्कृतिक भिन्नता के साथ किया गया है। इनके साहित्य में भाषाई, क्षेत्रीय, धार्मिक, जातीय आदि विभिन्नताओं के साथ एकता का चित्रण भी मिलता है। सांस्कृतिक नवीत मान्यताओं का वर्णन सांस्कृतिक महत्ता और रिश्तों की महत्ता के साथ प्रस्तुत किया गया है।

चतुर्थ अध्याय का शीर्षक 'ममता कालिया के कहानी-साहित्य में राजनीतिक संदर्भ और यथार्थबोध के अंतर्गत ममता कालिया की कहानियों के राजनीतिक संदर्भ और इनके यथार्थबोध का मूल्यांकन किया गया है। राजनीति केवल सत्ता के गलियारों या शासन व्यवस्था तक सीमित नहीं होती बल्कि वह घर, दफ्तर, समाज और विवाह जैसे संस्थानों में व्याप्त है। ममता कालिया की लेखनी राजनीति के उन सभी सूक्ष्म तानों-बानों को उजागर करती है। इनकी कहानियों के आधार पर इस अध्याय में राजनीतिक संरचना में शासन प्रणाली, संविधान, न्याय प्रणाली, स्त्री-स्वतंत्रता और स्वतन्त्रता के लिए स्त्री जीवन में आने वाली चुनौतियों का वर्णन किया गया है।

समाज की राजनीतिक संरचना इस प्रकार की है जिसमें सत्ता बहुत ही सूक्ष्म रूप से कार्य करती है। परंपरा के नाम पर, सामाजिक नियमों के अनुसार या अपेक्षों के आधार पर यह यह सत्ता चलाई जाती है। समाज में बिना किसी औपचारिकता के अनौपचारिक रूप नियम तय होते हैं। जो व्यक्ति

की चेतना, संबंधों, इच्छाओं और रोजमर्रा के निर्णयों को नियंत्रित करते हैं। संविधान में स्वतंत्रता और समानता का समान अधिकार प्रदान किया गया है। किंतु यह व्यवहारिक रूप से समाज की स्वीकृति व अस्वीकृति पर निर्भर करता है। स्त्री को समाज में अपने अधिकारों और संविधान द्वारा सुनिश्चित समान स्थान पाने के लिए संघर्ष करना पड़ता पड़ता है। जब कोई स्त्री समाज की मान्यताओं या अपेक्षाओं के विरुद्ध अपने लिए विकल्प चुनती है तो समाज उसे विद्रोही या असमान्य ठहरा देता है। ममता कालिया की कहानियों में समाज की राजनीति का वर्णन मिलता है जिसमें ससंद, न्यायिक प्रणाली से बाहर समाजिक न्याय प्रणाली स्त्री स्वतंत्रता, अधिकार आदि तय करती है। इन सब संदर्भों के साथ समाज में आए बदलावों को, स्त्री की समाज में बदलती स्थितियों और आधुनिक चुनौतियों का वर्णन इस अध्याय में किया गया है।

इसी सत्ता की लोलुपत्ता के कारण समाज में भ्रष्टाचार बढ़ता है और अनेक रीतियां तथा मान्यताएं विकृत हो कर कुरीतियों का रूप ले लेती है जिससे समाज में न्याय और व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जाती है। लेखिका की कहानियों के आधार पर समाज के इन राजनीतिक संदर्भों का वर्णन किया गया है। ममता कालिया ने राजनीति में सुधार, संतुलन और समाधान को राजनीतिक दृष्टिकोण के विविध पहलूओं के माध्यम से चुनौतियों और समाधान के साथ कहानियों में दर्शाया है जिनका वर्णन इस अध्याय में किया गया है।

पंचम अध्याय का शीर्षक 'ममता कालिया के कहानी-साहित्य में आर्थिक संदर्भ और यथार्थबोध' को पांच उपध्यायों के द्वारा लेखिका के यथार्थबोध का आर्थिक संदर्भों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। ममता कालिया के साहित्य में सामाजिक, मानसिक, पारिवारिक संदर्भों के साथ आर्थिक संदर्भ का गहन चित्रण विशेष रूप में उससे जुड़े यथार्थबोध के साथ प्रमुख भूमिका में मिलता है। इनकी कहानियों में आर्थिक विषमता, निम्न और मध्यम वर्गीय जीवन की आर्थिक समस्याएँ, बेरोजगारी, बाज़ारवादी, उपभोक्तावादी समाज और आर्थिक असमानता का विस्तार से चित्रण करती है। आर्थिक असमानता का मार्मिक चित्रण दिखाई देता है। इनकी कहानियों में समाज के उस विभाजन की गहराई दिखाई देती है, जहां एक वर्ग ए. सी और ओला-ऊबर की दुनिया में जी रहा है, जबकि दूसरा वर्ग रिकशा चलाता है, भट्ठी में ईंटें पकाता है, या घरेलू नौकर बन कर जिंदा रहता है। इन अंतर्विरोधों और विडंबनाओं को इनकी कहानियों स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया गया है, इसका वर्णन किया गया है।

ममता कालिया ने अपने कहानी साहित्य में समाज के आर्थिक संघर्ष के साथ स्त्री की आर्थिक स्वतंत्रता और उसके रोजमर्रा के संघर्ष, आर्थिक असमानता से उत्पन्न सामाजिक समस्याओं को प्रस्तुत किया है। समाज में अनपढ़, घरेलू, शिक्षित तथा कामकाजी स्त्री की स्थितियों का वर्णन करने में इनकी चित्रात्मकता की स्पष्टता का चित्र दिखाई पड़ता है। इन आर्थिक परिस्थितियों के कारण समाज में बदलती परिस्थितियां व नैतिक मूल्यों का ह्रास होता है। आर्थिक स्थिति का समाज में स्थिति, पद-प्रतिष्ठा, प्रेम व मानसिक दशा पर प्रभाव पड़ता है की प्रस्तुति कहानियों के आधार पर की गई है।

इस अध्याय में ममता कालिया की प्रमुख कहानियां परदेशी -आर्थिक अस्थिरता और मध्यम वर्ग की त्रासदी की कहानी है, दपर्ण- स्त्री की आर्थिक पराधीनता और आत्म-विलोपन की कहानी, अलमारी-वस्तु चक्र में आर्थिक पुनरावृत्ति की संभावना एवं अन्य कहानियां में आर्थिक यथार्थ का विश्लेषणात्मक चित्रण में किया गया है। आम बोल-चाल की भाषा, प्रतीकों और बिंबों तथा संवादों के माध्यम से कहानियों में दिखाई गए संघर्ष और आर्थिक असमानता के कारण उत्पन्न सामाजिक अंसतोष का वर्णन किया गया है।

शोध प्रबंध के षष्ठ अध्याय में ममता कालिया के कहानी साहित्य में प्रयोग की गई भाषा-शैली का वर्णन किया गया है। इन्होंने कहानी साहित्य में सहज, आम बोल के साथ प्रवाहपूर्ण भाषा का प्रयोग संवादों की स्वाभाविकता के साथ, वास्तविक स्थितियों का चित्रण किया है। इनकी प्रवाहपूर्ण और सहज भाषण पाठक के दिल तक पहुंचती है और वह अपने आप को कथानक से जोड़ कर वहीं का वासी समझने लगता है। इन्होंने वर्णनात्मक, भावात्मक, व्यंग्यात्मक, प्रतीकात्मक तथा हास्यात्मक शैलियों के प्रयोग से अपने विचारों की गहराईयों को प्रकट किया है। ये सहज संवादों के माध्यम से व्यंग्य और गंभीर वास्तविकता को पाठकों के सम्मुख भाषा की महीन धार के साथ रखती है। भावुक प्रसंगों और संवादों की स्वाभाविकता के साथ- समाज के जीवन संघर्ष और स्त्री की सामाजिक व पारिवारिक परिस्थितियों का यथार्थ वर्णन बहुत ही स्पष्ट, सहज, कभी-कभी आम बोल-चाल की भाषा में सरल, सटीक एवं प्रभावात्मक तरीके से प्रस्तुत करती है, का वर्णन किया गया है

धन्यवाद ज्ञापन

शोधकार्य के प्रारंभ में जब मेरा मस्तिष्क अस्त-व्यस्त था, तब लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय के हिन्दी आचार्य आदरणीय डॉ विनोद कुमार जी को मेरा प्रोत्साहन की बढ़ाने और मेरा मार्गदर्शन करने के लिए इनकी सहृदय आभारी हूँ। इन्होंने ही मेरा परिचय मेरे शोध निदेशक डॉ. बृजेंद्र कुमार अग्निहोत्री जी से करवाया। शोधार्थी के लिए शोध निर्देशक की अहम भूमिका होती है। मैं भाग्यशाली हूँ कि मुझे डा. बृजेंद्र कुमार अग्निहोत्री जैसे शोध-निर्देशक के सानिध्य में शोधकार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ। इनके धैर्य और सहज स्वभाव से मेरी शोध यात्रा सुचारु रूप से मुकाम तक पहुंच पाई।

इनकी विशेषज्ञता और प्रोत्साहन के बिना यह शोध प्रबंध सम्पन्न कर पाना संभव नहीं होता। इन्होंने मेरी त्रुटियों से मुझे अवगत करवा कर अपने सुझावों और मार्गदर्शन से मेरे शोध कार्य को समय पर सम्पन्न करवाने और इनके प्रोत्साहन के लिए मैं इनकी सहृदय कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। हिंदी विभाग के प्रवक्ता डॉ. अनिल कुमार पाण्डेय जी, डॉ. रीता सिंह जी और डॉ. नीलम जी की भी मैं हार्दिक आभारी हूँ, जिन्होंने प्रत्येक सोपान के दौरान न केवल मेरा सहयोग दिया, अपितु अपने मूल्यवान सुझावों से लाभान्वित भी किया। मैं आर.डी.सी. की समग्र टीम के प्रति सहृदय आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने प्रत्येक प्रस्तुति के दौरान सहयोग भावना से मेरा मार्ग दर्शन किया।

इस मुकाम तक पहुंचाने के लिए मैं विशेष आराभी हूँ, अपने जीवन सहचर श्री राजेंद्र कुमार जी की, जिन्होंने अपनी व्यस्तता के बाद भी मेरा सदा सहयोग दिया और मुझे प्रोत्साहित किया। इनके धैर्य, योगदान, और सहयोग के बिना यह शोध कार्य पूर्ण कर पाना मेरे लिए असंभव था। मेरे दोनों बच्चे, बेटा कुनिक और बेटी कीर्तिका, जिनके स्नेह और सहयोग से मैं उर्जावान और प्रोत्साहित बनी रही। इस शोध कार्य में मेरे माता-पिता और बहन के स्नेह और शुभकामनाओं के लिए सदैव आभारी रहूँगी। इन सब के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अपूर्व योगदान के लिए मैं सदैव सहृदय कृतज्ञ रहूँगी।

अनुक्रमणिका

सारांश

धन्यवाद ज्ञापन

प्रस्तावना

प्रथम अध्याय

यथार्थबोध : सैद्धांतिक विवेचन

1.1 यथार्थबोध: स्वरूप और विकास

1.2 यथार्थ और यथार्थवाद

1.3 यथार्थबोध: उद्भव एवं विकास

1.4 पश्चिमी साहित्य और यथार्थबोध

1.5 हिन्दी साहित्य और यथार्थबोध

1.6 ममता कालिया और यथार्थबोध

द्वितीय अध्याय

ममता कालिया के कहानी साहित्य में सामाजिक संदर्भ और यथार्थबोध

2.1 सामाजिक संरचना

2.1.1 सामाजिक संदर्भ:

2.1.1.1 पितृसत्तात्मक समाज और स्त्री जीवन

2.1.1.2 परिवार और सामाजिक ढाँचे का चित्रण

2.1.1.3 आर्थिक और सामाजिक असमानता

2.1.1.4 शहरीकरण और आधुनिकता का प्रभाव

2.1.2 यथार्थबोध:

2.1.2.1 जीवन की सच्चाई का सजीव चित्रण

2.1.2.2 संवादों की स्वाभाविकता

2.1.2.3 समस्याओं की गहराई और समाधान की संभावनाएँ

2.1.2.4 व्यंग्य और आलोचना

2.1.3 ममता कालिया की कहानियों के आधार पर समाज

2.1.3.1 धार्मिक व्यवस्था-

2.1.3.2 संस्कृति-

2.1.3.3 वर्ण व्यवस्था व आनुवांशिक व्यवस्था-

2.1.3.4 सामाजिक परिवेश

2.1.3.5 भाषा

2.2 समूह एवं संस्थाएँ

2.2.1 समूहों का चित्रण

2.2.1.1 पारिवारिक समूह

2.2.1.2 सामाजिक वर्ग

2.2.2 संस्थाओं की भूमिका

2.2.2.1 शैक्षणिक संस्थान

2.2.2.2 विवाह संस्था

2.2.2.3 धार्मिक सस्थाएँ

2.3 सामाजिक मानदंड

2.3.1 सामाजिक मानदंडों की पहचान

2.3.1.1 पारिवारिक मानदंड

2.3.1.2 लिंग आधारित मानदंड

2.3.2 मानदंड के प्रति दृष्टिकोण

2.4 सामाजिक बदलाव

2.4.1 सामाजिक बदलाव का स्वरूप

2.4.1.1 लिंग समानता की ओर कदम

2.4.1.2 आर्थिक और सामाजिक वर्गों में परिवर्तन

2.4.2 प्रमुख कहानियां और सामाजिक बदलाव

2.4.3 सामाजिक बदलाव का संघर्ष

2.4.4 बदलाव की दिशा

तृतीय अध्याय

ममता कालिया के कहानी-साहित्य में सांस्कृतिक संदर्भ और यथार्थबोध

3.1 सांस्कृतिक आधार

3.1.1 सांस्कृतिक संदर्भ

3.1.1.1 परंपरा और आधुनिकता का संघर्ष

3.1.1.2 महिला जीवन की वास्तविकताएं

3.1.1.3 भाषाई विविधता

3.1.2 यथार्थबोध:

3.1.2.1 आर्थिक और सामाजिक असमानता

3.1.2.2 शहरी और जीवन का चित्रण

3.1.2.3 मध्यवर्गीय जीवन की जटिलताएँ

3.1.3 सांस्कृतिक प्रतीकों और मान्यताओं का उपयोग

3.1.3.1 सामाजिक रूढ़ियों और आधुनिक सोच के बीच संघर्ष

3.1.3.2 महिला केंद्रित दृष्टिकोण

3.1.3.3 परिवार और विवाह

3.1.3.4 शिक्षा और वैश्वीकरण के प्रभाव से सांस्कृतिक मूल्यों में बदलाव

3.1.3.5 पुराने रीति-रिवाजों और आधुनिक सोच के बीच संघर्ष

3.2 सांस्कृतिक पहचान

3.2.1 सांस्कृतिक पहचान का स्वरूप

3.2.1.1 परंपरागत मूल्य और मान्यताएं

3.2.2 सांस्कृतिक पहचान के पहलू

3.2.2.1 पारिवारिक पहचान

3.2.2.2 स्थानीय और क्षेत्रीय पहचान

3.2.2.3 भाषा एवं संवाद

3.3 सांस्कृतिक भिन्नता

3.3.1 क्षेत्रीय भिन्नता

3.3.2 धार्मिक और जातीय भिन्नता

3.3.3 विविधता में एकता

3.3.4 भाषाई विविधता

3.4 सांस्कृतिक नवीन मान्यताएँ

3.4.1 सांस्कृतिक नवीन मान्यताओं का स्वरूप

3.4.1.1 लैंगिक समानता और नारीवाद

3.4.2 परिवार और सामाजिक ढांचे में बदलाव

3.4.3 समुक्त परिवार की जगह एकल परिवार की बढ़ती प्रवृत्ति

3.4.3.1 विवाह और रिश्तों में नई सोच

3.4.3.2 स्त्री की घरेलू भूमिकाओं में परिवर्तन और उनकी सामाजिक भूमिका का विस्तार

3.5 सांस्कृतिक महत्ता

3.5.1 सांस्कृतिक महत्ता का स्वरूप

3.5.2 पारंपरिक मूल्यों का चित्रण

3.5.3 रिश्तों की महत्ता

3.5.4 धर्म और रीति-रिवाज

चतुर्थ अध्याय

ममता कालिया के कहानी-साहित्य में राजनीतिक संदर्भ और यथार्थबोध

4.1 राजनीतिक संरचना-

4.1.1 शासन प्रणाली

4.1.2 संविधान

4.1.3 न्यायिक प्रणाली

4.2 स्त्री-स्वतंत्रता और राजनीति

4.2.1 स्त्री-स्वतंत्रता का इतिहास

4.2.2 समाज में बदलाव

4.2.3 आधुनिक चुनौतियाँ

4.3 भ्रष्टाचार और सत्ता-लोलुपता

4.3.1 भ्रष्टाचार

4.3.2 सत्ता-लोलुपता

4.3.3 राजनीतिक सुधार और समाधान

4.4 राजनीति और यथार्थबोध के मध्य संतुलन

4.4.1 राजनीतिक दृष्टिकोण

4.4.2 यथार्थबोध का दृष्टिकोण

4.4.3 चुनौतियाँ और समाधान

पंचम अध्याय

ममता कालिया के कहानी-साहित्य में आर्थिक संदर्भ और यथार्थबोध

5.1 आर्थिक संदर्भ

5.1.1 आर्थिक विषमता

5.1.2 निम्न और मध्यम वर्गीय जीवन की आर्थिक समस्याएँ

5.1.3 बाज़ारवाद, पूँजीवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रभाव

5.1.4 बेरोजगारी, श्रम और आर्थिक असमानता का चित्रण

5.2 आर्थिक संदर्भ और यथार्थबोध

5.2.1 सामाजिक और आर्थिक संघर्ष का यथार्थपरक चित्रण

5.2.2 स्त्री की आर्थिक स्वतंत्रता और संघर्ष की कहानियाँ

5.2.3 आर्थिक असमानता के कारण उत्पन्न सामाजिक विद्रूपताएँ

5.2.4 बदलती आर्थिक परिस्थितियों में नैतिकता और मूल्यों का हास

5.3 प्रमुख कहानियों का विश्लेषण:

5.3.1 परदेशी- आर्थिक अस्थिरता और मध्यम वर्ग की त्रासदी

5.3.2 दर्पण : स्त्री की आर्थिक पराधीनता और आत्म-विलोपन

5.3.3 आलमारी : वस्तु-चक्र में आर्थिक पुनरावृत्ति की संभावना

5.3.4 अन्य कहानियाँ- आर्थिक यथार्थ का सशक्त चित्रण

5.4 भाषा और शैली:

5.4.1 आम बोलचाल की भाषा में आर्थिक यथार्थ का चित्रण

5.4.2 प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से आर्थिक संघर्ष को व्यक्त करना

5.4.3 संवादों के माध्यम से आर्थिक समस्याओं को उजागर करना

5.5 समाज और अर्थव्यवस्था के मध्य संबंध:

5.5.1 आर्थिक असमानता से उत्पन्न सामाजिक असंतोष

5.5.2 मध्यम वर्ग, श्रमिक वर्ग और महिलाओं की आर्थिक स्थिति

5.5.3 उपभोक्तावाद और बाज़ार की मानसिकता का प्रभाव

षष्ठ अध्याय

ममता कालिया के कहानी-साहित्य में भाषा शैली

6.1 भाषा (सहज और प्रवाहपूर्ण)

- 6.1.1 बोलचाल के शब्दों का प्रयोग
- 6.1.2 संवादों की स्वाभाविकता
- 6.1.3 वास्तविक स्थितियों का चित्रण
- 6.2 शैली
 - 6.2.1 संवादों की स्वाभाविकता
 - 6.2.3 क्षेत्रीयता और लोकध्वनि
 - 6.2.4 व्यंग्यात्मक और तंज़ीया लहजा
 - 6.2.5 मनोविज्ञान की सजीव प्रस्तुति
- 6.3 भाषा में नारी विमर्श के स्वर
 - 6.3.1 स्त्री अनुभवों की बेलौस अभिव्यक्ति
 - 6.3.2 पितृसत्ता के खिलाफ प्रतिरोध की भाषा
 - 6.3.3 स्त्री-स्वतंत्रता की सहज माँग
 - 6.3.4 यौनिकता और देह को लेकर स्पष्ट दृष्टिकोण
- 6.4 व्यावहारिकता और जीवन-संघर्ष
 - 6.4.1 व्यावहारिकता की भाषा और दृष्टिकोण
 - 6.4.2 जीवन-संघर्ष की ईमानदार प्रस्तुति
 - 6.4.3 मध्यमवर्गीय यथार्थ की भाषा
 - 6.4.4 भावुकता से बचाव
- 6.5 संवादों की प्रभावशीलता

6.5.1 स्वाभाविकता और जीवन्तता

6.5.2 पात्रों की मानसिकता का प्रतिबिंब

6.5.3 स्त्री-विमर्श को मुखरता

6.5.4 व्यंग्य और कटाक्ष का माध्यम

6.5.5 संवादों से ही कहानी का आगे बढ़ना

उपसंहार

शोध-उपलब्धियां

शोध की नयी दिशाएं

संदर्भ सूची

आधार ग्रंथ

सहायक ग्रंथ

प्रस्तावना-

साहित्य समाज का दर्पण होता है। समय के साथ-साथ अनेक साहित्यकार अपनी साहित्यिक रचनाओं के द्वारा समाज के लिए प्रेरणा और मार्गदर्शन का माध्यम रहे हैं। साहित्यकार अपनी साहित्यिक रचना, अनेक विधाओं जैसे कविता, कहानी, उपन्यास, एकांकी आदि में करते हैं। इन सभी विधाओं में कहानी का अपना महत्व है। कहानी में कम शब्दों में रुचि कर ढंग से अपनी बात पाठकों तक पहुंचानी होती है। कहानी पढ़ना और सुनना प्रेरणादायक और मनोरंजक होने के कारण सभी को रुचिकर लगता है। परंतु कोई भी रचना तभी सार्थक मानी जाती है। जब वह समय के धरातल पर खड़ी हो। ममता कालिया की रचनाएं समय के इन सभी मानदंडों पर खरी समझी जाती हैं। इनकी कहानियां हमेशा यथार्थ पर आधारित होती हैं। बिना यथार्थ और सामाजिक चेतना की दूसरी प्रकार की चेतना का कोई मूल्य नहीं होता है।

ममता कालिया का हिंदी साहित्य में बहुमूल्य योगदान है। इन्होंने अपने लेखन का प्रारंभ काव्य से किया। ममता कालिया एक यथार्थवादी लेखिका हैं। इन्होंने समाज के अनेक अनछुए पहलुओं पर अपनी लेखनी चलाई। इनकी अधिकांश कहानियां यथार्थ परक जीवन पर केंद्रित होती हैं। ममता कालिया ने अपनी कहानियों में कल्पनिकता का बहुत कम प्रयोग करते हुए सामाजिक यथार्थ को कहानियों के माध्यम से पाठकों तक पहुंचाने का सफल प्रयास किया है। इन्होंने समाज में फैली कुरीतियों, सामाजिक समस्याओं के साथ नारी की सामाजिक और मानसिक स्थिति को भी अपनी विषय वस्तु बनाया है।

इनकी कहानियों में ग्रामीण पात्रों की स्थिति का वर्णन अत्यंत सरल और सहज भाषा में देखा जा सकता है। इनकी कहानियों के पात्र केवल अनपढ़ या ग्रामीण ही नहीं होते अपितु शिक्षित नागरी जीवन के अभ्यस्त भी होते हैं। सारतः ममता कालिया की कहानियों के पात्र यथार्थ से प्रेरित होते हैं। इनका अधिकांश साहित्य सृजन साधारण बोलचाल की भाषा में दृष्टिगत होता है। शिक्षण के क्षेत्र में होने के कारण इनको युवा मानसिकता की भी समझ है। इन्होंने कल्पनिकता का न्यूनतम सहारा लेकर अपनी कहानियां जीवन के सच्चे और ठोस धरातल पर लिखी हैं। इन्होंने सामान्य जन जीवन से

जुड़े विषयों को अपनी रचना धर्मिता का कथ्य बनाया। इसलिए पाठक को कहानियों के सभी पात्र अनजान नहीं लगते हैं। यह सभी पाठक के इर्द-गिर्द ही घूमते प्रतित होते हैं।

प्रस्तुत शोध के अतंगत ममता कालिया के कहानी साहित्य में समाज के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक यथार्थबोध का, भाषा शैली के सहित कहानियों के आधार पर, यथार्थबोध के संद्धातिक विवेचन का उल्लेख किया गया है। यथार्थबोध का अर्थ हिन्दी साहित्य के और पश्चिमी साहित्य से प्रमुख विद्वानों की व्याख्या के साथ उल्लेखित किया गया है। ममता कालिया की कहानियों के यथार्थबोध को विभिन्न संदर्भों के माध्यम से चित्रण किया गया है। इनकी कहानियाँ समाज की वास्तविकता, जमीनी हकीकत और जीवन के विभिन्न पहलूओं को सजीव रूप में प्रस्तुत करती हैं। इन्होंने यथार्थ के घरातल पर अपने कहानी साहित्य में विविध परिवेशों और उनकी समस्याओं को अभिव्यक्त किया है। ममता कालिया एक यथार्थवादी, संवेदनशील कथाकार हैं। इनका सामाजिक वर्णन इतना यथार्थ और प्रभावशाली होता है कि पाठक को उसी दिशा में सोचने को मजबूर कर देता है।

ममता कालिया ने अपनी कहानियों में समाज की सभी समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है। एक संवेदनशील साहित्यकार होने के नाते इन्होंने दिल्ली, मुंबई, पुणे जैसे बड़े शहरों में रहने के दौरान समाज को अत्यधिक निकटता और सूक्ष्म दृष्टि से देखा है। समाज के लोगों की समस्याओं को समझने के लिए इनकी पैनी दृष्टि सदैव सतर्क रही है। उन समस्याओं को अपनी संरचनाओं में उद्घाटित भी किया है। सामाजिक समस्याएं दहेज, नैतिक मूल्यों का पतन, रोजगार या मकान की समस्या आदि को ममता कालिया ने कुशलतापूर्वक यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। पारिवारिक समस्याओं में रिश्तों में संघर्ष, अनमेल विवाह, प्रेम विवाह, स्त्री द्वारा स्त्री का शोषण, पुरुष की कुण्ठाएँ आदि समस्याओं के यथार्थ को ममता कालिया ने अपनी रचनाओं में उद्घाटित किया है। इन्होंने अंधविश्वास, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक और राजनीतिक समस्याओं को भी चित्रित किया है। ममता कालिया ने सभी प्रकार की समस्याओं का चित्रण अपने यथार्थबोध द्वारा सफलतापूर्वक किया है। इन्होंने समाज समाजिकता को करीब से देखा और समझा है।

ममता कालिया के कहानी साहित्य में यथार्थबोध का विश्लेषण विभिन्न संदर्भों के आधार पर किया गया है। इसमें सिद्धांतिक विवेचन के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक संदर्भों के तहत इनकी कहानियों में यथार्थ के विविध पहलुओं की झलक मिलती है। इनकी भाषा शैली सहज, संप्रेषणीय और प्रभावशाली है, जिससे जीवन के सच्चे अनुभव और समाज की वास्तविकता साहित्य में जीवंत रूप में उभरती हैं।

इनकी कहानियों में संयुक्त परिवार की परंपरा और नई पीढ़ी की व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बीच का टकराव देखने को मिलता है। ये यह दर्शाती हैं कि कैसे बदलती सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ पारिवारिक रिश्तों और भूमिकाओं को पुनर्परिभाषित कर रही हैं। पारंपरिक पारिवारिक मूल्यों में बदलाव और नई सोच का प्रवेश एक महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन के रूप में उभरता है। कुल मिलाकर ममता कालिया की कहानियाँ सामाजिक बदलाव की गाथा हैं, जो समाज की बदलती धारणाओं, संबंधों, और संरचनाओं को एक नई दृष्टि से प्रस्तुत करती हैं। इनकी रचनाएँ पाठकों को यह सोचने पर मजबूर करती हैं कि बदलाव की दिशा कैसी होनी चाहिए और इसमें प्रत्येक व्यक्ति की क्या भूमिका हो सकती है।

1 समस्या कथन- साहित्य और समाज का गहरा संबंध होता है। साहित्य और समाज एक दूसरे के पूरक होते हैं। साहित्य सृजन समाज में घटित घटनाओं के आधार पर होता है। साहित्य हमें उस समय के यथार्थ से अवगत कराता है, जिस समय में उसकी रचना हुई होती है। विभिन्न विद्वानों ने यथार्थ आधारित साहित्य को ही सार्थक साहित्य की संज्ञा दी है। ममता कालिया यथार्थवादी रचनाकार मानी जाती हैं। इस शोध में हम ममता कालिया की कहानियों में यथार्थबोध का अध्ययन करेंगे। प्रस्तुत शोध के माध्यम से यह जानने का प्रयास करेंगे कि किस प्रकार साहित्य व्यक्ति को समाज और समाज में घटित अच्छे बुरे और अनेक अनछुए पहलुओं से अवगत कराता है जिनसे व्यक्ति उसी परिवेश में रहते हुए भी अनभिज्ञ होता है। समाज को जानने समझने में साहित्य या कहानियों का क्या योगदान होता है। यह जानने और यथार्थ को प्रकट करने का प्रयास इस शोध में के माध्यम से किया जाएगा।

2 समस्या औचित्य- ममता कालिया की कहानियां यथार्थ परक कहानियां मानी जाती हैं। इन्होंने अपनी कहानियों में उन सभी सामाजिक समस्याओं को सामने लाने की सार्थक कोशिश की है, जो समस्याएं इन्होंने अपने आस-पास निजी जीवन में देखी, सुनी या महसूस की हैं। ममता कालिया की कहानियां यथार्थवाद का प्रतिनिधित्व करती हैं जिससे समाज के यथार्थ का बोध होता है। इनकी कहानियों पर यथार्थबोध के आधार पर शोध अभी तक दृष्टिगत नहीं होता। इसलिए यह शोध विषय पूर्णतः नया है। इस शोध से इनकी कहानियों में निहित नई दृष्टि का प्रस्तुतीकरण होगा, ऐसा मेरा विश्वास है। ताकि साहित्य के नए और जरूरी संदर्भ को समीक्षा और आलोचना से आगे शोध की नई दिशा मिल सके।

3 शोध उद्देश्य- ममता कालिया के कहानी साहित्य में यथार्थबोध नामक शोध विषय पर प्रस्तावित शोध प्रबंध के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. यथार्थबोध की अवधारणा की पहचान करना ।
2. यथार्थबोध के विभिन्न पक्षों का बोध करना।
3. ममता कालिया के कहानी-साहित्य में यथार्थबोध का विश्लेषण करना ।
4. ममता कालिया के कहानी-साहित्य में यथार्थबोध का मूल्यांकन करना।
5. ममता कालिया के कहानी-साहित्य में विकसित यथार्थबोध की प्रासंगिकता स्थापित करना।

4 महत्व- यथार्थ परक साहित्य से हमें समाज के यथार्थ का बोध होता है जिससे हमें जीवन को समझने में सहायता मिलती है। यथार्थ बोध का साहित्य सिद्धांत चित्रण को और गहराई से समझने में महत्वपूर्ण है। अपने आसपास के परिवेश के प्रति जागरूकता आती है। अपने युगीन परिवेश के प्रति सचेत होते हैं। जिस समय में साहित्य रचना हुई उस समय के परिवेश को भी जानने में सहायता मिलती है। समाज की समस्याओं के यथार्थ रूप में दर्शन होते हैं। यथार्थवादी साहित्य के कारण नवीन नैतिक मूल्यों को समझने में मदद मिलती है।

5 शोध प्रविधियां- शोधकर्ता को अपना शोध कार्य करने अपने, शोध प्रबंध को सही दिशा और समय पर पूर्ण करने के लिए विभिन्न विधियों एवं प्रविधियों की आवश्यकता होती है। ताकि अपने शोध कार्य को सही दिशा प्रदान कर सके। शोधार्थी के उपयुक्त प्रविधि चयन पर ही उसके शोध की सफलता, सार्थकता और गुणवत्ता निर्भर करती है। उपयुक्त प्रविधि चयन के अभाव में शोधार्थी अपने शोध को सही दिशा में नहीं ले जा पाएगा। इससे समय और ऊर्जा व्यर्थ होती है। शोधार्थी के उपयुक्त प्रविधि चयन द्वारा उपयुक्त परिणामों की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। इसलिए प्रस्तुत शोध कार्य में हमने उपयुक्त शोध प्रविधियों का चयन करने की कोशिश की है। क्योंकि विभिन्न कार्यों के लिए विभिन्न प्रविधियों की आवश्यकता होती है। प्रस्तुत शोध कार्य में निम्नलिखित शोध प्रविधियों का प्रयोग किया जाएगा-

1.मनोवैज्ञानिक प्रविधि- यथार्थ का संबंध मन से होता है । मनोविज्ञान को मन का विज्ञान कहा जाता है। मनोविज्ञान प्रविधि द्वारा साहित्यकार की मनः स्थिति और साहित्यकार की मनः स्थिति द्वारा साहित्यिक पात्रों की मनः स्थिति का अध्ययन किया जाता है। मनोविज्ञान बहुत महत्वपूर्ण प्रविधि है। यथार्थ अध्ययन में पात्रों की मन स्थिति का वर्णन किया जाता है इसलिए इस प्रविधि का प्रयोग किया जाएगा।

2.तुलनात्मक प्रविधि- शोध की इस पद्धति के अंतर्गत एक ही भाषा तथा दो या उससे अधिक भिन्न भाषा के समान कवियों अथवा लेखकों, कृतियों और प्रवृत्तियों की आपसी तुलना करके अध्ययन किया जाता है। जैसे- आचार्य रामचंद्र शुक्ल तथा हजारीप्रसाद द्विवेदी की आलोचनात्मक कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन।

3.समाजशास्त्रीय प्रविधि- अंग्रेजी के सोशलॉजी शब्द से हिंदी के शब्द समाजशास्त्र का रूपांतरण हुआ है। सोशलॉजी शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा के सोशियस और ग्रीस भाषा के लागस शब्द, दोनों को मिलाकर हुई है। इसका अर्थ है समाज और अध्ययन । समाजशास्त्रीय प्रविधि के अधीन समाज की सभी इकाइयों का अध्ययन किया जाता है । जैसे - परिवार, समाज समाज में रहने वाले लोग, उनका रहन-सहन, उनका व्यवहार आदि यह सब सामाजिक इकाइयों के अंतर्गत आता है। इसलिए कहा जा सकता है कि साहित्य

का समाजशास्त्रीय अध्ययन करना जरूरी है। साहित्य में व्यक्ति, परिवार, समुदाय आदि का वर्णन किया जाता है। हमारे आसपास या स्वयं हमारे साथ कोई घटना घटित होती है तो उसका संबंध हमारे समाज से अवश्य होता है। क्योंकि मनुष्य समाज के बिना नहीं रह सकता। समाज में रहकर ही मनुष्य अपने जीवन का निर्वाह करता है। प्रस्तुत शोध कार्य में यथार्थवाद का अध्ययन करना है। साहित्य का यथार्थ समाज का यथार्थ है। अतः समाजशास्त्रीय प्रविधि का प्रयोग किया जाएगा।

4.सर्वेक्षण प्रविधि- सर्वेक्षण विधि का प्रयोग वर्तमान स्थिति को जानने के लिए प्रश्नोत्तरी तथा साक्षात्कार द्वारा होता है। जिसे वर्तमान के तथ्यों के स्वरूप को जाना जाता है। इस प्रविधि द्वारा शोधार्थी अधिक से अधिक सूचनाएं एकत्रित कर सकता है। इसके अलावा शोधार्थी अन्य बुद्धिजीवी व्यक्तियों से संपर्क कर उनके अनुभवों से भी आंकड़े एकत्रित कर सकता है। जो शोधार्थी के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। अतः प्रस्तुत शोध में यह प्रविधि उपयुक्त प्रविधि है।

6 तथ्य संग्रह- इस शोध कार्य के लिए सामग्री संग्रह के लिए प्राथमिक और द्वितीयक दोनों आंकड़ों का प्रयोग किया जाएगा। यद्यपि अधिकतर तथ्य संग्रह द्वितीयक माध्यम, शोधगंगा, ममता कालिया के कहानी संग्रह, ममता कालिया द्वारा रचित साहित्य, अन्य शोध से संबंधित पुस्तक की आलोचना समीक्षा, विभिन्न पत्र पत्रिकाएं, शोधगंगा, ऑनलाइन, माध्यम आदि की सहायता से किया जाएगा। वहीं प्राथमिक आंकड़े इकट्ठा करने के लिए साक्षात्कार, प्रश्नोत्तरी विधि का भी प्रयोग किया जाएगा।

7 शोध कार्य में चुनौतियाँ- प्रत्येक शोध कार्य की सीमाएं होती हैं। शोध कार्य को सीमित और सही समय व सही दिशा में पूर्ण करके अपने लक्ष्य तक पहुंचाना एक बड़ी चुनौती है। ममता कालिया की कहानियों में समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रतिनिधित्व देने का प्रयास किया गया है जिससे सभी की अभिव्यक्ति निष्पक्ष रूप से अध्ययन करके यथार्थ परक प्रस्तुति कर पाना कठिन चुनौती है।

8 परिसीमांकन- किसी भी शोध कार्य को उसके निश्चित समय में पूर्ण करना आवश्यक होता है। प्रस्तावित शोध कार्य हिंदी गद्य साहित्य की कहानी विधा पर केंद्रित है। प्रस्तावित शोध कार्य की सीमाएं यह रहेगी कि इसमें ममता कालिया की कहानियों को आधार ग्रंथ के रूप में अपनाकर शोध कार्य किया जाएगा और इसी के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाएगा। शोध के दौरान विभिन्न भटकाव से बचकर नियत समय पर इसे पूरा करने के उद्देश्य से अपने निर्देशक के साथ यथासंभव प्रयासों को सांझा करने की मेरी व्यक्तिगत योजना है।

9 परिकल्पना- किसी घटना की व्याख्या करने वाला कोई सुझाव या अलग-अलग प्रतीत होने वाली बहुत सी घटनाओं के आपसी सम्बन्ध की व्याख्या करने वाला कोई तर्कपूर्ण सुझाव परिकल्पना (hypothesis) कहलाता है। वैज्ञानिक विधि के नियमानुसार आवश्यक है कि कोई भी परिकल्पना परीक्षणीय होनी चाहिये। परिकल्पना शब्द का शाब्दिक अर्थ चारो ओर चिंतन करना है, जहाँ परि का अर्थ 'चारो ओर' एवं कल्पना का अर्थ 'चिंतन' होता है। इसमें सुझावों का परीक्षण किया जाता है। सामान्य व्यवहार में, परिकल्पना का आशय किसी अस्थायी विचार (provisional idea) से होता है जिसके गुणागुण (merit) अभी सुनिश्चित नहीं हो पाये हों। प्रस्तावित शोध कार्य के लिए भी कुछ परिकल्पनाएं की गई हैं, जो इस प्रकार हैं-

1. विभिन्न साहित्यिक ग्रंथों के अवलोकन व विस्तृत अध्ययन के द्वारा हिंदी साहित्य में यथार्थबोध को बढ़ावा देने वाले कारकों का पता लगाया जाएगा।

2. साहित्य अध्ययन के बाद समीक्षा द्वारा उसकी वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता का विश्लेषण किया जाएगा।

3. प्रस्तुत शोध ममता कालिया की कहानियों पर आधारित है तो इससे संबंधित साहित्य का अध्ययन, अवलोकन, समीक्षा एवं आलोचना द्वारा कहानियों में निहितार्थ यथार्थबोध को जानने का प्रयास किया जाएगा।

4. प्रस्तुत शोध द्वारा साहित्य और कथा साहित्य में निहित यथार्थबोध को समझा जाएगा, जिससे नई पीढ़ी भी साहित्य के यथार्थवाद से परिचित होगी, जो एक उपलब्धि होगी।

10 विषय चयन- यथार्थवाद कोई नई विचारधारा नहीं है। सृष्टि के आरंभ से ही मानव अपने चारों ओर की वस्तुओं को देखकर उनमें विश्वास करता रहा है और यही यथार्थवादी विचारधारा की मूल पृष्ठभूमि है। प्रस्तुत शोध कार्य ममता कालिया द्वारा रचित साहित्य की कहानी विधा को आधार ग्रंथ के रूप में अपनाकर कहानियों का यथार्थ परक अध्ययन किया जाएगा। साहित्य में यथार्थ परक दृष्टि से अभिप्राय रचनाकार द्वारा अपने भौतिकवादी-वैज्ञानिक चिंतन और ज्ञान के आधार पर सामाजिक जीवन के वास्तविक रूप का सच्चा चित्रण करने से है। आज के समय में प्रत्येक वर्ग के लोग अपने जीवन की असीमित इच्छाओं और साधनों को पाने की होड़ में अपनी जीवन की नियतिबद्धता में उलझे हुए हैं। इसलिए भी यथार्थवादी साहित्य की आवश्यकता अधिक है ताकि यथार्थ पर आधारित साहित्य से मानव को अपने आसपास और समाज के यथार्थ का बोध हो और उससे प्रेरणा पाकर मनुष्य जीवन में कुछ बदलाव आ सकें। शोधार्थी को हिंदी कथा साहित्य में इसकी दशा - दिशा पर विचार जरूरी महसूस हुआ है। कथा साहित्य पाठक को अन्य विधाओं से अधिक आकर्षक लगती है। इसके लिए शोधार्थी को ममता कालिया की कहानियां अधिक सार्थक लगीं ।

11 विषय से सम्बंधित शोध- कार्य- मेरी अद्यतन जानकारी के अनुसार प्रस्तुत शोध के लिए चयनित कहानीकार ममता कालिया के साहित्य पर केन्द्रित निम्नलिखित शोध-कार्य सम्पन्न हुए हैं-

1 विषय- ममता कालिया के उपन्यासों का समाज भाषा वैज्ञानिक अध्ययन (संबंधन और संकेत पद्धतियों के संदर्भ में) पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला, शोधकर्ता- चरणजीत कौर, 2019। इस शोध में शोधार्थी ने ममता कालिया के उपन्यासों का अध्ययन किया है। जैसे बेघर, नरक दर नरक, प्रेम कहानियां और दुखम सुखम का संबोधन और संकेत पद्धतियों के संदर्भ में समाज भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन किया है। इसमें उन्होंने सामान्य परिचय के साथ इन उपन्यासों के सर्वनाम सूचक संबोधन, नाम वाची संबोधन, सूचक शब्दावली, परिवारिक संबंध सूचक संबोधन, सामाजिक संबोधन को अंतर्गत अन्य संबोधन आदि का विस्तार से वर्णन किया है।

2 ममता कालिया का कथा साहित्य :परिवेशगत यथार्थ, गोवा विश्वविद्यालय, गोवा,

शोधार्थी- रूपा एम नायक 2018। इस शोध में शोधार्थी ने परिवेश का अर्थ एवं परिभाषा स्वरूप और यथार्थ के अर्थ एवं परिभाषा स्वरूप का वर्णन किया है। ममता कालिया के साहित्य के विभिन्न परिवेशगत यथार्थ का चित्रण किया है। परिवेशगत यथार्थ एवं साहित्य के विभिन्न पक्षों का भी वर्णन किया है। शोधार्थी ने परिवेशगत यथार्थ के साथ-साथ ममता कालिया के जीवन- परिचय, व्यक्तित्व के विविध आयाम, प्रेरणा स्रोत और साहित्यिक जीवन का भी विस्तार से वर्णन किया है।

3 ममता कालिया के उपन्यासों में जीवन मूल्य और उसका विघटन एक अनुशीलन, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, विद्यानगर, गुजरात, शोधार्थी- स्मिता बेन जय कुमार मकवाना, 2018। इस शोध में शोधकर्ताओं ने ममता कालिया की रचनाओं के माध्यम से मनुष्य जीवन के मूल्यों को चित्रित किया है। किस प्रकार मनुष्य अधिक पाने की चाह में जीवन मूल्यों का हनन कर बैठता है। इस शोध में उन्होंने मूल्य के वर्गीकरण के साथ ,मूल्य के अर्थ, परिभाषा,स्वरूप को भी चित्रित किया है। इसके लिए उन्होंने प्रेमचंद पूर्व, प्रेमचंद युगीन, प्रेमचंदोत्तर हिंदी उपन्यासों का भी अध्ययन किया है।

4 ममता कालिया के कथा साहित्य में समाजिक चेतना, श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, तिरुपति, शोधार्थी -जी विदेश, 2017। इस शोध में शोधकर्ता ने समाज की परिभाषा, समाज का उद्भव व विकास, समाज का व्यक्ति से संबंध, चेतना शब्द की व्युत्पत्ति, परिभाषा,चेतना के विभिन्न स्थितियों को चित्रित किया है। इसके साथ ही शोधकर्ता ने प्रेमचंद के साहित्य का विकास एवं सामाजिक चेतना का भी वर्णन किया है। ममता कालिया और अन्य साठोत्तर महिला साहित्यकारों का वर्णन विस्तार से किया है। समाज और सामाजिक परिवर्तन कथा साहित्य का विकास क्रम इन सब का विस्तार से वर्णन किया है।

5 ममता कालिया के कथा साहित्य में नारी चेतना, महाराज गंगा सिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर, शोधार्थी- ज्योति यादव, 2017। इस शोध में शोधकर्ता ने ममता कालिया की कथा साहित्य में नारी चेतना के विविध आयाम तथा स्त्री-पुरुष संबंधों में नारी चेतना का चित्रण किया है। इसमें इन्होंने कथा साहित्य में नारी चेतना का प्रभाव और उसके परिवर्तन तथा उपायों का चित्रण भी किया है। शोधकर्ता ने नारी चेतना की अवधारणा स्वतंत्रता से

पहले और बाद एवं साठोत्तर काल के साहित्य, 21वीं शताब्दी के साहित्य में नारी की चेतना का वर्णन किया है।

6 ममता कालिया के उपन्यासों में नारी विषयक दृष्टिकोण, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़, शोधार्थी- श्रीमती स्मिता जयसवाल, 2015। इस शोध में शोधार्थी ने हिंदी के उपन्यासों में प्रेमचंद पूर्व, प्रेमचंद युगीन और प्रेमचंदोत्तर हिंदी उपन्यासों में नारी की विभिन्न स्थितियों का वर्णन किया है। इसमें शोधकर्ता ने ममता कालिया के साथ अन्य महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में नारी की स्थिति का उल्लेख किया है। इस शोध में इन्होंने ममता कालिया के उपन्यासों में नारी के पारिवारिक, सामाजिक एवं पारंपरिक जीवन संघर्ष को भी विस्तार से चित्रित किया है।

7 ममता कालिया के कथा साहित्य में चित्रित सामाजिक समस्याएं, पं. रवि शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़, शोधार्थी- अंशु राणा, 2014। इस शोध में शोधार्थी ने ममता कालिया की रचनाओं का विवेचनात्मक वर्णन किया है। इस शोध में इन्होंने ममता कालिया के कथा साहित्य में चित्रित विविध सामाजिक समस्याओं का वर्णन किया है। इन्होंने ममता कालिया के समकालीन कथाकारों जैसे -प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा, चित्रा मुद्गल आदि महिला कहानीकारों का, जिन्होंने सामाजिक कुप्रथा तथा महिलाओं की स्थिति पर अपनी लेखनी चलाई है, के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक समस्याओं का शोधपरक अध्ययन प्रस्तुत किया है।

8 ममता कालिया के कथा साहित्य में स्त्री चेतना, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक, शोधार्थी- अमित कुमार, 2013। शोधार्थी ने इस शोध में ममता कालिया की रचनाओं का अध्ययन करते हुए स्त्री चेतना के विविध सोपान, विवाह संस्था, परिवार संस्था एवं कामकाजी महिला की, छवि स्त्री प्रतिष्ठा, उभरती स्त्री की छवि आदि के माध्यम से स्त्री की इन सभी स्थितियों का वर्णन किया है।

उपर्युक्त शोध-कार्यों के अतिरिक्त मेरी अद्यतन जानकारी के अनुसार प्रस्तुत शोध के लिए चयनित विचारधारा हिंदी साहित्य में 'यथार्थवाद' को केंद्र में रखकर निम्नलिखित शोध-कार्य सम्पन्न हुए हैं-

11.1 विषय से संबंधित कुछ अन्य शोध-

1 हिंदी उपन्यासों में बदलता हुआ यथार्थवाद, गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद, शोधार्थी- शैलेश कुमार के पांडे, 2020। इस शोध में शोधकर्ता ने उन्नीसवीं बीसवीं इक्कीस सदी के उपन्यासों में यथार्थवाद का अध्ययन कर इस शोध में वर्णन किया है। उन्होंने यथार्थवाद के लक्षण के साथ विशेषताओं का भी विवरण किया है। इस शोध में इन्होंने यथार्थवाद के सत्य सामयिक व्यवहारिक तथा साहित्यिक संबंधों को भी दर्शाया है।

2 मनु भंडारी और उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में यथार्थ बोध का स्वरूप, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, शोधार्थी- सुमन, 2018। इस शोध में शोधकर्ता ने मनु भंडारी और उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन किया है। इन्होंने यथार्थवाद के विभिन्न स्वरूपों, यथार्थ के विकास के वर्णन के साथ यथार्थ की परिभाषाओं का भी वर्णन किया है। इन्होंने मनु भंडारी और उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में यथार्थ बोध को विस्तार से चित्रित किया है। इन्होंने इस शोध में नारी के विभिन्न संबंधों का भी वर्णन किया है। शोधार्थी ने भाषिक संरचना और शैलीगत नवीनता को भी दर्शाया है। इन्होंने मनु भंडारी और उषा प्रियंवदा के साहित्य में उजागर की गई समस्याओं को भी उल्लेख किया है।

3 मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में यथार्थ बोध, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार, शोधकर्ता- रानी कुमारी, 2017। इस शोध में शोधकर्ताओं ने मनु भंडारी की कहानियों में काव्यगत यथार्थ बोध, शिल्प यथार्थ बोध का वर्णन किया है। इन्होंने शोध में उपन्यासों में काव्यगत यथार्थ बोध और शिल्पगत यथार्थ बोध का वर्णन करके कथा साहित्य के यथापरक वैशिष्ट्य को भी चित्रित किया है।

4 प्रेमचंद के उपन्यासों में यथार्थवाद का पुनर्मूल्यांकन, महात्मा गांधी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र, शोधार्थी- रीता कुरीकोष, 1995। इस शोध में शोधकर्ता ने प्रेमचंद साहित्य के यथार्थवाद के साथ-साथ पश्चात्य यथार्थवादी दृष्टि का विकास और यथार्थवाद के विभिन्न

पाश्चात्य स्वरूपों का चित्रण किया है। इन्होंने हिंदी साहित्य में यथार्थवादी दृष्टि का विकास, महत्व, रचना दृष्टि के विकास में योगदान आदि का वर्णन किया है। प्रेमचंद साहित्य में यथार्थवाद प्रेरक तत्वों को दर्शाया है। इन्होंने प्रेमचंद के उपन्यासों में यथार्थवादी दृष्टि के मूल प्रभावादिता और प्रगतिशीला को प्रयुक्त किया है।

5 नागार्जुन के काव्य में समाजवादी यथार्थवाद, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़, शोधार्थी- प्रेमलता दुआ, 1989। इस शोध में शोधार्थी ने नागार्जुन के काव्य में समाजवादी यथार्थ के साथ-साथ अन्य विचारकों की समाजवादी धारणाओं को भी चित्रित किया है। इन्होंने शोध में समाजवाद और यथार्थ के सैद्धांतिक परिपेक्ष्य का वर्णन किया है। नागार्जुन काव्य के समाजवादी और यथार्थवादी स्वरूप को दर्शाया है।

6 नाटकों में यथार्थवाद, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, काशी (वाराणसी), शोधार्थी- कमलिनी मेहता, 1960। इस शोध में शोधार्थी ने नाट्यशास्त्र में यथार्थवादी प्रकृति एवं उसका संस्कृत नाटकों में व्यवहार का वर्णन किया है। शोधार्थी ने हिंदी नाटकों में यथार्थवाद जैसे स्वतंत्रता पूर्व, द्विवेदी युगीन नाटक प्रगतिशील, साम्यवादी नाटक, स्वतंत्रता के बाद के नाटकों का वर्णन किया है। इन्होंने मराठी, गुजराती, बंगला, तमिल, तेलुगू, कश्मीरी और उर्दू नाटकों में यथार्थवाद का उल्लेख किया है।

प्रथम अध्याय

यथार्थबोध : सैद्धांतिक विवेचन

1.1 यथार्थबोध: स्वरूप और विकास

जैसा है, उसी रूप में किसी तथ्य या अनुभव को प्रस्तुत करना ही यथार्थ है। 'बोध' शब्द का अर्थ है— ज्ञान, जानकारी, समझ और बुद्धि। यह बोध मानव मस्तिष्क की देन है। इसके लिए मानव चेतना तथा बाह्य वातावरण से उसका संपर्क आवश्यक होता है। कोई भी रचना तभी यथार्थवादी कही जा सकती है, जब रचनाकार यथार्थ को मनोगत रूप में भी आत्मसात कर उसे अभिव्यक्त करता है। यदि रचनाकार केवल यथातथ्य वर्णन भर कर दे, तो वह कृति रचनात्मक नहीं रह जाती। ऐसी स्थिति में रचनाकार अपने यथार्थबोध के आधार पर वास्तविक तथ्यों को रचना के रूप में साकार करता है।

यथार्थवाद, साहित्यकार और साहित्य दोनों के लिए अत्यंत आवश्यक तत्व है। साहित्य में यथार्थ को समग्रता और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत कर पाना ही साहित्यकार के यथार्थबोध का प्रमाण होता है। मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन-चित्रण के लिए यथार्थबोध को समझना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। इस भौतिक जगत में रहते हुए हम अपने अनुभवों और ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से यथार्थ को ग्रहण करते हैं। इन अनुभवों का विश्लेषण बुद्धि के द्वारा होता है, जिससे प्राप्त ज्ञान ही यथार्थबोध कहलाता है।

यथार्थबोध, साहित्यकार में अपने अनुभवों के प्रति एक सटीक और गहन समझ विकसित करता है। यह बोध मनुष्य में उपस्थित वह तत्व है, जो उसे अनेक प्रकार के अनुभव कराता है। मनुष्य की समस्त क्रियाओं का मूल कारण यही बोध है। इसका विकास वातावरण के सतत संपर्क से होता है। इंद्रियों की अनुभूति के माध्यम से यह बोध किसी वस्तु या स्थिति का स्पष्ट ज्ञान कराता है। इसी बोध के कारण मनुष्य अपने ज्ञान को समृद्ध करता है। इससे उसके व्यवहार में कुशलता और नैतिकता आती है— जो बोध की परिपक्व अवस्था का संकेत हैं। इस भौतिक जगत में जो कुछ विद्यमान है— और जिसे हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों से अनुभव करते हैं— वह निस्संदेह यथार्थ है। परंतु प्रश्न यह है कि

क्या प्रत्येक व्यक्ति उसका बोध रखता है? यही ज्ञान, जो इंद्रियों के माध्यम से ग्रहण किया जाता है और जिसकी अनुभूति से यथार्थ का साक्षात्कार होता है, वही 'यथार्थबोध' कहलाता है। यथार्थ का निवास भौतिक जगत की वास्तविक वस्तुओं और घटनाओं में ही होता है। जैसे— वर्षा होना, सूर्य का चमकना, ऋतुओं का परिवर्तन, पृथ्वी का अपनी धुरी पर घूमना— ये सभी घटनाएँ यथार्थ हैं। यह इस सृष्टि का वास्तविक स्वरूप है, चाहे किसी को उसका बोध हो या न हो। इसलिए, यथार्थवादी रचनाकार के लिए केवल वही यथार्थ महत्त्वपूर्ण नहीं होता जो प्रत्यक्ष रूप में दिखाई दे। वह यथार्थ के बाह्य और आंतरिक— दोनों पक्षों का गहन अध्ययन करता है। यथार्थवादी रचनाकार अपनी व्यापक दृष्टि के माध्यम से संसार के विविध पहलुओं— सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक आदि— पर विचार करता है। उसकी यही दृष्टि उसे अपने परिवेश के यथार्थ से जोड़ती है और उसका साहित्य पाठकों के मस्तिष्क पर एक प्रभावशाली छाप छोड़ता है। इस प्रकार, साहित्य का यथार्थबोध से अत्यंत गहरा सम्बन्ध है। समाज में जो कुछ घटित होता है— ऊँच-नीच, अच्छा-बुरा, सुख-दुख— वह सब सामाजिक यथार्थ है। उसी के आधार पर साहित्यकार अपनी बुद्धि और कल्पना के रंगों से नवीन साहित्य का सृजन करता है।

1.2 यथार्थ और यथार्थवाद

'यथार्थ' शब्द का अंग्रेज़ी में पर्यायवाची शब्द Reality है। हिंदी एवं संस्कृत भाषा में इसके समरूप अर्थवाचक शब्द हैं — सत्य, वस्तुस्थिति, तथ्य, वास्तविकता आदि। 'यथार्थ' शब्द की व्युत्पत्ति दो संस्कृत मूल पदों से हुई है— 'यथा' और 'अर्थ'। 'यथा' का सामान्य अर्थ होता है— जैसा है या जैसा होना चाहिए, जबकि 'अर्थ' का तात्पर्य है— वस्तु, तत्व, द्रव्य, पदार्थ, आशय या मर्म। इन दोनों पदों के समास से बना 'यथार्थ' शब्द उस स्थिति या वस्तु की ओर संकेत करता है जो यथावस्था में हो, यथासम्भव सत्य हो, और जिसका स्वरूप वास्तविक, प्रामाणिक और अवास्तविकता से रहित हो। दर्शन, साहित्य और समाजशास्त्र के सन्दर्भ में 'यथार्थ' वह है जिसे मनुष्य अपनी इंद्रियों, अनुभवों तथा विवेक द्वारा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में स्वीकार करता है। मनुष्य अपने जीवन-जगत में जो कुछ भी प्रत्यक्ष रूप से देखता है, अनुभव करता है अथवा समझता है, वह उसके लिए यथार्थ बन जाता है। यह यथार्थ उसकी चेतना और तर्कबुद्धि द्वारा स्वीकार्य होता है, न कि केवल भावनात्मक अनुभूतियों पर आधारित।

यथार्थ न तो मात्र भौतिक घटनाओं का समूह है और न ही केवल मानसिक अनुभूतियों का प्रतिबिंब। यह उन दोनों के मध्य स्थित एक संतुलित बोध है— जिसमें व्यक्ति बाह्य जगत की सच्चाइयों को अपने आंतरिक दृष्टिकोण, मूल्यबोध और चेतना के आधार पर ग्रहण करता है। साहित्यिक दृष्टिकोण से यथार्थ वह आधारभूमि है, जिस पर किसी रचना की सर्जना होती है। जब कोई रचनाकार समाज, जीवन और परिवेश की सच्चाइयों का सूक्ष्म निरीक्षण कर उन्हें संवेदनात्मक तथा कलात्मक रूप प्रदान करता है, तब वह यथार्थ साहित्य में प्रकट होता है। इस प्रकार, 'यथार्थ' न केवल एक भाषिक शब्द है, बल्कि यह दर्शन, जीवनबोध और साहित्यिक अभिव्यक्ति का भी मूलाधार है। यह सच्चाई की वह परत है, जिसे न तो पूरी तरह छू पाना संभव है और न ही पूर्णतः नकारा जा सकता है। यथार्थ का बोध ही व्यक्ति को विचारशील, संवेदनशील और रचनात्मक बनाता है। पाश्चात्य विद्वान **जॉर्ज लुकाच** ने यथार्थ की परिभाषा देते हुए कहा है, "यथार्थवाद वह है जिसमें लेखक बिना किसी पक्षपाती या भय के, ईमानदारी के साथ जो कुछ अपने इर्द-गिर्द या आस-पास देखता है, उसी का चित्रण करता है। वह अपनी रचना में वास्तविक विचारों की रचना करता है।" (67) यूरोप के प्रसिद्ध साहित्य इतिहासकार **कार्ल मार्क्स** ने यथार्थ के संदर्भ में अपने विचार देते हुए कहा है, "यथार्थवाद कला और साहित्य में एक शैली नहीं है, बल्कि यह एक विचारधारा है।" (45) **जे.एस. रॉस** के अनुसार, "यथार्थवाद यह स्वीकार करता है कि जो कुछ हम प्रत्यक्ष में अनुभव करते हैं, उनके पीछे और उनसे जुड़े वस्तुओं का एक यथार्थ जगत है।" (38)

साहित्य में मुख्यतः सत्य से अल्पांश भी संबंध नहीं होता, बल्कि उसका संबंध केवल रचना की कलात्मक शैली से होता है। प्रसिद्ध हिंदी कथाकार **प्रेमचंद** के अनुसार, "यथार्थवादी चरित्रों के द्वारा यथार्थ के नग्न रूप को पाठकों के सामने रखा जाता है। उसे इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि सच्चरित्रता का परिणाम बुरा होगा या कुचरित्रता का परिणाम अच्छा होगा। उसके चरित्र अपनी कमजोरियों और खूबियों को दिखाते हुए अपनी जीवनलीला समाप्त कर देते हैं। यथार्थवाद हमारी दुर्बलताओं, विषमताओं और क्रूरताओं का सच्चा चित्र होता है। संसार में सदैव नेकी का फल नेकी और बदी का फल बदी नहीं होता, बल्कि इसके विपरीत होता है। प्रकृति का नियम विचित्र है।" (प्रेमचंद, 23)

शिवकुमार मिश्र यथार्थवाद के संबंध में लिखते हैं, "सच्चे और महान यथार्थवाद का लक्ष्य समाज, जीवन तथा मनुष्य के जीवन के यत्र-तत्र बिखरे स्फुट अंशों को परखने और मूर्त रूप में प्रस्तुत करने का नहीं होता, बल्कि उसकी दृष्टि उनके संपूर्ण रूप को उभारने की ओर रहती है। वह उन्हें उनकी संपूर्णता में ही देखने पर बल देता है।"(76)

डॉ. **नगेंद्र** का यथार्थवाद के संबंध में कहना है, "यथार्थवाद से तात्पर्य उस दृष्टिकोण से है जिसमें कलाकार अपने व्यक्तित्व को यथासंभव तटस्थ रखते हुए वस्तु को, जैसी वह है, वैसी ही देखता और चित्रित करता है। अर्थात् यथार्थवाद के लिए वस्तुगत दृष्टिकोण अनिवार्य है।"(3) इसी प्रकार **त्रिभुवन सिंह** ने यथार्थवाद की परिभाषा देते हुए कहा, "यथार्थवाद साहित्य की सर्वोत्तम शैली है जिसके द्वारा समसामयिक वास्तविक परिस्थितियों का विस्तार से चित्रण किया जाता है।"(2) **स्वामी रामतीर्थ** के अनुसार, "यथार्थवाद का अर्थ वह विश्वास या सिद्धांत है, जो जगत को वैसे ही स्वीकार करता है, जैसे हमें वह दिखाई देता है।"(3) उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि जीवन की सच्ची अनुभूति यथार्थ है, लेकिन जीवन की कलात्मक अभिव्यक्ति यथार्थवाद है। इस प्रकार, इस वस्तु जगत की गतिशीलता, उसका क्रिया-व्यापार, उसमें होने वाले परिवर्तन, चलने वाले आंतरिक और बाह्य संघर्ष, उसके व्यक्तित्व में निहित अंतर्विरोध, उसकी सोच, उसकी कल्पनाशीलता और उसके जीवन में होने वाले बदलाव भी इसी यथार्थ के अंग हैं।

यथार्थवादी साहित्य में मानव जीवन और समाज का जो चित्र प्रस्तुत होता है, उसका आधार कल्पना, भावना अथवा आदर्श नहीं, बल्कि भौतिक जगत की विद्यमान यथार्थ सत्ता होती है। एक यथार्थवादी कथाकार मानव जीवन के विविध पक्षों का यथातथ्य चित्रण करता है, जो अपनी यथार्थता के कारण विश्वसनीय और जीवंत प्रतीत होता है। वह साहित्य को केवल भावनात्मक अनुभूति या मानसिक तृप्ति का साधन नहीं मानता, बल्कि उसे समाज के विकास का सशक्त माध्यम बनाता है। इस प्रकार यथार्थ वही होता है, जो साहित्य में वास्तविक रूप में चित्रित किया जाता है। डॉ. राम अवध द्विवेदी के अनुसार— "Realism is stylistic picture of reality. It is reality put within a framework." (द्विवेदी, 116)।

यथार्थ और यथार्थवाद के विषय में विद्वानों के मत यह स्पष्ट करते हैं कि यथार्थवाद, यथार्थवादी साहित्य की केवल एक शैली नहीं, बल्कि उसमें निहित एक विशिष्ट विचारधारा है। यथार्थ की आधारभूमि पर आधारित यथार्थवाद, जीवन का नवीन चित्र प्रस्तुत करता है। यथार्थवाद हृदय से संबंधित भावभूमि है और यथार्थ उसका मूल स्रोत, जो अपनी विषयवस्तु जीवन के यथार्थ से ग्रहण करता है। यथार्थवाद के मूल में सामाजिक परिवर्तन की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। साहित्य में इन परिवर्तनों की अनुगूंज होती है; अतः साहित्य का यथार्थ से अविच्छिन्न संबंध होता है। यथार्थवाद जीवन की समग्र परिस्थितियों के प्रति ईमानदार और यथातथ्य निरूपण की भावना रखता है। वस्तु का जैसा स्वरूप है, उसे वैसा ही प्रस्तुत करना यथार्थवाद का प्रमुख उद्देश्य होता है।

संसार परिवर्तनशील है—यह सर्वथा सत्य है। इसलिए यथार्थ को जानना और उसे साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत करना यथार्थवादी विचारधारा का मुख्य लक्षण है। एक सुधारवादी साहित्यकार किसी भी परिस्थिति में यथार्थवादी दृष्टिकोण नहीं छोड़ता, यही यथार्थवाद की प्रमुख विशेषता है। इसी आधार पर कहा जा सकता है कि यथार्थवाद हिंदी कथा साहित्य की एक अनिवार्य प्रवृत्ति और चुनौती है। कुछ ही समय में यथार्थवाद ने कथा साहित्य में अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराई है। सामाजिक दृष्टि से देखा जाए तो यथार्थवाद एक स्वच्छ और जागरूक प्रवृत्ति के रूप में स्थापित हुआ है। साहित्यकार अपने इर्द-गिर्द घटित होने वाली घटनाओं को अपनी रचनाओं में सजीव रूप में प्रस्तुत करता है। इसलिए कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि साहित्यकार केवल समाज की कुरूपता को ही चित्रित करता है, परंतु यह भ्रम इसलिए उत्पन्न होता है क्योंकि वह वही दिखाता है जो कुछ उसने समाज में होते हुए प्रत्यक्ष देखा और भोगा होता है। अतः साहित्य में कुरूपता स्वतः आ जाती है। पाठक और साहित्यकार की दृष्टि में अंतर होता है। पाठक जहाँ साहित्य के बाह्य रूप को देखता है, वहीं साहित्यकार उसकी अंतर्वस्तु और संवेदनाओं को उजागर करता है, जो पाठक को प्रत्यक्षतः नहीं दिखतीं। इस प्रकार, यथार्थवादी साहित्य मानवीय भावनाओं और संवेदनाओं से गहरे स्तर पर जुड़ा होता है। समय निरंतर परिवर्तनशील है और यथार्थ भी उसी प्रकृति का होता है। वह सामयिकता के साथ बदलता रहता है। परिस्थितियों के अनुसार सत्य का स्वरूप भी परिवर्तित होता है। यथार्थ स्थिर नहीं होता। वह सदैव नवीन तथ्यों को उजागर करता है और पुराने तथ्यों को नवीन दृष्टिकोण से

व्याख्यायित करता है। यथार्थ निरपेक्षता और तटस्थता की स्थापना करता है। इसीलिए यथार्थवाद को विश्वसनीय साहित्यिक प्रवृत्ति माना गया है और यह सदैव अपनी प्रासंगिकता बनाए रखता है।

यथार्थवाद एक ऐसी साहित्यिक और दार्शनिक विचारधारा है, जो उस वस्तुगत एवं भौतिक जगत को सत्य मानती है, जिसका अनुभव मनुष्य इंद्रियों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से करता है। यह विचारधारा यह मानती है कि जो कुछ भी देखा, सुना और महसूस किया जा सकता है— वही वास्तविक है। यथार्थवादी चित्रण सजीव, जीवन-सापेक्ष तथा जनसामान्य के अनुभवों से जुड़ा होता है; वह कल्पना का नहीं, बल्कि अनुभूति और निरीक्षण का परिणाम होता है। यथार्थवाद साहित्य में उस प्रवृत्ति को कहते हैं, जो जीवन की घटनाओं, संघर्षों, संबंधों, परिवेशों और सामाजिक अंतर्विरोधों को उसी रूप में चित्रित करने का प्रयास करता है, जैसे वे वास्तव में घटित होते हैं। इस प्रक्रिया में लेखक अपनी कल्पनाशीलता का त्याग नहीं करता, अपितु उसे इस प्रकार संयोजित करता है कि उसका सृजन वस्तुस्थिति के अनुकूल, विश्वसनीय और प्रभावशाली बन सके।

यथार्थवादी रचना जीवन की सच्चाइयों का दर्पण होती है। लेखक वस्तुओं, घटनाओं और पात्रों का चित्रण जैसा देखा गया है वैसा ही करने का प्रयास करता है। इसमें कल्पना की उड़ान सीमित होती है और अनुभव, निरीक्षण तथा विश्लेषण की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। यथार्थ न तो केवल सुंदर होता है और न ही सदैव कुरूप। इसमें अच्छाई और बुराई, सत्य और असत्य, उजाला और अंधकार— सभी के समन्वय की संभावना रहती है। इसीलिए यथार्थवादी साहित्यकार जीवन के हर पक्ष को निष्पक्ष भाव से प्रस्तुत करता है। यह कहना कि यथार्थवादी साहित्य में कल्पना का कोई स्थान नहीं होता— पूर्णतः सही नहीं है। रचनाकार कल्पना का प्रयोग अवश्य करता है, किंतु वह कल्पना वस्तुस्थिति से विचलन नहीं करती, बल्कि उसे और अधिक प्रभावशाली, गूढ़ एवं व्याख्यात्मक बनाती है।

बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में हिंदी साहित्य में यथार्थवाद एक सशक्त साहित्यिक प्रवृत्ति के रूप में उभरा। इसके पीछे आर्थिक विषमता, वर्ग-संघर्ष, नगरीकरण, नारी-जागरण, राजनीतिक विघटन, आदि सामाजिक परिस्थितियाँ थीं। इस यथार्थ को केवल अनुभव से नहीं, अपितु गहन संवेदना से समझा जा सकता है। डॉ. त्रिभुवन सिंह के अनुसार, "सामाजिक

यथार्थ का अर्थ है— समाज की वास्तविक स्थिति का चित्रण करना। किंतु साहित्य में किसी वस्तु का केवल कैमरे जैसे चित्रण भर कर देना संभव नहीं होता। रचनाकार उसमें अपने अनुभव, दृष्टिकोण और संवेदना के रंग भरता है, जिससे वह यथार्थ सृजनात्मक बन जाता है।" (सिंह, पृ. 221)

अतः साहित्य में यथार्थ का चित्रण महज़ फोटोग्राफिक प्रतिकृति नहीं होता, अपितु रचनात्मक यथार्थ होता है— जिसमें लेखक अपने समय, समाज और परिस्थितियों को अपने भीतर के भावलोक के माध्यम से पुनः रचता है। नित्यानंद पटेल वेदालंकर भी इस विचार की पुष्टि करते हैं, "यह मानना पड़ेगा कि जिन उपन्यासों में यथार्थवाद की प्रधानता होती है, उनमें भी लेखक का व्यक्तित्व, दृष्टिकोण, भावना, राग-विराग एवं जीवन-दर्शन का समावेश होता ही है। यदि ऐसा न हो तो वे रचनाएँ केवल इतिहास, मनोविज्ञान या समाचार जैसी प्रतीत होंगी।" (पटेल, पृ. 544) यथार्थवादी साहित्य में सामाजिक मूल्य, दृष्टिकोण और परिवेश की सजगता, नारी जीवन की बहुआयामी समस्याएँ, आम आदमी के जीवन-संघर्ष और प्रतिष्ठा की खोज, राजनीतिक व्यवस्था की आलोचना व विरोध, महानगरीय जीवन की भयावहता और अस्तित्व-संकट, आर्थिक असमानता और संबंधों का विघटन, असमान सामाजिक ढांचे और उसके प्रभाव आदि विषयों की अभिव्यक्ति होती है। इन समस्त विषयों को लेखक सजीव, प्रामाणिक और मर्मस्पर्शी ढंग से प्रस्तुत करता है, जिससे पाठक को केवल ज्ञान नहीं, बल्कि संवेदना और प्रेरणा भी प्राप्त होती है।

डॉ. त्रिभुवन सिंह यथार्थ और यथार्थवाद में अंतरस्पष्ट करते हुए लिखते हैं, "यद्यपि यथार्थ और यथार्थवाद परस्पर घनिष्ठ हैं, फिर भी दोनों की प्रकृति भिन्न है। यथार्थवाद, यथार्थ की भूमि पर खड़ा वह दृष्टिकोण है जो जीवन की नवीन संरचना को कलात्मक रूप में प्रस्तुत करता है। यथार्थ हृदय की वस्तु है और यथार्थवाद उसका अभिव्यक्त माध्यम।" (सिंह, पृ. 7)। निष्कर्षतः यथार्थवाद साहित्य की एक अत्यंत महत्वपूर्ण विचारधारा है, जो केवल मनुष्य की हीनता और कुरूपता को नहीं, अपितु उसके समग्र जीवन को— उसके संघर्ष, आशा, संवेदना, और संभावनाओं सहित प्रस्तुत करने का प्रयास करती है। यह जीवन के सभी पक्षों— ऊँच-नीच, उज्ज्वल-अंधकारमय, सुख-दुख— का निष्पक्ष और ईमानदार चित्रण है। इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि यथार्थवाद साहित्य लेखन की वह विशिष्ट पद्धति है,

जो न केवल जीवन की सच्चाइयों को उजागर करती है, अपितु पाठक को उनके प्रति सोचने, समझने और बदलने के लिए भी प्रेरित करती है।

यथार्थवाद एक व्यापक और विस्तृत विषय है, जिसे समझने के लिए उसके स्वरूप का ज्ञान आवश्यक है। यह जीवन के सत्य को प्रामाणिक रूप में उद्घाटित करता है। यथार्थवाद को लेकर अनेक भ्रांतियाँ प्रचलित हैं, जैसे कि यथार्थवादी रचनाकार केवल समाज के कुरूप, घिनौने और नकारात्मक पक्षों को ही चित्रित करते हैं और उन्हें अपनी रचनाओं में विस्तारपूर्वक प्रस्तुत करते हैं, ताकि पाठक उनसे घृणा करें। किन्तु, यह धारणा एकपक्षीय और भ्रमित करने वाली है। यथार्थवाद को केवल इन भ्रांतियों के आधार पर खारिज कर देना समझदार पाठकों को गुमराह करने जैसा होगा। चूँकि यथार्थवाद वस्तुगत और प्रामाणिक होता है, अतः इसमें रचनाकार के निजी विचारों का प्रभाव सीमित होता है, यद्यपि चित्रण की शैली उसकी मौलिक हो सकती है। त्रिभुवन सिंह यथार्थवाद के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं— "यथार्थवाद न तो इतिहास है कि वह घटनाओं की मात्र सूची तैयार करता चले, न ही वह कैमरा है जो वस्तु को ज्यों का त्यों चित्रित कर दे। न ही वह अजायबघर है जो संसार की तमाम वस्तुओं को कागज़ पर संकलित कर दे, और न ही उसने मानव की जुगुप्सा या विलासी प्रवृत्तियों को संतुष्ट करने हेतु गोपनीय और जघन्य घटनाओं को प्रस्तुत करने का बीड़ा उठाया है। यथार्थवाद का एकमात्र उद्देश्य समाज को वस्तु-जगत की स्थितियों की ओर उन्मुख करना है।" (सिंह, पृ. 28) यथार्थवाद का अपना विशिष्ट शिल्प होता है, जो साहित्य और कला की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इससे अनेक विचारधाराएँ जुड़ी हैं; कई विचारधाराएँ यथार्थवाद से प्रभावित हुई हैं, और कुछ ने यथार्थवाद को भी प्रभावित किया है। यथार्थवाद के कुछ प्रमुख स्वरूपों का संक्षिप्त परिचय अगलिखित है—

सामाजिक यथार्थवाद : समाज में घटित घटनाएँ, सामाजिक गतिविधियाँ, स्वार्थ, दुःख, पीड़ा आदि का वास्तविक चित्रण साहित्यकार अपनी रचनाओं में करता है। यह चित्रण वह अपनी रचनात्मक आवश्यकता के अनुसार करता है। सामाजिक यथार्थवाद के संदर्भ में त्रिभुवन सिंह लिखते हैं— "यथार्थवादी साहित्यकार समाज और व्यक्ति के परस्पर संबंधों, उनके आचार-विचार, तथा उनकी राष्ट्रीय, आर्थिक एवं नैतिक स्थितियों का मूल्यांकन तत्कालीन परिस्थितियों के आधार पर करता है। वह केवल वर्णन नहीं करता, बल्कि ऐसा प्रस्तुतीकरण करता है जिससे पाठक युग-सत्य एवं समाज के औचित्य-अनौचित्य को भलीभाँति समझ

सके और उन मर्यादाओं का अनुसरण कर सके जो आदर्श समाज की स्थापना में सहायक हों।" (सिंह, पृ. 23) साहित्यकार समाज का यथावत चित्रण न कर, अपनी बौद्धिक विवेकशीलता और कल्पनाशक्ति से समाज के यथार्थ को साहित्य में रूपायित करता है। यही सामाजिक यथार्थ साहित्य में रुचि उत्पन्न करता है। साहित्य और समाज एक-दूसरे के पूरक हैं।

साहित्य में वही यथार्थ मान्य होता है, जिसकी अनुभूति स्वयं लेखक को होती है, और जो वह पाठकों तक संप्रेषित कर सकता है। सामाजिक यथार्थ की अवधारणा समयानुसार परिवर्तित होती रहती है। कथा-साहित्य के इतिहास से यह स्पष्ट है कि प्रत्येक साहित्यकार समाज के भीतरी यथार्थ को उजागर करने की कोशिश करता है। साहित्यकारों ने वर्ग-संघर्ष, सामाजिक विषमता, दरिद्रता, जीवन की विसंगतियाँ, कुंठाएँ, पारिवारिक एवं सामाजिक दमन, और नारी की स्थिति जैसे विषयों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। सामाजिक यथार्थ की अवधारणा युगीन परिस्थितियों पर आधारित होती है।

राजनीतिक यथार्थवाद : राजनीति केवल सत्ता-प्राप्ति का माध्यम नहीं, बल्कि समाज की दिशा और दशा को निर्धारित करने वाली एक प्रभावशाली प्रक्रिया है। साहित्य, जो मानव जीवन का दर्पण है, समाज के प्रत्येक आयाम को अपने भीतर समाहित करता है—और राजनीति, जो व्यक्ति के जीवन से लेकर सामूहिक चेतना तक को प्रभावित करती है, उससे अछूता रह ही नहीं सकता। सजग और यथार्थवादी साहित्यकार राजनीति से आँखें नहीं चुरा सकता। वह न केवल राजनीतिक घटनाओं और गतिविधियों का वर्णन करता है, बल्कि उनके पीछे छिपे सामाजिक, आर्थिक और नैतिक द्वंद्वों को भी उजागर करता है। राजनीति से प्रेरित साहित्य केवल घटनाओं का दस्तावेज़ नहीं होता, बल्कि वह जनमानस की पीड़ा, संघर्ष, विद्रोह और आशाओं को भी स्वर देता है। साहित्यकार अपने समय की राजनीतिक परिस्थितियों को शब्दों के माध्यम से इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि पाठक केवल घटनाओं से नहीं, बल्कि उनकी गहराई से भी जुड़ सके। चाहे वह सत्ता की निरंकुशता के विरुद्ध उठती आवाज़ हो, या फिर जनआंदोलनों में जनमानस की भागीदारी—साहित्य इन सबका संवेदनशील अभिलेख बन जाता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि राजनीति और साहित्य का संबंध केवल विषयवस्तु तक सीमित नहीं है, वह संवेदनाओं, विचारों और सामाजिक

चेतना के उस धरातल तक विस्तृत है जहाँ लेखक समाज को दिशा देने का प्रयास करता है।

प्रकृतिवादी यथार्थवाद : प्रकृतिवाद के अंतर्गत वे रचनाएँ आती हैं, जो प्रकृति के साथ सीधा संपर्क साधने का प्रयास कर यथार्थ को रूपायित करती हैं। यह विशेषतः उन 19वीं शताब्दी के कलाकारों का दृष्टिकोण था, जो मानव को किसी धार्मिक या नैतिक रूप में नहीं, अपितु प्रकृत रूप में प्रस्तुत करना चाहते थे। प्रकृतिवादी साहित्य जीवन को उसके नग्न और कठोर रूप में प्रस्तुत करता है, किसी भी विषय को साहित्य के लिए वर्जित नहीं मानता। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी ने लिखा है—“यथार्थवाद के नाम पर प्रस्तुत की गई रचनाओं में प्रायः विकृत और असंतुलित चरित्रों की जीवनगाथा प्रस्तुत की जाती है।”(वाजपेयी, पृ. 420) आधुनिक महानगरों की कृत्रिम, दमनकारी संस्कृति को उजागर करने के लिए यथार्थ का कटु चित्रण आवश्यक माना गया। इस वाद का आगमन भी अन्य आधुनिक विचारधाराओं की भांति पश्चिमी प्रभाव के फलस्वरूप हिंदी साहित्य में हुआ। यद्यपि यथार्थवाद और प्रकृतिवाद को प्रायः समानार्थक समझा जाता है, परंतु प्रकृतिवाद विशुद्ध भौतिकता का पक्षधर है, और इसे यथार्थवाद का विकृत रूप माना जाता है। हिंदी कहानी में प्रकृतिवादी प्रवृत्तियाँ लोकप्रिय नहीं हो सकीं, यद्यपि आचार्य चतुरसेन शास्त्री, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' जैसे रचनाकारों की कुछ रचनाएँ इस प्रवृत्ति का उदाहरण मानी जा सकती हैं।

मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद : मनोविज्ञान और यथार्थवाद का अंतर्संबंध साहित्य को नई दृष्टि प्रदान करता है। मनोविज्ञान ने यथार्थवाद को न केवल एक नवीन आयाम दिया है, बल्कि उसे जीवन की भीतरी परतों तक पहुँचने का मार्ग भी उपलब्ध कराया है। साहित्य जीवन का प्रतिबिंब होता है, और जीवन स्वयं अनेक मानसिक और भावनात्मक जटिलताओं से निर्मित होता है। इन मानसिक आंदोलनों की गहराई को समझे बिना यथार्थ का संपूर्ण चित्रण अधूरा रह जाता है। यथार्थवाद का स्वरूप केवल बाह्य परिस्थितियों के वर्णन तक सीमित नहीं है, बल्कि वह व्यक्ति के अंतर्मन में उठते भावों, अनुभूतियों और संघर्षों को भी अपने दायरे में समाहित करता है। इस संदर्भ में मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद का विशेष महत्त्व है। इसमें लेखक न केवल पात्रों की क्रियाओं का चित्रण करता है, बल्कि उनके मन के भीतर उठने वाले विचारों, द्वंद्वों और गूढ़ अनुभूतियों को भी उद्घाटित करता है। कृपाशंकर पांडेय का मत इस संदर्भ में अत्यंत सारगर्भित है। वे लिखते हैं— "मनोवैज्ञानिक

यथार्थवाद साहित्य में मनुष्य के भीतर के समस्त भावनात्मक उतार-चढ़ावों का चित्रण करता है। इसके अंतर्गत रचनाकार मानव के अंतर्मन की गूढ़ जड़ों को समझने का प्रयास करता है।" (पांडेय, पृ. 25)

मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद न केवल मनुष्य के भीतर के संघर्षों को उजागर करता है, बल्कि उसकी आशाओं, निराशाओं, कुंठाओं और अवसादों को भी कलात्मक रूप से रूपायित करता है। यह साहित्य को केवल बाह्य जीवन का दस्तावेज़ नहीं, बल्कि एक गहन आत्मीय माध्यम बनाता है, जहाँ मानव मन के अंधेरे कोनों को भी उजाला मिल सके। इस प्रकार, मनोविज्ञान और यथार्थवाद का संगम साहित्य को केवल यथार्थ की बाहरी परिधियों तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे उस गहराई तक ले जाता है जहाँ मनुष्य स्वयं अपने भीतर झाँकने को विवश होता है।

ऐतिहासिक यथार्थवाद : साहित्य केवल वर्तमान का ही नहीं, अपितु अतीत का भी संवाहक होता है। जब साहित्यकार इतिहास की घटनाओं का कल्पनाशील, तथापि तथ्यपरक रूप में पुनर्रचना करता है, तो यह प्रक्रिया ऐतिहासिक यथार्थवाद कहलाती है। इसका उद्देश्य केवल इतिहास को दोहराना नहीं होता, वरन् अतीत को वर्तमान संदर्भ में पुनर्रपरिभाषित करना होता है। इसमें लेखक अतीत की घटनाओं, परिस्थितियों और चरित्रों को इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि पाठक उन्हें जीवंत, विश्वसनीय और यथार्थपूर्ण अनुभव कर सके। ऐतिहासिक यथार्थवाद में कालक्रमानुसार व्यवस्थित तथ्यों को साहित्यिक कल्पना से इस प्रकार संयोजित किया जाता है कि वह न तो शुष्क इतिहास बनकर रह जाए और न ही केवल कल्पनालोक। इसमें ऐतिहासिक सच्चाइयों के माध्यम से समाज, संस्कृति और राजनीति की गहन पड़ताल की जाती है। त्रिभुवन सिंह के शब्दों में— "वर्तमान की कमजोरियों के कारण अतीत की ओर आकर्षण और जीवन की नई व्याख्या करने की प्रेरणा उपन्यासकार को ऐतिहासिक यथार्थ की सृष्टि की ओर प्रेरित करती है।" (सिंह, पृ. 34) यह कथन स्पष्ट करता है कि जब वर्तमान में सामाजिक, नैतिक या राजनीतिक स्तर पर अव्यवस्था फैलती है, तब लेखक अतीत की ओर लौटता है— न कि केवल उसकी महिमा गान करने के लिए, बल्कि वहाँ से प्रेरणा प्राप्त कर वर्तमान को दिशा देने के लिए।

ऐतिहासिक यथार्थवाद, वस्तुतः, अतीत और वर्तमान के बीच एक संवाद है। यह अतीत को आधुनिक संदर्भों में पुनः समझने और समझाने की चेष्टा करता है। यथार्थवादी रचनाकार के लिए यह केवल बीते युगों का वर्णन नहीं, बल्कि एक ऐसा सृजनात्मक उपकरण है, जिससे वह समसामयिक समस्याओं की जड़ों तक पहुँचता है और उनके समाधान की राह तलाशता है। इस संदर्भ में सुभद्राकुमारी चौहान का प्रसिद्ध काव्य-नायिका आधारित गद्यात्मक काव्य 'झांसी की रानी' का उदाहरण उल्लेखनीय है। रानी लक्ष्मीबाई के साहस, देशभक्ति और बलिदान की गाथा को उन्होंने केवल एक वीरांगना की स्तुति नहीं बनाया, बल्कि ब्रिटिश दमन और भारतीय आत्मसम्मान के संघर्ष का प्रतीक रूप प्रदान किया। इस रचना में ऐतिहासिक तथ्यों को कल्पनाशील और भावनात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि पाठक केवल इतिहास नहीं पढ़ता, बल्कि उस यथार्थ को अनुभूत करता है। इस प्रकार, ऐतिहासिक यथार्थवाद साहित्य में न केवल ऐतिहासिक संवेदनशीलता को उजागर करता है, बल्कि यह वर्तमान की चेतना को भी प्रखर बनाता है। यह अतीत और वर्तमान के बीच की सेतु के रूप में कार्य करता है, जिससे साहित्य और समाज दोनों को नवीन दृष्टिकोण प्राप्त होता है।

अति-यथार्थवाद : अति-यथार्थवाद (Surrealism) का उद्भव बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में फ्रांस में हुआ, जो कला, साहित्य और मनोविज्ञान की जटिल परतों से जुड़ी एक अत्यंत विशिष्ट साहित्यिक प्रवृत्ति के रूप में सामने आया। यह वह धारा है जो यथार्थ के पार जाकर अवचेतन, स्वप्न, तर्कविहीन अनुभूतियों तथा गहन मानसिक अंतर्वस्तु को रचनात्मक रूप से प्रस्तुत करती है। अति-यथार्थवादी साहित्यकार या कलाकार यथार्थ की पारंपरिक सीमाओं और सामाजिक अनुशासनों को तोड़ते हुए अपने भीतर के उस अनुभव-जगत को अभिव्यक्त करता है जो न तो पूर्णतः तर्कसंगत होता है, न ही प्रत्यक्ष अनुभवजन्य। यह प्रवृत्ति विशेष रूप से ज़िगमंड फ्रायड के मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांतों से प्रेरित थी, जिसमें अवचेतन मन की भूमिका को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया। इस विधा में लेखक अपने स्वप्नों, अज्ञात मानसिक अनुभूतियों, छायाचित्रों, प्रतीकों और असंबद्ध कल्पनाओं को स्वतःस्फूर्त रूप में प्रस्तुत करता है, ताकि मानव मन की गहराइयों को उजागर किया जा सके। अतः यह विधा तर्क, नैतिकता, परंपरा, सौंदर्यशास्त्र और आदर्शवाद जैसे बौद्धिक नियंत्रणों को अस्वीकार कर रचनात्मक स्वतंत्रता को सर्वोच्च मानती है। इस प्रकार अति-

यथार्थवाद को "रचनात्मक स्वच्छंदता की पराकाष्ठा" भी कहा जा सकता है। यह उस कलात्मक अभिव्यक्ति को जन्म देता है, जो केवल बाह्य जगत को नहीं, अपितु अंतर्मन के रहस्यों, छायाओं और विस्मृत अनुभूतियों को भी उजागर करती है। अति-यथार्थवादी साहित्य में यथार्थ और कल्पना के बीच कोई स्पष्ट विभाजन नहीं होता। वहाँ स्वप्न और वास्तविकता, तार्किकता और अतार्किकता, दिन और रात्रि की सीमाएँ धुंधली पड़ जाती हैं। इसका उद्देश्य यथार्थ की जड़ता से मुक्ति पाकर उस ऊर्जावान सृजनशीलता को खोजना होता है, जो कहीं न कहीं हर व्यक्ति के भीतर अवचेतन रूप में विद्यमान होती है। प्रसिद्ध अति-यथार्थवादी कलाकार साल्वाडोर डाली की चित्रकृतियाँ और आंद्रे ब्रेताँ का साहित्य इस प्रवृत्ति के प्रभावशाली उदाहरण हैं। हिंदी साहित्य में इस प्रवृत्ति के स्पष्ट प्रभाव कम देखने को मिलते हैं, किंतु कुछ प्रयोगशील कविताओं और रचनाओं में स्वप्न, प्रतीक और अवचेतन की शैली में अति-यथार्थवादी स्वर झलकते हैं। अंततः, अति-यथार्थवाद साहित्य और कला को एक ऐसी राह दिखाता है, जहाँ कल्पना, अनुभव और मानसिक तरलता एक-दूसरे में विलीन होकर एक नवीन यथार्थ की रचना करते हैं— एक ऐसा यथार्थ जो दृष्टिगोचर नहीं, अपितु अनुभूत होता है।

यद्यपि अति-यथार्थवाद मुख्यतः यूरोपीय साहित्य और कला में विकसित हुआ, तथापि हिंदी साहित्य में भी इस प्रवृत्ति के प्रभाव स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं—विशेषतः प्रयोगवाद और नव-कविता के दौर में। इन धाराओं में कई कवियों और लेखकों ने अवचेतन मन, स्वप्न, प्रतीकों और अतार्किक भाव-बिंबों का सहारा लेकर एक नवीन यथार्थ का सृजन किया। अज्ञेय की कविताएँ इस संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उनकी कविताओं में व्यक्ति के भीतरी द्वंद्व, अव्यक्त भावनाएँ, और मानसिक गहराइयाँ अति-यथार्थवादी शिल्प में प्रकट होती हैं। जैसे उनकी कविता "असाध्यवीणा" में अवचेतन की ध्वनियाँ और रहस्यमय संकेत एक विशेष भावबोध उत्पन्न करते हैं। शमशेर बहादुर सिंह की कविताएँ भी अति-यथार्थवादी रुझानों की ओर संकेत करती हैं। उनकी कविता "उषा" में वर्णन बाह्य दृश्य का होते हुए भी, अनुभव अंतर्मन का होता है—जहाँ रंग, गंध, और ध्वनि स्वप्न की भाँति बहते हैं। वह बिंबों और प्रतीकों के माध्यम से ऐसा वातावरण रचते हैं जहाँ यथार्थ और कल्पना का अंतर मिटता-सा प्रतीत होता है। कुंवर नारायण, केदारनाथ सिंह, और रघुवीर सहाय की कुछ कविताएँ भी अवचेतन, स्वप्न और मानसिक स्थितियों के गहन

विश्लेषण में प्रवृत्त दिखाई देती हैं। विशेषतः आधुनिक कविता में 'स्वप्न और स्मृति की कोलाज शैली' का उपयोग कहीं न कहीं अति-यथार्थवाद की छाया लिए होता है। हिंदी कहानी साहित्य में भी कमलेश्वर और मोहन राकेश जैसे लेखकों की कुछ कहानियों में मानसिक विसंगतियों और अतार्किक व्यवहारों का विश्लेषण अति-यथार्थवादी दृष्टिकोण से हुआ है, विशेषकर शहरी जीवन की जटिलताओं में।

आध्यात्मिक यथार्थवाद : यथार्थवाद को सामान्यतः सामाजिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक या ऐतिहासिक संदर्भों में देखा और समझा जाता है, किंतु भारतीय साहित्यिक परंपरा में यथार्थ का एक विशिष्ट और गहन आयाम है—आध्यात्मिक यथार्थवाद, जो हमारे प्राचीन ग्रंथों, दर्शन और सांस्कृतिक चेतना से अनुप्राणित है। भारतीय चिंतन में यथार्थ का तात्पर्य केवल दृश्य, परिवर्तनशील या भौतिक जगत तक सीमित नहीं है। भारतीय दर्शन के अनुसार, यथार्थ वही है जो शाश्वत है, चिरंतन है, जो समय और परिस्थितियों से परे, अपरिवर्तनशील रहता है। इस संदर्भ में 'ईश्वर', 'आत्मा' और 'जगत' को यथार्थ के तीन अनिवार्य तत्व माने गए हैं। ईश्वर का आत्मतत्त्व, जीवात्मा की चेतना और सृष्टि का नियमन— all these constitute the Indian spiritual reality. प्राचीन ग्रंथों में वर्णित यह दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से संकेत करता है कि वह सब कुछ जिसमें ईश्वर का अंश है—वह यथार्थ है। डॉ. सिंह (2020) के अनुसार— "यदि हम कला और साहित्य में यथार्थवाद को वस्तुपरक रूप में प्राप्त यथार्थ की एक पहचान मानें, तो यह निश्चित है कि हमें इसे केवल बाह्य जगत तक सीमित नहीं करना चाहिए। यथार्थ वह भी है जो हमारी चेतना में स्वतंत्र रूप से विद्यमान रहता है, और यह चेतना केवल भौतिक ही नहीं, आध्यात्मिक स्तर पर भी क्रियाशील होती है।" (सिंह, पृ. 263) इस प्रकार, आध्यात्मिक यथार्थवाद भारतीय साहित्य में एक व्यापक और सूक्ष्म भूमिका निभाता है। यहाँ रचनाकार न केवल अपने भौतिक अनुभवों, सामाजिक संघर्षों और मानसिक द्वंद्वों का चित्रण करता है, बल्कि वह आत्मा की गहराइयों में जाकर उस शाश्वत सत्य की खोज भी करता है जो मनुष्य के जीवन को सार्थक बनाता है।

भारतीय साहित्य का यह पक्ष जीवन के भौतिक संघर्षों और पीड़ाओं को नकारते नहीं, बल्कि उन्हें एक उच्च उद्देश्य से जोड़ते हैं—मानव जीवन के परिष्कार और मुक्ति की ओर प्रेरित करते हुए। आध्यात्मिक यथार्थवाद इस विचार को स्थापित करता है कि मनुष्य

का अस्तित्व केवल देह, मन और समाज के दायरे में नहीं सिमटा हुआ, बल्कि वह एक दिव्य चेतना का वाहक है, जो आत्मानुभूति और ईश्वरबोध के माध्यम से अपनी पूर्णता की ओर अग्रसर हो सकता है। आज के भौतिकवादी, उपभोक्तावादी और आत्मकेन्द्रित युग में जब जीवन निरंतर यांत्रिकता और तनाव से जूझ रहा है, तब साहित्य को केवल सामाजिक यथार्थ का चित्रण करने तक सीमित कर देना अपर्याप्त प्रतीत होता है। साहित्य को चाहिए कि वह व्यक्ति को उसके 'पूर्ण' स्वरूप—शरीर, मन और आत्मा—के साथ जोड़ते हुए, उसे जीवन के उच्चतर उद्देश्यों की ओर उन्मुख करे। आध्यात्मिक यथार्थवाद यही कार्य करता है—वह साहित्य को केवल एक दर्पण नहीं, बल्कि एक दीपस्तंभ बनाता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि भारतीय साहित्य में यथार्थवाद का आध्यात्मिक संदर्भ न केवल गूढ़ दार्शनिक विचारों का संवाहक है, बल्कि वह मानव जीवन के संतुलन, संतोष और सार्थकता की ओर भी इंगित करता है। यह साहित्यकार और पाठक, दोनों को एक व्यापक और गहराईयुक्त दृष्टिकोण प्रदान करता है—जहाँ यथार्थ केवल देखा नहीं जाता, जिया भी जाता है।

निष्कर्षतः, यथार्थवाद साहित्य की एक ऐसी सशक्त और बहुआयामी शैली है, जो जीवन की जटिलताओं, संघर्षों, और अनुभवों को वास्तविकता की भूमि पर उकेरने का प्रयास करती है। यह केवल घटनाओं का वस्तुपरक चित्रण नहीं है, बल्कि साहित्यकार की सामाजिक चेतना, मानवीय करुणा, और उत्तरदायित्व-बोध का जीवंत प्रमाण भी है। साहित्यकार जब यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाता है, तो वह समाज की समस्याओं, विडंबनाओं, और अंतर्विरोधों को महज दिखाने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि उनके संभावित समाधान की ओर भी संकेत करता है। सामाजिक यथार्थवाद में जहाँ व्यक्ति और समाज के परस्पर संबंधों की पड़ताल होती है, वहीं राजनीतिक यथार्थवाद सत्ता, व्यवस्था और वैचारिक टकरावों को उद्घाटित करता है। ऐतिहासिक यथार्थवाद अतीत की घटनाओं को वर्तमान की चेतना से जोड़ता है, जबकि मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद मानव अंतर्मन की परतों को खोलता है। इसी क्रम में प्रकृतिवादी यथार्थवाद व्यक्ति को प्रकृति और परिस्थिति की दासता में चित्रित करता है। इन सभी उपधाराओं के माध्यम से यथार्थवाद न केवल साहित्य को जीवन के निकट लाता है, बल्कि उसे समाज के दर्पण से आगे बढ़ाकर एक दिशा-निर्देशक, एक बौद्धिक पथ-प्रदर्शक के रूप में भी स्थापित करता है। यह शैली पाठक को

सोचने, समझने और प्रश्न करने की प्रेरणा देती है, जिससे वह न केवल यथास्थिति को स्वीकार करता है, बल्कि परिवर्तन की आकांक्षा भी संजोता है। इस प्रकार, यथार्थवादी साहित्य केवल जीवन का चित्रण नहीं करता, वह जीवन को गढ़ने की आकांक्षा भी रखता है। यही उसकी सबसे बड़ी विशेषता और प्रासंगिकता है।

1.3 यथार्थबोध: उद्भव एवं विकास

यथार्थबोध (Realism) का उद्भव और विकास साहित्य, कला और समाज के विभिन्न पहलुओं से जुड़ा हुआ है। यह एक विचारधारा है जो जीवन के वास्तविक पहलुओं, तथ्यों और घटनाओं को प्रमुखता देती है, और इसे साहित्यिक, दार्शनिक, और कलात्मक दृष्टिकोण से समझने की कोशिश करती है। यथार्थबोध ने समाज के विभिन्न वर्गों, उनके संघर्षों, और जीवन के जटिलताओं को चित्रित किया है। यथार्थबोध का वास्तविक उद्भव 19वीं शताब्दी में हुआ, जब यूरोप में औद्योगिक क्रांति और समाज में आई त्वरित बदलावों के कारण सामाजिक और मानसिक दृष्टिकोण में बदलाव आया। इस समय में उपनिवेशवाद, युद्ध, और दार्शनिक विचारधाराओं का प्रभाव था। यथार्थबोध ने कला और साहित्य में रोमांटिकता से हटकर वास्तविक जीवन के कठिन पहलुओं और रोज़मर्रा की घटनाओं को प्रकट किया। यह मान्यता सामने आई कि साहित्य और कला केवल आदर्शों और कल्पनाओं का चित्रण नहीं, बल्कि समाज के वास्तविक तथ्यों और संघर्षों का आईना होनी चाहिए।

रोमांटिक आंदोलन के अंतर्गत साहित्यकारों ने कल्पनाओं, आदर्शों और भावनाओं को प्रमुखता दी थी। लेकिन जैसे-जैसे समाज में उथल-पुथल और असमानताएँ बढ़ने लगीं, साहित्यकारों ने वास्तविकता को अधिक प्रकट करने की आवश्यकता महसूस की। इस समय यथार्थवाद ने जन्म लिया, जिसमें लेखक ने जीवन के कठिन पहलुओं और समस्याओं को बिना किसी सजावट के सामने रखा। यह समय था जब समाज में गरीबों और श्रमिकों की स्थिति, युद्ध के प्रभाव, और मानव जीवन की सच्चाईयों को वास्तविक रूप में चित्रित किया गया। यथार्थबोध के विकास में विशेष रूप से समाज की बदलती संरचना और विचारधाराएँ महत्वपूर्ण हैं। मध्यवर्गीय समाज, औद्योगिकीकरण, और शहरीकरण ने यथार्थबोध को एक नई दिशा दी। यथार्थवाद अब केवल साहित्य तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह समाज,

राजनीति और कला के अन्य क्षेत्रों में भी फैल गया। यह सोच भी पैदा हुई कि साहित्यकार का कर्तव्य केवल समाज की वास्तविक स्थिति को दिखाना है, न कि उसे आदर्शित करना।

यथार्थवाद में मनोविज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। विशेष रूप से 19वीं शताब्दी के अंत में, मनोविज्ञान के विकास ने यथार्थवाद को और गहरा किया। यथार्थवादी लेखक न केवल बाहरी घटनाओं का चित्रण करते थे, बल्कि पात्रों के आंतरिक संघर्षों और मानसिक स्थितियों को भी सामने लाते थे। उदाहरण के लिए, आर्थर चेकहोव और एंटोइन चेखव ने अपने लेखन में पात्रों के मनोवैज्ञानिक पहलुओं को प्रमुखता दी, जिससे यथार्थवाद का दायरा और विस्तृत हुआ। इसी तरह साहित्य और समाजशास्त्र का भी एक गहरा संबंध है। समाजशास्त्र में यथार्थवादी दृष्टिकोण ने समाज के विभिन्न वर्गों की वास्तविक स्थिति को उजागर किया। यह विचारधारा समाज में व्याप्त असमानताओं, वर्ग भेदभाव, और अन्याय को समाज के सामने लाने के लिए उत्प्रेरक बनी। समाजशास्त्रियों ने भी यथार्थवाद को एक महत्त्वपूर्ण उपकरण के रूप में देखा, जिससे समाज की समस्याओं को बेहतर तरीके से समझा जा सकता था।

यथार्थबोध की विशेषताओं में सामाजिक यथार्थ, प्राकृतिक चित्रण, पारदर्शिता और निष्पक्षता और आध्यात्मिक विचारों का समावेश आवश्यक है- सामाजिक यथार्थ के अंतर्गत यथार्थवादी लेखक समाज के गरीब, उत्पीड़ित और असमान वर्गों की स्थितियों को प्रमुखता से चित्रित करते थे। यथार्थवाद में प्राकृतिक वातावरण को भी यथार्थ रूप में चित्रित किया जाता है, बिना किसी आदर्शवादिता के। पारदर्शिता और निष्पक्षता में यथार्थवादी लेखक समाज की समस्याओं, चरित्रों और परिस्थितियों को बिना किसी आभूषण के चित्रित करते थे। इसी तरह यथार्थवाद का आध्यात्मिक संदर्भ भी देखा गया है, जहां यह जीवन के वास्तविक उद्देश्य और मनुष्य के आत्मिक विकास को उजागर करता है। आज भी यथार्थबोध का प्रभाव साहित्य, कला, फिल्म और अन्य मीडिया पर देखा जाता है। समाज की वास्तविकताएँ, व्यक्तित्व के संघर्ष और आंतरिक उथल-पुथल को आज भी यथार्थवादी दृष्टिकोण से चित्रित किया जाता है। यथार्थवाद ने साहित्य को केवल काव्य और कल्पना के माध्यम से नहीं, बल्कि समाज की असलियत को सामने लाने के माध्यम से देखा।

निष्कर्षतः, यथार्थबोध का उद्भव और विकास एक प्राकृतिक और आवश्यक प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है, जो समाज के बदलते हुए दृष्टिकोण, मानसिकता और सांस्कृतिक परिवर्तनों से प्रभावित हुआ। यह साहित्य और कला के क्षेत्र में न केवल एक आंदोलन था, बल्कि इसने समाज और जीवन को एक नया दृष्टिकोण दिया। यथार्थबोध ने जीवन के असली रूप को सामने लाकर साहित्य को केवल कल्पना का नहीं, बल्कि समाज के वास्तविक चिंतन का दर्पण बना दिया।

1.4 पश्चिमी साहित्य और यथार्थबोध

यथार्थवाद पाश्चात्य साहित्यशास्त्र की एक प्रमुख विचारधारा है। इसका प्रारंभ स्वच्छंदतावाद (Romanticism) के विरोध में हुआ। स्वच्छंदतावादी कवि रचनाओं में कल्पना को प्रमुख स्थान देते थे, और जीवन के बारे में नए-नए स्वप्न देखने की प्रवृत्ति रखते थे। वे आदर्श समाज की परिकल्पना प्रस्तुत करते थे। इसी आदर्शवादी विचारधारा के विरोध में यथार्थवाद का जन्म हुआ। यथार्थवाद का मुख्य उद्देश्य वास्तविकता को सामने लाना और समाज के वास्तविक पहलुओं को उजागर करना था। यथार्थवाद के प्रारंभ के मूल में वैज्ञानिक आविष्कार और औद्योगिक प्रगति को प्रमुख कारण माना जाता है। 18वीं सदी के उत्तरार्ध में फ्रांस में हुई राज्य क्रांति ने एक नई सोच की शुरुआत की। इस क्रांति के बाद धर्म और ईश्वर के स्थान पर मनुष्य ही मनुष्य की चिंता का केंद्र बन गया। आस्था के स्थान पर विवेक को महत्व दिया जाने लगा। इस बदलाव ने ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कीं जो यथार्थवाद के अनुकूल थीं। यूरोप में गॉसिप घटनाओं, प्रतीकात्मक कल्पनाओं से बाहर निकलकर साहसी यात्राओं, सामाजिक घटनाओं और खगोलीय दृश्यों के रूप में यथार्थ साहित्य सामने आया।

19वीं सदी में कथा साहित्य के क्षेत्र में यथार्थ की प्रधानता ने पाठकों के मन में उत्सुकता को बढ़ावा दिया। इसके परिणामस्वरूप सामाजिक समस्याओं का यथार्थ कथा साहित्य में प्रस्तुत होने लगा। 19वीं सदी में, चार्ल्स डार्विन के विकासवाद ने ब्रह्मांड की उत्पत्ति और प्राणी जगत की विकास को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखने का नजरिया दिया, जबकि कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स ने दर्शन, इतिहास, सामाजिक विज्ञान, राजनीतिक विज्ञान, और अर्थशास्त्र की अवधारणाओं द्वारा दुनिया को देखने और समझने के दृष्टिकोण

को बदला और साथ ही दुनिया को बदलने का रास्ता भी दिखाया। यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तु को यथार्थवाद का जनक माना जाता है। उनका मानना था कि यथार्थ मानव कल्पना से परे है। उनके अनुसार तीन प्रकार की वस्तुएं हो सकती हैं- वास्तविक यथार्थ - जैसा है, कल्पित यथार्थ - जैसा समझा या कहा जाता है, और संभाव्य यथार्थ - जैसा होना चाहिए। इन तीनों को क्रमशः प्रतीयमान, सम्भाव्य और आदर्श रूप में माना गया है। अरस्तु का यथार्थवाद इस बात पर जोर देता है कि मनुष्य को दुनिया के बारे में सीखना चाहिए और जीवन को वास्तविक रूप में समझना चाहिए।

जर्मन दार्शनिक फ्रेडरिक नीत्शे ने घोषणा की थी कि अब "ईश्वर मर चुका है" और ईश्वर रहित संसार में मनुष्य अकेला रह गया है। नीत्शे ने देवत्व की स्थापना को खारिज कर दिया और मानव सभ्यता को सर्वश्रेष्ठ सोपान पर स्थापित करने का पक्ष लिया। वे मानते थे कि ईश्वर की अपेक्षा मनुष्य को मान्यता वादी आदर्शों का अनुसरण करना चाहिए और श्रेष्ठ मनुष्य बनने की दिशा में प्रयास करना चाहिए। उनके विचार से ईश्वरीय गुणों से आभूषित होने की चाह के बजाय श्रेष्ठता और लोक कल्याण के लिए श्रेष्ठ मनुष्य बनना अधिक श्रेयस्कर है।

यथार्थवाद एक कलात्मक आंदोलन था, जो 1848 की क्रांति के आसपास फ्रांस में उभरा। यह विचारधारा अपने निश्चित सिद्धांत के रूप में कला और साहित्य के क्षेत्र में 19वीं शताब्दी में प्रकट हुई। इस सदी की शुरुआत से फ्रांसीसी साहित्य और कला पर यथार्थवाद का प्रभाव हावी था। यथार्थवाद के प्रमुख मील के पत्थर दो घटनाएँ थीं। पहली- 1855 में फ्रांसीसी चित्रकार गुस्ताव कौवे ने अपने चित्रों का प्रदर्शन किया, जिसमें यथार्थवादी निरूपण की शैली का प्रयोग किया गया। इस समय के दौरान "रियलिज़्म" शब्द का प्रयोग किया गया। और दूसरी- 1856 में फ्लॉबेर का प्रसिद्ध उपन्यास 'मैडम बवरी' प्रकाशित हुआ, जो यथार्थवादी आंदोलन की एक और महत्वपूर्ण घटना थी। इन घटनाओं के बाद यथार्थवाद ने कला और साहित्य में अपनी मजबूत पहचान बनाई। इस प्रकार, यथार्थवाद का उद्भव और विकास 18वीं और 19वीं सदी की परिस्थितियों, पश्चिमी आंदोलन, क्रांतियों और औद्योगिकीकरण की देन था। इन सभी ने भारत में भी यथार्थवाद के बीज बोने का कार्य किया। यथार्थवाद को कभी-कभी वास्तुवाद (Realism) के नाम से भी जाना जाता है, क्योंकि यह वास्तविकता और जीवन के यथार्थ रूप को प्रस्तुत करता है।

यथार्थवाद मूलतः पश्चिमी साहित्य की एक सशक्त एवं प्रभावशाली अवधारणा है, जिसकी बुनियाद भौतिकतावादी दृष्टिकोण पर टिकी हुई है। यह विचारधारा जीवन और जगत की उस वास्तविकता को स्वीकार करती है, जो प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा जानी और समझी जा सकती है। यथार्थवाद मानता है कि जो कुछ मनुष्य अपनी इंद्रियों के माध्यम से देखता है, सुनता है, अनुभव करता है— वही सत्य है, वही यथार्थ है। साहित्य में यथार्थवाद का आशय है— जीवन की घटनाओं, स्थितियों और परिवेश का यथासंभव निष्कलुष, सटीक और संवेदनशील चित्रण करना। इसमें कल्पना की उड़ान की अपेक्षा, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक यथार्थ की सूक्ष्मतम अभिव्यक्ति प्रमुख होती है। यह किसी कृत्रिम सौंदर्यबोध या अलौकिक आदर्शवाद से दूर रहकर, मानव-जीवन की सभी छवियों— सुंदर या असुंदर, उज्ज्वल या धुंधली, सौम्य या संघर्षपूर्ण— को निष्पक्षता से प्रस्तुत करने पर बल देता है। यथार्थवादी साहित्यकार का उद्देश्य केवल मनोरंजन या कल्पनालोक में ले जाना नहीं होता, बल्कि पाठक को जीवन की सच्चाइयों से परिचित कराना होता है। यही कारण है कि यथार्थवाद में जीवन के छोटे-बड़े, साधारण और असाधारण, सभी प्रकार के अनुभवों का चित्रण होता है, बिना किसी आडंबर या अलंकरण के।

यथार्थवाद केवल दृश्य और भौतिक सत्य को प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति नहीं है, बल्कि यह एक दृष्टिकोण है— जो साहित्यकार को जीवन के गहन अनुभवों और सामाजिक यथार्थ को समझने और अभिव्यक्त करने की शक्ति देता है। इस विचारधारा में सत्य को केवल तर्क या अनुभव से नहीं, बल्कि संवेदना और विवेक से भी ग्रहण किया जाता है। जब कोई रचनाकार अपने सामाजिक परिवेश को पूरी संवेदनशीलता, ईमानदारी और कलात्मक कुशलता से प्रस्तुत करता है, तो उसमें यथार्थबोध परिलक्षित होता है। यही यथार्थबोध यथार्थवादी साहित्यकार की पहचान और उसका वैचारिक आभूषण बन जाता है। यथार्थवादी साहित्यकार केवल घटनाओं का विवरण नहीं देता, बल्कि उनके भीतर की सामाजिक, नैतिक और मानवीय जटिलताओं को उद्घाटित करता है। वह पात्रों की भीतरी दुनिया, उनके मनोविज्ञान, संघर्ष, भय, आशा और विफलताओं को भी उतनी ही सजीवता से चित्रित करता है जितनी बाह्य परिस्थितियों को। इसीलिए यथार्थवाद न केवल वस्तुनिष्ठता की मांग करता है, बल्कि साहित्यकार की आंतरिक दृष्टि और उसकी संवेदनशीलता की भी परीक्षा लेता है।

यथार्थबोध का तात्पर्य है—जीवन के वास्तविक रूप का बोध, उसकी गहराइयों और परतों को समझने की दृष्टि। यह केवल दृश्य अनुभव या सतही ज्ञान नहीं, बल्कि व्यक्ति की संवेदना, विवेक और गहन निरीक्षण क्षमता से उपजने वाला एक आंतरिक बोध है। पश्चिमी साहित्य में यह बोध विशेष रूप से उन लेखकों की रचनाओं में परिलक्षित होता है जिन्होंने समाज की कड़वी सच्चाइयों को बिना लाग-लपेट के प्रस्तुत किया। जैसे— गुस्ताव फ्लॉबेयर की "मैडम बोवेरी", चार्ल्स डिकेन्स की "ओलिवर ट्विस्ट" और "हार्ड टाइम्स", लियो टॉलस्टॉय की "अन्ना कैरेनिना", दॉस्तोएव्स्की की "क्राइम एंड पनिशमेंट", इन रचनाओं में पात्रों की मनोवैज्ञानिक जटिलता, सामाजिक विडंबना, नैतिक दुविधा और मानव जीवन की विषमताएँ अत्यंत मार्मिक ढंग से चित्रित की गई हैं। पश्चिमी यथार्थवाद के प्रमुख लक्षणों में— सामाजिक और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का यथार्थ चित्रण, मनुष्य के भीतरी और बाहरी जीवन का संतुलित निरूपण, आदर्शों के स्थान पर यथास्थिति की प्रस्तुति, साधारण जनजीवन, निम्नवर्ग, स्त्री जीवन और संघर्ष का चित्रण, भावुकता की जगह विवेकपूर्ण विश्लेषण और वस्तुनिष्ठता महत्वपूर्ण हैं। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि यथार्थवाद और यथार्थबोध में सूक्ष्म अंतर है। यथार्थवाद साहित्यिक प्रवृत्ति है, जो किसी भी वस्तु, घटना या चरित्र का वस्तुगत और यथासंभव निष्पक्ष चित्रण करती है। जबकि यथार्थबोध रचनाकार की वह आंतरिक क्षमता है, जिससे वह वास्तविकता को केवल देखता नहीं, बल्कि समझता और अनुभव करता है। यह बोध ही लेखक को सतही विवरण से ऊपर उठाकर संवेदनात्मक और नैतिक दृष्टिकोण प्रदान करता है। पश्चिमी यथार्थवाद का प्रभाव भारतीय साहित्य पर भी पड़ा। प्रेमचंद, यशपाल, नागार्जुन, अज्ञेय, रेणु जैसे अनेक लेखकों ने भारतीय समाज के संघर्ष, वर्ग भेद, जातिगत शोषण और स्त्री जीवन की समस्याओं को उसी यथार्थ दृष्टि से देखा और प्रस्तुत किया, जैसे पश्चिमी यथार्थवादी लेखकों ने अपने समाज को देखा था। इस प्रकार यथार्थवाद ने साहित्य, कला और समाज को एक नई दिशा दी। यह न केवल आदर्शवादी दृष्टिकोण से हटकर वास्तविक जीवन के संघर्षों, कठिनाइयों और जटिलताओं को सामने लाया, बल्कि इसने समाज और मनुष्य के वास्तविक रूप को उजागर किया।

अतः यथार्थवाद साहित्य की वह धारा है जो जीवन को उसके मौलिक, नंगे, और असंवरण स्वरूप में देखने और दिखाने की क्षमता रखती है। इसमें कल्पना, भावना और

विचार का समुचित समावेश होता है, परंतु वे केवल सजावट नहीं होते, बल्कि यथार्थ की गहराई को और अधिक प्रभावशाली बनाने का माध्यम होते हैं। इस दृष्टिकोण से देखें तो यथार्थवाद साहित्य में केवल जीवन का प्रतिबिंब ही नहीं देता, बल्कि जीवन को समझने और बदलने की प्रेरणा भी प्रदान करता है। पश्चिमी साहित्य ने यथार्थबोध को केवल एक दृष्टिकोण नहीं, बल्कि एक रचनात्मक और नैतिक उत्तरदायित्व के रूप में विकसित किया। यह बोध साहित्यकार को समाज और मनुष्य के बीच सेतु बनाता है। वह न केवल घटनाओं को दर्शाता है, बल्कि उनके कारणों, परिणामों और अंतर्विरोधों की गहराई में उतरता है। यही यथार्थबोध साहित्य को दीर्घजीवी बनाता है और पाठक को अपने समय और समाज से जोड़ता है।

1.5 हिन्दी साहित्य और यथार्थबोध

साहित्य, शब्द "स+हित+य" के योग से बना है। इसका अर्थ है "समाज का हित करने वाला।" किसी भी भाषा के वाचिक और लिखित शास्त्र समूह को साहित्य कहते हैं। हिंदी साहित्य का आरंभ आठवीं शताब्दी से माना जाता है। उस समय अपभ्रंश रूप में पद्यबद्ध साहित्यिक रचनाएँ होती थीं, जो मुख्यतः दोहा रूप में होती थीं। इनके विषय धर्म, नीति, उपदेश आदि प्रमुख होते थे। हिंदी में तीन प्रकार का साहित्य मिलता है—पद्य, गद्य और चंपू। जो साहित्य पद्य और गद्य दोनों में लिखा जाता है, उसे चंपू कहा जाता है। साहित्य से मनुष्य को इतिहास और वर्तमान का ज्ञान मिलता है। साहित्य समाज का दर्पण होता है, क्योंकि साहित्य में समाज का ही वर्णन होता है, जिससे हमें उस समय और समाज की झलक मिलती है, जब साहित्य रचना की गई थी। आचार्य कुंतक के शब्दों में: "जहां शब्द और अर्थ के बीच सुंदरता की हार्मनी हो, वहीं साहित्य की सृष्टि होती है।" समय के साथ साहित्य में भी परिवर्तन आते हैं, क्योंकि साहित्य यथार्थ पर आधारित होता है, और यथार्थ निरंतर परिवर्तनशील है। साहित्य समाज की सच्चाइयों से अवगत कराता है और मनुष्य को सही दिशा में बढ़ने के लिए प्रेरित और उत्साहित करता है। साहित्य से समाज को अपने जीवन, स्वयं और आस-पास की दुनिया को बेहतर तरीके से समझने में मदद मिलती है। साहित्य दर्शन से पहचान, कल्पना और सहानुभूति की अवधारणाएं विकसित होती हैं। हमारी बढ़ती अराजक दुनिया में इनकी आवश्यकता अधिक महत्वपूर्ण हो गई है। साहित्य किसी भी संस्कृति को जानने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। किसी भी काल के

साहित्य का अध्ययन करने से हमें तत्कालीन सामाजिक जीवन, रहन-सहन और अन्य गतिविधियों को सरलता से जानने का अवसर मिलता है। साहित्य से समाज अपनी विरासत के बारे में जानता है और उसे समझ सकता है।

मानव जीवन में साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान है, क्योंकि साहित्य के माध्यम से ही समाज की बुराइयों का अंत किया जा सकता है। पुराने समय में राजा-महाराजा स्वयं और अपनी सेना के उत्साहवर्धन के लिए साहित्य रचना करवाया करते थे, ताकि उनके शौर्य की गाथाओं को समाज में प्रचारित किया जा सके। आधुनिक समाज में भी साहित्य का प्रभाव नकारा नहीं जा सकता। साहित्यकार की अभिव्यक्ति के रूप में साहित्य कार्य करता है। कुछ साहित्य (किताबें) समाज का दर्पण होती हैं और उस समाज (दुनिया) को बेहतर ढंग से समझने की अनुमति और सहायता प्रदान करती हैं, जिसमें हम रहते हैं। समाज में मनुष्य विभिन्न समूहों में रहता है। मनुष्य के विभिन्न समूहों को समाज कहते हैं। समाज की सबसे छोटी इकाई व्यक्ति है। व्यक्ति के बिना समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज का निर्माण मनुष्य द्वारा, मनुष्यों के लिए किया गया है। मनुष्य परिवार में जन्म लेकर समाज का अभिन्न अंग बन जाता है, जहाँ वह अपने सभी रीति-रिवाज, नीति-मूल्य, धर्म-संस्कृति के साथ मेल-जोल से रहता है। समाज में रहते हुए मनुष्य कुछ नियमों और शर्तों का पालन करता है। प्राचीन काल से ही समाज में अलग-अलग जाति, धर्म और संस्कृति के लोग एक-दूसरे की आवश्यकता पूर्ति हेतु आपस में मिल-जुलकर रहते हैं।

साहित्य, समाज और यथार्थवाद का एक-दूसरे के बिना कोई अस्तित्व नहीं है। इन तीनों का एक-दूसरे से अटूट संबंध है। समाज से साहित्य उत्पन्न होता है और साहित्य में समाज का यथार्थ निहित होता है। साहित्य और जीवन का अटूट संबंध है। जीवन में जो कुछ भी दिखाई देता है, वही शब्दों में व्यक्त किया जाता है। शब्द जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं और शब्द जीवन से बाहर हो ही नहीं सकते। कल्पना भी कहीं न कहीं जीवन से जुड़ी होती है। शब्द जीवन का अंग हैं, तो जीवन शब्दों में उपस्थित रहता है। इस प्रकार समाज का, जगत का अस्तित्व हमारे मन या हमारी इच्छा-अनिच्छा से परे, एक ठोस वस्तुगत अस्तित्व है। साहित्य और कला का संबंध इसी बाह्य जगत और उसके विविध रूपों और व्यापारों से है। इसी वैज्ञानिक दृष्टि से यथार्थवाद का प्रारंभ हुआ है।

यथार्थवाद का विकास आदर्शवाद और अतिरंजन कल्पना के विरुद्ध हुआ है। यह संसार वैसा नहीं है, जैसा हम चाहते हैं, इसलिए स्वच्छंदतावादी रचनाकार अपनी एक काल्पनिक दुनिया गढ़ लेता है। किंतु इस दुनिया का अनुभव किसी और को न होकर, यह केवल रचनाकार तक ही सीमित होता है। साझा और सामान्य अनुभव केवल यथार्थ वर्णन में ही पाया जा सकता है। स्वच्छंदतावाद और आदर्शवाद में उस काल्पनिक आदर्श जीवन का वर्णन मिलता है, जैसा रचनाकार चाहता है। यथार्थवाद साहित्य जीवन को वैसा ही प्रस्तुत करता है, जैसा वह होता है। आदर्शवादी और रूमानी कहानियों में अतिरंजित वर्णन होता है। इन कहानियों में जीवन ऐसा हो सकता है, का वर्णन मिलता है, जिसके बारे में आम लोग सोच भी नहीं पाते हैं। इनका नायक विशिष्ट और निराला होता है। इस प्रकार के रचनाकार और उनकी कहानियों के नायक पर किसी प्रकार का कोई नैतिक दायित्व नहीं होता। यथार्थवादी रचनाकार पर यह सामाजिक और नैतिक जिम्मेदारी होती है कि वह जन-सामान्य के जीवन का चित्रण करें। गरीब, अनपढ़, मध्यवर्गीय लोग, समाज में स्त्री की दशा, उनकी भावनाएं और विचारों का वर्णन साहित्य में आना चाहिए। यथार्थवादी रचनाकार साहित्य में बहुसंख्या का चित्रण करते हैं। श्रेष्ठ साहित्य की स्थापना केवल आत्मसंतुष्टि, सुखानुभूति, प्रेरणा, संदेश या जागृति के लिए नहीं होती, बल्कि उसमें संवेदना का समावेश भी उतना ही आवश्यक है। संवेदना ही वह तत्व है जो साहित्य और समाज को जोड़ता है। संवेदनहीन साहित्य समाज का मात्र मनोरंजन कर सकता है, वह समाज को कभी प्रभावित नहीं कर सकता। साहित्य को केवल मनोरंजन के माध्यम से जीवित रखना संभव नहीं है। वही साहित्य सही मायने में सार्थक और श्रेष्ठ होता है, जिसमें अनुभूति की तीव्रता, भावना की प्रबलता और जीवन के यथार्थ विचारों को गहराई से व्यक्त किया गया हो। साहित्य का प्रेरणा स्रोत प्राणी है। इसलिए साहित्य रचना से मानव जगत की हताश, निराश और विभत्स वास्तविकता को आशावादी दृष्टि से देखा जाता है। साहित्य में यह गुण तब उत्पन्न होता है, जब उसमें जीवन की सच्चाइयों और अनुभूतियों का वास्तविक रूप से व्यक्त किया जाता है। रचनाकार जिस परिवेश में रहता है, जहाँ वह अपने जीवन के विभिन्न अवस्थाओं का निर्वाह करता है, उस परिवेश का रचनाकार पर प्रभाव निश्चित रूप से होना स्वाभाविक है। यथार्थ को प्रस्तुत करने के लिए साहित्यकार ने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के अनछुए प्रसंगों और स्थितियों का वर्णन किया है।

जब से मनुष्य ने अपने विचारों को शब्दों का रूप देना और उन्हें लिपिबद्ध करना सीख लिया, तभी से साहित्य यथार्थपरक बन गया। प्राचीन काल से ही साहित्य में उस समय के समाज का वर्णन मिलता है। यथार्थवादी साहित्य हमें उस समय के समाज, संस्कृति और परिस्थितियों का ज्ञान प्रदान करता है। जब एक रचना लिखी जाती है, तो उस समय के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य का उसमें समावेश होता है। प्राचीन काल के संस्कृत महाकाव्य 'रामायण' में आदिकाव्य के प्रथम कवि महर्षि वाल्मीकि ने श्रीराम के संपूर्ण जीवन, शासन, परिवार, मित्रों और उस समय के समाज का विस्तृत वर्णन किया है। इसी प्रकार, महाभारत में भी तत्कालीन समाज और शासन का चित्रण मिलता है। इन ग्रंथों के माध्यम से आज भी हम उस समय की परिस्थितियों का अनुमान लगा सकते हैं। चाहे ये साहित्य धार्मिक दृष्टिकोण से ही क्यों न लिखा गया हो, इनमें उस समय के यथार्थ को देखा जा सकता है। समय के अनुसार भारतीय साहित्यकारों और आचार्यों ने साहित्य को विभिन्न कालों में विभाजित किया है। ये काल इस प्रकार हैं- आदिकाल (1050 ई. से 1375 ई.), भक्ति काल (1375 ई. से 1700 ई.), रीतिकाल (1700 ई. से 1900 ई.) और आधुनिक काल (1900 ई. से अब तक)। आदिकालीन साहित्य को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है- धर्म संबंधी काव्य, चारण काव्य, और रासो काव्य। धर्म संबंधी काव्य में, हालांकि उपदेशात्मक प्रवृत्तियों की प्रधानता है, लेकिन उसमें कुछ घटनाओं का वर्णन करके उस समय के यथार्थ को जानने में सहायता मिलती है। चारण काव्य में प्रसिद्ध व्यक्तियों की कथाओं का वर्णन मिलता है, जिनसे उस समय के यथार्थ का बोध होता है। रासो काव्य में प्रेम, विरह और युद्ध आदि का वर्णन होता है, जो यथार्थ आधारित होता है। चाहे यह अल्प मात्रा में हो, लेकिन इन काव्य साहित्य से उस समय के यथार्थ का ज्ञान प्राप्त होता है।

भक्ति काल के साहित्य में, जैसे कबीरदास की रचनाओं में उस समय के समाज की तस्वीर मिलती है, तो मीराबाई के काव्य में देव महिमा के साथ-साथ समाज की दशा का भी पता चलता है। चंद्रवरदाई की 'पृथ्वीराज रासो' में पृथ्वीराज चौहान का युद्ध वर्णन उस समय के यथार्थ का परिचायक है। भक्ति काल के साहित्य से उस समय के समाज के वर्गों, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों के यथार्थ का विवरण मिलता है। रीतिकालीन साहित्य में अधिकांश कवि दरबारी थे। उनका काव्य साधारण जनता से

विमुख था और राजदरबारी जीवन का चित्रण करता था। इन कवियों ने शासन, समाज, और अर्थवैभव के बारे में जो चित्रण प्रस्तुत किया, वह समकालीन यथार्थ का साकार रूप था। रीतिमुक्त कवियों के साहित्य में समाज और लोक जीवन के यथार्थ की झलक देखने को मिलती है।

हिंदी साहित्य में 'यथार्थ' शब्द का प्रयोग सत्य के अर्थ में किया गया है। प्राचीन साहित्य में सत्य को ईश्वर के रूप में माना गया, इसलिए इसका प्रयोग ईश्वर के संदर्भ में हुआ। हिंदी साहित्य में यथार्थ दो तरह से प्राप्त होता है- दर्शन में, और कला या साहित्य में। कला या साहित्य में यथार्थ का अर्थ समग्र विश्व के यथार्थ से है। यथार्थ का मतलब है, जो कुछ भी अस्तित्व में है, वही यथार्थ है। जब इस यथार्थ का चित्रण एक विशिष्ट पद्धति के रूप में किया जाने लगा, तो यह यथार्थवादी विचारधारा का रूप ले लिया। प्रेमचंद ने यथार्थवाद के बारे में कहा था कि "यथार्थवाद हमारी क्रूरताओं और दुर्बलताओं का नग्न चित्रण है। सच्चा यथार्थवादी अपनी कृति में सत्य का विकृत रूप नहीं प्रस्तुत करता, बल्कि उसे इस रूप में प्रस्तुत करता है कि समाज में व्याप्त बुराइयों से लोगों को घृणा हो।" (प्रेमचंद, 28) यथार्थवाद का मुख्य उद्देश्य मानववाद की स्थापना करना है, और आज के समय में रचनाओं में क्रांतिकारी यथार्थवाद का प्रयोग मानव कल्याण के लिए सबसे प्रभावी उपाय है। यथार्थवाद अपने समस्त विकास के केंद्र में मनुष्य को रखता है और यह मानववाद का प्रबल पक्षधर है। हिंदी साहित्य में यथार्थवाद पारंपरिक रूप से समाज की कमियों और खामियों का चित्रण करता है।

हिंदी साहित्य में यथार्थबोध एक अत्यंत महत्वपूर्ण साहित्यिक प्रवृत्ति है, जिसने साहित्य को जीवन और समाज के निकट लाकर खड़ा किया। यह बोध न केवल सामाजिक विषमताओं को उजागर करता है, बल्कि मनुष्य की मानसिक, नैतिक और सांस्कृतिक उलझनों को भी उनकी मूल संवेदना में प्रस्तुत करता है। यथार्थबोध हिंदी साहित्य की लगभग सभी धाराओं में विभिन्न रूपों में दिखाई देता है, लेकिन इसका सुनियोजित और सजग रूप मुख्यतः प्रेमचंद से प्रारंभ होकर प्रगतिशील आंदोलन, नयी कहानी, साठोत्तर कथा साहित्य, और समकालीन लेखन तक विकसित होता रहा है।

हिंदी साहित्य में यथार्थबोध की आरंभिक झलक भारतेन्दु युग में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। यह कालखंड हिंदी गद्य के विकास और सामाजिक जागरण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। इस युग के प्रमुख साहित्यकार—भारतेन्दु हरिश्चंद्र, बालकृष्ण भट्ट, और प्रतापनारायण मिश्र—ने अपने लेखन में तत्कालीन भारतीय समाज की वास्तविक स्थितियों को उजागर करने का प्रयास किया। इन रचनाकारों ने समाज में व्याप्त कुरीतियों, अंधविश्वासों, स्त्री-वंचना, ब्रिटिश उपनिवेशवाद की कूटनीतियों, और राजनैतिक भ्रष्टाचार पर तीखी टिप्पणी की। यद्यपि इनका यथार्थबोध आज के दृष्टिकोण से पूर्णतः प्रगतिशील नहीं कहा जा सकता, तथापि इस यथार्थबोध में सामाजिक सरोकार, जागृति की चेतना, और सुधार की आकांक्षा निहित थी। यह बोध अत्यंत गहराई से जीवन की जटिलताओं में प्रवेश नहीं करता, परंतु सतही यथार्थ को उजागर करने में यह सफल रहा। भारतेन्दु हरिश्चंद्र के नाटकों, निबंधों और पत्रों में तत्कालीन समाज की दुर्दशा और सामंतवादी सोच का सूक्ष्म चित्रण मिलता है। उदाहरण के लिए, उनके नाटक "भारत दुर्दशा" में अंग्रेजी शासन की नीतियों और भारतीय राजाओं की विवशता का यथार्थपरक चित्र उभरकर आता है। इसी प्रकार, बालकृष्ण भट्ट के निबंधों में सामाजिक विकृतियों पर तीखा व्यंग्य मिलता है। इस काल के यथार्थबोध की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वह सामाजिक चेतना को जागृत करने के उद्देश्य से लिखा गया था। साहित्य केवल मनोरंजन या भावुकता का माध्यम न रहकर एक सशक्त सामाजिक उपकरण बनने लगा था। इस प्रकार, भारतेन्दु युग का यथार्थबोध गहराई और विश्लेषणात्मकता की दृष्टि से सीमित होते हुए भी, हिंदी साहित्य में सामाजिक दृष्टिकोण से यथार्थवादी प्रवृत्तियों का प्रारंभिक सूत्रपात करता है। यही प्रवृत्ति आगे चलकर प्रेमचंद के यथार्थवाद में एक सशक्त सामाजिक दर्शन का रूप धारण करती है।

19वीं सदी में भारत में नवजागरण की जो लहर चली, उसने मध्यकालीन युग की धार्मिक और सामाजिक रूढ़ियों और परंपराओं, जैसे जातिवाद, धार्मिक अंधविश्वास, सती प्रथा, बाल विवाह, अनमेल विवाह, बहु विवाह, छुआछूत आदि कुरीतियों को विवेकपूर्ण ढंग से जानकर उनके विरोध में आवाज उठाने के लिए प्रेरित किया। इस लहर ने स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के आदर्शों को अपनाने के लिए भी प्रेरित किया। इस आधुनिक सोच

का प्रभाव हिंदी रचनाकारों पर भी दिखाई देने लगा। उस समय भारत विदेशी शासन के अधीन था, इसलिए राष्ट्रीय मुक्ति की भावना तीव्रता से फैलने लगी। उस समय के रचनाकारों ने, जहां एक ओर मध्ययुगीन रुढ़ियों और परंपराओं की तीखी आलोचना को अपने साहित्य का विषय बनाया, वहीं दूसरी ओर विदेशी सत्ता की दासता से मुक्ति को भी अपने लेखन का जरूरी हिस्सा बनाया। (1850-1900) भारतेंदु युग और द्विवेदी युग (1900-1910) के साहित्य में मध्यकालीन परंपराओं को चुनौती देते हुए अपने समय के यथार्थ की आलोचना को विषय बनाने की शुरुआत की गई।

स्वच्छंदतावाद और सामंतवाद के संघर्ष के बीच एक तीसरी शक्ति का उदय हुआ, जो यथार्थवाद के रूप में विकसित हुई। उस समय के रचनाकार स्वच्छंदतावादी शैली, साम्यवादी और पूंजीवादी व्यवस्था से खिन्न थे। उन्होंने अपनी रचनाओं में अमानवीय व्यवस्था के प्रति विद्रोह किया और 19वीं शताब्दी के महत्वपूर्ण रचनाकार सत्य के प्रति कटिबद्ध होने लगे। साठोत्तरी कवियों ने, जैसे गिरिजा कुमार माथुर, भवानी प्रसाद मिश्र, नरेश मेहता, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और रघुवीर सहाय ने, कविता की यथार्थवादी परंपरा के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। केदारनाथ सिंह से लेकर नई पीढ़ी के रचनाकारों ने यथार्थ जीवन की विसंगतियों को अपनी कविताओं में चित्रित किया। किंतु कथासाहित्य के माध्यम से यथार्थ की अभिव्यक्ति कविता की अपेक्षा अधिक सहज और प्रभावशाली ढंग से की जा सकती है। कथासाहित्य की कई विधाओं में यथार्थ की अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। भारतेंदु हरिश्चंद्र का नाटक "अंधेर नगरी" एक ऐसा नाटक था, जिसमें तत्कालीन व्यवस्था की तीखी आलोचना को विषय बनाया गया था।

हिंदी साहित्य में यथार्थबोध का सशक्त और गहन स्वरूप प्रेमचंद युग में विकसित हुआ। यथार्थ को समग्रता और गहनता से व्यक्त करने का प्रभावशाली प्रयास मुंशी प्रेमचंद के लेखन में अधिक दिखाई देता है। मुंशी प्रेमचंद ने भारतीय समाज के उस यथार्थ को अपनी रचनाओं में स्थान दिया, जो अब तक उपेक्षित रहा था—गरीबी, शोषण, जाति-पांति, स्त्री-वंचना, किसान जीवन की त्रासदी, और आम जन की संघर्षमयी दिनचर्या। उन्होंने साहित्य को लोकजीवन से जोड़कर उसे "समाज का दर्पण" बना दिया। प्रेमचंद के उपन्यासों—गोदान, निर्मला, सेवासदन, और कर्मभूमि—में जीवन का वह कठोर यथार्थ दिखाई देता है, जो समाज के भीतरी ताने-बाने को अनावृत्त करता है। गोदान में किसान होरी की दयनीय

स्थिति सिर्फ एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि उस समूचे कृषक समाज की वेदना का प्रतीक है, जो साहूकारों, जमींदारों और व्यवस्था के बीच पिसता चला जा रहा है। निर्मला में दहेज प्रथा और बालविवाह की भयावहता को जिस मार्मिकता से चित्रित किया गया है, वह आज भी पाठक को झकझोर देती है।

प्रेमचंद की यह परंपरा न केवल कथा साहित्य में, बल्कि काव्य और कथा साहित्य की सभी विधाओं में भी दिखाई देती है। यथार्थवाद का विकास प्रगतिशील आंदोलन के दौरान हुआ। पांचवें और छठे दशक के साहित्य आंदोलन, नई कविता और नई कहानी के बाद लगभग दो दशकों तक हिंदी साहित्य कुछ समय के लिए यथार्थवाद से विमुख होकर सातवें और आठवें दशक में रचनाकार अपने समय और समाज से जुड़े यथार्थ की ओर फिर से अग्रसर हुए। यथार्थवादी साहित्यकारों ने समाज के निम्न वर्ग के लोगों के दुखद जीवन का चित्रण किया। इसके पहले, कहानी साहित्य में ऐसे उपेक्षित वर्ग को कोई स्थान नहीं था। इस संदर्भ में प्रेमचंद का मत है कि- “यथार्थवाद में हमारी दुर्बलताओं और हमारी क्रूरताओं का नग्न चित्र होता है और इस तरह वह यथार्थवादी को निराशावादी बना देता है। मानव चरित्र पर से हमारा विश्वास उठ जाता है। हमको अपने चारों ओर बुराईयाँ नजर आने लगती हैं।” (प्रेमचंद, 3) इस संबंध में उत्कृष्ट लेखक नंद दुलारे वाजपेई की दृष्टि से यह है कि “यथार्थवाद वस्तुओं की पृथक सत्ता का समर्थक है। वह समष्टि की अपेक्षा वस्तु जगत से है।” (दुलारे, 45)

जैसा कि सांसारिक सत्य है कि यथार्थ हमेशा अपने आप में सुखदायक नहीं होता है। इसलिए भारतीय साहित्य, विशेषकर हिंदी साहित्य में रचनाओं का अंत हमेशा सुखात्मक ही होता है। इसका कारण यह है कि हिंदी साहित्य में ‘आदर्शोन्मुखी’ यथार्थ को अधिक स्थान दिया गया है। आदर्शोन्मुख यथार्थवाद में यथार्थ का चित्रण करते हुए भी आदर्श की स्थापना पर बल दिया जाता है। इस प्रवृत्ति में प्रथम महत्वपूर्ण योगदान प्रेमचंद का है। हिंदी साहित्य में प्रगतिशील आंदोलन की शुरुआत के साथ हिंदी में यथार्थवादी चिंतन और रचना की विधिवत शुरुआत हुई। इससे पहले, भारतेन्दु की रचनाओं में भी यथार्थवाद की शुरुआत हो चुकी थी। प्रेमचंद ने यथार्थवाद को ‘गोदान’ और ‘कफ़न’ में अपनी चरम पर पहुंचा दिया था। फणीश्वरनाथ रेणु के ‘मैला आंचल’ और श्रीलाल शुक्ल के ‘राग दरबारी’ को भी यथार्थवादी रचनाओं के उत्कृष्ट उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है। ‘मैला आंचल’

फणीश्वरनाथ रेणु का प्रतिनिधि उपन्यास है। यह हिंदी का सशक्त और श्रेष्ठ आंचलिक उपन्यास माना जाता है। नेपाल की सीमा से लगते उत्तर-पूर्वी बिहार के एक पिछड़े ग्रामीण अंचल को पृष्ठभूमि बनाकर उन्होंने इसमें वहां के जीवन का अत्यंत जीवंत, मुखर और यथार्थ चित्रण किया है, जिससे वे स्वयं भी घनिष्ठता से जुड़े हुए थे। प्रेमचंद हिंदी के एक ऐसे साहित्यकार थे, जिन्होंने आदर्शवाद से अपने रचनात्मक कार्य की शुरुआत की और आदर्शवाद पर ही उसे समाप्त किया। प्रेमचंद की रचनाओं में गांव का चित्रण किसी रोमानी रचनाकार का नहीं, बल्कि उस व्यक्ति का था, जो गाँव की सीमा और शक्ति से भलीभांति परिचित था। 'भोगा हुआ यथार्थ', 'अनुभूति की प्रमाणिकता', 'सहानुभूति के स्थान पर स्वानुभूति' जैसी शब्दावलियाँ साहित्य में यथार्थवादी चित्रण के आग्रह के कारण ही अस्तित्व में आईं। प्रेमचंद ने समाज की जिन व्यवस्थाओं पर प्रकाश डाला है, उन रचनाओं का अध्ययन अपने आप में समाज के जीवन का अध्ययन करना है। उनकी रचनाओं का अध्ययन करके हम न केवल समस्याओं से परिचित होते हैं, बल्कि परिणाम खोजने में उनकी अतार्किक और आदर्शवादी दृष्टि को समझ कर आगे के लिए सचेत भी हो सकते हैं।

नई कविता में मनुष्य के जीवन के प्रत्येक क्षण को महत्व दिया गया है। नई कविता के आंदोलन की शुरुआत इलाहाबाद की साहित्यिक संस्था परिमल के कवि-लेखकों—जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी और विजय देवनारायण साही के संपादन में 1954 में प्रकाशित पत्रिका 'नई कविता' से मानी जाती है। इसलिए नई कविता में व्यंग्य के रूप में कहे जाने वाले 'पुरानी वालों' को अस्वीकृत करती है, तो कहीं दर्द की सच्चाई के प्रति भीतर से उगते नए मूल्यों की संभावनाओं के प्रति आस्था दिखती है। नई कविता का स्वर अपने परिवेश की जीवनाभूति से फूटा है। पाँचवे और छठे दशक में साहित्यिक आंदोलन, नई कविता और नई कहानी के बाद लगभग दो दशकों तक हिंदी कविता और कथा साहित्य कुछ हद तक यथार्थवाद से विमुख होकर आत्मग्रस्त और व्यक्तिपरक भावनाओं की ओर उन्मुख हो गए। कविता की बजाय अकविता और कहानी की बजाय अकहानी इस दौर का मुहावरा बन गई। सातवें और आठवें दशक में एक बार फिर लेखक अपने समय और समाज से जुड़कर यथार्थवाद की ओर अग्रसर हुए। इस दौर के साहित्यिक आंदोलन को जनवादी साहित्य आंदोलन के नाम से जाना जाता है, जो प्रगतिशील आंदोलन का अगला चरण था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिंदी कहानियों में स्वतंत्र रूप से पूर्व के विकसित युगों की भांति ही सामाजिकता की प्रवृत्ति की प्रधानता रही है। किंतु इस युग की सामाजिक कहानियाँ अपने तथ्य में पिछले युग से भिन्न हैं। बदलते हुए युग के साथ समाज की प्रवृत्तियों और समस्याओं में जो बदलाव आया, हिंदी कहानी ने उसे आत्मसात किया है। हिंदी कहानियों में इस बदलाव को साफ देखा जा सकता है। इस काल में प्रायः सभी लेखकों ने सामाजिक विषयों को आधार बनाकर कहानियाँ लिखी हैं। अमृतलाल नागर, मोहन राकेश, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, मन्नू भंडारी, राजेंद्र यादव, शैलेश, श्रीकांत, उषा प्रियंवदा, मटियानी, नरेश मेहता, कमल जोशी आदि ने सामाजिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण अपनी कहानियों में किया है।

साहित्य में यथार्थ या यथार्थवाद एक वाद भी है और साहित्य लेखन की एक विधा भी है। 18वीं सदी में यह विद्या साहित्य में तेजी से बढ़ने लगी। यह पूर्ण रूप से पश्चिम की देन न कहने पर भी इसका आविर्भाव पश्चिमी देशों में हुआ और यह विश्व के विभिन्न साहित्य जगत को अगली शताब्दी तक प्रभावित और प्रेरित करने में सक्षम रहा। यथार्थवाद सत्य को उजागर करने वाली कला है। वह उसे ईमानदारी तथा संपूर्ण वास्तुपरकता के साथ उजागर करती है। यथार्थवाद, तथ्यात्मक और वस्तुनिष्ठ भी है। यथार्थवादी सत्य को प्रस्तुत करता है। इसमें भीतरी शक्ति का महत्व है। इसका स्रोत वस्तु जगत है। हम कह सकते हैं कि यथार्थवाद साहित्य लेखन की एक विशिष्ट पद्धति है, जिसके अनुसार साहित्यकार अपने साहित्य में जीवन के यथार्थ रूप की रचना करता है। यथार्थवाद में जीवन के साथ स्थितियाँ, परिस्थितियाँ का वर्णन करना, उनके प्रति ईमानदार रहने का दावा किया जाता है। परंतु साहित्य में हमेशा मनुष्य की हीनताओं और कुरूपताओं का वर्णन किया जाता है। यथार्थवादी रचनाकार जीवन के सुंदर अंग को छोड़कर उसके असुंदर अंग का चित्रण करता है। यथार्थवाद के अंतर्गत सभी रचनाएँ आती हैं, जिनमें जीवन के वास्तविक यथार्थ का निम्न से निम्न और उच्च से उच्च पक्षों का चित्रण यथातथ्य करना चाहिए। यथार्थवादी रचना में मनुष्य की बाहरी और आंतरिक दोनों स्थितियों के चित्रण को लक्ष्य बनाकर रचनाकार को वास्तविक जीवन की बाह्य परिस्थितियों और क्रियाकलापों के साथ आंतरिक भावनाओं, विचारों, आदर्शों, स्वप्नों और कल्पनाओं का भी चित्रण करना चाहिए। साहित्य

में यथार्थवाद जीवन का वास्तविक चित्रण है, जो समाज का पूर्ण जीवंत चित्र प्रस्तुत करता है।

यथार्थवाद से पहले अल्पसंख्यक का ही वर्णन होता था। यह सिद्धांत उपन्यास के साथ आया। महाकाव्य में धीर और उत्तम नायक राज परिवार का होता था। गोदान का नायक होरी, जो सीमांत कृषक है। यथार्थवादी उपन्यासकार के लिए होरी की स्थिति का वर्णन करना महत्वपूर्ण है। गोदान और ईदगाह में हमिद की भावनात्मक और मानसिक प्रतिक्रिया को व्यक्त करना भी महत्वपूर्ण है। यथार्थवादी साहित्य का उद्देश्य पाठक के आम जीवन के ज्ञान में वृद्धि करना है। इसलिए रचनाकार ऐसे चित्रों और घटनाओं की रचना करता है जो वास्तविक जीवन में उपस्थित होते हैं। यथार्थवादी साहित्य में चरित्र और घटनाएं काल्पनिक होते हुए भी वास्तविक लगती हैं। साहित्यकार को साहित्य लेखन की प्रेरणा समाज के यथार्थ से, यानी मानव जीवन के संघर्ष से मिलती है, जिससे प्रेरित होकर वह अपनी रचना गढ़ता है। त्रिभुवन सिंह के अनुसार, "जीवन की सच्ची अनुभूति यथार्थ है।" यथार्थवादी साहित्य में विषय-वस्तु के अंकन के साथ रचनाकार की संवेदनशील भावनाओं का भी समावेश होता है।

प्रेमचंद का यथार्थबोध केवल सामाजिक घटनाओं के यथार्थ वर्णन तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें मनोवैज्ञानिक अंतर्दृष्टि, चरित्रों की आंतरिक द्वंद्व की पहचान, और सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा भी निहित है। उन्होंने रचनात्मक रूप से यह सिद्ध किया कि साहित्य केवल समाज का वर्णन नहीं करता, बल्कि वह समाज के नव निर्माण का माध्यम भी बन सकता है। प्रेमचंद की भाषा सरल, सहज और जनभाषा के निकट है। उन्होंने कृत्रिमता से दूर रहकर ऐसे पात्रों और परिस्थितियों को रचा, जिनमें आम पाठक अपने अनुभवों की प्रतिध्वनि पाता है। उनके साहित्य में न तो अतिनाटकीयता है, न ही भावुकता का अनावश्यक अतिरेक—बल्कि एक ठोस, ज़मीन से जुड़ा हुआ यथार्थ है, जो सच बोलने का साहस रखता है। इस प्रकार, प्रेमचंद युग हिंदी साहित्य में यथार्थवाद की वह मंजिल है जहाँ समाज का जीवंत, गूढ़ और बहुआयामी चित्रण हुआ। उनका यथार्थबोध केवल आलोचना या चित्रण तक सीमित नहीं, बल्कि वह समाज के संवेदनशील पुनर्निर्माण की साहित्यिक चेतना है।

प्रेमचंद के बाद हिंदी साहित्य में यथार्थवाद को एक नया मोड़ मिला। प्रेमचंद की रचनाओं में जिस प्रकार समाज के शोषित और पिछड़े वर्गों के जीवन को प्रमुखता दी गई, ठीक उसी प्रकार प्रेमचंदोत्तर युग के साहित्यकारों ने यथार्थवादी दृष्टिकोण से समाज की विविध समस्याओं, आर्थिक संघर्षों, और मानवीय भावनाओं की गहरी पड़ताल की। इस युग में यथार्थवाद केवल समाज के गरीब और शोषित वर्ग के जीवन तक सीमित नहीं रहा, बल्कि राजनीतिक, आध्यात्मिक, और सामाजिक संघर्षों की जटिलताओं को भी उजागर किया गया। इस समय के प्रमुख लेखकों में काका कालेलकर, राजेंद्र यादव, अज्ञेय, मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, और उदय प्रकाश जैसे साहित्यकारों का नाम प्रमुख रूप से लिया जा सकता है। राजेंद्र यादव की रचनाएँ, जैसे कि "दूज का चाँद" और "संपूर्ण जीवन" में उन्होंने मानवीय संवेदनाओं के माध्यम से समाज के यथार्थ को प्रस्तुत किया। यादव ने समाज में स्त्री के स्थान, परिवार के भीतर हो रहे परिवर्तन, और व्यक्ति के भीतर की मनोवैज्ञानिक जटिलताओं को चित्रित किया। इन रचनाओं में यथार्थ का वह रूप दिखता है, जो सामाजिक और व्यक्तिगत संघर्षों से गुजरते हुए भी व्यक्ति के मानवीय पक्ष को सामने लाता है।

अज्ञेय के लेखन में भी यथार्थ का एक नया आयाम देखने को मिलता है। उनके उपन्यास "लम्हे" में उन्होंने न केवल व्यक्ति के भीतर के संघर्षों को, बल्कि समकालीन समाज की मानसिकता और दृष्टिकोण को भी उकेरा। उनके अनुसार यथार्थ सिर्फ बाहरी घटनाओं का चित्रण नहीं होता, बल्कि यह व्यक्ति के अंदर की दुनिया का भी अभिव्यक्ति है। अज्ञेय के विचार में यथार्थवाद केवल वास्तविकता का चित्रण नहीं, बल्कि उसमें सांस्कृतिक और मानसिक परिवर्तनों की गहरी समझ भी है। धर्मवीर भारती के उपन्यास "गुनाहों का देवता" में प्रेम और समाज के बीच की जटिलताओं को बहुत प्रभावशाली तरीके से चित्रित किया गया। इस उपन्यास में प्रेम और पवित्रता के बीच की सामाजिक दीवार को दर्शाया गया है, जो समाज के पुरातन मूल्यों के खिलाफ सच्चे प्रेम को बाधित करती है। मोहन राकेश के नाटक "आधे-अधूरे" और "लहरों के राजहंस" में यथार्थवाद का एक और रूप देखने को मिलता है, जो आध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक, और सामाजिक दृष्टिकोण से गहरे प्रश्नों को उठाता है। इन नाटकों में राकेश ने समाज के भेदभाव, अधिकारों की लड़ाई, और मानवता के संकट को गहरे से उकेरा है। उनका मानना था कि यथार्थवाद केवल बाहरी

संघर्षों तक सीमित नहीं होता, बल्कि इसके अंदर व्यक्तिगत और आध्यात्मिक झंझट भी छिपे होते हैं।

आज के समय में, यथार्थवाद और भी विविध हुआ है। दलित साहित्य, नारीवाद, सामाजिक न्याय और राजनीतिक संघर्ष जैसे विषयों ने यथार्थवाद को एक नया आयाम दिया है। उदय प्रकाश की रचनाएँ, जैसे कि "चंद्रकांता के साए में" ने दलितों और शोषित वर्ग के यथार्थ को बहुत सटीकता से सामने रखा है। उनके लेखन में न केवल बाहरी दुनिया का, बल्कि उन लोगों के भीतर की दुनिया का भी गहरा चित्रण किया गया है, जो अक्सर मुख्यधारा से बाहर होते हैं। इस प्रकार, प्रेमचंदोत्तर युग ने यथार्थवाद को केवल समाज के आर्थिक संघर्षों तक सीमित नहीं रखा, बल्कि इसे मानवता, आध्यात्मिकता, और मनोविज्ञान से जोड़ते हुए एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। इस युग के लेखक समाज के विभिन्न पक्षों को, जैसे सामाजिक असमानताएँ, राजनीतिक अस्थिरता, और आध्यात्मिक संघर्ष, को सामने रखते हुए साहित्य के यथार्थवाद को नया दिशा दे रहे थे।

1.6 ममता कालिया और यथार्थबोध

ममता कालिया यथार्थवादी साहित्य की एक सशक्त उदाहरण हैं। इन्होंने यथार्थ की परंपरा को अपने अनुभव संसार और प्रगतिशील विचारों के संगम से समृद्ध किया है। ममता कालिया ने समाज के वर्तमान जीवन की विसंगतियों, धर्म के ठेकेदारों के छल-कपट और आडंबरों को बेबाक तरीके से अपने साहित्य में पिरोया है। यथार्थ का जीवंत चित्रण इनके लेखन की प्रमुख विशेषता है। ममता कालिया ने हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में विपुल लेखन किया है। भारतीय समाज की विशेषताओं और विषमताओं पर इनकी गहरी दृष्टि है। बिगड़ते संबंधों, प्रगति के आर्थिक और सामाजिक दबाव, स्त्री की प्रगति, पुरुष मनोविज्ञान की कुण्ठाएँ, तथा कामकाजी स्त्री के घर और बाहर के संघर्ष आज भी उनकी रचनाओं का केंद्रीय विषय हैं। इन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से समाज का यथार्थ, जनसाधारण की भावनाएँ, परिस्थितियाँ और समस्याएँ, तथा शिक्षित और अनपढ़ नारी की विडंबना का चित्रण किया है, क्योंकि ममता कालिया स्वयं एक कामकाजी महिला रही हैं। इनके पास स्वयं के अनुभवों का आधार है, जिनसे उन्हें समाज में स्त्री की स्थितियों और परिस्थितियों का गहरा बोध है। जीवन में जिन वास्तविक संघर्षों का सामना इन्होंने किया, उन्हें इन्होंने

अपनी कहानियों और उपन्यासों में चित्रित किया है। ममता कालिया शब्दों की पारखी हैं। उनकी भाषा उच्च कोटि की है। उन्होंने अपनी संवेदनशील रचनाओं के माध्यम से दृश्यों, कथनों और परिचित भावनाओं को अपनी कहानियों में सजीव रूप से प्रस्तुत किया है। स्वयं के या अपने आसपास किसी और के अनुभवों को इन्होंने इस प्रकार चित्रित किया कि पात्र जीवंत प्रतीत होते हैं और समाज की सच्ची तस्वीर उभरकर सामने आती है। इन्होंने स्वयं कहा है, साहित्य ऐसा होना चाहिए कि जब पढ़ा जाए तो लगे जिया हुआ है और जब जिया जाए तो लगे पढ़ा हुआ है।

ममता कालिया का उपन्यास 'नरक-दर-नरक' पढ़कर हिंदी के प्रसिद्ध कवि एकांत श्रीवास्तव ने चिट्ठी लिखकर कहा था, हमारा जीवन भी कुछ इसी प्रकार का है। आपने हमारे जीवन की कहानी लिख दी है। ममता कालिया का 'आपकी छोटी लड़की' उनके लड़कपन की कहानी है। 'मेला' कहानी के पात्रों के माध्यम से इन्होंने धर्म की आड़ में हो रहे पाखंडों और आडंबरों पर कटाक्ष किया है। ममता कालिया के पति रवींद्र कालिया की मासी (पंजाब) जालंधर से इलाहाबाद (अब प्रयागराज) मकर संक्रांति के अवसर पर होने वाले कुम्भ मेले में आती हैं। ममता कालिया को मासी के साथ मेले में जाने का मौका मिलता है, जहाँ उन्होंने धर्म-कर्म के नाम पर अनैतिक कार्य करने वाले भ्रष्ट पंडितों को देखा और समाज व महिलाओं के अंधविश्वास का लाभ उठाते हुए उन्हें देखा। 'बेघर' कहानी ममता कालिया के पुणे के घर के पास रहने वाली एक कुंवारी लड़की की कहानी है, जो उनकी माँ के पास आकर अपनी आपबीती सुनाती थी, जिसमें उसने बताया कि कैसे उसके एक मित्र ने विवाह की सारी तैयारियाँ होने के बावजूद उसका फायदा उठाकर विवाह से इंकार कर दिया था। इस प्रकार की घटनाएँ हमारे आस-पास या सुनी-सुनाई कहानियों में मिल जाती हैं। 'थोड़ा सा प्रगतिशील' या 'पीठ' कहानी में पुरुष की मानसिकता को दर्शाया गया है। 'बोलने वाली औरत' की कहानी लगभग सभी स्त्रियों के जीवन की कहानी है। 'एक पत्नी के नोट्स' में लेखिका ने पुरुष के बदलते प्रेम को दिखाया है, कि विवाह से पूर्व जो प्रेमी था, वही विवाह के बाद पत्नी की प्रतिभा से प्रतिस्पर्धा करने लगता है और पत्नी को अपनी संपत्ति समझने लगता है, जिससे उसकी भावनाओं का दमन होता है। 'निर्मोही' में पति पत्नी का पक्ष सुने बिना उसे घर से निकाल देता है।

ममता कालिया को समाज के यथार्थ का गहरा बोध है और वे उस यथार्थ को उकेरने में सक्षम हैं, जो पाठकों के मन और मस्तिष्क को छू लेने में सक्षम हो। उनका विवेक सामाजिक यथार्थ की समझ रखता है। इनके परिवेश में हो रही घटनाएँ इन्हें बेचैन करती हैं, और इनकी रचनाओं में समाज के यथार्थ को उकेरने की क्षमता है। सामाजिक घटनाओं को देखकर इनका सृजनात्मक मस्तिष्क अनदेखी नहीं कर पाता और उनकी कहानियाँ समाज को यथार्थ से अवगत कराती हैं, साथ ही समाधान, प्रेरणा और उत्साह प्रदान करती हैं। साहित्यकार अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज की सुप्त विवेकशीलता को जागृत करने का कार्य करता है। समाज और व्यक्ति की क्रियाशीलता अथवा मानव में श्रद्धा रखना साहित्य का कर्तव्य है। विकासशील मानव जीवन के मार्मिक अंशों की अभिव्यक्ति यही यथार्थवादी साहित्य की परिभाषा हो सकती है।

ममता कालिया की कहानियाँ मध्यवर्गीय समाज के साथ-साथ अन्य वर्गों का भी प्रतिनिधित्व करती हैं। पिता के तबादलों के कारण उन्हें भारत के विभिन्न हिस्सों की संस्कृति और समाज के विभिन्न पहलुओं को जानने का अवसर मिला, और इसी अनुभव को उन्होंने अपने लेखन की पृष्ठभूमि बनाया। उन्होंने यथार्थ आधारित ऐसी कहानियाँ लिखीं, जो पाठक को पात्रों के साथ खड़ा हुआ अनुभव कराती हैं। ममता कालिया की कहानियों में दिखने वाला परिवेश पाठक के लिए परिचित होता है, क्योंकि यह वही परिवेश होता है जिसे पाठक ने स्वयं अनुभव किया होता है। ममता कालिया ने साठोत्तर के साहित्यकारों में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। उनकी रचनाओं और कहानियों के यथार्थवादी दृष्टिकोण ने समाज को जागरूक किया और अपनी गहरी छाप छोड़ी है। उनकी कहानी 'बड़े दिन की पूर्व साँझ', 'वे तीन', 'वह', 'जिंदगी के सात घंटे बाद', 'बीमारी', 'छुटकारा', और 'अपत्नी' में मध्यवर्गीय पारिवारिक संवेदनशून्यता का चित्रण इनकी विशिष्टता है। ममता कालिया ने पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक यथार्थ को अपनी कहानियों में प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है। इनकी कहानियाँ समाज की समस्याओं का यथार्थपूर्ण चित्रण करती हैं। दिल्ली, मुंबई, पुणे जैसे बड़े शहरों में रहने के कारण इन्होंने समाज को निकटता से देखा और समझा है। उन्होंने दहेज, नैतिक मूल्यों का पतन, रोजगार की समस्या, पारिवारिक संघर्ष, अनमेल विवाह, स्त्री द्वारा स्त्री का शोषण, और पुरुष की कुण्ठाओं को अपनी रचनाओं में सशक्त रूप से प्रस्तुत किया है।

ममता कालिया ने समाज के विभिन्न समस्याओं को कुशलतापूर्वक यथार्थ रूप में चित्रित किया है। इनके जीवन और साहित्यिक योगदान का संक्षिप्त विवेचन निम्नवत है-

जन्म और पारिवारिक पृष्ठभूमि :

ममता कालिया हिंदी की प्रख्यात लेखिका हैं। 2 नवंबर 1940 को वृंदावन (उत्तर प्रदेश) में जन्मी ममता कालिया की माता, इंदुमती, एक साधारण, भोली और शालीन महिला थीं। वह पुरानी रूढ़ियों को मानने वाली थीं। उनके पिता का नाम विद्या भूषण अग्रवाल था, जो पहले शंभू दयाल कॉलेज, गाजियाबाद में प्राचार्य थे और बाद में आकाशवाणी में कार्यरत रहे। वे हिंदी और अंग्रेजी साहित्य के विद्वान थे और अपनी बेबाक बयानी के लिए प्रसिद्ध थे। ममता के व्यक्तित्व पर उनके पिता की छाप साफ तौर पर दिखाई देती है। ममता कालिया, प्रख्यात रचनाकार श्री रवींद्र कालिया की पत्नी हैं। वे लगभग 35 वर्षों तक अध्यापन से जुड़ी रही हैं। ममता ने दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य किया। चूंकि ममता कालिया के पिता एक विद्वान थे, घर में उनके साहित्यकार मित्रों का आना-जाना लगा रहता था। उनके पिता के मित्रों में जैनेंद्र कुमार और मुक्तिबोध जैसे प्रसिद्ध साहित्यकार थे। इस कारण ममता कालिया को बचपन से ही साहित्यकारों का सानिध्य मिलता रहा। उनके पड़ोस में दिल्ली में राजेंद्र यादव और मन्नू भंडारी जैसे साहित्यकार रहते थे, जिनसे उनके घनिष्ठ संबंध थे। पिता के साहित्य प्रेमी होने के कारण घर में साहित्यिक गोष्ठियाँ आयोजित होती रहती थीं। उनके दादा का मथुरा में पुश्तैनी व्यापार 'आढ़त' था। वह चाहते थे कि उनका बेटा भी वही व्यवसाय अपनाए, लेकिन ममता के पिता ने एम.ए. करने के बाद पिता के खिलाफ जाकर नौकरी की और गाजियाबाद में शंभू दयाल कॉलेज में प्रिंसिपल के पद पर कार्य किया। उनके चाचा भारत भूषण अग्रवाल भी प्रसिद्ध साहित्यकार थे। ममता कालिया की एक बड़ी बहन भी हैं, जिनका नाम प्रतिभा है। नाम के अनुसार, वे बहुत प्रतिभाशाली थीं।

ममता बचपन से ही कला में निपुण और कई गतिविधियों में माहिर थीं, लेकिन इसके बावजूद उन्हें अक्सर उपेक्षा का सामना करना पड़ता था, जिससे उन्हें दुख होता था। हालांकि, ममता भी प्रतिभावान थीं, लेकिन उनके सांवेलेपन और दुबलेपन के कारण उनकी अनदेखी की जाती थी। इसी कारण ममता को किताबें पढ़ने का अधिक शौक था और वह बहुत छोटी उम्र से ही कविताएं और बाल कहानियां लिखने लगी थीं।

विवाह से पहले ममता अग्रवाल के नाम से प्रसिद्ध ममता, रवींद्र कालिया से विवाह के बाद ममता कालिया हो गई। दोनों की भेंट चंडीगढ़ की एक साहित्य गोष्ठी में हुई थी। उस समय ममता दिल्ली विश्वविद्यालय के दौलत राम कॉलेज में अंग्रेजी की प्राध्यापक थीं। दोनों एक-दूसरे के व्यक्तित्व से इतने प्रभावित हुए कि शीघ्र ही वे विवाह के बंधन में बंध गए। रवींद्र कालिया ने पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ से हिंदी में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की थी और शादी के समय टाइम्स ऑफ इंडिया में कार्यरत थे। उन्होंने 12 दिसंबर 1964 को दिल्ली में समान धर्मी रवींद्र कालिया से प्रेम विवाह किया। साहित्यिक परिवेश के कारण उनके विवाह समारोह में दिल्ली साहित्य जगत के प्रसिद्ध रचनाकार मोहन राकेश, जैनेंद्र कुमार, कमलेश्वर, प्रभाकर, कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी और अन्य कई लेखक शामिल हुए। उनका विवाह समारोह बहुत शानदार ढंग से आयोजित किया गया। ममता कालिया ने तमाम विरोधों और असहमतियों के बावजूद रवींद्र कालिया से प्रेम विवाह किया। रवींद्र कालिया विवाह को साधारण तरीके से कोर्ट मैरिज करना चाहते थे, जबकि ममता पारंपरिक रूप से माता-पिता और दोनों परिवारों की उपस्थिति और आशीर्वाद से विवाह करना चाहती थीं। रवींद्र कालिया सुंदर थे और ममता हड्डियों के ढांचे जैसी थीं। “विवाह के समय एक वाक्य हुआ, ममता की माता जी बहुत खूबसूरत महिला थीं, जबकि ममता पतली-दुबली थीं। विवाह के समय जब ममता की मां आरती का थाल लेकर आई, तो रवींद्र कालिया के चाचा ने कहा, इससे अच्छा तो ममता की मां से शादी कर लेता। इन सभी विरोधों के बावजूद रवींद्र कालिया और ममता कालिया का प्रेम विवाह हुआ, लेकिन दोनों को आपस में विश्वास था। ममता ने स्वयं कहा, हम दोनों लेखक होने के कारण एक-दूसरे से टकराते थे, लेकिन यह टकराव लेखकीय स्पर्धा के कारण नहीं, बल्कि निहायत मामूली सी बातों को लेकर होता था”। (तद्भव, 193) यह विवाह केवल दो कलाकारों का संबंध नहीं था, बल्कि दो संस्कृतियों का संक्रांति बंधन था। रवींद्र कालिया कहते थे, हम दोनों एक-दूसरे के विलोम हैं। जो रंग ममता को पसंद है, वह मुझे नापसंद है और जो रंग मुझे पसंद है, वह ममता को मनहूस लगते हैं। मुझे अगर निराला पसंद है, तो उसे मुक्तिबोध पसंद है। मुझे दिलीप कुमार पसंद है, तो उसे आमिर खान। मुझे जूही चावला पसंद है, तो उसे माधुरी दीक्षित। मुझे शशि पसंद है, तो उसे रवि।

ममता कालिया अपने पति रवींद्र कालिया के साथ हमेशा खुश रहने वाली लड़की की तरह नहीं थीं। रवींद्र कालिया भी एक लड़ता-झगड़ता और जीवंत साथी चाहते थे, जो ममता कालिया थीं। ममता कालिया कहती हैं, हम दोनों की पसंद-नापसंद बिल्कुल अलग थी। जो मुझे

पसंद था, रवि को वह देहाती लगता था और जो रवि को पसंद था, वह मुझे मनहूस लगता था। दोनों शॉपिंग पर जाते थे, तो दोनों की लड़ाई हो जाती थी। लेखन में भी दोनों की शैली अलग थी। जहां रवींद्र कालिया को समाज की गरीबी, बेरोजगारी और सामाजिक कुरीतियां बेचैन करती थीं, वहीं ममता कालिया को स्त्री और पुरुष के मन की बातें, समाज में कामकाजी स्त्री का संघर्ष और अन्य मूलभूत प्रश्न अधिक प्रभावित करते थे। रवींद्र कालिया कहते थे, "ममता कालिया को असहमतियों ने बचाए रखा। इतनी असहमतियों के बावजूद, दोनों ने एक-दूसरे को समझा और अपनी शादी को अंत तक निभाया। ममता कालिया ने अपने जीवन में अनेक कष्टों और संघर्षों का सामना किया। इन्होंने कई बार अपने भविष्य को दांव पर लगाकर पति के लिए अपना कर्तव्य निभाया। नौकरियां छोड़ी, लेकिन फिर भी अडिग चट्टान की तरह पति के साथ खड़ी रही। आत्मविश्वास कभी कम नहीं होने दिया। जब रवींद्र कालिया ने मुंबई की नौकरी छोड़कर इलाहाबाद जाने का निश्चय किया, तो ममता उनके साथ चल पड़ीं और बड़ी दक्षता से घर और कार्यक्षेत्र में अपने कर्तव्यों का पालन किया। रवींद्र कालिया के अनुसार, "ममता कालिया बच्चों के मन में ममता की छवि कुछ-कुछ सांता क्लॉज जैसी है। वह बहू, बेटी, पत्नी, लेखिका, प्रिंसिपल तो बाद में हैं, पहले मां हैं। बच्चों ने कभी मेरे सामने अपनी मांग रखी ही नहीं। मुझे यह भी नहीं मालूम रहता कि बच्चों की फीस कितनी है, उनके ट्यूटर को क्या दिया जाता है। अब वह इस हद तक ममतामयी हो गई हैं कि कई बार मुझे भी बच्चा समझकर समझने की भूल कर बैठती हैं।" (कालिया, 12,57) विवाह के बाद कुछ वर्षों तक ममता को परिस्थितियों से संघर्ष करना पड़ा, लेकिन आज वह अपने पारिवारिक जीवन से संतुष्ट हैं। उनके दो बेटे, अनिरुद्ध और प्रबुद्ध हैं। पति रवींद्र कालिया की मृत्यु के बाद ममता बिल्कुल टूट गईं, लेकिन फिर से उन्होंने खुद को संभाला और लेखन कार्य में सक्रिय हो गईं। उनके जीवन में कई रचनाएं आईं, जिनमें "रवि कथा" और "जीते जी" जैसी महत्वपूर्ण कृतियां शामिल हैं। जनसुलभ पुस्तकालय के वक्तव्य में रचनाकार पंकज सुधीर ने कहा, "जरूरी नहीं है कि प्रेम के लिए ताजमहल बनाया जाए, प्रेम के लिए 'रवि कथा' भी लिखी जा सकती है।" (सुबीर, 10-1-24)

शिक्षा एवं समकालीन परिस्थितियाँ

ममता कालिया की प्रारंभिक शिक्षा गाजियाबाद के कान्वेंट स्कूल से प्रारंभ हुई। उनकी पूरी शिक्षा अंग्रेजी माध्यम से हुई। इसके बाद, उनके पिता ने गाजियाबाद में प्रिंसिपल की नौकरी छोड़कर आकाशवाणी दिल्ली में कार्य करना शुरू किया। फिर पिता के तबादलों के कारण

उनकी शिक्षा दिल्ली, मुंबई, पुणे, नागपुर, इंदौर और दिल्ली के विभिन्न विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में हुई। सन 1961 में इंदौर के विक्रम विश्वविद्यालय से बी.ए. की परीक्षा उच्च श्रेणी में उत्तीर्ण की। इसके बाद उन्होंने 1963 में दिल्ली विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। एम.ए. की उपाधि प्राप्त करने के बाद, ममता कालिया ने दिल्ली के दौलतराम कॉलेज में प्राध्यापक के रूप में नौकरी शुरू की। अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा प्राप्त करने के कारण ममता कालिया को अंग्रेजी पढ़ना और लिखना आसान लगता था। वे हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं को दो रंगों की तरह सामान्य मानती थीं। ममता कालिया फ्रेंच भाषा भी जानती थीं। जब उनके पिता के तबादले के कारण वे मुंबई में आठवीं कक्षा में दाखिल हुईं, तो वहां के स्कूल में फ्रेंच भाषा अनिवार्य विषय थी। फ्रेंच भाषा उन्होंने एस.एस.सी. तक पढ़ी। वाडिया कॉलेज में एक शिक्षक के कहने पर ममता ने डेढ़ सौ रुपये प्रति माह स्कॉलरशिप पर फ्रेंच ऑनर्स लिया। लेकिन बाद में उनके पिता का तबादला मुंबई से इंदौर हो गया, जहां का माहौल हिंदीमय था, जिससे उनकी फ्रेंच भाषा छूट गई। ममता को हिंदी भाषा की शिक्षा घर पर ही उनके पिता और चाचा, भारत भूषण अग्रवाल से मिली।

ममता कालिया शब्दों की पारखी हैं। उनकी भाषा का ज्ञान उच्च कोटि का है। वे साधारण शब्दों में भी अपने विशेष प्रयोग से जादुई प्रभाव उत्पन्न कर देती हैं। उनके घर में भी बोलचाल की भाषा उच्च स्तर की थी। शब्दों के चयन और सही प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया जाता था। घर में शब्दों के चयन को लेकर कई बार बहस होती थी। उन्हें घर में ही सभी से भाषा की तमीज सिखाई गई, जिससे वे साहित्य के सरोकार भी सीख पाईं। सन 1960 में, जब ममता बी.ए. कर रही थीं, उन्होंने कविताएं लिखना शुरू किया। उनकी पहली कविता "प्रयोगवादी प्रियतम" उस समय "जागरण" पत्र के रविवार विशेषांक में प्रकाशित हुई थी। उनकी शुरुआती रचनाओं में आक्रोश था। उनकी पहली कहानी "ऊंचे ऊंचे कंगूरे" ने 1963 में "साप्ताहिक हिंदुस्तान" पत्रिका की हिंदुस्तान टाइम्स प्रशासन की कहानी प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त किया था। इसके बाद उनकी रचनाएं "सारिका", "सप्रभात", "धर्मयुग", "साप्ताहिक हिंदुस्तान" जैसी पत्रिकाओं में भी प्रकाशित होने लगीं।

ममता कालिया का जन्म एक सामान्य और संपन्न परिवार में हुआ था। उनका बचपन एक सामान्य बच्चे की तरह ही था, लेकिन घर के साहित्यिक परिवेश और उनके

पिता का उनके व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव पड़ा। उनकी बड़ी बहन प्रतिभा, जो सुंदर और एक प्रतिभाशाली छात्रा होने के साथ कई अन्य कलाओं में भी निपुण थीं, के कारण ममता को कई बार घर और बाहर उपेक्षा का सामना करना पड़ा, जो उन्हें बहुत अखरता था। एक साक्षात्कार में ममता ने कहा कि उनके पिता हमेशा उनकी बड़ी बहन को 'माय ब्रिलियंट डॉक्टर' और उन्हें 'माय सिली डॉक्टर' कहते थे। एक बार बचपन में, ममता के घर आए एक साहित्यकार ने उनके पिता से उनकी प्रशंसा की कि 'आपकी छोटी लड़की बहुत अच्छा बोलती है'। इस प्रशंसा ने ममता के व्यक्तित्व पर गहरा असर डाला। साहित्यिक परिवेश के कारण ममता ने बहुत छोटी उम्र में ही बाल कहानियां लिखना शुरू कर दिया था। बड़े होने पर उन्होंने अंग्रेजी में कविताएं भी लिखीं। जब ममता चंडीगढ़ में एक साहित्यिक सम्मेलन से लौट रही थीं, तो साहित्यकार रवींद्र कालिया ने उन्हें कहानियां लिखने की चुनौती दी, जिसे उन्होंने बखूबी निभाया।

रचनाकार रवींद्र कालिया से विवाह के बाद, उनके पति ने भी उनके लेखन की सराहना की और लेखन कार्य के लिए उन्हें हमेशा प्रोत्साहित किया। पति-पत्नी दोनों ही साहित्यकार थे, जिससे घर पर साहित्यिक गोष्ठियों का आयोजन और साहित्यकार मित्रों का आना-जाना लगा रहता था। ममता को घर, बच्चों, नौकरी और लेखन कार्य में कई बार चुनौतियों का सामना करना पड़ता था। रवींद्र कालिया ममता कालिया के बारे में कहते हैं, "ममता के पास परिश्रम करने की अद्भुत क्षमता है। वह एक साथ कई मोर्चों पर तैनात रह सकती हैं। एक तरफ कॉलेज की जिम्मेदारियां, घर की जिम्मेदारियां, दूसरी तरफ गोष्ठियों के निमंत्रण, लेखन का दबाव—यह देखकर आश्चर्य होता है कि इतनी व्यवस्थाओं के बीच वह लिखने का समय कैसे निकाल पाती हैं।" (कालिया, 103) तमाम संघर्षों और असमतियों के बावजूद, ममता कालिया का वैवाहिक जीवन सफल रहा और उनका लेखन कार्य आज भी जारी है। हिंदी साहित्य के कई सम्मानों से सम्मानित ममता कालिया अपने पति रवींद्र कालिया को जीवनसाथी के रूप में अपनी सबसे बड़ी पूंजी और व्यापक अनुभवों का आकाश मानती हैं।

वैचारिक अवधारणा

ममता कालिया सादगी, सरलता और मिलनसारिता के साथ बहुमुखी प्रतिभा की धनी हैं। उनका व्यक्तित्व आकर्षक है, जिसमें हंसी-मज़ाक और मधुर मुस्कान के साथ एक बड़ी सी बिंदी उनके चेहरे को और भी सुंदर बनाती है। वह एक अच्छी मां, पत्नी, बेटी और मित्र होने के साथ-साथ एक गंभीर लेखिका भी हैं, जिनमें भारतीय नारी का आदर्श झलकता है। उन्होंने अपने जीवन में अनेक संघर्षों का सामना किया और निरंतर आगे बढ़ती रही। उन्होंने अपनी सभी जिम्मेदारियों को बखूबी निभाया और पारिवारिक तथा व्यावसायिक संबंधों का भी सफलतापूर्वक निर्वहन किया। विवाह से पहले ममता कालिया एक अच्छी बेटी और सामान्य लड़की की तरह जीवन जी रही थीं। ममता के व्यक्तित्व और लेखन का मनोविज्ञान समझने के लिए यह जानना आवश्यक है कि वह हमेशा अपने पिता के बहुत करीब रहीं। उनकी मां से कहीं अधिक, उनके पिता को अपनी बेटियों पर गर्व था। उन्होंने बेटियों को बेटों जैसा समझकर पाला और उन्हें पढ़ाई के लिए प्रेरित किया। ममता का कहना है, मेरे जीवन में पापा का समर्थन बहुत महत्वपूर्ण था। पिता को अपना हीरो मानने वाली ममता, उनके व्यक्तित्व से अत्यधिक प्रभावित थीं। बाद में, एक साहित्यकार के कहने पर उन्होंने पिता के नाम का चश्मा उतारकर अपने अनुभवों से दुनिया देखना शुरू किया।

ममता कालिया, उच्च शिक्षा प्राप्त करने और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के बावजूद, व्रत, त्यौहार, रिवाज, परंपरा और भारतीय संस्कारों में गहरी आस्था रखती हैं। उनके व्यक्तित्व की यह छाप उनकी रचनाओं में भी देखी जा सकती है। उनका कहना है, "हम दोनों बहनें पैदल स्कूल जाती थीं। हमारे बस्ते में एक थैला और कुछ पैसे होते थे। वापसी में घर के लिए सब्जी खरीदती थीं। वही अभ्यास आज तक बना हुआ है। मुझे इसमें कुछ भी असंगत नहीं लगता कि ऑफिस के बाद मैं घर का सामान खरीदूं और लदी-फंदी घर लौटूं।" (कालिया, 7) ममता कालिया के रचनाओं में नारी पात्र उनकी तरह स्वाभिमानी, आत्मनिर्भर और उच्च शिक्षित हैं, जो सभी परिस्थितियों से जूझते हुए निरंतर आगे बढ़ती हैं। ममता कालिया ने हमेशा जीवन संघर्षों का सामना किया और अपने जीवन के हर मोर्चे पर सफलता पाई। वह आत्मनिर्भर, स्वाभिमानी और आत्मविश्वासी महिला हैं। अपने पति के लिए कई बार उन्होंने अपना भविष्य दांव पर लगाया, लेकिन हमेशा निरंतर आगे बढ़ती रहीं और उन्हें कंधे से कंधा मिलाकर साथ दिया। उनके पति, रवींद्र कालिया, ममता को

"बच्चों का सांता क्लॉज़" कहते थे। उन्होंने घर और कार्यक्षेत्र दोनों में अपनी दक्षता को प्रमाणित किया और इन जिम्मेदारियों के बावजूद एक सफल और प्रसिद्ध लेखिका बनीं। कई बार उनके सहकर्मी उन्हें "बड़ी दीदी" कहकर संबोधित करते थे, क्योंकि वह मिलनसार थीं और उनके घर में हमेशा मेहमानों का आना-जाना लगा रहता था। वह हमेशा मेहमानों के स्वागत में तत्पर रहतीं। 5 फुट 2 इंच की ऊँचाई, गोरा रंग और माथे पर बिंदी के साथ उनका गरिमामय व्यक्तित्व बेहद प्रभावशाली था। रात में सभी कार्यों से मुक्त होकर लेखन कार्य में संलग्न रहना उन्हें पसंद था। हालांकि, उन्होंने हर स्थिति और परिस्थिति में लेखन किया। ममता कालिया ने स्वयं कहा है, "मैंने अपनी कहानियों को आरामदायक पृष्ठभूमि में नहीं लिखा। लेकिन हर हाल में लिखा - घर में, कॉलेज में, ट्रेन में, रिक्शे में - हर उस जगह जहां आस-पास जीवन था। बहुत अधिक साफ-सुथरे माहौल में मेरी रचनात्मक प्रक्रिया ठिठुर जाती है।" (कालिया, 9)

ममता कालिया ने अपने निजी जीवन के अनुभवों को अपनी रचनाओं में सहज शब्दों में अभिव्यक्त किया है। वह एक स्पष्टवादी और निडर लेखिका हैं। उन्होंने समाज की विचलित कर देने वाली घटनाओं से कभी आंख नहीं फेरी, बल्कि जीवनभर अपनी रचनाओं और विचारों के माध्यम से पुरज़ोर विरोध किया। ममता कालिया परिश्रमी और ईमानदार महिला हैं, और यही उनकी सफलता की कुंजी है। सन 1960 से निरंतर लिखते हुए ममता कालिया जीवन के संघर्षों से जूझते हुए एक सफल और प्रसिद्ध लेखिका बनीं। उनके स्वयं के शब्दों में, "कहानी लिखना एक साधना और एकांकी कला है। चाहे कितने भी आधुनिक साधन और संजाल आपके सामने हों, लिखना आपको अपनी नन्ही कलम से ही होता है। कई-कई दिन कहानी दिल और दिमाग में करवटें बदलती रहती है। अंततः जब कहानी लिखने का दबाव होता है, तो मुझे अपने ही बहुरंगी घर-संसार से निर्वासित करना पड़ता है।" (कालिया, 4) ममता कालिया की यह विशेषता है कि वह कहीं भी लिख सकती हैं - रद्दी लिफाफे पर, हाथ की हथेली पर, या अखबार पर। कई कहानियां तो उन्होंने घर से कॉलेज जाते वक्त रिक्शे में भी लिखी हैं। ममता कालिया का लेखन एक अद्भुत कला है, जो उनके संघर्षों और उनकी पहचान को दर्शाता है। उनके सरल और सहज व्यक्तित्व में कोई समझौता नहीं है, और यह उनकी प्रेरणादायक क्षमता को उजागर करता है।

लेखन की प्रेरणा

ममता कालिया का जन्म एक साहित्यिक वातावरण में हुआ था। इनके पिता, विद्या भूषण अग्रवाल, और चाचा, भारत भूषण अग्रवाल, दोनों ही साहित्यकार थे। घर में हमेशा बड़े-बड़े साहित्यकारों का आना-जाना लगा रहता था। ममता ने बचपन से ही घर में साहित्यिक संगोष्ठियों का आयोजन देखा और इस वातावरण ने उन्हें साहित्य में गहरी रुचि विकसित करने के लिए प्रेरित किया। साहित्यिक सम्मेलन का दिन उनके लिए किसी उत्सव जैसा होता था। संगोष्ठियों की तैयारी में बचपन से ही इनकी विशेष रुचि थी। इन साहित्यिक आयोजनों और बड़े-बड़े साहित्यकारों से मिलने का अनुभव उनके व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव छोड़ता था। खासकर जैनेंद्र कुमार का कहानी पाठ उन्हें बहुत प्रभावित करता था। साहित्यकारों, कलाकारों और संगीतकारों को देखकर ममता को यह महसूस होता था कि समाज में इन्हें बहुत सम्मान मिलता है। लोग उनसे मिलना पसंद करते थे, उन्हें सुनना और उनसे बात करना पसंद करते थे। यह सब ममता को बहुत आकर्षक लगता था और कहीं न कहीं यही चीज उन्हें लेखन की ओर प्रेरित करती थी। घर में हमेशा पत्र-पत्रिकाओं और किताबों का अंबार लगा रहता था। ममता बहुत पढ़ती थीं और दिन में कई बार उस अंबार में खो जाती थीं। अपने दुबलेपन और सांवलेपन के कारण समाज की उपेक्षा से भी ममता ने किताबों में अपना सहारा ढूँढ़ लिया था। लेखक बनना उन्हें बहुत सुखदाई लगता था क्योंकि उन्हें लगता था कि सिर्फ लिखना है और कुछ नहीं करना। यह अपने आप में एक बहुत अच्छा पेशा लगता था। ममता को यह भी लगता था कि लोग उन्हें सुनना चाहते हैं, उनसे मिलना चाहते हैं। हालांकि साहित्यकारों की बातों को ममता पूरी तरह से नहीं समझ पाती थीं, फिर भी उन्हें यह सब अच्छा लगता था। घर पर हमेशा एक उत्सव जैसा माहौल रहता था। नौ से दस वर्ष की उम्र में जब ममता को थोड़ी समझ आई, तब से ही वह कविताएं लिखने लगी थीं, लेकिन इन्हें ख्याति कथा और उपन्यास लेखन से ही मिली। ममता की पहली कहानी "ऊंचे ऊंचे कंगूरे" नेशनल लेवल साप्ताहिक हिंदुस्तान में छपी थी, जिसके लिए इन्हें सर्वश्रेष्ठ कहानी का पुरस्कार भी मिला था।

ममता कालिया ने इंदौर में इंटरमीडिएट के दौरान लिखना शुरू किया था। अखबारों में लिखकर वह कवि बनीं। इनके चाचा ने उन्हें हमेशा लेखन के लिए प्रेरित किया। एक बार जब इनके चाचा, भारत भूषण, भोपाल से इंदौर आए, तो दो-तीन दिन घर में रहे और

ममता की दौड़-भाग देखते रहे। जाने से पहले उन्होंने ममता को कड़ी डांट लगाई और कहा, “तुम कवि बनना चाहती हो तो यह दसों दिशाओं में क्या हाथ-पांव फैला रही हो? चुपचाप अपने कमरे में बैठो, किताबें पढ़ो। मन में कुछ आए तो लिखो और फाड़ो। गोष्ठियों में अभी से जाने की क्या जल्दी मची है? कहीं रचना भेजनी है तो संपादक को चिट्ठी लिखने की जरूरत नहीं। बस रचना पर लिखो 'प्रकाशनार्थ', बीस पैसे का टिकट लगाओ और बुक पोस्ट कर दो।”(तद्भव 77) ममता कालिया के लिए उनके पिता की आलोचनाएं महत्वपूर्ण थीं, और वह अपनी रचनाओं के आलोचक के रूप में उन्हें ही मानती थीं। ममता कालिया कहती हैं कि मेरी सारी रचनाओं के वह प्रखर आलोचक भी रहे। मेरे उच्चारण को सुधारने में मेरे पिताजी ने काफी सहयोग किया।

लेखन की शुरुआत ममता ने काव्य लेखन से की थी, लेकिन बाद में महसूस किया कि कविता केवल स्त्री के देह के विषय में केंद्रित होकर रह गई है। इस वजह से उन्होंने अपने लेखन को गद्य लेखन की ओर मोड़ा। रवींद्र कालिया से मिलने के बाद उन्होंने भी गद्य लेखन के लिए प्रेरित किया। रवींद्र कालिया उन्हें हमेशा अच्छी कहानियां पढ़ने के लिए प्रेरित करते थे। ममता कालिया का मानना है कि 1965 की जनवरी में रवींद्र कालिया से मिलना मेरे रचनात्मक जीवन के लिए एक ऐसा अवसर था, जिसने मेरे सोच और जीवन को नई दिशा दी।

ममता कालिया के लेखन को प्रेरित करने वाली तीन प्रमुख घटनाएं इस प्रकार हैं।
पहली- जब ममता नौ-दस वर्ष की थीं, उनके पिता ने दिल्ली में एक साहित्यिक गोष्ठी का आयोजन किया था। इस गोष्ठी में जैनेंद्र कुमार का कहानी पाठ हुआ था। ममता ने कहानी को पूरी तरह से नहीं समझा, लेकिन जैनेंद्र कुमार की आवाज और उनका कहानी पाठ उन्हें बहुत प्रभावित किया। **दूसरी** घटना उनके घर में हुई, जब मुक्तिबोध उनके पिता से मिलने आए थे। उन्होंने ममता की आवाज की तारीफ की और कहा, ‘आपकी लड़की की आवाज बहुत अच्छी है।’ इस प्रशंसा ने ममता को गहरा प्रभावित किया और उन्हें अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए प्रेरित किया। **तीसरी** घटना विवाह के बाद हुई, जब ममता कालिया एस.एन.डी.टी. विश्वविद्यालय में इंटरव्यू देने गईं। पैनल के एक गुजराती लेखक ने ममता की पहचान करते हुए कहा, “ममता तो बहुत अच्छा लिखती हैं।”(तद्भव, 54) इस वाक्य ने ममता को बहुत उत्साहित किया और उन्हें नौकरी मिलने में मदद की। ममता कालिया के

लेखन में उनके जीवन के संघर्षों का बड़ा योगदान है। उन्होंने अपने पिता के तबादलों के कारण भारतीय जीवन को गहरे से महसूस किया, जो उनके साहित्य में महानगरीय जीवन की झलक प्रदान करता है। ममता कालिया की रचनाओं के प्रति पाठकों का प्यार और समर्थन उनके लेखन को लगातार प्रेरित करता रहा है। ममता की कहानियों को साप्ताहिक हिंदुस्तान जैसे प्रतिष्ठित पत्रिका में लगातार प्रकाशित किया गया। रवींद्र कालिया और ममता के लिए यह उनके जीवन का अभिन्न हिस्सा था।।

साहित्यिक-सृजन के सोपान

ममता कालिया हिंदी साहित्य जगत की विख्यात कथाकार हैं। उनकी उपस्थिति हिंदी कहानी के परिदृश्य पर सातवें दशक से निरंतर बनी हुई है। लगभग आधी सदी के कालखंड में ममता कालिया ने दो सौ से अधिक कहानियों की रचना की। वे कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, निबंध, संस्मरण और पत्रकारिता – अर्थात् साहित्य की लगभग सभी विधाओं में सक्रिय रही हैं। कई शहरों में रहने और पढ़ने-पढ़ाने के बाद वे आज भी लेखन कार्य में सक्रिय हैं। भारतीय समाज की विशेषताओं और विषमताओं पर अपनी पेंनी नजर रखते हुए ममता कालिया की रचनाओं के केंद्र में उस समय का समाज रहा है। विकासशील समाज में बनते-बिगड़ते संबंध, प्रगति के आर्थिक और सामाजिक दबाव, स्त्री की प्रगति को देखकर पुरुष मनोविज्ञान की कुंठाएं और कामकाजी स्त्री के संघर्ष उनके प्रिय विषय रहे हैं। उनकी कहानियों और उपन्यासों में कामकाजी महिलाओं का चित्रण किया गया है। ममता स्वयं भी कामकाजी महिला रही हैं। अपने जीवन संघर्ष को वे लेखन प्रेरणा मानती हैं। ज़िम्मेदारियों और व्यवस्थाओं के बीच भी लेखन के लिए समय निकाल लेती हैं। ममता के लिए लेखन सबसे प्यारा पलायन भी है। वह किसी भी बात से परेशान होती तो लिखने बैठ जाती। उसके बाद एकदम संतुलित हो जाती। ममता कालिया का मानना है कि हमें जीवन की तमाम आपाधापियों के साथ ही कार्य करना पड़ता है। यदि हम जीवन की व्यवस्थाओं से फुर्सत का इंतजार करने के भरोसे कार्य छोड़ते हैं, तो शायद कभी वह कार्य पूरा न हो। मैंने हर स्थिति में लिखा। उन्हें कभी लिखने के लिए कोई खास जगह या विशेष चीज़ों की आवश्यकता नहीं पड़ी। जो भी उनके मस्तिष्क में शोर मचाता, वह किसी भी स्थिति में लिख डाला। उनका मानना है कि रचनाकार जो भी लिखे, उसमें पाठकों की रुचि के साथ-

साथ प्रेरणा भी होनी चाहिए, क्योंकि एक अच्छा साहित्य ही पाठकों को बांधकर रख सकता है। एक बुरी किताब पाठक की हत्या कर देती है। पाठक उसे पढ़ने के बाद पुस्तकों से विमुख हो जाता है। यह बेहद जरूरी है कि लेखक अपनी किताब में पठनीयता और विश्वसनीयता दोनों को बरकरार रखें। लेखक को कभी भी इस पर समझौता नहीं करना चाहिए।

उनकी लेखन क्षमता अद्वितीय है। इन्होंने जिस भी विधा में लिखा, अद्वितीय लिखा। उनकी कहानियों में समाज का यथार्थ, मध्यवर्गीय चित्रण, और नारी की विभिन्न स्थितियों का चित्रण बड़े ही विस्तृत रूप में मिलता है। इनकी कहानियों के नारी पात्र अस्तित्वहीन होकर अपने अस्तित्व की तलाश में लगातार संघर्ष करते हैं। आज समाज में नारी ने अनेक क्षेत्रों में अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया है, किंतु नारी को फिर भी समाज में सम्मानजनक स्थान नहीं मिलता। इसके लिए उसे निरंतर हर युग में संघर्ष करना पड़ता है। ममता कालिया समाज की नब्ज को समझने में सक्षम हैं। बीसवीं शताब्दी के महिला उत्थान के युग में, विस्तृत व्यक्तित्व से परिपूर्ण ममता कालिया ने निडर होकर अपनी अभिव्यक्ति का चित्रण किया। वे यथार्थवादी रचनाकारों में अपना विशिष्ट स्थान बना चुकी हैं। उनकी कृतियों में उनकी मौलिक प्रतिभा का परिचय मिलता है। उन्होंने हिंदी साहित्य की लगभग सभी विधाओं में रचनाएं की हैं।

कहानी-साहित्य

ममता कालिया ने सामाजिक यथार्थ और सामाजिक परिवेश में बेचैन कर देने वाली हलचल को प्रेरक पद्धति द्वारा चित्रित किया है। उनकी सभी कहानियों में समाज की कोई न कोई समस्या अवश्य होती है, चाहे वह चार दीवारी के भीतर घर-परिवार या पति-पत्नी के संबंधों की हो, या बुजुर्गों तथा महिलाओं के संघर्ष और अधिकारों की, या फिर सामाजिक विषमताओं की। इन्होंने इन सभी का विवरणात्मक चित्रण किया है। इनकी संपूर्ण कहानियाँ दो खंडों में 'ममता कालिया की कहानियाँ' के नाम से प्रकाशित हैं। इनके चौदह कहानी संग्रहों में से, पहले खंड में शुरुआती पाँच कहानी संग्रहों की कहानियाँ हैं और दूसरे खंड में इनके नौ कहानी संग्रह शामिल हैं। इनके प्रकाशित कहानी संग्रह- छुटकारा, एक अदद औरत, सीट नंबर छः, उसका यौवन, जांच अभी जारी है, प्रतिदिन, मुखौटा, निर्मोही, पच्चीस साल की

लड़की, बोलने वाली औरत, काके दी हट्टी, खुशकिस्मत, थोड़ा सा प्रगतिशील और थिएटर रोड के कौए हैं। ममता कालिया ने सन 1960 में कहानी लेखन की शुरुआत की। उसके बाद लगभग 35 वर्षों से इस दिशा में निरंतर आगे बढ़ रही हैं। इन कहानियों के बारे में ममता कालिया कहती हैं, "इन कहानियों के पीछे वे समस्त विसंगतियाँ हैं, जिनकी दर्शक बनकर बैठना मुझे गवारा नहीं था। समय, सवालों से जूझने की चुनौती और उत्कंठा, तथा जीवन के प्रति नित्य नूतन विस्मय ने ही इन कहानियों का लिखना संभव किया है।" (कालिया, 6)

उपन्यास-

ममता कालिया के प्रमुख उपन्यासों में समाज के विभिन्न पहलुओं और मानवीय संवेदनाओं का गहरे चित्रण किया गया है। उनके उपन्यासों में जीवन के यथार्थ, संघर्ष, और रिश्तों की जटिलताओं को बारीकी से पेश किया गया है। उनके लेखन में नारी के संघर्ष, पारिवारिक संबंधों और समाजिक असमानताओं की गहरी समझ देखने को मिलती है। उनके उपन्यास जैसे बेघर, नरक-दर-नरक, और दौड़ इस बात का प्रमाण हैं कि वे समाज की सच्चाई को बिना किसी भय के सामने लाती हैं। ममता कालिया ने विभिन्न विषयों पर लिखा, जिसमें प्रेम, नारी का संघर्ष, और सामाजिक असंतुलन शामिल हैं। उनके लघु उपन्यासों, जैसे प्रेम कहानी और एक पत्नी के नोट्स, ने मानवीय संवेदनाओं को नई दिशा दी है।

संस्मरण-

ममता कालिया की लेखन शैली में संस्मरणों का विशेष स्थान है। उनके संस्मरणों में जीवन यात्रा के विभिन्न पहलुओं का गहन चित्रण मिलता है, जिसमें न केवल व्यक्तिगत अनुभव, बल्कि समकालीन साहित्यिक हस्तियों के साथ संवाद और समाजिक संदर्भ भी शामिल होते हैं। 'जीते जी इलाहाबाद' में उन्होंने इलाहाबाद में बिताए अपने पचास वर्षों की घटनाओं और संस्मृतियों को साझा किया है। इस संस्मरण में उन लोगों के शब्दचित्रों का यथार्थ चित्रण किया गया है, जिन्होंने आधुनिक हिंदी साहित्य को आकार दिया। लेखिका के लिए इलाहाबाद केवल एक शहर नहीं, बल्कि उनकी सांस्कृतिक और साहित्यिक यात्रा का अभिन्न

हिस्सा था। 'अंदाज-ए-बयां उर्फ रवि कथा' एक पत्नी द्वारा अपने पति की स्मृतियों का संकलन नहीं, बल्कि प्रेम और स्नेह का एक जीवंत चित्रण है। लेखिका के भावनाओं की नाजुकता और समर्पण को यह संस्मरण बखूबी व्यक्त करता है, और इसे पढ़कर पाठक भी प्रेम की गहरी भावना से जुड़ जाता है। 'कितने शहरों में कितनी बार' में ममता कालिया ने उन शहरों की स्मृतियों को संजोया है, जहां उन्होंने जीवन के विभिन्न दौर बिताए। यह संस्मरण पाठक को लेखिका के साथ उन शहरों की यात्रा पर ले जाता है, जो उनके हृदय में हमेशा जीवित रहते हैं। 'कल परसों के बरसों' में ममता कालिया ने समकालीन साहित्यकारों और मित्रों से हुई मुलाकातों और बातचीत को संग्रहित किया है, जो उनके लेखकीय विकास में अहम भूमिका निभाती हैं। इस संस्मरण में प्रमुख साहित्यिक हस्तियों जैसे जैनेंद्र कुमार, कमलेश्वर, और अमरकांत की यादें संग्रहीत हैं, जो लेखिका के संवेदनशील मन और लेखन के प्रति उनके दृष्टिकोण को समझने में मदद करती हैं। ममता कालिया के संस्मरण उनके लेखकीय जीवन की गहरी और संवेदनशील यात्रा को प्रस्तुत करते हैं, जिसमें उनके व्यक्तिगत अनुभवों और समाजिक संदर्भों का सुंदर मिश्रण होता है।

कविता संग्रह-

ममता कालिया का नाम मुख्यतः गद्य लेखन के क्षेत्र में प्रसिद्ध है, लेकिन उन्होंने अपनी रचनात्मक यात्रा की शुरुआत कविताओं से की थी। उनकी कविताएँ भी उनके गद्य लेखन की तरह ही विशिष्ट और प्रभावशाली हैं। 1960 के दशक में उन्होंने साहसी और उत्तेजक कविताओं की रचना की, जो तत्कालीन साहित्यकारों का ध्यान आकर्षित करने में सफल रही। इन कविताओं में एक स्पष्ट आक्रोश और संघर्ष का स्वर दिखाई देता है, जो समाज की विसंगतियों और व्यक्तिगत अनुभवों को उजागर करता है। उनका प्रमुख कविता संग्रह "खांटी घरेलू औरत" एक साधारण घरेलू महिला की दिनचर्या और मानसिक संघर्ष को बखूबी चित्रित करता है। संग्रह की कविता "कभी कोई ऊंची बात नहीं सोचती" में जीवन के साधारण, लेकिन गहरे पहलुओं को व्यक्त किया गया है। यह कविता गृहस्थी की जटिलताओं और पारंपरिक महिला की भूमिका को नए दृष्टिकोण से देखने की कोशिश करती है, जो समाज में महिला की स्थिति और उसके भीतर के संघर्ष को उजागर करती है। ममता कालिया की कविताएँ समाज की वास्तविकताओं को चुनौती देती हैं और उनकी गद्य रचनाओं की तरह पाठकों को सोचने पर मजबूर करती हैं।

नाटक

ममता कालिया के दो नाट्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं: "यहां रोना मना है" और "आपने बदलेंगे"। "आपने बदलेंगे" नाटक, उनकी प्रसिद्ध कहानी "आपकी छोटी लड़की" का नाट्य रूपांतरण है। यह नाटक एक स्त्री के वैवाहिक जीवन की एकरसता, ऊब और संघर्ष को प्रभावी तरीके से प्रस्तुत करता है, जो विवाह के बाद की जटिलताओं और व्यक्तिगत पहचान की तलाश को उजागर करता है। दूसरी ओर, "यहां रोना मना है" नाटक दहेज की समस्या पर आधारित है और इस नाट्य संग्रह का सबसे महत्वपूर्ण नाटक है। यह नाटक सामाजिक विसंगतियों और महिला के अधिकारों की बात करता है, जिसमें दहेज प्रथा के कारण महिलाओं को होने वाली मानसिक और शारीरिक पीड़ा को प्रमुखता से दिखाया गया है। ममता कालिया के नाटक समाज की जटिलताओं और महिलाओं के संघर्ष को नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत करते हैं, जो न केवल समाज को आइना दिखाते हैं, बल्कि संवेदनशीलता और चेतना का संचार भी करते हैं।

अनुवाद एवं संपादन

ममता कालिया के अनुवाद और संपादन कार्य ने साहित्य जगत में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उनका "मानवता का बंधन" सामरसेट मारम के उपन्यास का अनुवाद है, जो मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक जटिलताओं को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करता है। "एक कदम आगे" राजस्थान शासन के लिए संपादित कहानी संकलन है, जिसमें समाज के विभिन्न पहलुओं को बारीकी से दर्शाया गया है। "गली-कूँचे" रवींद्र कालिया का संकलन है, जो विशेष रूप से शहरी जीवन की विसंगतियों और व्यक्तिगत संघर्षों को उजागर करता है। "वर्ष अमरकाल" साहित्यिक आलोचना पर केंद्रित ग्रंथ है, जो साहित्य के विभिन्न पहलुओं पर गहरी छानबीन करता है। "पाँच नए एकांकी" एकांकी के संकलन में संक्षिप्त और प्रभावी नाटकों का संग्रह है, जो सामाजिक मुद्दों पर ध्यान आकर्षित करता है। इसके अलावा, ममता कालिया ने "टीन एजर" पत्रिका के कविता पृष्ठ का पाँच वर्ष तक संपादन किया, जिसमें युवा कवियों की काव्यात्मक आवाज़ को मंच प्रदान किया। ममता कालिया का अनुवाद और संपादन कार्य साहित्यिक परिपेक्ष्य में विस्तृत दृष्टिकोण और विचारशीलता का परिचायक है।

पुरस्कार एवं सम्मान

ममता कालिया ने अपनी लेखनी के माध्यम से हिंदी साहित्य को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, जिसके लिए उन्हें कई प्रतिष्ठित पुरस्कार और सम्मान प्राप्त हुए हैं। इन्होंने अमेरिका और यूरोप की साहित्यिक यात्राओं के साथ-साथ राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कई सांस्कृतिक कार्यक्रमों में सक्रिय भागीदारी की है। इन्हें प्रपट प्रमुख पुरस्कार और सम्मानों में सर्वश्रेष्ठ कहानी पुरस्कार- 'सरस्वती प्रेस', इलाहाबाद (1961), ब्यास सम्मान- 'सुखम-दुखम' के लिए, साहित्यिक अकादमी द्वारा, रचना सम्मान- अभिनव भारती (1990), साहित्य भूषण सम्मान- उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान (2007), यशपाल स्मृति सम्मान, कमलेश्वर स्मृति सम्मान, अमृत सम्मान- हिन्दी साहित्य सम्मेलन, यशपाल स्मृति सम्मान - 'उसका यौवन' के लिए, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान (1985), महादेवी स्मृति सम्मान- 'एक पत्नी के नोट्स' के लिए, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान (1998), कमलेश्वर स्मृति सम्मान, सावित्री बाई फुले स्मृति सम्मान - 'बोलने वाली औरत' (1999), लमही सम्मान (2009), जनवाणी सम्मान (2008), सीता पुरस्कार (2012), और वैली ऑफ वर्ड्स पुरस्कार - 'जीते जी इलाहाबाद' के लिए। इन पुरस्कारों ने ममता कालिया की लेखनी की गहरी प्रभावशीलता और साहित्यिक योगदान को मान्यता दी है।

निष्कर्षतः ममता कालिया का साहित्यिक अवदान हिंदी साहित्य में अत्यंत महत्वपूर्ण और बहुमूल्य है। उनकी रचनाओं में सामाजिक, मानसिक और आंतरिक संघर्षों का चित्रण गहरी संवेदनशीलता और सटीकता के साथ किया गया है। ममता कालिया का लेखन भारतीय समाज की जटिलताओं, खासकर महिलाओं की स्थिति और उनके संघर्षों को उजागर करता है। उनका साहित्य समाज की संरचनाओं और रूढ़ियों के प्रति गहरी आलोचना करता है और जीवन के छोटे-छोटे पहलुओं को गहराई से समझने का प्रयास करता है। उनकी कहानियाँ, उपन्यास, कविता और नाट्य रचनाएँ न केवल अपने यथार्थवादी दृष्टिकोण के लिए प्रसिद्ध हैं, बल्कि इनमें नारीवाद, सामाजिक असमानता, पारिवारिक संबंधों की पेचिदगियों और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के संघर्ष जैसे मुद्दे भी प्रमुखता से उठाए गए हैं। ममता कालिया का लेखन न केवल भावनात्मक दृष्टि से प्रभावी है, बल्कि यह पाठकों को सामाजिक यथार्थ से भी परिचित कराता है। उनकी काव्य रचनाओं में जीवन के प्रति एक जागरूक और सशक्त दृष्टिकोण दिखता है, जहां उनके शब्दों में आक्रोश, विद्रोह और

संवेदनशीलता का संगम होता है। ममता कालिया का साहित्य न केवल पाठकों को मनोरंजन प्रदान करता है, बल्कि उन्हें समाज की वास्तविकताओं को देखने और समझने के लिए प्रेरित भी करता है। साथ ही, ममता कालिया के अनुवाद और संपादन कार्य ने भी हिंदी साहित्य की परिधि को विस्तृत किया है। उनकी अनुवादित रचनाएँ और संपादित संकलन साहित्यिक धारा को समृद्ध करने का काम करते हैं। इसके अतिरिक्त, ममता कालिया के लेखन में नारी के स्वाभिमान और अस्तित्व की अभिव्यक्ति एक प्रमुख विषय के रूप में उभर कर आती है, जो भारतीय समाज में महिलाओं की बदलती भूमिका की ओर इशारा करती है। कुल मिलाकर, ममता कालिया का साहित्य न केवल रचनात्मक दृष्टिकोण से उत्कृष्ट है, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और मानसिक परिप्रेक्ष्य से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनके लेखन ने हिंदी साहित्य में एक नई दिशा और दृष्टि प्रदान की है, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए एक अमूल्य धरोहर के रूप में कायम रहेगा।

संदर्भ सूची

अखिलेश. तद्भव. अगस्त 2004, पृ. सं. 193, 73, 77, 54.

कालिया, ममता .जीते जी इलाहाबाद. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2021, पृ. सं. 7.

कालिया, ममता .मेरी प्रिय कहानियां. राजपाल एंड सन्ज़, दिल्ली, 2019, पृ. स. 9,4,6

कालिया, रवींद्र .ग़ालिब घुटी शराब. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000, पृ. सं. 103.

कालिया, रवींद्र. सृजन के सहायत्री. पोकट बुक्स, दिल्ली, 1980, पृ. स. 12, 57.

कार्ल, मार्क्स .Das Kapital. पृ. स. 45, 1867.

कुलाच, जार्ज .Realiam in the Balance. पृ. स. 67, 1938.

जे. एस. रॉस. ग्राउंडवर्क ऑफ़ एजुकेशन. पृ. स. 38, 2017.

द्विवेदी, डॉ. राम अवध, साहित्य सिद्धांत. बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, 1962, पृ. स. 116.

पटेल, नित्यानंद .प्रेमचंद के उपन्यास-साहित्य में सांस्कृतिक चेतना. नई दिल्ली, 1980, पृ. स. 544.

पांडे, कृपाशंकर. यथार्थ के विविध आयाम लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1996, पृ. स. 25.

प्रेमचंद .कुछ विचार. डायमंड बुक्स, दिल्ली, 2011, पृ. स. 23.

प्रेमचंद, साहित्य का उद्देश्य. निबंध, लखनऊ, 1936, पृ. स. 3.

मिश्र, शिवकुमार .यथार्थवाद. वाणी प्रकाशन, द्वाितीय संस्करण, नई दिल्ली, 2011, पृ. स. 76,

यथार्थबोध एक अध्ययन, (शोधार्थी- पुनम) डॉ भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा-2023

वाजपेई, नंददुलारे आधुनिक साहित्य. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ. स. 420, 45.

सिंह, त्रिभुवन .हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद. वाणी प्रकाशन, 2022, पृ. स. 221, 7, 28, 23, 263.

सिंह, डॉ. अजब, यथार्थवाद पूर्नमूल्यांकन, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वारणासी, 1998, पृ. स. 34.

सुबीर, पंकज. जन सुलभ, 10 जनवरी, 2024.

द्वितीय अध्याय

ममता कालिया के कहानी साहित्य में सामाजिक संदर्भ और यथार्थबोध

ममता कालिया के कहानी साहित्य में सामाजिक संदर्भों और यथार्थबोध का चित्रण अत्यंत प्रभावशाली ढंग से किया गया है। उनकी कहानियाँ समाज की वास्तविकता, जमीनी सच्चाई और जीवन के विभिन्न पहलुओं को अत्यंत सजीव रूप में प्रस्तुत करती हैं। वे समाज में व्याप्त समस्याओं, संघर्षों और परिवर्तनों को न केवल उजागर करती हैं, बल्कि उन पर गंभीर चिंतन भी करती हैं। उनके साहित्य में यथार्थबोध एक प्रमुख विशेषता के रूप में उपस्थित है, जो पाठकों को समाज के असली स्वरूप से रूबरू कराता है। ममता कालिया की कहानियाँ सामाजिक संदर्भों और यथार्थबोध के माध्यम से समाज की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत करती हैं। उनकी रचनाएँ केवल मनोरंजन का साधन नहीं हैं, बल्कि वे समाज में सुधार और परिवर्तन की दिशा में एक सार्थक प्रयास भी हैं। उन्होंने यथार्थ के धरातल पर अपने कहानी साहित्य में विविध सामाजिक परिवेशों और उनसे जुड़ी समस्याओं को प्रभावशाली रूप से अभिव्यक्त किया है। घटनाओं और परिस्थितियों का चयन उन्होंने वास्तविक जीवन से ही किया है, जिससे उनकी कहानियों में स्वाभाविकता और विश्वसनीयता आती है। ममता कालिया एक यथार्थवादी और संवेदनशील कथाकार हैं। उन्होंने सामाजिक समस्याओं के विविध पक्षों पर विचार किया है और उन्हें उचित दिशा देने का सफल प्रयास किया है। उनके साहित्य में सामाजिक चित्रण इतना प्रभावशाली होता है कि पाठक अनायास ही उस दिशा में सोचने को प्रेरित हो जाता है।

2.1 सामाजिक संरचना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु परस्पर सहयोग के साथ निवास करता है। अंग्रेज़ी में समाज को 'सोसाइटी' कहा जाता है। एक ही स्थान पर रहने वाले और समान प्रकार के व्यवसाय से जुड़े लोगों के समूह मिलकर समाज की रचना करते हैं। विभिन्न संस्थाएं, जिन्हें अनेक लोगों ने विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति हेतु स्थापित किया है, इन समूहों के साथ मिलकर समाज का निर्माण करती हैं। वास्तव में, समाज स्वयं भी एक प्रकार का संघ या संगठन है, जिसमें विभिन्न संस्थाओं, समूहों और

संगठनों के परस्पर संबंध द्वारा सामाजिक ढांचे की रचना होती है। समाज एक गतिशील और परिवर्तनशील व्यवस्था है, जिसे व्यक्ति ने सुरक्षित, नियमित, और विकसित जीवन के लिए निर्मित किया है। अतः समाज का निर्माण और विकास व्यक्ति के लिए अत्यंत आवश्यक है। स्वतंत्र होते हुए भी व्यक्ति को जीवन-यापन हेतु समाज, अर्थात् अन्य व्यक्तियों पर निर्भर रहना पड़ता है। समाज व्यक्ति के लिए है और समाज के अस्तित्व तथा सामाजिकता के लिए व्यक्ति आवश्यक है। समाज और व्यक्ति एक-दूसरे के पूरक एवं अभिन्न अंग हैं। समाज व्यक्ति को प्रभावित करता है और व्यक्ति अपने प्रभाव से समाज को। कई बार व्यक्ति की सशक्त चेतना और प्रबल व्यक्तित्व समाज में आमूल परिवर्तन ला देते हैं, ऐसे व्यक्ति 'युगपुरुष' कहलाते हैं। समाज में रहकर मनुष्य सामाजिक नियमों के पालन हेतु बाध्य होता है।

विश्व का प्रत्येक समाज अपने भीतर विविधताओं को समाहित किए होता है। समाज अनेक वर्गों, धर्मों, पंथों तथा जातियों से मिलकर बना होता है और इसके सभी घटक शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धांत पर आधारित होते हैं। भारतीय समाज भी एक अत्यंत विविधतापूर्ण समाज है, जहाँ धार्मिक परंपराएं, सांस्कृतिक मान्यताएं तथा रीति-रिवाज गहराई से व्याप्त हैं। भारतीय समाज की संरचना विभिन्न धर्मों, जातियों, भाषाओं, प्रजातियों और सामाजिक वर्गों का मिश्रण है। यह संरचना इतनी जटिल है कि इसे 'बहुलवादी समाज' की संज्ञा दी जाती है। इस विविधता और जटिलता ने भारतीय समाज की सामाजिक संरचना को एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया है। भारत का प्रत्येक भूभाग अपनी सामाजिक विशेषताओं के साथ अनेकता लिए हुए है—चाहे वह धर्म हो, जाति, संस्कृति, भाषा, खानपान की आदतें हों अथवा वेशभूषा। इन सभी के बीच स्पष्ट भिन्नताएं होते हुए भी वे एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं और मिलकर भारतीय सामाजिक संरचना की नींव रखते हैं। सामाजिक संरचना वस्तुतः विभिन्न सामाजिक इकाइयों—जैसे समूह, समितियाँ, संस्थाएँ और सामाजिक प्रतिमान—की एक सुव्यवस्थित रचना होती है, जो आपस में समन्वय स्थापित कर एक संगठित समाज का निर्माण करती हैं। इन्हीं संगठनों और मान्यताओं के समुचित समन्वय से सामाजिक जीवन के सुनिश्चित प्रतिमान निर्मित होते हैं। उदाहरणार्थ, भारतीय समाज में जाति-प्रथा और संयुक्त परिवार को एक विशेष स्थान प्राप्त है, जिनकी भूमिका सामाजिक संरचना में अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसी प्रकार से जातियाँ, धर्म और

परिवार एक-दूसरे से अंतर्संबंधित होते हैं, और यह संगठन समाज को संतुलित एवं संगठित स्वरूप प्रदान करता है। हमारे परिवार, वर्ग, धर्म, विधि-व्यवस्था और आर्थिक संरचनाएं—ये सभी सामाजिक व्यवस्था के अभिन्न घटक हैं। सामाजिक संरचना उन सभी तत्वों का समुच्चय है, जिनमें समाज के लोगों, समूहों, संस्थाओं और मान्यताओं की विविधता अंतर्निहित होती है। भारतीय समाज में भाषाई, सांस्कृतिक, क्षेत्रीय, जातीय विविधताएं तथा परंपराओं की जटिलता सामाजिक संरचना को विशेष बनाती हैं। क्षेत्रवाद, जातिवाद, पारंपरिकता, और बहुसंस्कृतिवाद इसकी प्रमुख विशेषताएं हैं।

सामाजिक संरचना प्रत्येक समाज में पाई जाती है, चाहे वह किसी भी सांस्कृतिक, जातीय या ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से क्यों न जुड़ा हो। किसी राष्ट्र की शांति और सौहार्द हेतु एक सुदृढ़ सामाजिक संरचना अनिवार्य होती है, जो स्थिर संस्थागत व्यवस्था पर आधारित हो। यही व्यवस्था लोगों को निर्भयता और सहअस्तित्व की भावना के साथ एकजुट रखती है। हर समाज की सामाजिक संरचना अपनी विशेषताओं के अनुरूप भिन्न होती है। सभी समाजों की संरचना एक जैसी नहीं होती, क्योंकि उनकी सामाजिक संस्थाएं, रीति-रिवाज और सांस्कृतिक पद्धतियाँ भिन्न होती हैं। सामाजिक संरचना केवल व्यक्तियों या घटनाओं का संग्रह नहीं है, बल्कि यह एक सुव्यवस्थित प्रणाली है, जिसमें प्रत्येक घटक एक विशिष्ट स्थान और भूमिका के साथ मौजूद होता है। यही व्यवस्था सामाजिक संरचना के सिद्धांत को अभिव्यक्त करती है। सामाजिक संरचना समाज की वह नींव है जिस पर पूरे सामाजिक भवन की स्थिरता टिकी होती है। इसमें समाज की आर्थिक व्यवस्था, राजनीतिक प्रणाली, व्यावसायिक ढांचा, सामाजिक समूह और उनके आपसी संबंध सम्मिलित होते हैं। यह विभिन्न संगठनों, समितियों, संस्थाओं और मान्यताओं की ऐसी विशिष्ट व्यवस्था है, जो समाज को संतुलन और दिशा प्रदान करती है। जैसे प्रत्येक भौतिक वस्तु की संरचना कुछ निश्चित तत्वों के समुचित संयोजन से होती है, वैसे ही सामाजिक संरचना भी विभिन्न सामाजिक इकाइयों के स्थायी एवं संगठित संबंधों से निर्मित होती है। उदाहरण के लिए, शरीर की संरचना विभिन्न अंगों—जैसे हाथ, पैर, आंख, नाक, आदि—से मिलकर बनी होती है, जो अपने-अपने स्थान पर स्थिर और एक-दूसरे से संबंधित होते हैं। यदि ये संबंध टूट जाएं, तो संपूर्ण संरचना अस्थिर हो जाती है। इसी प्रकार, समाज की संरचना में भी स्थायित्व और समन्वय आवश्यक है। समाज में प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक नियमों और

मर्यादाओं का पालन करते हुए सामाजिक स्थितियों का सामना करना पड़ता है। विभिन्न समूहों और संगठनों के लोग, जिनकी पारिवारिक, आर्थिक, सांस्कृतिक धारणाएं भिन्न होती हैं, समाज में रहते हुए भी एक-दूसरे के साथ संयोजन बनाए रखते हैं। इनके बिना सामाजिक संरचना का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं हो सकता। उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक संरचना समाज के विभिन्न घटकों और उनके आपसी संबंधों का एक संगठित ढांचा है। यह संरचना व्यक्तियों, समूहों, संस्थाओं और सामाजिक भूमिकाओं के बीच के संबंधों को व्यवस्थित करती है। सामाजिक संरचना कोई स्थिर इकाई नहीं है; यह समयानुसार बदलती रहती है। इसके घटकों के अंतर्संबंध समाज की प्रगति, तकनीकी विकास और सांस्कृतिक परिवर्तनों के अनुरूप परिवर्तित होते रहते हैं।

भारतीय सामाजिक संरचना में धर्म, जाति, संस्कृति, परंपरा, भाषा और खानपान जैसी विविधताएँ परस्पर जुड़ी हुई हैं। यही विविधता इसे एक विशिष्ट और समृद्ध स्वरूप प्रदान करती है। भारतीय समाज की बहुसंस्कृतिक, बहुभाषी और बहुधर्मी विशेषताएं इसकी सामाजिक संरचना के अनिवार्य अंग हैं। इसी सामाजिक संरचना का यथार्थ चित्रण ममता कालिया ने अपनी कहानियों में अत्यंत संवेदनशीलता और सूक्ष्म दृष्टि के साथ किया है। उनकी कहानियों में ग्रामीण और शहरी समाज की झलकियां, सामाजिक विषमताएं, और व्यक्ति-संस्थान के अंतर्संबंध प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त हुए हैं। उनके कथा-साहित्य में सामाजिक यथार्थ का प्रतिबिंब स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है।

2.1.1 सामाजिक संदर्भ :

सामाजिक संदर्भ से अभिप्राय उस विषय से है, जिसे रचनाकार अपनी रचना में समाज से संबंधित रूप में प्रस्तुत करता है। समाज में रहकर ही हम सामाजिक व्यवहार सीखते हैं और उसे अपनाते हैं। एक शिशु बाल्यावस्था से ही अपने आसपास के वातावरण के अनुसार व्यवहार सीखता है और आगे चलकर उसी के अनुरूप, स्थान विशेष की परिस्थितियों के अनुसार व्यवहार करता है। सामाजिक संदर्भ ही व्यक्ति के व्यवहार को नियंत्रित करता है, जिसके माध्यम से लोगों के आचरण को परिभाषित किया जा सकता है। साहित्यकार की रचनाएँ भी समाज से संबद्ध होती हैं। यहां हम ममता कालिया के कहानी साहित्य में प्रतिफलित सामाजिक संदर्भों का विवेचन कर रहे हैं।

2.1.1.1 पितृसत्तात्मक समाज और स्त्री जीवन:

ममता कालिया की कहानियों में पितृसत्तात्मक व्यवस्था के संदर्भ में स्त्री जीवन की वास्तविकता का मार्मिक चित्रण मिलता है। वे महिलाओं के शोषण, उनकी आकांक्षाओं और उनके अधिकारों के लिए किए जा रहे संघर्षों को प्रमुखता से प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियाँ स्त्री जीवन की जटिलताओं, सामाजिक बाधाओं और मानसिक संघर्षों को उजागर करती हैं, जो पितृसत्ता के प्रभाव के कारण उत्पन्न होते हैं। पुत्र जन्म को वंश-वृद्धि का साधन मानते हुए समाज में उसका उत्सव मनाया जाता है, जबकि पुत्री को 'पराया धन' समझकर उसके जन्म पर शोक प्रकट किया जाता है। पुत्र की प्राप्ति हेतु मन्नतें माँगी जाती हैं, क्योंकि उसे वंश को आगे बढ़ाने वाला और भविष्य का परिवार प्रमुख माना जाता है। इसी मानसिकता के कारण समाज में अनेक कुरीतियाँ और परंपराएँ जन्म लेती हैं – जैसे दहेज प्रथा, बहुविवाह या पुत्रवधू को यातनाएँ देना। यह सभी उसी पितृसत्तात्मक सोच की देन हैं।

एक स्त्री होने के नाते ममता कालिया इस मानसिकता को गहराई से समझती हैं और 'दुःखम-सुखम' कहानी में इसका यथार्थ चित्रण करती हैं। जब इंदु की दूसरी बेटी का जन्म होता है, तो दादी को पोते की प्रतीक्षा होती है। सास की मानसिक दशा का चित्रण ममता कालिया ने अत्यंत सजीव रूप में किया है-

“दादी का चेहरा पीला पड़ गया। अब तक ऑपरेशन थिएटर के दरवाज़े से सटी खड़ी थी, अब धम्म से बेंच पर बैठ गई। उनकी आँखों में अंधेरा छा गया, हलक में आँसुओं का नमक महसूस हुआ।”

बेटी के जन्म पर शोक मनाया जाना भी इसी मानसिकता का परिणाम है, जिसका वर्णन वे इस प्रकार करती हैं:

“जिस दिन वह पैदा हुई, घर में कोई उत्सव नहीं मनाया गया, लड्डू नहीं बाँटे गए, बधावा नहीं बंधा। उल्टे घर में मनहूसियत ही बढ़ी। दादी ने चूल्हा तक नहीं जलाया।”

इसी कहानी में 'विद्यावती' की भी तीन बेटियाँ हैं। दूसरी पोती के जन्म पर उसे अपना समय स्मरण हो आता है-

“उन्हें तीखेपन से अपनी तीनों बेटियों की याद आई, जिनके रहते हुए वह कभी चैन से नहीं बैठ सकीं। तीनों प्रसूतियों पर उनका दिल किस तरह टूटा, कैसे पराजित हुई थीं वह अपनी सृजनशीलता पर, कैसे उठते-बैठते ससुराल से लेकर पीहर तक सबने उन्हें ताने मारे थे।” (कालिया, 121)

पुरुष प्रधान समाज में लड़की के जन्म पर स्त्री भी स्वयं को पराजित अनुभव करती है। इंदु भी स्वयं को इसी रूप में देखती है-

“हाय! यह लड़का होता तो मेरे कितने दुःख दूर हो जाते।” इंदु के कलेजे से हूक-सी उठी और उसने बच्ची से मुँह फेर लिया। (कालिया, 45)

इसी प्रकार, 'प्रेम कहानी' में डॉक्टर गिनेश एक साक्षात्कार में देखता है कि अनपढ़ से लेकर शिक्षित स्त्री तक सभी पुत्र की ही कामना करती हैं-

“उसने पाया कि ये स्त्रियाँ अपनी गर्भावस्था का समय एक विशेष तनाव में बिताती हैं। तनाव का मुख्य कारण होता है – कहीं लड़की न हो जाए। यहाँ तक कि जिस स्त्री के पहले से तीन बेटे थे, वह भी चौथा बेटा ही चाहती थी, बेटी नहीं। पहली संतान के लिए भी बेटा ही वांछनीय था। झुग्गी-झोपड़ी से लेकर कोठी-बंगले तक गिनेश को पुत्र के प्रति यही आग्रह दिखाई दिया।” (कालिया, 80)

इसी भेदभाव और स्त्री-विरोधी मानसिकता के चलते समाज बेरोजगारी, गरीबी और महंगाई जैसी समस्याओं से भी जूझता है। समाज की इस पितृसत्तात्मक सोच के कारण महिलाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय बनी हुई है। वे न केवल विवाह से पहले अपने माता-पिता और परिवार के दुर्व्यवहार को झेलती हैं, बल्कि विवाहोपरांत पति और ससुराल से भी सम्मान नहीं पातीं। 'मनुसाबी' कहानी की नायिका 'उषा' बचपन से ही उपेक्षित जीवन जीती है। विवाह के बाद भी न तो पति से और न ही बच्चों से उसे कोई सम्मान मिलता है। 'एक पति की मौत' की नायिका 'सिया' एक प्राध्यापिका होते हुए भी अपने पति 'नमन' की उपेक्षा की शिकार है। नमन बिना किसी ठोस कारण के उसे तलाक दे देता है, और उनकी बेटी के भविष्य की भी कोई चिंता नहीं करता। तलाक के बाद भी सिया की सास उससे पत्नी धर्म निभाने की अपेक्षा रखती है। सिया अकेले ही अपनी बेटी का पालन-पोषण

करती है, परंतु बेटी भी उसका सम्मान नहीं करती। 'दर्पण' कहानी की नायिका एक सुंदर, शिक्षित स्त्री है, जिसकी बस एक इच्छा है— अपना सौंदर्य एक बड़े दर्पण में देखना। किंतु उसका पति इसे फिजूलखर्ची मानते हुए अस्वीकार कर देता है। इन सभी कहानियों के माध्यम से ममता कालिया समाज की पितृसत्तात्मक मानसिकता और स्त्री की दयनीय दशा को उभारती हैं तथा पाठकों के सामने एक मौन किंतु सशक्त प्रश्नचिह्न खड़ा करती हैं। 'प्रेम कहानी', 'बिटिया', 'एक पत्नी के नोट्स', 'वसंत सिर्फ एक तारीख' जैसी कहानियों में ममता कालिया ने स्त्री जीवन की उन्हीं संघर्षशील, विषम और यथार्थपूर्ण स्थितियों को प्रभावशाली ढंग से उजागर किया है।

2.1.1.2 परिवार और सामाजिक ढाँचे का चित्रण

ममता कालिया की कहानियों में परिवार और सामाजिक संरचना का संदर्भ अत्यंत महत्वपूर्ण रूप में उभर कर सामने आता है। वे पारिवारिक संबंधों की जटिलता, पारंपरिक मान्यताओं और बदलते सामाजिक मूल्यों के बीच के टकराव को बड़ी कुशलता और यथार्थपरक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियाँ संयुक्त परिवार की पारंपरिक संरचना, उसमें व्याप्त तनाव, पीढ़ियों के बीच के मतभेदों और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की आकांक्षा को सजीव रूप से दर्शाती हैं। आज के समय में नौकरी, शिक्षा और आपसी संबंधों में बढ़ते तनाव के कारण संयुक्त परिवारों का विघटन हो रहा है। समाज में अब मजबूरीवश अथवा एकांत जीवन की इच्छा के कारण एकल परिवारों की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। यह प्रवृत्ति अपनी विशिष्ट समस्याओं को भी जन्म देती है। आपसी संबंधों में कटुता, संवादहीनता, तलाक, अलगाव, तनाव, एकाकीपन और असंतोष जैसी समस्याओं ने सामाजिक जीवन को प्रभावित किया है।

'गुस्सा' कहानी में ममता कालिया ने पारिवारिक विघटन और संवेदनहीनता को अत्यंत संवेदनशीलता से प्रस्तुत किया है। कहानी की नायिका 'माया' और उसका पति, दो पुत्रों के होते हुए भी अकेले रहने को विवश हैं। "नौकरी के कारण लड़के पहले ही अलग हो गए थे। अब माता-पिता के प्रति उनकी संवेदना समाप्त हो चुकी थी।" कथा में वर्णन आता है— "उसके दोनों लड़के अपनी बीवियों और नौकरियों में इतने व्यस्त थे कि उन्हें यह ख्याल

तक नहीं आया कि उनके माँ-बाप अपना समय कैसे बिताते होंगे। जब कभी उन्हें माता-पिता की याद आती, वे एक मनीऑर्डर भेज देते।” (कालिया, 23)

‘बातचीत बेकार है’ कहानी में पति-पत्नी अपने-अपने कार्यों में इतने अधिक व्यस्त हो जाते हैं कि उनके पास एक-दूसरे के लिए समय नहीं बचता। यह दूरी संबंधों में कटुता उत्पन्न करती है और धीरे-धीरे वे संवादहीनता की स्थिति में पहुँच जाते हैं। ‘काके दी हट्टी’ कहानी में, पिकी की कॉल सेंटर की रात की नौकरी उसकी सास को स्वीकार्य नहीं होती, जिसके चलते घर में कलह उत्पन्न होती है और पिकी घर छोड़ देती है। इससे उसके और ‘काके’ के संबंधों में दरार आ जाती है। ममता कालिया की कहानियों में पुरुषप्रधान समाज और उससे उत्पन्न समस्याओं का भी सजीव चित्रण किया गया है। उन्होंने दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, स्त्री के प्रति दुर्व्यवहार और छेड़छाड़ जैसी सामाजिक विकृतियों को बड़ी संवेदनशीलता से उजागर किया है। ‘लड़कियाँ’ कहानी के माध्यम से दहेज प्रथा पर व्यंग्यात्मक टिप्पणी करते हुए दो पात्रों— सुधा और आशा के बीच संवाद को दर्शाया गया है—

‘सुधा हँस पड़ी — अब तो शादी में लड़के वाले न केवल फ्रिज, स्कूटर और टीवी, बल्कि बंदूक और दरबान भी माँगेंगे।’

‘और मिट्टी का तेल?’

‘वह क्यों?’

‘बहू को जलाने के लिए।’

‘तुम्हारे पंजाब में तो बहू को एक ही बार में जला कर खाक कर दिया जाता है, जबकि हमारे उत्तर प्रदेश की बनिया बिरादरी में बहू को धीरे-धीरे, तिल-तिल कर जलाया जाता है। सारी उम्र सुलगो — न बुझो, न भभको।’ (कालिया, 34)

ममता कालिया ने सामाजिक घटनाओं के साथ-साथ पारिवारिक रिश्तों की भावनात्मक परतों को भी बड़ी संवेदनशीलता से चित्रित किया है। ‘ऐसा ही था वह’ कहानी में एक पिता की अपने पुत्र के प्रति चिंता और करुणा को दर्शाया गया है। वह अंतिम क्षणों तक अपने पुत्र की नौकरी और व्यवसाय की चिंता करता है। पिता की मृत्यु के बाद पुत्र को उनके शव के पास बैठकर ऐसा आभास होता है कि— ‘वै अचानक उठ बैठेंगे और डाँटते हुए कहेंगे— ‘फिर तू बैठ गया यहाँ आकर! तुझे तो काम में मन ही नहीं लगता। फौरन

वापस जा।”(कालिया, 22) इस कहानी में ममता कालिया ने समाज की व्यावसायिक, आर्थिक और सामाजिक जटिलताओं का यथार्थपरक चित्रण किया है।

‘बिटिया’ कहानी में एक पिता अपनी बेटी के विवाह के लिए अपनी प्रिय स्कूटर तक बेचने को तैयार हो जाता है, जो पिता के त्याग और प्रेम का प्रतीक है। ‘दो ज़रूरी चेहरे’ कहानी में भाई-बहन के आत्मीय संबंधों के साथ-साथ पति की पत्नी के प्रति चिंता को भी प्रभावी रूप से चित्रित किया गया है, भाई शाम को आते, ढेर सारे फूल लाते। जब तक डॉक्टर एक बार न देख ले, वे वहाँ से नहीं जाते। वे दफ्तर की बातें करते, और फिर साथ उठ जाते। ममता कालिया की कहानियाँ केवल स्त्री के जीवन की विडंबनाओं का चित्रण नहीं करतीं, बल्कि वे समाज, परिवार और रिश्तों की जटिलताओं की परतों को खोलती हैं। वे अपने कथा-साहित्य के माध्यम से पाठकों को न केवल संवेदित करती हैं, बल्कि उन्हें आत्ममंथन के लिए भी प्रेरित करती हैं।

2.1.1.3 आर्थिक और सामाजिक असमानता

ममता कालिया की कहानियाँ समाज में व्याप्त आर्थिक और सामाजिक असमानताओं को भी अत्यंत प्रभावशाली ढंग से उजागर करती हैं। वे निम्न एवं मध्यम वर्ग के जीवन, उनकी कठिनाइयों, तथा सामाजिक सीढ़ी पर ऊपर चढ़ने की निरंतर कोशिशों का यथार्थ चित्रण करती हैं। उनकी रचनाओं में वर्गीय भेदभाव, गरीबी और अवसरों की असमानता जैसी समस्याओं का सजीव प्रतिबिंब मिलता है। साथ ही, वे यह प्रश्न भी उठाती हैं कि इन गहरी सामाजिक विसंगतियों का समाधान कैसे संभव है। ममता कालिया की कहानियों में भारतीय सामाजिक व्यवस्था— विशेष रूप से जातिगत और वंशगत ढांचे का व्यापक और सजग चित्रण हुआ है। उन्होंने जातिवाद जैसी सांप्रदायिक समस्या को न केवल देखा है, बल्कि गहराई से जिया और रचनात्मक रूप में प्रस्तुत भी किया है। आरक्षण की जटिलता और नौकरी-शिक्षा जैसे क्षेत्रों में जातिगत भेदभाव के दुष्परिणामों को उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से संवेदनशीलता के साथ उजागर किया है। उनके प्रसिद्ध उपन्यास दुःखम-सुखम में कविमोहन के माध्यम से जातिगत भेदभाव की पीड़ा का मार्मिक चित्रण मिलता है। दो बार साक्षात्कार देने के बावजूद उसका चयन न होने पर फूफाजी कहते हैं— भई, यह

भी लालाओं का कॉलेज है। यहाँ तो चपरासी भी रखा जाता है तो उसे लाल जी के सामने पेश होना पड़ता है। शिक्षक रखने से पहले तो दो बार ठोक-बजाकर देखा जाता है।

यह कथन भारतीय शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त जातिगत पूर्वग्रह को दर्शाता है। कविमोहन जैसे प्रतिभाशाली युवक को यह बात कचोटती है कि उसकी योग्यता से अधिक उसकी जाति निर्णायक सिद्ध हो रही है। जब वह पूछता है— “अब इस दूसरे इंटरव्यू की क्या तैयारी करनी होगी?” —तब उत्तर मिलता है— “कुछ नहीं, तुम चुप ही रहना। यह जो तुम्हारी जाति है ना, वही फैसला करवाएगी।”(कालिया, 75)

इसी प्रकार, कहानी नरक-दर-नरक में नायक योगेंद्र साहनी को नौकरी ऐसे संयोग से मिलती है जहाँ दो योग्य उम्मीदवारों के बीच केवल सजातीयता के कारण चयनकर्ता असमंजस में पड़ जाते हैं। ममता कालिया ने इसका उल्लेख अत्यंत मार्मिकता से किया है— “क्योंकि वह दो जोरदार प्रत्याशियों के बीच फँस गया था। नंबर एक पर लक्ष्मण देशमुख था, जिसे प्रिंसिपल सजातीय होने के कारण लेना चाहते थे। नंबर तीन पर रंजना पारीख थी, जिसे मैनेजर अपनी जाति की होने के नाते प्राथमिकता दे रहे थे। बीच में दूसरे नंबर पर योगेंद्र था। अंततः मजबूरीवश चयन समिति ने तीनों को नियुक्त कर लिया।” (कालिया, 27) इस प्रकार ममता कालिया की कहानियाँ केवल सामाजिक यथार्थ का दस्तावेज नहीं, बल्कि उन असमानताओं पर एक चिंतन भी प्रस्तुत करती हैं, जिनके चलते योग्यता, प्रतिभा और मेहनत कई बार उपेक्षित रह जाते हैं।

2.1.1.4 शहरीकरण और आधुनिकता का प्रभाव:

शहरीकरण और आधुनिकता के संदर्भ में ममता कालिया की कहानियाँ समाज में हो रहे परिवर्तनों को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती हैं। वे यह दर्शाती हैं कि किस प्रकार शहरीकरण और आधुनिक जीवनशैली ने पारंपरिक सामाजिक ढाँचों को चुनौती दी है, और इन बदलावों के कारण सामाजिक तथा सांस्कृतिक मान्यताओं में तीव्र परिवर्तन हो रहा है। यह टकराव विशेष रूप से नई पीढ़ी के जीवन में परिलक्षित होता है, जहाँ युवा अपने लिए नई पहचान और स्वतंत्रता की खोज में पारंपरिक मूल्यों को पीछे छोड़ते जा रहे हैं। आधुनिकता, स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय की आकांक्षा में नई पीढ़ी विवाह जैसे पारंपरिक संस्कार को भी स्वीकार करने से हिचकने लगी है।

ममता कालिया ने आधुनिक समय के कारण समाज में उत्पन्न हो रहे नए मानदंडों को केंद्र में रखकर कहानियों की रचना की है। जैसे— शिक्षित स्त्री-पुरुष की बदलती मानसिकता और विवाह-संस्कार के नियमों में आ रहे बदलाव उनकी कहानियों के प्रमुख विषय रहे हैं। अपत्नी, साथ, लगभग प्रेमिका जैसी कहानियों में उन्होंने समाज की बदलती परिस्थितियों से उपजी जटिलताओं को आधार बनाया है। 'अपत्नी' कहानी का पात्र प्रमोद अपनी पत्नी को तलाक दिए बिना दूसरी स्त्री के साथ रह रहा है, और आश्चर्य की बात यह है कि उस स्त्री को भी इससे कोई आपत्ति नहीं है। 'साथ' कहानी में भी इसी प्रकार के संबंधों को चित्रित किया गया है, जो भारतीय समाज में विवाह संस्था की पारंपरिक अवधारणाओं को चुनौती देते हैं।

भारतीय समाज में विवाह को एक पवित्र संस्कार माना जाता है। विवाह से पूर्व स्त्री-पुरुष संबंधों को नैतिक मूल्यों के विरुद्ध समझा जाता है, और विवाह के पश्चात यदि कोई स्त्री या पुरुष किसी अन्य से संबंध बनाता है, तो उसे सामाजिक रूप से निंदनीय माना जाता है। ममता कालिया ने 'लगभग प्रेमिका' कहानी में समाज में बदलते ऐसे ही संबंधों को आधार बनाया है। 'थोड़ा सा प्रगतिशील', 'बोलने वाली औरत', 'एक पत्नी के नोट्स' जैसी कहानियों में उन्होंने पुरुषों की बदलती मानसिकता तथा प्रेम विवाह के संभावित दुष्परिणामों को प्रस्तुत किया है। 'थोड़ा सा प्रगतिशील' कहानी में विनीत और चेतना का प्रेम विवाह होता है, परंतु विवाह के बाद विनीत अपनी शक्की मानसिकता के कारण चेतना पर विश्वास नहीं कर पाता। कहानी में वर्णित है— "विनीत ने अपनी सहपाठी चेतना दीक्षित के साथ दोस्ती, मोहब्बत और विवाह की सीढ़ियाँ दो वर्षों में कुछ इस प्रकार चढ़ लीं कि एक दिन चेतना उसके घर हमेशा के लिए आ बसी। अपनी सफलता पर विनीत अभिभूत था, पर साथ ही सावधान भी। प्रेम का प्रथम ज्वार थोड़ा धीमा पड़ा तो उसे सबसे पहले यह चिंता हुई कि जिस आसानी से उसने चेतना को पा लिया, कहीं उसी आसानी से कोई और भी उसे न पा ले।" (कालिया, 42) ममता कालिया की नायिकाएँ केवल पढ़ने तक सीमित नहीं हैं, वे नौकरी करने के लिए दूसरे शहरों में अकेले रहकर जीवन की चुनौतियों का सामना करती हैं।

'वे' कहानी की नायिका अरुण एक मुक्त विचारों वाली महिला है, जो रात में अकेली यात्रा करती है और देर रात बस में मिले एक अजनबी के घर रुकने का निर्णय निडरता से

लेती है। वह सुबह बिना किसी औपचारिकता के वहाँ से निकल जाती है— यह स्त्री की आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास का प्रतीक है। इसी प्रकार 'ज़िंदगी सात घंटे की' कहानी की नायिका आत्मीया भी अपने जीवन के निर्णय स्वयं लेती है। वह अकेले रहती है और कार्य में व्यस्त रहती है। कहानी में वर्णित है— “छुट्टी के दिन का रंग आत्मीया को कतई पसंद नहीं। वह काम इतनी फुर्ती से करती है कि घर लाने को कुछ बचता ही नहीं।... आत्मीया नौकरों पर पूरा रौब रखती है। फिज़ूल बकवास उसे पसंद नहीं।... भंगी, धोबी, चौकीदार— सभी को तय तारीख पर वेतन मिल जाता है, माँगने की आवश्यकता नहीं पड़ती। दूसरों की उपस्थिति का आभास मिलते ही आत्मीया 'मिस सेन' बन जाती है— तनी हुई मुद्रा में एक सरकारी अधिकारी। जूनियर्स से बात करते समय केवल भृकुटि का प्रयोग पर्याप्त होता है, जबकि सीनियर्स से बोलते समय 'एक्ज़ेक्टली', 'बाय ऑल मीन्स', 'हाउ नाइस' जैसे शब्द उसकी भाषा में होते हैं।” (कालिया, 14) इस प्रकार ममता कालिया की कहानियाँ समाज में स्त्री की बदलती भूमिका, आत्मनिर्भरता, स्वतंत्रता और सामाजिक ढाँचों में आ रहे परिवर्तन को प्रभावशाली ढंग से दर्शाती हैं। वे नारी-सशक्तिकरण की नई परिभाषा रचती हैं, जिसमें स्त्री केवल घर की सीमा तक नहीं सीमित, बल्कि अपने निर्णयों की स्वामिनी बनकर सामने आती है।

2.1.2 यथार्थबोध:

यथार्थ का अर्थ है- सच्चाई। इस भौतिक जगत में जो हम अपनी इंद्रियों के माध्यम से अनुभव करते हैं, वही यथार्थ है, वही सत्य है। हालांकि, कई ऐसे सत्य भी होते हैं जिनका हमें प्रत्यक्ष अनुभव नहीं होता, किंतु जिनके बारे में हमें ज्ञान या जानकारी प्राप्त होती है। समाज में रहकर ही हमें सामाजिक अनुभव प्राप्त होते हैं, और यही अनुभव किसी साहित्यकार की रचनात्मकता का आधार बनते हैं। साहित्यकार अपने इन्हीं अनुभवों के आधार पर साहित्य की सृष्टि करता है। साहित्य में वर्णित विषयों के माध्यम से ही लेखक के यथार्थ-बोध का अनुमान लगाया जा सकता है।

मनुष्य की सभी क्रियाओं की मूल प्रेरणा बोध ही होती है। यह बोध वातावरण के संपर्क से विकसित होता है। बोध इंद्रियों की अनुभूति के माध्यम से किसी वस्तु या स्थिति के ज्ञान को जन्म देता है। इसी बोध के कारण मनुष्य न केवल अपने ज्ञान को समृद्ध

करता है, बल्कि उसमें व्यवहार की कुशलता और नैतिकता भी विकसित होती है—जो बोध की उन्नत अवस्था का द्योतक है। इसलिए, यथार्थवादी रचनाकार के लिए केवल वही यथार्थ महत्वपूर्ण नहीं होता जो उसने प्रत्यक्ष देखा हो, बल्कि वह यथार्थ के आंतरिक (अंतरंग) और बाह्य (बहिरंग) दोनों पक्षों का गहन अध्ययन करता है। एक यथार्थवादी साहित्यकार अपनी व्यापक दृष्टि के माध्यम से जीवन और समाज के विविध पहलुओं पर विचार करता है।

ममता कालिया यथार्थवादी साहित्य की एक सशक्त प्रतिनिधि हैं। उन्हें समाज के गहरे यथार्थ का गहन बोध है, और वे उसे अपनी लेखनी के माध्यम से अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती हैं। उनकी रचनाएँ पाठकों के मन और मस्तिष्क को गहराई से स्पर्श करती हैं। उनके साहित्य में पाठकों को एक परिचित और यथार्थपरक परिवेश मिलता है, जो उन्हें आत्मीय अनुभूति प्रदान करता है।

2.1.2.1 जीवन की सच्चाई का सजीव चित्रण:

ममता कालिया की कहानियों में जीवन की वास्तविकता का सजीव और सटीक चित्रण मिलता है। वे सामान्य जनजीवन के अनुभवों, उनके संघर्षों और सुख-दुख को इस तरह प्रस्तुत करती हैं कि पाठक उनकी कहानियों में यथार्थ की गहराई को सहज ही महसूस कर सकता है। उनके पात्र समाज के विभिन्न वर्गों से आते हैं, जिससे उनकी कहानियाँ अधिक प्रामाणिक और विश्वसनीय प्रतीत होती हैं। 'शहर शहर की बात' कहानी में बड़े शहर से छोटे शहर आई नायिका की स्थिति का वर्णन देखें— "मैं तो पिछले कुछ ही दिनों में अपने को बड़ी सहूलियत में पा रही थी। जिस समय रिक्शेवाले ने मुझे स्टेशन से चौक केवल चार आने में पहुँचा दिया, तभी मुझे लगने लगा था कि यह शहर मेरी जेब में है। जिस तमीज़ से यहाँ पानवाला पान खिलाता था, उस तरह तो कभी विद्यार्थी मुझे अपनी कॉपी भी नहीं पकड़ाते थे। सत्ताईस पैसे में कॉफी, दस पैसे में साड़ी पर इस्त्री और छह आने किलो गोभी खाकर मैं चमत्कृत हो गई थी।" (कालिया, 54) ममता कालिया ने दिल्ली, मुंबई जैसे महानगरों में रहने के कारण समाज को सूक्ष्म दृष्टि से देखा और परखा है।

उन्होंने अपनी रचनाओं में उन घटनाओं का चित्रण किया है, जिन्हें उन्होंने स्वयं अनुभव किया या समाज में घटते देखा। पारिवारिक संबंध, स्त्री विमर्श, स्त्री-पुरुष संबंध,

शिक्षित वर्ग की बदलती मानसिकता, वैवाहिक जीवन की जटिलताएँ, तथा धार्मिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ उनकी कहानियों के केंद्रीय विषय हैं। स्वयं कामकाजी महिला होने के कारण वे कामकाजी स्त्रियों की समस्याओं और जीवन-संघर्षों को गहराई से समझती हैं। इस सन्दर्भ में 'काली साड़ी' कहानी में एक स्त्री द्वारा महंगाई और कामकाजी जीवन के बीच संतुलन साधने की स्थिति को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया गया है- "ऐसी बामुश्किल ज़िंदगी में तो बस लोहे की चप्पलें, टाट की धोतियाँ और गाढ़े का ब्लाउज़ चल सकता है। फिर मान लो किसी तरह हौसला करके वह साड़ी खरीद भी ले तो काला ब्लाउज़ तो घिसकर सिलेटी हो चुका है। वही हमेशा की समस्या—जब साड़ी खरीदी तो बजट बिगड़ गया। फिर ब्लाउज़ बनवाने वाला खुशनसीब महीना आता ही नहीं। अंततः इंतज़ार टूट जाता है, और चलो भाई—निकालो सफेद ब्लाउज़ और पहन लो कोई भी साड़ी—हरी, उन्नाबी, नीली, पीली, छपी, सादी या बॉर्डर लगी। कैसी हड़बड़ी में वह तैयार होती है! पाउडर-लिपस्टिक की बात तो छोड़ो, सिंदूर लगाने तक का नियम भी निभ नहीं पाता। घड़ी कभी लगाई, कभी नहीं। जूड़ा कभी बनाया, नहीं तो बालों में बस कंधी फेरकर रबड़बैंड से कस लिया। कैसी दिली तमन्ना थी उसकी कि शादी के बाद हमेशा सजी-धजी घूमेगी, घंटों शीशे के सामने श्रृंगार करेगी। तब कहाँ सोचा था कि ये छोटी-छोटी ख्वाहिशें भी मृगतृष्णा बन जाएँगी!" (कालिया, पृ. 104)

‘वसंत एक तारीख’ कहानी में उन्होंने जीवन की सच्चाई के साथ-साथ प्रकृति के सौंदर्य का भी अत्यंत सुंदर वर्णन किया है- "लेकिन यूँ ठीक से तैयार होकर तो मैं महीनों बाद निकली थी। मैंने सोचा था कि लोग मुझे देखकर सवाल की झड़ी लगा देंगे—‘कहाँ जा रही हो?’ ‘कैसे निकलना हुआ?’ ‘सब ठीक तो है?’ वगैरह-वगैरह। लेकिन बिजलीघर तक पहुँचते-पहुँचते मैंने पाया कि लोगों को फुर्सत ही नहीं है। वे बेतहाशा भागे जा रहे हैं—साइकिलों पर, स्कूटरों पर, रिक्शों में। न आपस में बोल रहे हैं, न किसी ओर देख रहे हैं। उनके सिर के ऊपर नीले आसमान में एक गुनगुना बादल ठुमक रहा है, लेकिन वे भागे जा रहे हैं। सड़क के उस पार, एक बालकनी में एक बेहद प्यारी बच्ची लाल मफलर बाँधे हँस रही है, फिर भी वे भाग रहे हैं।

‘ये वसंत के दिन थे— ऋतुराज का महीना। जगह-जगह गुलाबी, पीले और नीले फूल सिर उठाकर मुस्कुरा रहे थे। सड़क किनारे की पटरियों की दरारों तक मैं घास फूट आई

थी। फिर भी लोग भाग रहे थे। मैं डर गई—कहीं शहर ही तो खाली होने नहीं जा रहा? क्या कोई महामारी फैलने वाली है? भूचाल आने वाला है? मैंने घबराकर रिक्शेवाले से पूछा—‘भई, तुम्हें पता है ये इतने सारे लोग कहाँ जा रहे हैं?’

उसने लापरवाही से जवाब दिया—‘जा रहे होंगे काम से।’

मुझे तसल्ली नहीं हुई। फुहारे के पास मूँगफलीवाले से फुटकर लेते हुए पूछा—‘आज कोई खास बात है क्या? ये इतने सारे लोग कहाँ जा रहे हैं?’

उसने हैरानी से देखा और बोला—‘दस बजा है, ऑफिस जा रहे हैं।’ (कालिया, 32)

ममता कालिया ने अपनी कहानियों में जीवन की यथार्थता का चित्र अत्यंत संवेदनशीलता और बोधगम्यता के साथ खींचा है। उन्होंने अपने निजी अनुभवों और सामाजिक पर्यवेक्षण को साहित्य में इस कुशलता से ढाला है कि उनका यथार्थबोध पाठकों के हृदय को छू जाता है। उनके लेखन में स्त्री-जीवन, सामाजिक सच्चाइयाँ, आधुनिकता के अंतर्विरोध तथा मनुष्य की भीतरी व्यथा का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण मिलता है।

2.1.2.2 संवादों की स्वाभाविकता:

इनकी कहानियों के संवाद अत्यंत स्वाभाविक और यथार्थपरक होते हैं, जो पात्रों की भावनाओं और मानसिक स्थितियों को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करते हैं। ममता कालिया जिस समाज का चित्रण करती हैं, उसके विविध पक्षों को वे अपने संवादों के माध्यम से अत्यंत सजीवता और प्रभाव के साथ प्रस्तुत करती हैं। उनके संवादों में निहित यथार्थबोध पाठक को पात्रों और उनके जीवन से गहराई से जोड़ता है। इनकी कहानियों के संवादों की एक विशेषता यह भी है कि ये कम शब्दों में अधिक अर्थ प्रकट करते हैं। संवादों के माध्यम से पाठक न केवल पात्रों के चरित्र का मूल्यांकन कर सकता है, बल्कि उनके अंतर्मन की स्थिति को भी भलीभाँति समझ सकता है। ममता कालिया ने अपने पात्रों के स्वभाव और परिस्थिति के अनुरूप संवादों का चयन किया है। उनकी संवादात्मक विशेषता इतनी प्रभावशाली है कि उनकी प्रसिद्ध कहानी ‘पहली’ पूर्णतः संवाद-प्रधान शैली में रचित है।

‘पहली तारीख’ कहानी में यह दर्शाया गया है कि मध्यवर्गीय समाज में महीने की पहली तारीख का क्या महत्व होता है। इस कहानी के संवादों के माध्यम से यह यथार्थ उजागर होता है—

"परिवार के सभी सदस्यों को महीने की पहली तारीख का बेसब्री से इंतज़ार रहता है। पप्पू और राजू अपने पापा से कहते हैं— ‘पापा, मेरी दो महीने की फीस का नोटिस आया है। पंद्रह तारीख तक जमा करानी है।’

‘पहले तुम महरा और धोबन के पैसे दे दो जी, बड़ी किचकिच करती हैं दोनों अगर पहली को हाथ पर न धरूं।’

‘ये लो राजू, और ये लो पप्पू। और यह रहा घर खर्च का पाँच सौ। ये दो सौ दूध के, पैंसठ रुपए बिजली के, और ये दो सौ मकान का किराया।’

‘अम्मा, रिक्शावाले का तो तुम भूल ही गई। इस बार दो महीने का किराया देना है।’

‘अरे हाँ, रिक्शावाले को अस्सी रुपये देने हैं।’

‘पापा।’

‘हाँ बेटे?’

‘आज पहली तारीख है न। याद है आपने कहा था, रसगुल्ला खिलाएंगे।’

‘ये लो दो रुपये। दोनों भाई जाकर अप्पू की दुकान से खा आओ।’ (कालिया, 146)

इसी प्रकार, ‘रजत जयंती’ कहानी में सभी मित्रों की पत्नियाँ आपस में संवाद करती हैं, जिनमें वे अपने-अपने पतियों की कमियाँ हल्के-फुल्के अंदाज़ में बताती हैं—

"मैंने कहा, ‘आओ, आज अच्छी पत्नियों की तरह अपने-अपने पतियों का चरित्र-चित्रण करें।’

एन.के. ने मुँह बिचका कर कहा, ‘चरित्र? यह किस बला का नाम है! मेरे पति के पास तो चरित्र जैसी कोई समस्या ही नहीं है।’

सुरैया हँसते हुए बोली, ‘हाँ, उसे तो जहाँ बैठा दो बैठ जाता है, जहाँ खड़ा कर दो खड़ा हो जाता है। मेरे मियाँ को देखा है? उनके साथ अगर तुम्हें रहना पड़ जाए तो होश उड़ जाएँ। घर-बाहर किसी भी काम से कोई मतलब नहीं।’

मैंने उसे तसल्ली दी, 'ऐसा तो नदीम सिर्फ क्रिकेट के मौसम में करता है, बाकी समय तो वह तुम्हारा बहुत कहना मानता है।'

'खाक मानते हैं,' वह बोली, 'मैं पूरब चलूँ तो वह पश्चिम भागते हैं।' (कालिया, 135)

इन संवादों के माध्यम से महिलाओं के बीच होने वाली सामान्य बातचीत को सहज रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसी प्रकार, 'दांपत्य' कहानी में पति-पत्नी के बीच की आपसी बातचीत को बड़े स्वाभाविक ढंग से संवादों द्वारा उकेरा गया है—

'टी.वी. पर क्या आ रहा है?'

'पता नहीं।'

'देख तो रहे हो, फिर भी पता नहीं?'

'मैं प्रोग्राम नहीं देख रहा।'

सुनीता ने झुंझलाकर टी.वी. बंद कर दिया—'फिर खामखाह टी.वी. चलाने से क्या फायदा? यूँ ही बिजली की बर्बादी।' (कालिया, 78)

इस प्रकार, ममता कालिया संवादों के माध्यम से न केवल पात्रों की मनोदशा और विशिष्टताओं को स्पष्ट करती हैं, बल्कि कथानक में प्रवाह और गति भी उत्पन्न करती हैं। कहीं लघु तो कहीं दीर्घ संवादों के प्रयोग से वे पात्रों की स्थिति और परिवेश के अनुसार संवाद रचती हैं, जो पाठकों को गहरे स्तर पर प्रभावित करते हैं।

2.1.2.3 समस्याओं की गहराई और समाधान की संभावनाएँ:

ममता कालिया अपनी कहानियों में केवल समस्याओं का वर्णन नहीं करतीं, बल्कि उनके समाधान की संभावनाओं की ओर भी इशारा करती हैं। उनकी कहानियाँ समाज में बदलाव की आवश्यकता और इसके लिए किए जा रहे प्रयासों को भी उजागर करती हैं। वे यह दिखाने की कोशिश करती हैं कि कैसे व्यक्ति और समाज मिलकर इन समस्याओं का समाधान ढूँढ सकते हैं। सामाजिक समस्याओं को विभिन्न घटनाओं के माध्यम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करना समाधान की ओर पहला कदम होता है। ममता कालिया ने समाज की किसी भी समस्या का वर्णन जिस भी घटना के माध्यम से किया है, उनका उद्देश्य उस व्यवस्था के खिलाफ जागरूकता फैलाना और उसे बदलने के लिए प्रेरित करना होता है, जिसकी वजह से समस्या उत्पन्न हुई है। स्त्री के संदर्भ में भी उन्होंने उस व्यवस्था का

विरोध किया है, जो स्त्री शोषण के लिए जिम्मेदार है। उन्होंने न केवल नारी शोषण का चित्रण किया है, बल्कि एक शिक्षित और आधुनिक नारी का भी चित्रण किया है, जो अपने कर्तव्यों के साथ-साथ अपने अधिकारों को भी जानती और समझती है।

ममता कालिया पुरुष विरोधी नहीं हैं, बल्कि वे स्त्री शोषण और शोषणकारी व्यवस्था की विरोधी हैं। वे स्त्री-पुरुष संघर्ष को समान मानती हैं और यह संघर्ष सामाजिक, मानसिक और शारीरिक स्तर पर समान रूप से अस्तित्व में है। स्वयं एक कामकाजी महिला होने के कारण वे घर और बाहर दोनों स्थानों पर स्त्री-पुरुष के संघर्ष को भली-भांति समझती हैं। किसी समस्या या घटना का सही तरीके से बोध होने पर ही उसका समाधान संभव होता है, और ममता कालिया यह बखूबी जानती हैं। कई शहरों में निवास करने के कारण उन्होंने समाज के यथार्थ को अपनी आँखों से महसूस किया है। स्वयं प्रेम विवाह करने के बावजूद, वे प्रेम विवाह और अनमेल विवाह के दुष्परिणामों से भी परिचित हैं। धार्मिक परिवार से होने के कारण वे धार्मिक आडंबरों और पाखंडों से भी अच्छी तरह अवगत हैं। इस प्रकार, ममता कालिया अपनी कहानियों में इन सभी समस्याओं का समाधान सहित चित्रण करती हैं, जो न केवल पाठकों को सोचने पर मजबूर करती हैं, बल्कि उन्हें समाधान के लिए प्रेरित भी करती हैं।

2.1.2.4 व्यंग्य और आलोचना:

ममता कालिया अपनी कहानियों में व्यंग्य का भी प्रयोग करती हैं, जो समाज की विडंबनाओं, रूढ़िवादिता और पाखंड पर तीखी टिप्पणी करता है। यह आलोचनात्मक दृष्टिकोण उनके यथार्थबोध को और भी अधिक प्रामाणिक बनाता है, जिससे पाठक समाज की समस्याओं को गहराई से समझने के लिए प्रेरित होता है। उन्होंने समाज के उन सभी प्रचलनों या रीतियों पर व्यंग्य किया है, जो संस्कृति, धर्म या आधुनिकता के नाम पर समाज में प्रचलित हैं। इन्हीं रीतियों के नाम पर समाज में महिलाओं के साथ अन्याय होता है, जिसका उन्होंने अपनी कहानियों में विरोध किया है। महिलाओं को उनकी जरूरत की वस्तुएं भी नहीं मिलतीं, और यह उन्होंने अपनी कहानी 'बाथरूम' में दिखाया है। 'नहाने को लेकर कांता मामी का संघर्ष जारी था। दो दिन की छुट्टी पर अजय मामा आए तो मामी ने ऐलान कर दिया, "या तो नहाने-धोने का इंतजाम करके जाओ, नहीं तो मैं यहाँ नहीं रहूँगी।" उनकी

जिद पर कमरे के कोने में टीन का टपरा लगवाकर नहाने लायक छोटी-सी जगह बनाई गई। सुबह जब वे आंगन के नल से दो बाल्टी पानी ले जाकर अपने नहानघर में रखतीं, दोनों बड़ी मामियाँ मुँह बिचका कर हँसतीं। वे हम बच्चों को सुनाकर कहतीं, 'जिसे नंगा नहाने का शौक हो, वह नहाए छुप-छुप कर। हमने तो कभी अपना उघाड़ा देखा ही नहीं।' अगर हममें से कोई नहाने में आना-कानी करता, तो बिचली मामी हमारा कान उमेठ कर धमकातीं, 'चल, तुझे बाथरूम में बंद करूँ। पड़ी रहना वहाँ दिन भर।' अजय मामा ने अपनी पत्नी को लाख समझाया कि इस घर में कोई किसी से लुका-छिपा कर कुछ नहीं करता, पर मामी की एक ही टेक थी, 'मैं खुले में बैठ कर नहीं नहाऊँगी। आपकी इज़्जत भी अजीब है, जो गलत बातों को मानने से बनती है और न मानने से बिगड़ती है।' (कालिया 69)

आधुनिकता के नाम पर युवाओं ने विवाह जैसे संस्कार को भी ताक पर रख दिया है।

इस पर ममता कालिया ने अपनी कहानियों—'अपत्नी', 'साथ', 'लगभग प्रेमिका', 'वे' आदि—में व्यंग्य किया है। "लीला हमारे सामने की कुरसी पर बैठ गई। वह हमेशा पैर चौड़े करके बैठती थी, हालांकि उसके एक भी बच्चा नहीं हुआ था। उसके चेहरे की बेफिक्री मुझे नापसंद थी। उसे बेफिक्र होने का कोई हक नहीं था। अभी तो पहली पत्नी से प्रबोध को तलाक भी नहीं मिला था, और फिर प्रबोध को दूसरी शादी की कोई जल्दी भी नहीं थी। मेरी समझ में लड़की को चिंतित होने के लिए यह पर्याप्त कारण था।" (कालिया, 39) धर्म के नाम पर हो रहे पाखंडों का भी ममता कालिया अपनी कहानियों में पुरजोर विरोध करती हैं। "मेला", "लैला मजनू", "निर्मोही", "दूसरा देवदास", "लड़के" आदि कहानियों में इन्होंने धार्मिक कर्मकांडों पर व्यंग्य किया है। ममता कालिया ने 'लड़के' कहानी में भी गंगा स्नान अनुष्ठान का वर्णन किया है, जिसमें लोगों की आस्था और विश्वास है। गंगा स्नान के बारे में यह लिखती हैं, सब के मन में एक ही आस थी, मौनी अमावस्या पर बस एक डुबकी लगा लें, इन्हें पूर्ण विश्वास था कि अब तक जिन चीजों ने उनके जीवन में अधम-विषम हुआ है, वह संगम की धारा में सुबह-धूल-पूछकर उन्हें नया जीवन प्रदान करेगा और वे स्वर्ग में अपनी सीट आरक्षित करवा लेंगे। ममता कालिया धर्म के नाम पर विश्वास और आस्था के साथ अंधविश्वास, आडंबर तथा भ्रष्टाचार को भी उजागर करती हैं।

लोग धर्म के नाम पर पाखंड करते हैं, और इन्हीं पाखंडों के कारण गंगा जैसी पवित्र नदी दूषित हो रही है। पाखंडियों पर टिप्पणी करते हुए लेखिका ने लिखा है, "कुम्भ

क्षेत्र में साधुओं की भी त्रिपथगा है, सच्चे, पाखंडी और मक्कार। यहाँ धर्म, आस्था और आडंबर का संगम चल रहा है। हर चीज यहाँ तीन के पहाड़े में है, जैसे त्रिवेणी से ही सीखा है यह। होमगार्ड, पुलिस और पी.ए.सी.; गुरु, गोविंद और शिष्य; भक्त, बगुला भक्त और अंध भक्त।" (कालिया, 7) इस प्रकार, लेखिका ने व्यंग्य के माध्यम से धर्म और धार्मिकता को रोचक ढंग से दर्शाया है। इन सभी संदर्भों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ममता कालिया समाज और अपने आसपास के परिवेश के यथार्थ का गहरा बोध रखती हैं। उनके कहानी साहित्य में जिस भी प्रसंग को चित्रित किया गया है, पाठक उससे अपने आप को जुड़ा हुआ महसूस करता है, जो उनके यथार्थबोध को स्पष्ट करता है।

2.1.3 ममता कालिया की कहानियों के आधार पर समाज

भारतीय समाज की संरचना में अनेक महत्वपूर्ण तत्व हैं, जिनका चित्रण ममता कालिया ने अपनी कहानियों में किया है, क्योंकि साहित्यकार जिस समाज या परिवेश में रहता है, उसी से प्रेरित होकर साहित्य रचना करता है। साहित्य समाज का आईना होता है, और इसी आईने में समाज की झलक देखी जाती है। इस प्रकार का साहित्य यथार्थपरक साहित्य कहलाता है। सामाजिक संरचना विभिन्न सामाजिक इकाइयों की एक विशिष्ट व्यवस्था है। ये इकाइयाँ वस्तुतः संगठन, समूह, समितियाँ, संस्थाएँ और सामाजिक प्रतिमान होती हैं। इन सामाजिक कार्यों के व्यवहार और व्यवस्था को प्रभावित करने वाले कुछ मूल तत्व हैं, जिनका वर्णन ममता कालिया की कहानी साहित्य में किया गया है। इन तत्वों में परिवार को प्रभावित करने वाला धर्म, संस्कृति, वर्ण, परंपरा, वंश, भाषा, खानपान आदि की विविधताएँ शामिल हैं, जो विभिन्न समाजों की विशेषताओं को प्रकट करती हैं। गाँव और शहर अपनी अलग पहचान रखते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में हम देखते हैं कि ममता कालिया की कहानियों में इस विषय का बहुत सजग रूप से चित्रण हुआ है। इनकी कहानियों में भारतीय समाज की संरचना की इकाइयाँ, धर्म, संस्कृति, भाषा, वर्णव्यवस्था, परंपरा, ग्रामीण और शहरी समाज, तथा पारिवारिक परिवेश सभी का चित्रण देखा जा सकता है।

2.1.3.1 धार्मिक व्यवस्था-

ममता कालिया ने अपनी कहानियों में भारतीय समाज में धर्म के नाम पर चल रहे आडंबरों और अंधविश्वासों को उजागर किया है। भारतीय समाज में विभिन्न धर्मों के लोग रहते हैं, और इनका आपस में अटूट संबंध भी है, किंतु समय के साथ समाज में रीतियों के साथ कुरीतियाँ भी पैदा हो जाती हैं, जिसका प्रभाव समाज पर पड़ता है। उनकी कहानी 'भेला' में इस सत्य को उजागर किया गया है। 'भेला' कहानी इलाहाबाद में लगने वाले कुंभ मेले पर आधारित है, जिसे लेखिका ने अपनी व्यक्तिगत यथार्थबोध, अर्थात् अनुभवों के आधार पर लिखा है। कहानी की नायिका चारु इलाहाबाद में रहती है। जब उसकी पति की चाची मासी, मकर संक्रांति के समय जालंधर से इलाहाबाद कुंभ स्नान के लिए आती हैं, तो नायिका मासी के साथ मेले में जाती है, जिसका लेखिका ने यथार्थपूर्ण वर्णन किया है- "सबसे ज्यादा गिलानी अपने ऊपर हो रही थी चारु को। उसी के नगर में इतना जन समुद्र उमड़ पड़ा है और वह इन सबसे अनभिज्ञ रही है। मासी न आई होती तो वह यहां झांकता भी नहीं। शायद उसके अंदर पाप और पुण्य के सवाल अभी वैसी आंधी नहीं उठाते। उसे हैरानी थी, कैसे जीवन के सबसे सूक्ष्म सवालों का इतना सरल और सार्थक कारोबार चलाया जा रहा है। अच्छे से अच्छा सेनेटरी एक्सपर्ट भी इस स्नान अभियान के आगे निष्कलंक हो जाता कि संगम में एक डुबकी न केवल इस जन्म के, वरन जन्म-जन्मांतर के पापों का मंजन करती है। मानो एक बार आप नहा लें, तो प्रतिदिन अपने आप पाप फलश आउट होते रहेंगे-पापों का 'सुलभ' इंटरनेशनल इत्यादि।

इसी प्रकार का धार्मिक नमूना ममता कालिया ने 'आपकी छोटी लड़की' में भी प्रस्तुत किया है- क्या हमारे देश में कभी ईश्वर से विश्वास खत्म हो सकता है? अभी मैं चौराहे के बीचों-बीच एक बौड़म-सा पत्थर रख दूं। सिंदूर में रंग कर और खुद उसे पर जाकर दो फूल चढ़ा आऊँ। फिर देखना तुम अपने लोगों की कितनी अवस्था है। दस में से नौ आदमी यहां रुकेंगे, माथा टेकेंगे, फूल फल चढ़ाएंगे।" (कालिया, 88) इसी प्रकार की एक कहानी निर्मोही में भी इन्होंने धार्मिक आस्था का चित्रण किया है। लोककथा निर्मोही में लेखिका ने राजकुमारी लब्बावती के स्वप्न के माध्यम से धार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। "एक दिन लब्बावती को सपना आया कि तेरे भाई ने पीपल समूल उपार लिया, ये ही मारे महल-अटारी निचाट परे हैं। एकास्सी के दिन सौंताल के किनारे फिर से तेरी भाभी पीपल लगाएं,

रोज ताल में नहाएं, पीपल पूजें बाद अन्न-जल लें, तब जाके यह कलंक मिटेगा। फिर तू नौ महीने में जौले-जौले दो भतीजे खिलाएगी। लब्बावती ने सुबह सबको सपना बखानते हुए बताया। अगले दिन एकास्सी थी, तो सात सुहागन पूजा की थाल सजाए, सौलह श्रृंगार किए, सोने का कूज्जा डाबरनैनी फूलमती के सिर पर रखा और पीपल रोपने चली।” (कालिया, 59) धर्म के नाम पर अंधविश्वास का भी ममता कालिया ने अपनी कहानियों में उल्लेख किया है।

उनके उपन्यास 'दुःखम-सुखम' में दादी के माध्यम से इसका सटीक वर्णन मिलता है। जब दादी अपनी पोती की नजर उतारती हैं, “तब दादी लोहे की छोटी डिबिया से फिटकरी का टुकड़ा निकाल कर जलते कोयले पर रखतीं। फिटकरी पिघलकर मुड़-तुड़ जाती। दादी बतातीं, 'जै देख, है न बिल्कुल रामो की शकल, यह उसका सिर, यह धोती का पल्ला और उसका हाथ।' सब को वाकई फिटकरी में रामो नजर आने लगती। सब बारी-बारी से उसे चप्पल से पीटते।” (कालिया, 63) यहाँ उन्होंने दर्शाया है कि धर्म के नाम पर समाज में एक व्यक्ति के व्यक्तित्व को भी दांव पर लगा दिया जाता है। इसी प्रकार ममता कालिया ने 'लड़के' कहानी में भी गंगा स्नान अनुष्ठान का वर्णन किया है, जिसमें लोगों की आस्था और विश्वास है।

गंगा स्नान के बारे में यह लिखती हैं, “सबके मन में एक ही आस दिख रही थी, मौनी अमावस्या पर बस एक डुबकी लगा ले, इन्हें पूर्ण विश्वास था कि अब तक कैसे इनके जीवन में जो कुछ भी अधम-विषम हुआ है, वह संगम की धारा में सुबह-धूल-पूछकर उन्हें नया जीवन प्रदान करेगा और वे स्वर्ग में अपनी सीट आरक्षित करवा लेंगे। ममता कालिया धर्म के नाम पर विश्वास और आस्था के साथ अंधविश्वास, आडंबर और भ्रष्टाचार को भी उजागर करती हैं। लोग धर्म के नाम पर पाखंड भी करते हैं, और इन्हीं पाखंडों के कारण गंगा जैसी पवित्र नदी दूषित हो रही है। ऐसे पाखंडियों पर टिप्पणी करते हुए लेखिका ने लिखा है, कुंभ क्षेत्र में साधुओं की भी त्रिपथगा है, सच्चे, पाखंडी और मक्कार। यहां धर्म, आस्था और आडंबर का संगम चल रहा है। हर चीज यहां तीन के पहाड़े में है, जैसे त्रिवेणी से ही सीखा है यह। होमगार्ड, पुलिस और पी. ए. सी.; गुरु, गोविंद और शिष्य; भक्त, बगुला भक्त और अंध भक्त।” (कालिया, 74) इस प्रकार यहाँ लेखिका ने व्यंग्य के द्वारा धर्म और धर्मांधता को रोचक ढंग से दर्शाया है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियों में धार्मिक व्यवस्था का चित्रण प्रचलित सामाजिक और धार्मिक रूढ़िवादिता के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण को उजागर करता है। उनकी कहानियाँ धार्मिक प्रथाओं और विश्वासों को गहराई से देखते हुए उनके सामाजिक प्रभावों पर सवाल उठाती हैं। ममता कालिया धार्मिकता और आस्था के नाम पर हो रहे शोषण, पाखंड और सामाजिक असमानता को उजागर करती हैं। इनकी कहानियों में धार्मिक पाखंड का चित्रण मिलता है, जहाँ धार्मिक कर्मकांड और आडंबर वास्तविक धार्मिक आस्था पर हावी दिखाई देते हैं। वे दिखाती हैं कि कैसे लोग धर्म का उपयोग व्यक्तिगत लाभ, समाज में प्रतिष्ठा पाने, या दूसरों को नियंत्रित करने के लिए करते हैं। इनकी कहानियाँ यह भी दर्शाती हैं कि आधुनिक समाज में धार्मिकता का स्वरूप कैसे बदल गया है। वे यह प्रश्न उठाती हैं कि क्या धार्मिकता सिर्फ परंपराओं और कर्मकांडों तक सीमित है, या इसका कोई गहरा अर्थ है। इनकी कहानियों में महिलाओं के प्रति धार्मिक भेदभाव और उनके अधिकारों के हनन को भी रेखांकित किया गया है। धर्म के नाम पर स्त्रियों को सीमित करने वाली सामाजिक प्रथाओं की आलोचना करते हुए, वे यह दिखाती हैं कि कैसे इनका इस्तेमाल महिलाओं के दमन के लिए किया जाता है। इनकी कहानियाँ यह भी संकेत देती हैं कि धर्म को समाज सुधार का एक साधन भी बनाया जा सकता है। अगर धर्म को सही मायनों में समझा जाए, तो यह समाज में सकारात्मक परिवर्तन ला सकता है। सारतः ममता कालिया की कहानियों में धार्मिक व्यवस्था का चित्रण केवल आलोचना के लिए नहीं, बल्कि समाज को सोचने और आत्ममंथन करने के लिए प्रेरित करने के उद्देश्य से किया गया है।

2.1.3.2 संस्कृति-

ममता कालिया ने अपनी कथा साहित्य में भारतीय संस्कृति के विविध रूपों का चित्रण किया है, क्योंकि भारतीय संस्कृति में अनेक रीति-रिवाज, परंपराएं, मान्यताएं, संस्कार, वर्ण व्यवस्था, सांप्रदायिकता, अंधविश्वास और अनुवांशिकता जैसी अनेक विविधताएं विद्यमान हैं। उनकी कहानियों में संस्कृति के चित्रण के कई उदाहरण मिलते हैं। 'देश की संस्कृति' उसमें रहने वाले लोगों के धर्म, रीति-रिवाज, मान्यताओं, परंपराओं, संस्कारों और भाषा पर निर्भर करती है। संस्कृति की परिभाषा देते हुए दिनकर जी कहते हैं, "संस्कृति

जिंदगी का एक तरीका है, और यह तरीका सदियों से जमा होकर समझ में छाया रहता है, जिसमें हम जन्म लेते हैं। इसलिए जिस समाज में हम पैदा हुए हैं अथवा जिस समाज में हम जी रहे हैं, उसकी संस्कृति हमारी है।" (दिनकर, 653) धर्म-मान्यता और संस्कृति के नाम पर कुछ कुरीतियाँ भी भारतीय समाज का हिस्सा रही हैं, जिन्हें सदा स्त्री को भुगतना पड़ता है, क्योंकि समाज की संरचना में स्त्री का महत्वपूर्ण स्थान होता है।

ममता कालिया ने स्त्री की सामाजिक दशा का भी विस्तार से वर्णन किया है। भारतीय समाज में धर्म की अत्यधिक मान्यता और श्रद्धा है, जैसे भगवान के प्रति श्रद्धा, व्रत, त्योहार, संस्कार और अनुष्ठान, जो भारतीय संस्कृति का अहम हिस्सा हैं। भारतीय संस्कृति में मूल्य, नैतिकता, आदर्श, शिष्टाचार, कानून और जीवनशैली जैसी विशेषताएं महत्वपूर्ण मानी जाती हैं। ममता कालिया की कहानियों में संस्कृति के चित्रण के कई उदाहरण मिलते हैं। उनकी 'मेला', 'लड़के', 'दुखम-सुखम', 'निर्मोही' आदि कहानियों में धार्मिक चित्रण है, तो 'बड़े दिन की पूर्व सांझ', 'वे', 'जितना मैं तुम्हारा हूँ' आदि कहानियाँ नैतिक मूल्यों पर आधारित हैं। उन्होंने अपनी कहानियों में यह भी बताया कि समाज में पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने के कारण नैतिक मूल्यों में निरंतर गिरावट आ रही है।

"लीला हमारे सामने की कुर्सी पर बैठ गई। वह हमेशा पैर चौड़े करके बैठी थी। हालांकि उसके कोई बच्चा नहीं हुआ था। उसके चेहरे की बेफिक्री मुझे नापसंद थी। उसे बेफिक्र होने का कोई हक नहीं था। अभी तो पहली पत्नी से प्रमोद को तलाक भी नहीं मिला था, और फिर प्रमोद को दूसरी शादी की कोई जल्दी भी नहीं थी। मेरी समझ में लड़की को चिंतित होने के लिए यह पर्याप्त कारण था।" (कालिया, 39) समाज में समाज द्वारा बनाए गए कुछ ऐसे रीति-रिवाज या मान्यताएं होती हैं, जिन्हें मानना समाज के सदस्यों के लिए अनिवार्य होता है, और यह लगभग सब के हित में भी होता है।

ममता कालिया की कहानी 'दो जरूरी चेहरे' में पारिवारिक मूल्यों को दर्शाया गया है कि एक स्त्री के लिए अपने पति के साथ भाई भी जीवन में उतनी ही अहमियत रखता है। नायिका को भी दोनों से उतना ही प्यार और स्नेह मिलता है। "भाई शाम को आते, खूब से फूल लेकर। जब तक डॉक्टर एक बार नहीं आ लेता, भाई नहीं जाते। श्याम से दफ्तर के बारे में बात करते रहते। फिर वे लोग साथ ही उठ जाते।" (कालिया, 125) ममता कालिया की अधिकतर कहानियां पारिवारिक संबंधों को दर्शाने वाली हैं। भारतीय संस्कृति

में संयुक्त परिवार की परंपरा रही है। इनकी कहानियों में प्यार और प्रेम भी दिखाया गया है। 'खाली होता हुआ घर' में पिता-पुत्र के प्रेम का चित्रण किया गया है, तो 'एक पत्नी के नोट्स' में यह दिखाया गया है कि किस प्रकार एक लड़की दो परिवारों की चिंता करती है और मायका तथा ससुराल दोनों परिवारों को जोड़कर रखती है। 'आपकी छोटी लड़की' और 'बिटिया' भी पारिवारिक व्यवस्था को दर्शाने वाली कहानियां हैं। 'अट्टावनवां साल' कहानी में दिन-रात दफ्तर में व्यस्त रहने वाले एक अवकाश प्राप्त गैर सरकारी अफसर और उसके जीवन को खुशहाल बनाने वाली पत्नी की कहानी है। यह प्यार और संस्कार भारतीय मानवीय मूल्यों का प्रतीक है। 'बोलने वाली औरत' कहानी संग्रह की सभी कहानियां पारिवारिक व्यवस्था को दर्शाने वाली कहानियां हैं। 'परदेश' कहानी में ममता कालिया ने पाश्चात्य और भारतीय सभ्यता का तुलनात्मक चित्रण किया है। इस कहानी में कनाडा से आए परदेसी रिचर्ड ने कहा, "तुम्हारे भाई को इसका एहसास है। आपके घर में अभी डिनर के समय तीन पीढ़ियां एक साथ खाना खा रही हैं। अरे! यह दुर्लभ सुख है। यह ऐसा दृश्य देखा मुझे बरसों हो गए कि बच्चों के मां-बाप अपने मां-बाप के सामने आज्ञाकारी बच्चे बन जाएं। तीन पीढ़ियां एक छत के नीचे एक कमरे में प्रेम से बैठी हैं। कहीं कोई तनाव नहीं, आपके बच्चे को एक नॉर्मल लड़कपन मिल रहा है। बहुत बड़ी बात है यह! इसे कभी कम करके मत देखिएगा।" (कालिया, 76)

इन्होंने अपनी कहानियों में खानपान की विविधताओं को भी प्रदर्शित किया है। 'बड़े दिन की पूर्व सांझ' का एक दृश्य देखिए: "वह दुखी हो गया था, 'मैं ज्यादा नहीं पी सकता। हमारे मेस में सिर्फ ड्रिंक्स की पार्टियाँ होती हैं तो बड़ी असुविधा होती है।' मैंने कहा, तुमने घर पर कभी नहीं पी होगी। उसने घमंड से बताया कि उसके घर में अंडा भी नहीं खाया जाता। जब से वह एयर फोर्स में आया तभी से उसने पहली बार यह सब देखा। घर पर उसने घरवालों को सिर्फ दूध, चाय या पानी पीते देखा था।" (कालिया, 11) भारतीय संस्कृति में खानपान की शुद्धता का विशेष महत्व है। यहां खाने से लेकर पीने तक के सारे नियम होते हैं, जैसे क्या खाना है, कैसे खाना है, कब खाना है, इनका भी महत्व है। ममता कालिया की कहानियों में इस तरह के वर्णन मिलते हैं। ममता कालिया ने समाज के साथ पारिवारिक प्रेम पर भी सफल लेखनी चलाई है। उनकी कहानी 'ऐसा ही था वह' में पिता-पुत्र के प्रेम और पिता की पुत्र के लिए भविष्य की चिंता दिखाई गई है। पिता पुत्र की

नौकरी और व्यवसाय की अंतिम क्षण तक कामना करता है। पिता की मृत्यु के बाद पुत्र को उनके शव के पास बैठकर ऐसा लगता है कि यह सारी रस्सियाँ तोड़कर अभी उठ बैठेंगे और चिल्लाएंगे, फिर तू बैठ गया यहां आकर, काम में दीदा नहीं लगता तेरा, फौरन वापस जा। इस कहानी में ममता कालिया ने समाज की व्यवसायिक, आर्थिक और सामाजिक जटिलताओं के यथार्थ को उकेरा है।

‘सफर में’ कहानी में लेखिका ने सामाजिक मूल्य और विश्वास को दर्शाया है। कहानी की नायिका को एक अजनबी महिला से इतना लगाव और अपनापन मिलता है कि उसे अपनी मां का प्यार स्मरण हो आता है। इस कहानी में मातृ प्रेम की स्मृतियों को यथार्थ रूप में चित्रित किया गया है। इसी प्रकार ‘मान लो कि’ कहानी में रिश्तों के मान और मूल्यों को चित्रित किया गया है। ममता कालिया की कहानियों में भारतीय समाज की जटिलताओं, सांस्कृतिक विविधताओं और पारिवारिक रिश्तों की सच्चाई को सुंदरता से उकेरा गया है।

2.1.3.3 वर्ण व्यवस्था व आनुवांशिक व्यवस्था-

प्रत्येक समाज एक विशिष्ट सामाजिक एवं आर्थिक संरचना का दर्पण होता है। अब तक का सम्पूर्ण सामाजिक इतिहास वस्तुतः वर्ग-संघर्ष का इतिहास रहा है, जिसमें विभिन्न सामाजिक वर्ग एक-दूसरे के विरोधी रहे हैं। प्रत्येक युग में समाज विभिन्न सामाजिक श्रेणियों में विभाजित रहा है, जिसके परिणामस्वरूप एक जटिल सामाजिक ढांचे का निर्माण हुआ। यह वर्ग-संघर्ष सामाजिक और भौतिक परिस्थितियों से उत्पन्न होता है। वर्ग, समाज के वे समूह होते हैं जिनमें एक वर्ग दूसरे वर्ग के श्रम का अधिग्रहण करता है, क्योंकि वे सामाजिक-आर्थिक संरचना में विभिन्न स्थानों पर स्थित होते हैं। भारतीय समाज, ऐतिहासिक रूप से जाति व्यवस्था से प्रभावित रहा है। प्राचीन काल में ‘वर्णाश्रम व्यवस्था’ में चार प्रमुख वर्ण थे—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। ये वर्ग कार्य-विभाजन के आधार पर निर्मित किए गए थे—ब्राह्मण शिक्षा और आध्यात्मिक जीवन के संरक्षक थे, क्षत्रिय शासन और रक्षा का कार्य करते थे, वैश्य व्यापार एवं वाणिज्य में संलग्न थे, जबकि शूद्र श्रम आधारित कार्यों में लगे रहते थे। किन्तु समय के साथ यह वर्ण-व्यवस्था कठोर जातीय स्वरूप में परिवर्तित हो गई। अब यह व्यवस्था श्रम के आधार पर नहीं, जन्म के आधार

पर निर्धारित होती है। भारतीय समाज की यह व्यवस्था यद्यपि जटिल है, तथापि यह सामाजिक संरचना की एक मूलभूत इकाई बन गई है, जिसकी छाया ममता कालिया की कहानियों में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है।

ममता कालिया ने अपने कथा-साहित्य में जाति व्यवस्था और वंशानुक्रम आधारित सामाजिक संरचना का अत्यंत व्यावहारिक और यथार्थपरक चित्रण किया है। जातिवाद, जो कि एक सांप्रदायिक समस्या है, उनकी रचनाओं में बार-बार उभरता है। वे यह दर्शाती हैं कि किस प्रकार जातिगत भेदभाव के कारण आरक्षण, अवसरों की असमानता, और नौकरी में पक्षपात जैसी समस्याएँ जन्म लेती हैं। उदाहरणस्वरूप, उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'दुःखम-सुखम' में पात्र कविमोहन के माध्यम से यह दर्शाया गया है कि किस प्रकार उसकी प्रतिभा के बावजूद केवल जातिगत कारणों से उसका चयन नहीं होता। फूफाजी कहते हैं, भई यह भी लालाओं का कॉलेज है। यहाँ तो चपरासी भी रखा जाता है तो उसे लाल जी के सामने पेश होना पड़ता है। यह संवाद समाज की उस कटु सच्चाई को उजागर करता है जहाँ योग्यता की अपेक्षा जाति को वरीयता दी जाती है। इसी प्रकार, कहानी 'नरक-दर-नरक' में योगेन्द्र साहनी का संघर्ष वर्णित है, जहाँ चयन समिति के सदस्य सजातीय उम्मीदवारों को प्राथमिकता देते हैं। कहानी में बताया गया है— "नंबर एक पर लक्ष्मण देशमुख था, जिसे प्रिंसिपल सजातीय होने के कारण लेना चाहता था। नंबर तीन पर रंजना पारीख थी, जिसे मैनेजर सजातीय होने के कारण लेना चाहता था। बीच में दूसरे नंबर पर योगेन्द्र फँसता था।" (कालिया, 32) यह घटनाक्रम स्पष्ट करता है कि जातिगत पूर्वग्रह समाज में योग्यता और निष्पक्षता के मार्ग में कैसे बाधा उत्पन्न करते हैं।

ममता कालिया की कहानियाँ केवल जाति तक सीमित नहीं हैं, वे वंशानुक्रम, लिंग भेद और पारिवारिक रूढ़ियों की भी सजीव व्याख्या करती हैं। 'दुःखम-सुखम' में पुत्र के जन्म की लालसा और कन्या के प्रति उदासीनता को उन्होंने बेहद सशक्त रूप में प्रस्तुत किया है। इंदु की दूसरी बेटी के जन्म पर दादी की प्रतिक्रिया देखिए, "दादी का चेहरा पीला पड़ गया... उनकी आँखों में अँधेरा छा गया, हलक में आँसुओं का नमक महसूस हुआ। इसी कहानी में ममता कालिया दर्शाती हैं कि स्त्री भी पुरुष-प्रधान मानसिकता के वशीभूत होकर पुत्री के जन्म पर स्वयं को पराजित अनुभव करती है— हाय! यह लड़का होता तो मेरे कितने दुःख दूर हो जाते। यह वाक्य उस आंतरिक संघर्ष को दर्शाता है जहाँ स्त्री अपने

मातृत्व की उपलब्धि को भी सामाजिक अपेक्षाओं के मानदंड पर तौलने लगती है। डॉ. गिनेश की आँखों से लिखी गई कहानी 'प्रेम कहानी' में यह बताया गया है कि झुग्गी से लेकर कोठी तक, हर वर्ग की स्त्रियाँ पुत्र-जन्म की इच्छा करती हैं- "तनाव का सर्वप्रथम कारण होता है कि कहीं लड़की न हो जाए... जिस स्त्री के तीन बेटे थे, वह भी चौथे बेटे की ही कामना कर रही थी।"(कालिया, 67) यह मानसिकता समाज में व्याप्त लिंग आधारित भेदभाव और स्त्री विरोधी दृष्टिकोण की स्पष्ट झलक देती है।

ममता कालिया ने गरीबी, बेरोजगारी और महंगाई जैसी समकालीन सामाजिक समस्याओं को भी अपनी कहानियों में जीवंत किया है। 'काली साड़ी' कहानी में कल्पना और विनोद की छोटी-छोटी आकांक्षाओं को महंगाई कैसे लील जाती है, इसका यथार्थ चित्रण इन पंक्तियों में मिलता है—मकान का किराया, बिजली का बिल, बच्चों की फीस... वेतन का लिफाफा 'राम नाम सत्य है' बोल जाता है। 'अनुभव' में एक नौकर रामू की गरीबी के कारण झेली गई अपमानजनक स्थितियाँ, सामाजिक वर्ग भेद का मार्मिक प्रतिबिंब प्रस्तुत करती हैं। इस प्रकार ममता कालिया की कहानियाँ केवल कथा नहीं, समाज का आईना हैं। उन्होंने अपने साहित्य में जातिवाद, वंशानुक्रम, लिंग भेद, आर्थिक विषमता आदि के माध्यम से भारतीय समाज की गहराई में छिपे शोषण और रूढ़िवादिता का पर्दाफाश किया है। उनके पात्र यथार्थ के इतने निकट हैं कि पाठक उनसे जुड़ जाता है। उनकी कहानियाँ सामाजिक चेतना को जाग्रत करती हैं और यह संकेत देती हैं कि यदि समाज को समानता और न्याय की दिशा में ले जाना है, तो इन परंपरागत व्यवस्थाओं का पुनरावलोकन और सुधार आवश्यक है।

2.1.3.4 सामाजिक परिवेश-

परिवेश रचनाकार के प्रस्तुतीकरण और स्पष्टीकरण का एक सशक्त माध्यम होता है। यह साहित्य को यथार्थ से जोड़ने तथा उसे एक ठोस पृष्ठभूमि प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। किसी साहित्यिक रचना को विश्वसनीय बनाने हेतु उसमें चित्रित घटनाओं और पात्रों को परिवेश से जोड़ना अत्यंत आवश्यक होता है। परिवेश के माध्यम से पाठक उस समय की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक स्थितियों से परिचित होता है। इसके अभाव में वह इन स्थितियों की गहराई को नहीं समझ पाता। वर्णन की सूक्ष्मता, यथार्थता

और चित्रात्मकता साहित्यिक परिवेश की प्रमुख विशेषताएँ हैं। साहित्य समाज का वास्तविक प्रतिबिंब प्रस्तुत करने का कार्य करता है, जिसमें परिवेश की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। एक साहित्यकार को समाज के परिवेश का सम्यक बोध अवश्य होना चाहिए।

ममता कालिया ने अपने यथार्थ-बोध का प्रयोग अत्यंत स्वाभाविक रूप से अपनी कहानियों में किया है। चूँकि उन्होंने दिल्ली और मुंबई जैसे महानगरों में अपने जीवन का लंबा समय व्यतीत किया है, अतः वे वहाँ के परिवेश से भलीभाँति परिचित हैं। उनके प्रथम उपन्यास में इन्हीं दो महानगरों का सजीव वर्णन प्राप्त होता है। उपन्यास का नायक 'परमजीत' दिल्ली का निवासी है, और उपन्यास के आरंभ में दिल्ली के परिवेश का चित्रण अत्यंत यथार्थपूर्ण ढंग से किया गया है। जब 'परमजीत' मुंबई में नौकरी के लिए जाता है, तो लेखिका ने वहाँ की ऊँची-ऊँची इमारतें, होटल, स्टेशन, बैंक, रहन-सहन और पहनावे का सूक्ष्म एवं सजीव वर्णन किया है। उनकी कहानी 'वसंत सिर्फ एक तारीख' में नायिका जिस चौक से प्रतिदिन गुजरती है, उसका विवरण बहुत ही सटीक और दृश्यात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है— "अब मैं आँख मूँदकर चलूँ तब भी बता सकती हूँ कि यह मलाई वाली का चबूतरा है। यह गुलाब की चाट का ठेला है। यहाँ एक पागल आदमी बैठता है और यहाँ होम्योपैथिक डॉक्टर की उजाड़ दुकान है। यहाँ ग्राम इमरती हर वक्त छनती है और यहाँ भांग की गोली मिलती है। आगे पुराना बाजार है। उससे आगे टोकरियाँ बिकती हैं। नीम के नीचे मिर्च-मसाले और उससे आगे धागे मिलते हैं। ठहरिए, बीच में कील वाले की दुकान तो छूट ही गई। यहाँ चौक से संगम जाने के लिए रिक्शे सस्ते मिलते हैं और दातुनें भी। यहीं से एक तरफ सब्जी बाजार शुरू होता है, दूसरी तरफ मिठाई बाजार।" (कालिया, 35)

'शहर शहर की बात' नामक कहानी में भी लेखिका ने मुंबई जैसे महानगर और छोटे शहरों का सटीक वर्णन किया है। इसमें सड़कों और बस के अंदर के वातावरण का अत्यंत प्रभावी चित्रण मिलता है। 'प्रेम कहानी' में मथुरा, दिल्ली, मुंबई और मॉरीशस—इन चार शहरों के परिवेश को उजागर किया गया है। मॉरीशस का वर्णन इस प्रकार है— "एक बार लगा मानो नीले पानी के बीचों-बीच एक हर धब्बा है, नहीं, हरी छतरी। फिर लगा जैसे नीली रेत पर रंग-बिरंगा पहाड़ पड़ा है। कुछ-कुछ फिल्मी दृश्य था।" (कालिया, पृष्ठ 117) 'जीते जी इलाहाबाद' और 'नरक-दर-नरक' में ममता कालिया ने दिल्ली, चंडीगढ़, मुंबई, इलाहाबाद तथा होशियारपुर जैसे शहरों का जीवंत चित्र प्रस्तुत किया है।

‘मेला’ कहानी में कुंभ के मेले का आँखों-देखा चित्र अत्यंत प्रभावशाली ढंग से उकेरा गया है। उनकी कहानी ‘लड़के’ में एक कॉलेज परिसर का चित्रण देखिए— “कॉलेज के अहाते से अभी-अभी लड़कों का एक झुंड निकला। किस्म-किस्म के लड़के—फीके, मीठे, नमकीन, दुष्ट, रुष्ट और हृष्ट-पुष्ट। हल्की ठंड की शुरुआत के बावजूद स्वेटर केवल दो ने पहन रखे थे। बाकी जींस या बेल बॉटम में थे। एक लड़के ने बेल बॉटम के साथ पारदर्शी स्कीवी पहन रखी थी, बस। लड़के प्रसन्न नहीं लग रहे थे। लड़के अप्रसन्न भी नहीं लग रहे थे। लड़के उत्तेजित थे। वे ज़रूरी बातचीत करने कंपनी बाग जा रहे थे।” (कालिया, पृ. 123)। ‘लड़कियाँ’, ‘निर्मोही’, ‘आपकी छोटी लड़की’, ‘थोड़ा सा प्रगतिशील’ जैसी कहानियों में भी परिवेश का अत्यंत सजीव और यथार्थ चित्रण मिलता है, जिससे पाठक स्वयं को उसी वातावरण का अंग अनुभव करता है।

इस तरह ममता कालिया की कहानियों में सामाजिक परिवेश का चित्रण अत्यंत गहराई और यथार्थ के साथ किया गया है। उनके साहित्य में समाज के विविध पहलुओं—जैसे पारिवारिक संबंध, आर्थिक असमानता, पितृसत्तात्मक व्यवस्था, और सांस्कृतिक बदलावों—को विशेष रूप से उकेरा गया है। वे समाज की जमीनी सच्चाई को उजागर करते हुए उन मुद्दों को सामने लाती हैं, जो सामान्य जनजीवन को गहराई से प्रभावित करते हैं। उनकी कहानियाँ पारिवारिक संबंधों की जटिलताओं को बड़ी सूक्ष्मता से प्रस्तुत करती हैं—संयुक्त परिवार की पारंपरिक संरचना में व्याप्त तनाव, संघर्ष, और भावनात्मक उलझनों को वे अत्यंत प्रभावी ढंग से रेखांकित करती हैं। उनकी रचनाओं में पीढ़ियों के बीच टकराव, परंपरा और आधुनिकता के बीच संघर्ष, तथा पारिवारिक दबावों की यथार्थ छवि प्रस्तुत होती है। महिला-विषयक दृष्टिकोण उनकी कहानियों का एक विशेष पक्ष है। वे पितृसत्तात्मक व्यवस्था में महिलाओं की स्थिति, उनके शोषण और उनकी आकांक्षाओं की उपेक्षा को उजागर करती हैं। साथ ही, वे महिलाओं की स्वतंत्रता, आत्मनिर्भरता और सामाजिक स्वीकृति की वकालत करती हैं।

उनकी कहानियों में आर्थिक असमानता के कारण उत्पन्न सामाजिक विभाजन और भेदभाव का भी सजीव चित्रण मिलता है। वे निम्न और मध्यम वर्ग के संघर्षों, आकांक्षाओं और सामाजिक सीढ़ी पर चढ़ने के प्रयासों को यथार्थपरक ढंग से प्रस्तुत करती हैं। आधुनिकता और पारंपरिकता के द्वंद्व को भी उन्होंने अपने साहित्य में प्रमुखता दी है,

जो विशेषतः नई और पुरानी पीढ़ियों के दृष्टिकोणों के बीच टकराव के रूप में सामने आता है। संक्षेप में, ममता कालिया की कहानियाँ न केवल यथार्थवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करती हैं, बल्कि समाज को समझने और उसके सुधार की दिशा में पाठकों को सोचने के लिए भी प्रेरित करती हैं। उनका साहित्य समाज के विभिन्न वर्गों और उनकी समस्याओं का ऐसा दर्पण है, जिसमें पाठक स्वयं को प्रतिबिंबित होते हुए अनुभव करता है।

2.1.3.5 भाषा-

भाषा सामाजिक संरचना की एक महत्वपूर्ण इकाई है। यही माध्यम है जिसके द्वारा धर्म, संस्कृति, सामाजिक व्यवस्था, परंपराएँ एवं सामाजिक व्यवहार अभिव्यक्त और संपादित होते हैं। भाषा, मनुष्य के आपसी विचार-विनिमय का प्रमुख साधन है। इसके माध्यम से ही वह अपने विचारों, भावनाओं और अनुभवों को अभिव्यक्त करता है। चूँकि भाषा ही संप्रेषण का माध्यम है, अतः उसका सरल, सहज एवं सटीक होना अत्यंत आवश्यक है। रचनाकार की भाषा न केवल स्वाभाविक होनी चाहिए, बल्कि उसमें आकर्षण भी होना चाहिए। रचनाकार को भाषा को प्रभावशाली बनाने के लिए शब्दों का सटीक चयन करना होता है। अनेक शब्दों के स्थान पर उपयुक्त एक शब्द, मुहावरे, लोकोक्तियाँ एवं अलंकारों का प्रयोग भाषा को संप्रेषणीय एवं रोचक बनाता है। प्रभावशाली भाषा के लिए क्लिष्टता आवश्यक नहीं होती, न ही सरलीकरण की प्रक्रिया में सुंदरता का हास किया जाना चाहिए। रचनात्मक लेखन में भाषा-शैली का उचित प्रयोग अत्यंत आवश्यक है। इन सभी मापदंडों पर ममता कालिया की रचनाएँ पूर्णतः खरी उतरती हैं।

ममता कालिया की कहानियों में भाषा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनकी भाषा न केवल सहज और स्वाभाविक है, बल्कि सामाजिक यथार्थ को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने में भी सक्षम है। उनकी शैली में गहराई, सजीवता और स्पष्टता विद्यमान है, जो पाठक को कथा के परिवेश, पात्रों और भावनाओं से गहराई से जोड़ देती है। उन्होंने भाषा के माध्यम से जीवन के यथार्थ एवं समाज की जमीनी सच्चाई को अत्यंत सजीव ढंग से प्रस्तुत किया है। ममता कालिया शब्दों की गहरी पारखी हैं। उनका भाषिक ज्ञान उच्चकोटि का है। वे अपनी रचनाओं में पात्रों की पृष्ठभूमि और परिवेश के अनुरूप भाषा

का चयन करती हैं। उनकी रचना-शैली में भाषा की सरलता, सुंदरता, यथार्थबोध तथा रोचकता का समुचित समावेश मिलता है। उनकी कहानियाँ जैसे- सीट नंबर छह, छुटकारा, बीमारी, बड़े दिन की पूर्वसांझ, आत्मरक्षा, पच्चीस साल की लकड़ी, अलमारी, प्रिय पाक्षिक आदि आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई हैं। वहीं शहर-शहर की बात जैसी रचनाओं में उन्होंने वर्णनात्मक शैली का सधा हुआ प्रयोग किया है। जैसे- “किराएदार यहाँ की सुविधाओं का रोना रोते, लिफ्ट के आए दिन खराब रहने पर झुँझलाते, चेंबर में लीज़मीन की धमकी देते, फिर भी साल-दर-साल यहीं जमे रहते।” (कालिया, पृ. 147) ममता कालिया ने अपने कथा साहित्य में प्रचलित मुहावरों और लोकोक्तियों का सशक्त प्रयोग किया है। इनसे उनकी रचनाओं में प्रवाह, आकर्षण और प्रभावशीलता बढ़ती है।

उन्होंने सहजता से इन्हें अपनी कहानियों में समाविष्ट किया है। कई कहानियों के शीर्षक भी मुहावरों पर आधारित हैं, जैसे- बाल-बाल बचने वाले। अन्य कहानियों में उन्होंने मुहावरों का प्रयोग पात्रों की भाषा में किया है- आँखें चकराई हुई लग रही थीं, मिट्टी के माधो, मिर्चें लग गईं, नाक पर मक्खी नहीं बैठने देना आदि। उन्होंने अंग्रेज़ी शब्दों और वाक्यांशों का प्रयोग भी पात्रों की सामाजिक-पारिवारिक पृष्ठभूमि के अनुरूप किया है, विशेषतः उच्च शिक्षित पात्रों के संवादों में संपूर्ण अंग्रेज़ी वाक्य देखने को मिलते हैं।

ममता कालिया के पति पंजाबी थे, जिससे उन्हें पंजाबी भाषा एवं संस्कृति की भी अच्छी समझ है। अतः उनकी कहानियों में पंजाबी पृष्ठभूमि वाले पात्र प्रामाणिक पंजाबी शब्दों और संवादों का प्रयोग करते हैं, जैसे- हाय नी में सदके जावाँ, काके, हुण तू फड़ाई सौदा, तैन् की दिसदा पैया आदि। इसी प्रकार उनकी कहानी सफर में मैं बिहार जाने वाली रेल-यात्रा के दौरान पात्रों के माध्यम से भोजपुरी का प्रयोग हुआ है- आप एसिन बैठे ना, दर्द होत बा, सप्तमी पूज गई तो फाग डलेगा न, हियाँ से लुकाएगा, उहाँ से भी लुकाएगा आदि।

ममता कालिया का बचपन मथुरा में अपने दादा-दादी के पास बीता, जिससे उन्हें ब्रजभाषा का भी अच्छा ज्ञान है। उनके उपन्यास दुःखम-सुखम में ब्रजभाषा का प्रयोग पात्रों की पृष्ठभूमि (आगरा-मथुरा) के अनुरूप हुआ है- जीजी यो कोई रोकने वाली चीज़ तो है नायै, इत्ता सरंजाम हो तो यह महरानी नहाएँ, नाक चढ़े होएं, बैठने देवै, ब्यालू आदि। उनकी कहानी निर्मोही में दादी द्वारा सुनाई गई लोककथा भी ब्रजभाषा में है- “सात दिना

रानी फूलमती अपना सिर सातों दरबज्जों पे पटकती रही। माथा फूटकर खून-खच्चर हो गयौ। और सूरसेन नायँ पसीजौ।”(कालिया, 125)

इस प्रकार, ममता कालिया की रचनाओं में विभिन्न शैलियों और भाषिक स्तरों का समुचित और प्रामाणिक प्रयोग मिलता है। भाषा के माध्यम से उन्होंने पाठकों को अपनी रचनाओं से बाँधे रखने का सफल प्रयास किया है। उन्होंने न केवल सामाजिक संरचना की विभिन्न इकाइयों को बल्कि भारतीय समाज की विविधताओं को भी अपनी लेखनी से अभिव्यक्त किया है। उनकी कहानियों में ग्रामीण और नगरीय दोनों परिवेश के पात्र मिलते हैं— अनपढ़ ग्रामीणों से लेकर शिक्षित, नगरीय जीवन के जटिल पात्रों तक। उन्होंने सामाजिक संरचना के समस्त तत्वों और इकाइयों को अपने सामाजिक यथार्थबोध के आधार पर चित्रित किया है। सामाजिक यथार्थ की कसौटी पर ममता कालिया की कहानियाँ पूरी तरह खरी उतरती हैं। उनकी भाषा में सहजता, संवेदनशीलता और सजीवता है, जो सामाजिक और सांस्कृतिक यथार्थ को प्रभावशाली ढंग से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करती है। यही कारण है कि उनका साहित्य न केवल विशिष्ट, बल्कि अत्यंत स्मरणीय भी बन गया है।

2.2 समूह एवं संस्थाएँ

भारतीय समाज विभिन्न जातीय, धार्मिक, भाषिक तथा क्षेत्रीय समूहों और संस्थाओं का समन्वित रूप है। प्रत्येक समूह एवं संस्था अपनी ऐतिहासिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं के संदर्भ में विशिष्ट एवं जटिल होती है। इन सामाजिक समूहों एवं संस्थाओं का मूल उद्देश्य समाज के सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है। सरल शब्दों में कहें तो सामाजिक समूह और संस्थाएँ समाज के वे घटक हैं जो उसकी सुचारु संचालन में सहायक होते हैं। ये संस्थाएँ समाज की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु संरचना, मार्गदर्शन एवं व्यवस्था प्रदान करती हैं। सामाजिक संस्थाओं के सामान्य उदाहरणों में परिवार, धर्म, अर्थव्यवस्था, शिक्षा तथा शासन तंत्र सम्मिलित हैं। ये संस्थाएँ वंशानुक्रम और निवास नियमों के एक स्थिर ढांचे में कार्यरत होती हैं। समाज की प्रकृति के अनुरूप प्रत्येक संस्था की भूमिका भिन्न होती है। ये संस्थाएँ पूर्वनिर्धारित उद्देश्यों के अनुसार कार्य करती हैं तथा समाज के विविध घटकों को आपस में जोड़ने का कार्य करती हैं। ये संस्थाएँ मानव व्यवहार को नियंत्रित, सीमित एवं निर्देशित कर सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने

में सहायक होती हैं। इन्हीं सामाजिक संस्थाओं की पारिवारिक एवं वैवाहिक संरचना को ममता कालिया की कहानियाँ प्रभावी रूप से चित्रित करती हैं। उनकी कहानियाँ— एक अदद औरत, लगभग प्रेमिका, बातचीत बेकार है, गुस्सा, आजादी, दंपति, काली साड़ी, लैला मजनू, ऐसा ही था वह, थोड़ा-सा प्रगतिशील, बोलने वाली औरत आदि— समाज की पारिवारिक एवं वैवाहिक संस्थाओं की जटिलताओं को उजागर करती हैं। कहानी 'बोलने वाली औरत' का एक उद्धरण दृष्टव्य है— “शिखा का शौहर कपिल अपने घरवालों से इस मायने में भिन्न था कि उसका सोचने का एक मौलिक तरीका था। शादी के विचार से जब उसने अपने आस-पास दृष्टि डाली, तो कॉलेज में उससे दो वर्ष जूनियर बी.एस.सी. की छात्रा शिखा उसे अच्छी लगी। सबसे पहली बात यह थी कि वह उन स्त्रियों से एकदम अलग थी, जिन्हें उसने अपने परिवार और परिवेश में देखा था। शिखा का पूरा नाम दीपशिखा था, लेकिन जब कोई पूछता, तो वह केवल नाम नहीं बताती, बल्कि कहती— ‘मेरे माता-पिता ने मेरा नाम गलत रखा है। मैं दीपशिखा नहीं, अग्निशिखा हूँ।” (कालिया, पृ. 78)

ममता कालिया की अधिकांश कहानियाँ विवाह एवं परिवार केंद्रित हैं, परंतु उन्होंने धर्म, राजनीति, शिक्षा आदि विषयों पर भी सशक्त लेखन किया है। मेला, लड़के तथा उपन्यास दुःखम-सुखम में भारतीय धार्मिक मान्यताओं और धार्मिक समूहों का उल्लेख मिलता है। 'मेला' कहानी का यह अंश दृष्टव्य है— “कुल मिलाकर प्रेस को आभास हो जाता है कि प्रशासन के अधिकारियों में अद्भुत तालमेल है। प्रशासन संतुष्ट है। ऐसा मलाईदार बजट प्रस्तुत किया गया है केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा कि मानो कई पीढ़ियों का महाकुंभ हो गया हो। गंगा मैया ने तार दिया। बीवी-बच्चे, रिश्तेदार, पड़ोसी— सभी प्रसन्न। मातहतों के चेहरे खिल उठे। वर्षों से सूखे पड़े पेड़ों की मानो सिंचाई हो गई हो। सरकारी गाड़ियों का काफिला, पुलिस और प्रशासन की छोलदारियों में सफेद हाथियों-सा झूम रहा है। जब गाड़ी, ड्राइवर, पेट्रोल— सब कुछ सरकारी हो और सवारी निजी, तो फिर मस्ती की कल्पना भी न की जा सके। सर्दी में भी गर्मी महसूस होती है, और दिल से एक ही स्वर निकलता है— ‘जय माँ गंगे, जय माँ गंगे।” (कालिया, पृ. 129) इस प्रकार ममता कालिया ने धर्म के नाम पर राजनीति करने वालों और सरकारी संसाधनों के दुरुपयोग को व्यंग्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियाँ समाज के विविध पक्षों का यथार्थपरक चित्रण

करती हैं, जिनमें भाषा, शैली, सामाजिक चेतना तथा व्यंग्यात्मक दृष्टि के अद्वितीय समन्वय के दर्शन होते हैं।

2.2.1 समूहों का चित्रण-

ममता कालिया का कहानी साहित्य भारतीय समाज की बहुआयामी संरचना का सूक्ष्म पर्यवेक्षण करता है, जिसमें विभिन्न जातीय, लैंगिक, धार्मिक, पारिवारिक, राजनीतिक तथा आर्थिक समूहों का यथार्थपरक चित्रण प्रमुख रूप से देखने को मिलता है। उन्होंने अपनी कहानियों में समाज के उन वर्गों और समूहों को स्वर दिया है, जिनकी उपस्थिति तो सतत है, परंतु जिनकी आवाज़ें अक्सर उपेक्षित रह जाती हैं। समाज में रहकर मनुष्य अनेक प्रकार के सामाजिक समूहों से जुड़ता है— यह जुड़ाव कभी स्वेच्छा से होता है, तो कभी सामाजिक, पारिवारिक या आर्थिक परिस्थितियों के चलते अनिच्छा से भी उसे इन समूहों का अंग बनना पड़ता है। ममता कालिया की कहानियाँ इस द्वंद्व को मार्मिकता और तीव्र संवेदनशीलता के साथ उजागर करती हैं। वे दिखाती हैं कि कैसे एक स्त्री विवाह संस्था में प्रवेश करते ही एक नए सामाजिक ढांचे का हिस्सा बन जाती है, जहाँ उसे अपने अस्तित्व, विचारों और इच्छाओं के लिए सतत संघर्ष करना पड़ता है।

उनकी कहानियों में परिवार, विवाह, स्त्री-पुरुष संबंध, मध्यवर्गीय आकांक्षाएं, धार्मिक आयोजन, सरकारी तंत्र, शिक्षा व्यवस्था और राजनीति जैसे विविध सामाजिक समूहों की छवियाँ उभरती हैं। जैसे 'बोलने वाली औरत' में स्त्री की मुखरता पारिवारिक समूह में अस्वीकार्य मानी जाती है, वहीं 'मेला' जैसी कहानी में धार्मिक आयोजनों और उनके माध्यम से पोषित राजनीतिक तथा प्रशासनिक गठजोड़ों का व्यंग्यपूर्ण चित्रण देखने को मिलता है। इन कहानियों में समूह केवल सामाजिक संरचना के इकाई मात्र नहीं, बल्कि एक जीवंत सत्ता हैं, जो व्यक्ति की पहचान, सीमाएं और संघर्ष तय करते हैं। ममता कालिया की विशेषता यह है कि वे इन समूहों को केवल बाह्य ढांचे के रूप में नहीं, बल्कि उनके भीतर की जटिलताओं, अंतर्विरोधों और संघर्षों के साथ प्रस्तुत करती हैं। उनका लेखन यह स्पष्ट करता है कि सामाजिक समूह कभी व्यक्ति को सुरक्षा प्रदान करते हैं, तो कभी उसकी स्वतंत्रता और आत्माभिव्यक्ति पर नियंत्रण भी थोपते हैं। विशेष रूप से स्त्री पात्रों के माध्यम से उन्होंने यह दिखाया है कि कैसे एक औरत को सामाजिक मान्यताओं और

संस्थागत संरचनाओं के भीतर अपने लिए स्पेस बनाना होता है— वह स्पेस जो अक्सर उसे सहज रूप में नहीं मिलता।

इस प्रकार ममता कालिया का कहानी साहित्य केवल कहानी कहने का माध्यम नहीं, बल्कि एक सामाजिक संवाद बन जाता है, जिसमें विभिन्न समूहों की गतिशीलता, उनकी सीमाएं और उनके भीतर पनपते परिवर्तन के संकेत स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। उनका रचनात्मक दृष्टिकोण इस बात को रेखांकित करता है कि समाज के समूहों में मनुष्य अकेला नहीं होता, लेकिन उसकी निजता और स्वतंत्रता की सबसे बड़ी चुनौती भी यही समूह बन जाते हैं।

2.2.1.1 पारिवारिक समूह-

इस प्रकार के समूह नातेदारी पर आधारित होते हैं। जैसे, मनुष्य अपनी इच्छा से अपने परिवार का चयन नहीं करता—वह परिवार में जन्म लेता है। परिवार और नातेदारी इसी प्रकार के समूहों में आते हैं। ममता कालिया ने अपने कहानी-साहित्य में सामाजिक संरचना के इन सभी समूहों का विस्तार से वर्णन किया है। उनके प्रथम कहानी-संग्रह की सभी कहानियाँ भारतीय परिवार व्यवस्था को दर्शाने वाली हैं। इस संग्रह की कहानी 'बीमारी' में भाई-बहन के रिश्ते को प्रस्तुत किया गया है, वहीं 'ज़िंदगी सात घंटे की' कहानी में एक अविवाहित स्त्री की सामाजिक स्थिति को दर्शाया गया है—कैसे वह अपने घर में स्वयं को इतना अकेला महसूस करती है कि दफ्तर के बाद और अगली सुबह के बीच का समय उसे अपनी ज़िंदगी का हिस्सा ही नहीं लगता। वह केवल उन्हीं सात घंटों को जीवन मानती है, जो वह कार्यालय में बिताती है। 'साथ' कहानी में विवाह की अहमियत को रेखांकित किया गया है, जबकि 'बेतरतीब' विवाह के लिए व्यग्र लड़कियों की मानसिकता को उजागर करती है। 'दो ज़रूरी चेहरे', 'बिटिया' और 'खाली होता हुआ घर' जैसी कहानियों में परिवार की सामाजिक महत्ता को दर्शाया गया है। विशेष रूप से 'बिटिया' में विवाह के उपरांत पिता के अकेलेपन का यथार्थ चित्रण है।

भारत में संयुक्त परिवार की परंपरा रही है, जिसका वर्णन ममता कालिया ने अपनी कहानियों में किया है। 'रायवाली' कहानी में संयुक्त परिवार का एक दृश्य देखिए- "सुबह घर मेहमानों से भर गया। पूरी, कचौड़ी, मिठाई, नमकीन, बच्चों की धकापेल, नाइन की गाली-गलौज में कब सुबह हुई, कब दोपहर—कुछ पता नहीं चला। कालिंदी सूखा मुँह लिए सारा दिन दौड़ती रही—शरबत बनाती, पत्तल लगाती, पैर छूती, पानी पिलाती। सास ने कहा, 'कल से बुखार है इसे, पर देवर के ब्याह का उत्साह तो देखो, बिना खाए-पिए जुटी हुई है।' (कालिया, 27)

ममता कालिया ने अपने अनुभवों और सामाजिक संदर्भ-बोध से पारिवारिक घटनाओं और रीतियों का सजीव वर्णन किया है। उनकी अधिकतर कहानियाँ पारिवारिक स्थितियों को केंद्र में रखकर रची गई हैं। 'दो ज़रूरी चेहरे' कहानी में पारिवारिक मूल्यों को स्पष्ट किया गया है कि एक स्त्री के लिए उसके पति के साथ-साथ उसका भाई भी उतनी ही महत्ता रखता है। नायिका को दोनों से समान रूप से स्नेह प्राप्त होता है- "भाई शाम को आते। खूब से फूल लेकर। जब तक डॉक्टर एक बार नहीं आ लेते, भाई नहीं जाते। श्याम से दफ्तर की बातें करते रहते। फिर वे लोग साथ ही उठ जाते।" (कालिया, पृ. 125)

भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार की परंपरा रही है।

उनकी कहानियों में पारिवारिक प्रेम, सौहार्द और आपसी जुड़ाव का चित्रण किया गया है। 'खाली होता हुआ घर' में पिता-पुत्र के स्नेह का चित्रण है, तो 'एक पत्नी के नोट्स' में यह दिखाया गया है कि एक स्त्री अपने मायके और ससुराल दोनों परिवारों की चिंता करती है और उन्हें जोड़कर रखती है। 'आपकी छोटी लड़की', 'बिटिया', और 'अट्टावनवाँ साल' जैसी कहानियाँ भी पारिवारिक व्यवस्था को उभारती हैं। 'अट्टावनवाँ साल' कहानी एक अवकाशप्राप्त अधिकारी और उसकी जीवन संगिनी की प्रेमपूर्ण साझेदारी को दर्शाती है—यह प्रेम और संस्कार भारतीय मानवीय मूल्यों के प्रतीक हैं। 'बोलने वाली औरत' कहानी-संग्रह की सभी कहानियाँ पारिवारिक जीवन के विविध पहलुओं को दर्शाती हैं। 'परदेश' कहानी में ममता कालिया ने भारतीय और पाश्चात्य सभ्यताओं का तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत किया है। इसमें कनाडा से आए रिचर्ड का कथन विशेष उल्लेखनीय है—आपके घर में डिनर के समय तीन पीढ़ियाँ एक साथ भोजन कर रही हैं, यह दुर्लभ दृश्य है। बच्चे अपने माता-पिता के

सामने आजाकारी हैं। तीन पीढ़ियाँ एक छत के नीचे प्रेमपूर्वक साथ बैठी हैं। यह बहुत बड़ी बात है, इसे कभी कम न आँकिए।

उन्होंने खान-पान की विविधताओं का भी उल्लेख किया है। 'बड़े दिन की पूर्व संध्या' में- "वह दुखी हो गया था, 'मैं ज़्यादा नहीं पी सकता। हमारे मेस में सिर्फ ड्रिंक्स की पार्टें होती हैं, जिससे असुविधा होती है।' मैंने कहा, 'तुमने घर पर कभी नहीं पी होगी?' उसने गर्व से बताया कि उसके घर में अंडा तक नहीं खाया जाता। एयर फोर्स में आने के बाद ही उसने पहली बार यह सब देखा। घर पर उसने लोगों को केवल दूध, चाय या पानी पीते देखा था।" (कालिया, पृ. 11) ममता कालिया की 'ऐसा ही था वह' कहानी पिता-पुत्र के रिश्ते और एक पिता की अपने पुत्र के भविष्य को लेकर चिंता को दर्शाती है। पिता अंतिम क्षणों तक पुत्र की नौकरी और व्यवसाय को लेकर आश्वस्त होना चाहता है। पिता की मृत्यु के पश्चात पुत्र को लगता है मानो वे अब भी उठ बैठेंगे।

2.2.1.2 सामाजिक वर्ग:

सामाजिक वर्ग वे समूह होते हैं, जिनमें व्यक्ति अपनी इच्छा से शामिल होता है और इच्छानुसार उनसे अलग भी हो सकता है। जैसे—क्लब सदस्य, छात्र संघ, खेल समूह, मित्र-मंडली, व्यवसाय संघ, धार्मिक मंडलियाँ, अध्ययन समूह, राजनीतिक दल आदि सभी ऐच्छिक समूहों में आते हैं। 'लड़के' कहानी में ममता कालिया ने धर्म, सरकार और छात्र संगठनों का एक साथ वर्णन किया है, शिक्षा व्यवस्था को उन्होंने 'बसंत एक तारीख', 'मुखौटा', 'नायक', 'एक रंगकर्म की उदासी' आदि कहानियों में स्थान दिया है। ये कहानियाँ शिक्षा प्रणाली के दोष और छात्रों पर पड़ने वाले मानसिक दबाव को उजागर करती हैं। भारतीय समाज की सामाजिक संरचना की प्रमुख विशेषता 'जाति व्यवस्था' है, जिसकी ऐतिहासिक जड़ें गहरी हैं। ममता कालिया ने इस व्यवस्था के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक प्रभावों को भी अपनी रचनाओं में चित्रित किया है। 'मेला', 'लड़के' तथा उपन्यास 'दुखम-सुखम' में धार्मिक समूहों और मान्यताओं का वर्णन किया गया है। 'मेला' कहानी में विभिन्न धार्मिक समूहों और राजनीति के गठजोड़ का चित्रण हुआ है- "प्रशासन मुदित है। केंद्र और राज्य सरकारों ने ऐसा मलाईदार बजट प्रस्तुत किया है कि कई पीढ़ियों का महाकुंभ हो गया। गंगा मैया ने तार दिया। सरकारी गाड़ियों का काफिला, पुलिस और प्रशासन की छोलदारियों में झूम रहा है। जब गाड़ी, ड्राइवर और पेट्रोल सब कुछ सरकारी

हो, पर सवारी निजी—तो फिर मस्ती ही मस्ती! दिल से आवाज़ उठती है—जय माँ गंगे!" इस प्रकार 'एक अदद औरत', 'लगभग प्रेमिका', 'बातचीत बेकार है', 'गुस्सा', 'आज़ादी', 'दंपति', 'काली साड़ी', 'लैला-मजनूँ', 'थोड़ा सा प्रगतिशील', 'बोलने वाली औरत' आदि कहानियाँ समाज की पारिवारिक और वैवाहिक संस्थाओं का प्रभावी चित्रण प्रस्तुत करती हैं।

2.2.2 संस्थाओं की भूमिका-

समाज में संस्थाओं का निर्माण समाज को अनुशासित रूप से संचालित करने के उद्देश्य से किया जाता है। ये संस्थाएँ समाज की प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, यद्यपि कभी-कभी इनके नकारात्मक प्रभाव भी देखने को मिलते हैं। फिर भी, ये संस्थाएँ समाज को सही दिशा प्रदान करने के लिए अनिवार्य मानी जाती हैं। इन संस्थाओं को प्रतिनिधि समूह भी कहा जाता है। इन संस्थाओं में मनुष्य कुछ लोगों के प्रतिनिधि के रूप में शामिल होता है – चाहे वह जननिर्वाचित हो या किसी सत्ता द्वारा नामांकित। संसद एक प्रतिनिधि समूह का उदाहरण है। पंचायतें, कानून व्यवस्था, शिक्षा व्यवस्था, स्कूल के अध्यापक और प्रधानाचार्य आदि भी इसी प्रकार की संस्थाएँ हैं।

2.2.2.1 शैक्षणिक संस्थान-

ममता कालिया ने शिक्षा संस्थानों को भी अपनी कहानियों में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। 'बसंत एक तारीख', 'मुखौटा', 'नायक', 'एक रंगकर्मी की उदासी' जैसी कहानियों में उन्होंने शिक्षा व्यवस्था का प्रभावशाली चित्रण किया है। शिक्षा व्यवस्था समाज की एक अत्यंत महत्वपूर्ण संस्था है, जिस पर समाज का निर्माण और उसकी उन्नति निर्भर करती है। छात्र किसी भी देश का भविष्य होते हैं, और उन पर न केवल शिक्षा का दायित्व होता है, बल्कि शिक्षा का भारी दबाव भी होता है। ममता कालिया ने अपनी कहानी 'शक' में इस स्थिति का वर्णन किया है, कहानी 'एक रंगकर्मी की उदासी' में ममता कालिया ने शिक्षा व्यवस्था तथा विद्यालयों की त्रुटियों को उजागर किया है। विद्यालयों में खाली पड़े पदों के कारण बच्चों का भविष्य दाँव पर लग जाता है। प्रोफेसर मिश्रा रिटायर होने के बाद भी विश्वविद्यालय जाकर कक्षाएँ लेते हैं और वाइस चांसलर को कोसते हैं। 'मुखौटा' कहानी के माध्यम से ममता कालिया ने शिक्षा क्षेत्र में फैल रहे भ्रष्टाचार को उजागर किया है। झूठे

प्रमाणपत्र बनवाना और आरक्षण के कारण उत्पन्न हुई शिक्षा संबंधी विसंगतियों का उन्होंने यथार्थ चित्रण किया है। कहानी 'नायक' में अपनी प्रतिभा का दुरुपयोग करने वाले तथा विद्यार्थियों को गुमराह करने वाले एक शिक्षक का सजीव चित्र प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार, उपयुक्त उदाहरणों के माध्यम से हम यह स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि ममता कालिया ने धर्म, शिक्षा और राजनीतिक व्यवस्था का चित्रात्मक एवं यथार्थपरक शैली में प्रभावी वर्णन किया है।

2.2.2.2 विवाह संस्था-

ममता कालिया ने समाज को बहुत ही निकट से देखा और समझा है। वे समाज की प्रत्येक अवस्था और परत का गहरा बोध रखती हैं। स्त्री-पुरुष संबंध उनकी लेखनी के प्रिय विषयों में से एक हैं। उन्होंने वैवाहिक रिश्तों, प्रेम विवाह और उनके परिणामों जैसे विषयों पर खुलकर लेखन किया है। लेखिका का स्वयं का विवाह, प्रेम-विवाह होते हुए भी पारंपरिक भारतीय रीति-रिवाजों के साथ सम्पन्न हुआ। उन्होंने सामाजिक बदलाव के साथ-साथ बदलते वैवाहिक मूल्यों को भी अपनी कहानियों में प्रभावी ढंग से चित्रित किया है। 'एक अदद औरत', 'लगभग प्रेमिका', 'बातचीत बेकार है', 'गुस्सा', 'आज़ादी', 'दंपति', 'काली साड़ी', 'लैला मजनू', 'ऐसा ही था वह', 'थोड़ा सा प्रगतिशील', 'बोलने वाली औरत' जैसी कहानियाँ समाज की पारिवारिक और वैवाहिक संस्थाओं का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती हैं। विवाह संस्था पर केंद्रित उनकी कहानी 'बोलने वाली औरत' का एक प्रसंग इस प्रकार है— "शिखा का शौहर, कपिल, अपने घरवालों से इस मायने में भिन्न था कि आमतौर पर उसका सोचने का एक मौलिक तरीका था। शादी के ख्याल से जब उसने अपने आसपास देखा, तो कॉलेज में उसे अपने से दो साल जूनियर बी.एस.सी. में पढ़ती शिखा अच्छी लगी थी। सबसे पहली बात यह थी कि वह उन औरतों से एकदम अलग थी जिन्हें उसने अपने परिवार और परिवेश में देखा था। शिखा का पूरा नाम दीपशिखा था, लेकिन कोई पूछता तो वह महज़ नाम नहीं बताती—'मेरे माता-पिता ने मेरा नाम ग़लत रखा है। मैं दीपशिखा नहीं, अग्निशिखा हूँ, वह कहती।

ममता कालिया की अधिकांश कहानियाँ विवाह और पारिवारिक जीवन पर केंद्रित हैं। आधुनिकता, स्वतंत्रता और जीवन की नई परिभाषा की तलाश में आज की पीढ़ी पुरानी

मान्यताओं को नकारने लगी है, जिसके प्रभावस्वरूप वे विवाह जैसी संस्था को भी अनदेखा करने लगी हैं। ममता कालिया ने समाज में आए इन परिवर्तनों को आधार बनाकर कहानियाँ रची हैं, जिनमें शिक्षित स्त्री-पुरुष की बदलती मानसिकता और विवाह संस्था के नियमों में आए बदलावों को उजागर किया गया है। 'अपत्नी', 'साथ', 'लगभग प्रेमिका' जैसी कहानियों में उन्होंने समाज की बदलती परिस्थितियों और उनके कारण उत्पन्न समस्याओं को गहराई से प्रस्तुत किया है। 'अपनी कहानी' का पात्र प्रमोद अपनी पत्नी को तलाक दिए बिना दूसरी स्त्री के साथ रहता है, और आश्चर्यजनक रूप से उस स्त्री को भी इससे कोई आपत्ति नहीं होती। 'साथ' कहानी में भी ऐसे ही एक अपारंपरिक रिश्ते को चित्रित किया गया है।

भारतीय समाज में विवाह को एक पवित्र संस्कार माना जाता है, किंतु आधुनिक जीवनशैली ने इस धारणा को भी चुनौती दी है। ममता कालिया की 'लगभग प्रेमी' कहानी में इसी तरह के बदलते रिश्तों को आधार बनाया गया है। 'थोड़ा सा प्रगतिशील', 'बोलने वाली औरत', 'एक पत्नी के नोट्स' जैसी कहानियों में लेखिका ने पुरुषों की विवाह से पहले और बाद की मानसिकता में आने वाले परिवर्तनों तथा प्रेम विवाह के संभावित दुष्परिणामों को गहराई से उकेरा है। 'थोड़ा सा प्रगतिशील' कहानी में 'विनीत' और 'चेतना' का प्रेम विवाह होता है, लेकिन विनीत अपनी शक्की प्रवृत्ति के कारण चेतना पर विश्वास नहीं कर पाता- प्रेम का प्रथम ज्वार ज़रा धीमा पड़ा, तो उसे सबसे पहले यह चिंता हुई कि जिस आसानी से उसने चेतना को पटा लिया, उतनी ही आसानी से कोई और न उसे पटा ले। इस प्रकार ममता कालिया की कहानियाँ पारिवारिक, वैवाहिक, सामाजिक मूल्यों और उनके विघटन की गहराइयों को उकेरती हैं। वे परंपरा और आधुनिकता के बीच की द्वंद्वात्मक स्थितियों को अत्यंत सूक्ष्मता से प्रस्तुत करती हैं।

2.2.2.3 धार्मिक संस्थाएँ-

ममता कालिया ने धर्म जैसे संवेदनशील विषय पर भी अपनी लेखनी को प्रभावशाली ढंग से संचालित किया है। उनकी कहानी 'भेला', 'लड़के' तथा उपन्यास 'दुखम-सुखम' में भारतीय धार्मिक मान्यताओं और धार्मिक समूहों का सजीव चित्रण मिलता है। 'भेला' कहानी में लेखिका ने मेले में उपस्थित समाज के विविध धार्मिक समूहों और उनके साथ जुड़ी राजनीति का व्यंग्यपूर्ण वर्णन किया है। इस कहानी का एक अंश दृष्टव्य है— "कुल मिलाकर

प्रेस को आभास मिल जाता है कि प्रशासन के अधिकारियों में अद्भुत तालमेल है। प्रशासन मुदित है। ऐसा मलाई-बजट प्रस्तुत किया है केन्द्र और प्रदेश सरकार ने कि कई पीढ़ियों का महाकुम्भ हो गया, तार दिया गंगा मैया ने। बीवी-बच्चे, रिश्तेदार, पड़ोसी सबको खुश कर दिया। मातहतों के मुँह भी हरे हो गए। बरसों के सूखे पेड़ों की सिंचाई हुई है इस बरस। गाड़ियों का काफिला पुलिस और प्रशासन की छोलदारियों में झूम रहा है सफेद हाथियों सा। जब गाड़ी सरकारी हो, ड्राइवर सरकारी हो, पेट्रोल सरकारी हो और सवारी निजी हो—फिर न पूछिए मस्ती! सर्दी में भी गरमी लगती है, दिल से एक ही आवाज़ निकलती है—‘जय माँ गंगे, जय माँ गंगे!’ (कालिया, 129) इस प्रकार ममता कालिया ने धर्म के नाम पर राजनीति करने वालों और सरकारी संसाधनों के दुरुपयोग पर तीखा व्यंग्य किया है।

वे धर्म के नाम पर होने वाले पाखंड और समाज में उभरते धार्मिक विभाजनों का भी अपनी कहानियों में मुखर विरोध करती हैं। ‘भेला’, ‘लैला मजनू’, ‘निर्मोही’, ‘दूसरा देवदास’ और ‘लड़के’ जैसी कहानियाँ धार्मिक आडंबर और कर्मकांडों पर करारा प्रहार करती हैं। इसी प्रकार, ‘लड़के’ कहानी में भी लेखिका ने गंगा स्नान जैसे धार्मिक अनुष्ठान का वर्णन करते हुए लोगों की आस्था और विश्वास का चित्रण किया है। गंगा स्नान के संदर्भ में वे लिखती हैं— “सबके मन में एक ही आस दिखी—मौनी अमावस्या पर बस एक डुबकी लग जाए। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि अब तक उनके जीवन में जो कुछ भी अधम-विषम हुआ है, वह संगम की धारा में धुलकर समाप्त हो जाएगा और वे स्वर्ग में अपनी सीट आरक्षित करवा लेंगे।” (कालिया, 74)

ममता कालिया ने धर्म के नाम पर आस्था और विश्वास के साथ-साथ अंधविश्वास, आडंबर और भ्रष्टाचार को भी बेनकाब किया है। वे मानती हैं कि धर्म के नाम पर लोग पाखंड का सहारा लेते हैं, जिससे गंगा जैसी पवित्र नदी तक दूषित हो रही है। ऐसे पाखंडियों पर टिप्पणी करते हुए वे लिखती हैं— “कुम्भ क्षेत्र में साधुओं की भी त्रिपथगा है—सच्चे, पाखंडी और मक्कार। यहाँ धर्म, आस्था और आडंबर का संगम चल रहा है। हर चीज़ यहाँ तीन के पहाड़े में है, जैसे त्रिवेणी से ही सीखा है यह। होमगार्ड, पुलिस और पी.ए.सी., गुरु, गोविंद और शिष्य, भक्त, बगुला-भक्त और अंध-भक्त।” (कालिया, 45) इस प्रकार, ममता कालिया ने व्यंग्यात्मक शैली में धर्म और धर्माधता को अत्यंत रोचक व यथार्थपरक ढंग

से प्रस्तुत किया है। उपर्युक्त सभी उदाहरण यह प्रमाणित करते हैं कि लेखिका समाज और अपने आसपास के परिवेश की गहरी समझ और यथार्थबोध रखती हैं।

2.3 सामाजिक मानदंड

सामाजिक संरचना का अस्तित्व केवल समाज के भीतर ही संभव है। 'समाज' का अर्थ है— एक विशेष भू-भाग में लोगों का समूह के रूप में निवास करना। यह समूह उस क्षेत्र की जलवायु, भौगोलिक परिस्थितियों तथा सांस्कृतिक घटनाओं को अपनाता है, जिसके माध्यम से समाज या सामाजिक व्यवस्था का निर्माण होता है। यदि हम सामाजिक गठन अथवा संयोजन के महत्व की बात करें, तो यह नवजात व्यक्ति को एक नया रूप प्रदान करता है। समाज में विभिन्न धर्मों, संस्थाओं और समूहों को सुव्यवस्थित बनाए रखने के लिए कुछ निश्चित नियम और सीमाएँ निर्धारित की जाती हैं, जिन्हें 'सामाजिक मानदंड' कहा जाता है। सामाजिक संरचना की इकाइयों अथवा घटकों के बीच संबंध, नियम और मर्यादाएँ होती हैं, जो समाज, संस्था अथवा समूह द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। मानदंड, किसी समूह के भीतर स्वीकृत व्यवहार के ऐसे मानक होते हैं जिन्हें समूह के सभी सदस्य साझा करते हैं। समाज की प्रत्येक प्रणाली की अपनी एक संरचना होती है, और उस प्रणाली को सुव्यवस्थित बनाए रखने के लिए कुछ विशेष सामाजिक मानदंड निश्चित किए जाते हैं।

सामाजिक संरचना के तीन प्रमुख घटक या मानदंड निम्नलिखित हैं— पहला पदानुक्रम- समाज में दर्जा, शक्ति और विशेषाधिकार का विभिन्न स्तरों में विभाजन। यह विभाजन राजनीतिक, आर्थिक या सामाजिक रूप में हो सकता है। दूसरा भूमिकाएँ और स्थितियाँ- समाज में व्यक्ति द्वारा ग्रहण किए गए विभिन्न पद और उनसे संबंधित कर्तव्य, अधिकार एवं दायित्व। इसमें निर्धारित स्थितियाँ (जैसे—आयु, लिंग, पारिवारिक पृष्ठभूमि) और अर्जित स्थितियाँ (जैसे—पेशा, शिक्षा स्तर) दोनों शामिल होती हैं। और अंतिम संस्थाएँ- समाज को नियंत्रित करने वाले व्यवहार और संबंधों के स्थायी, आवर्ती (दोहराए जाने वाले) पैटर्न। ये संस्थाएँ सामाजिक जीवन के विविध पक्षों को नियमित करती हैं। इन तीनों तत्वों—पदानुक्रम, भूमिकाएँ-स्थितियाँ, और संस्थाएँ—का परस्पर प्रभाव किसी भी समाज की सामाजिक संरचना, शक्ति-संसाधनों के वितरण तथा सामाजिक अपेक्षाओं को परिभाषित करता है। सामाजिक व्यवस्था में कुछ ऐसे नियम होते हैं जो समाज के घटकों के अनुसार परिवर्तनशील या अनुकूलनीय होते हैं। यद्यपि ये नियम और पैटर्न सीमित होते हैं और

उन्हें सहजता से बदला नहीं जा सकता, फिर भी वे समाज में संतुलन बनाए रखते हैं। प्रत्येक परिवार, समाज, समूह या संस्था के अपने कुछ विशिष्ट नियम या व्यवहार-पैटर्न होते हैं, जो उनके मानदंड कहलाते हैं। सामाजिक संरचना को बनाए रखने हेतु मूल्यवान नियम और विधिक व्यवस्थाएँ आवश्यक हैं, ठीक वैसे ही जैसे किसी भवन की मजबूती के लिए उसकी नींव और ढाँचे का सहारा आवश्यक होता है। यही मानदंडों की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है—वे समाज को स्थायित्व, संतुलन और दिशा प्रदान करते हैं।

2.3.1 सामाजिक मानदंडों की पहचान-

जब हम किसी समूह या संस्था का हिस्सा होते हैं या बनते हैं, तो हम उसके द्वारा निर्धारित मानदंडों को स्वीकार करते हैं, या पहले से ही उन मानदंडों के अनुकूल होते हैं। अनुरूपता का अर्थ है किसी व्यक्ति द्वारा अपने व्यवहार को विशेष समूह के मानदंडों के अनुरूप ढालना। व्यक्ति को समूह की अपेक्षाओं के अनुसार आचरण करना या वैसा आचरण सीखना होता है। समूह या संस्था स्वयं ही उन मानदंडों को निर्धारित करती है जिनके आधार पर वेतन, कार्य उपकरण तथा कठिन कार्यों का वितरण किया जाता है। साथ ही, संस्था को सुचारु रूप से संचालित रखने हेतु नियम और कानून भी बनाए जाते हैं। सामाजिक समूह यह निर्धारित करते हैं कि कार्यस्थल पर किस प्रकार का प्रयास, उत्पादन और परिणाम स्वीकार्य होंगे। संस्था या समूह, अपने सदस्यों के लिए वेशभूषा, कार्य समय, विश्राम, अवकाश तथा सरकार और नेतृत्व के प्रति निष्ठा के मानदंड भी तय करते हैं। ये सभी नियम संस्था के सभी सदस्यों द्वारा स्वीकार्य होते हैं। इस प्रकार, यह मानदंड समाज या संस्था को संतुलित और व्यवस्थित बनाए रखने में सहायक होते हैं। शिक्षा व्यवस्था से संबंधित प्रत्येक संस्था और समूह के भी अपने-अपने मानदंड होते हैं, जैसे—विद्यालयों में वेशभूषा, शिक्षा के नियम, अवकाश संबंधी नियम आदि।

प्रत्येक सामाजिक समूह या संस्था में उपयुक्त व्यवहार की परिभाषा मानदंडों के माध्यम से की जाती है। उदाहरण के रूप में, किसी अस्पताल में छात्र, पड़ोसी या रोगी—सभी व्यक्ति व्यवहार संबंधी नियमों को जानते हैं। जैसे ही कोई व्यक्ति किसी अन्य समूह में प्रवेश करता है, वैसे ही उसके व्यवहार में भी परिवर्तन आ जाता है। मानदंड समाज में व्यवस्था बनाए रखने का माध्यम होते हैं। सामाजिक मानदंड वे नियम या अपेक्षित व्यवहार

होते हैं जिन्हें किसी सामाजिक समूह या संस्था के सदस्य अपने आचरण में अपनाते हैं। किसी विशेष स्थिति में समूह का सदस्य कैसा व्यवहार करेगा, इसका निर्धारण जिस नियम द्वारा होता है, वही 'मानदंड' कहलाता है। अर्थात्, समाज में रहने के लिए आवश्यक नियमों को ही सामाजिक मानदंड कहा जाता है। ये मानदंड दो प्रकार के होते हैं- पहले **निर्देशात्मक मानदंड (Prescriptive Norms)** समाज द्वारा लोक-रुचियों, परंपराओं और प्रथाओं के माध्यम से सामाजिक सदस्यों के लिए निर्देशित होते हैं। यह व्यवहार परिस्थिति के अनुसार अपनाए जाते हैं। इनके उल्लंघन पर समाज दंड नहीं देता, परंतु ये व्यक्ति को समाज में रहने का तरीका और व्यवहार-कुशलता सिखाते हैं, जिससे समाज का स्वरूप सुनिश्चित होता है। समाज में प्रत्येक समूह या संस्था के मानदंड भिन्न हो सकते हैं। जैसे-हिंदू समाज के नियम मुस्लिम समाज से भिन्न होते हैं। ग्रामीण जीवनशैली शहरों से भिन्न होती है। इन मानदंडों का पालन व्यक्ति स्वतंत्र इच्छा से करता है। उदाहरण के लिए, ऑस्ट्रेलिया में खाँसते या छींकते समय मुँह ढकने की अपेक्षा की जाती है। यह एक निर्देशात्मक मानदंड है। कई बार ये मानदंड स्पष्ट रूप से बताए जाते हैं, जैसे-कानून, नियम या आचार संहिता। और दूसरे निषेधात्मक मानदंड (Proscriptive Norms) समाज के कल्याण की भावना से प्रेरित होकर बनाए जाते हैं। इनके उल्लंघन पर समाज, संस्था या समूह की ओर से दंड दिया जा सकता है। इन्हें नैतिक मानदंड भी कहा जाता है, और इनका पालन अनिवार्य होता है।

भारतीय समाज में प्रचलित कुछ प्रमुख मानदंड इस प्रकार हैं—

- भारतीय समाज में परिवार, रिश्तेदारी और विवाह की अवधारणाएँ परंपरा और संस्कृति से गहराई से जुड़ी होती हैं।
- विवाह को एक आवश्यक सामाजिक संस्था माना जाता है।
- पारंपरिक भारतीय समुदायों में विवाह प्रायः एक ही जाति या उपजाति में किए जाते हैं।
- अधिकतर परिवार पितृसत्तात्मक और पदानुक्रमिक संरचना के होते हैं।
- पुरुषों और महिलाओं की सामाजिक भूमिकाएँ अलग-अलग निर्धारित होती हैं।
- सप्तपदी, कन्यादान, दहेज प्रथा जैसी परंपराएँ अब भी कुछ क्षेत्रों में प्रचलित हैं।
- भारतीय समाज सहिष्णुता और स्वीकृति की अपनी क्षमता के लिए जाना जाता है।

- संविधान की प्रस्तावना में भाईचारे के महत्व को विशेष रूप से रेखांकित किया गया है।

2.3.1.1 पारिवारिक मानदंड-

मानदंड किसी भी संस्था को अनुशासित रखने और नियंत्रित करने के लिए आवश्यक होते हैं। जैसे परिवार को सुचारु रूप से चलाने के लिए प्रत्येक परिवार के अपने कुछ मानदंड होते हैं। इन मानदंडों के कारण ही परिवारों में अनुशासन बना रहता है। ये मानदंड कभी संस्कृति के नाम पर, तो कभी रीति-रिवाजों के तहत निर्धारित किए जाते हैं। कई बार यही रीतियाँ विकृत होकर कुरीतियों का रूप ले लेती हैं। ममता कालिया ने अपने कहानी-साहित्य में ऐसे सामाजिक और पारिवारिक मानदंडों की यथार्थपरक और गहन अभिव्यक्ति की है। उनके कथा-साहित्य में समाज, परिवार और अन्य संस्थाओं के मानदंडों का विस्तृत चित्रण मिलता है। समाज में प्रत्येक परिवार अपने-अपने नियमों के अनुसार आचरण करता है। ये मानदंड सकारात्मक भी हो सकते हैं और नकारात्मक भी। ममता कालिया ने विशेष रूप से निषेधात्मक मानदंडों के माध्यम से पारिवारिक परिस्थितियों को उजागर करने वाली कहानियों की सशक्त रचना की है। उनकी कहानी में एक स्त्री की पीड़ा इन शब्दों में व्यक्त होती है— “शिकार तो मैं हूँ, तुम सब शिकारी हो—शिखा कहना चाहती थी, पर जबड़ा एकदम जाम हो गया था। होंठ अब तक सूज चुके थे। शिखा ने पाया कि परिवार की शर्तों पर रहते-रहते उसने न केवल अपनी पहचान खो दी है, बल्कि अभिव्यक्ति की क्षमता भी। उसे लगा जैसे अपने मुँह में कपड़ा ठूस ले या लोहे की तार से सी दे, ताकि उसके शरीर से कोई आवाज़ न निकले। बस उसके हाथ-पाँव परिवार के काम आते रहें। वह बोल न सके, पर शब्द उसके भीतर खलबलाते रहें। घरवाले उसके समस्त इंद्रियों को बंद कर दें, फिर भी ये शब्द भीतर खौलते रहेंगे। मृत्यु के बाद जब उसकी चीरफाड़ होगी, तब ये शब्द फेफड़ों, गले और आँतों से बाहर निकलेंगे और एक तीखी, नुकीली, कंटीली इबारत बनकर समूचे घर को झकझोर देंगे। यदि वह इन्हें लिख दे, तो वह लेखनी तेज़ाब का आविष्कार बन जाएगी। फिलहाल उसका मुँह सूजा हुआ है, पर मुँह बंद रखना चुप रहने की निशानी नहीं है। ये शब्द उसकी लड़ाई लड़ते रहेंगे।” (कालिया, पृष्ठ 83) इसी प्रकार 'निर्मोही' कहानी में एक स्त्री के जीवन की बलि मात्र इसलिए चढ़ जाती है कि उसने एक पराये पुरुष से

बात कर ली थी। समाज की ऐसी मान्यताएँ स्त्रियों के लिए कठोर और अनुचित मानदंड निर्धारित करती हैं—

‘इधर राजा सूरसेन उदास रहने लगे। माँ ने लब्बावती को बुलवाया। लब्बावती ने भाई से पूछा, ‘प्यारे भैया, मेरी राजरानी भाभी में ऐसा क्या दोष देखा कि उन्हें वनवास भेज दिया?’

सूरसेन ने कहा, ‘तेरी भौजाई हरजाई निकली। वह मालिन के बेटे के साथ खड़ी थी और दोनों हँस रहे थे।’

बहन बोली, ‘यह तो अन्याय हुआ! हँसना तो उसका स्वभाव था। जैसे सूरज का उगना, नदियों का बहना और चिड़ियों का चहचहाना कोई नहीं रोक सकता।’

राजा को महसूस हुआ कि उन्होंने अपनी पत्नी को बहुत कठोर सज़ा दे दी। सात दिन तक वे उधेड़बुन में डूबे रहे और आठवें दिन लब्बावती विदा हो गई।” (कालिया, पृष्ठ 143) यहाँ समाज की स्त्री-विरोधी मान्यताओं और दोहरे मानदंडों को उजागर किया गया है।

इसी तरह ‘रायवाली’ कहानी में ममता कालिया ने पारिवारिक संस्था के एक और क्रूर मानदंड का चित्रण किया है—यह अपेक्षा की जाती है कि घर की बहू सभी की सेवा करे और कोई शिकायत न करे। कालिंदी देवर की शादी में बिना आराम किए, बिना भोजन किए पूरे परिवार, बच्चों और मेहमानों की सेवा में लगी रहती है। इसी बीच वह बीमार भी पड़ जाती है, लेकिन किसी को उसकी चिंता नहीं होती— “सुबह घर मेहमानों से भर गया। पूरी, कचौड़ी, मिठाई, नमकीन, बच्चों की धकापेल, नौकरानी की गाली-गलौज में सुबह से दोपहर हो गई—पता ही नहीं चला। कालिंदी सूखे मुँह के साथ सारा दिन दौड़ती रही—शरबत बनाती, पत्तल लगाती, पैर छूती, पानी पिलाती। सास ने कहा, ‘कल से बुखार है इसे, पर देवर के ब्याह का उत्साह देखो, बिना खाए-पिए लगी हुई है।

शाम चार बजे जब गीतों के लिए औरतों ने ढोलक संभाली, कालिंदी का सिर फटा जा रहा था। वह अपने कमरे में जाकर लेट गई। सारा दिन काम करते हुए उसकी माँ की छवि आँखों के सामने घूमती रही। और तभी एकाएक वह टूट गई।

बाहर से औरतों की आवाज़ें आईं—‘रायवाली कहाँ गई? उसे बुलाओ।’ और उसी समय सास की दबी घुड़की सुनाई दी—‘मेरे घर में आज के दिन अशुभ न हो, रायवाली! कल अपने घर जाकर जी भर के रो लेना।’” (कालिया, पृष्ठ 117)

यह दृश्य पितृसत्तात्मक समाज में बहुओं की उपेक्षा और उनके दुख-दर्द की अनदेखी को उजागर करता है।

2.3.1.2 लिंग आधारित मानदंड-

भारतीय समाज एक पितृसत्तात्मक समाज है, जहाँ पुरुषों और स्त्रियों के लिए अलग-अलग प्रकार के सामाजिक मानदंड निर्धारित किए गए हैं। समय के साथ कुछ मान्यताएँ ऐसी बन जाती हैं जो स्पष्ट रूप से स्त्री-विरोधी स्वरूप ग्रहण कर लेती हैं। ममता कालिया ने अपनी कहानियों में समाज की इन्हीं पूर्वग्रहपूर्ण मान्यताओं को मुखरता से उजागर किया है। इस समाज में सदैव पुरुष को प्राथमिकता दी जाती है, जबकि स्त्री को केवल पुरुष की छाया बनकर रहने की अपेक्षा की जाती है। स्त्रियाँ स्वयं भी संतान के रूप में पुत्र की ही कामना करती हैं, जो इस लिंगभेदपूर्ण मानसिकता का प्रत्यक्ष परिणाम है। भारतीय समाज की विडंबना यह है कि जहाँ एक ओर कन्याओं की पूजा की जाती है, वहीं दूसरी ओर कन्या-जन्म को शोक का कारण माना जाता है। भ्रूण हत्या जैसी अमानवीय प्रवृत्तियाँ इसी मानसिकता की उपज हैं।

ममता कालिया, स्वयं एक स्त्री होने के नाते, इस भेदभावपूर्ण सोच को गहराई से महसूस करती हैं और यही कारण है कि उन्होंने अपने कथा-साहित्य में इस विषय को बार-बार रेखांकित किया है। इस सामाजिक यथार्थ का विस्तृत चित्रण उन्होंने अपने उपन्यास ‘दुक्कम-सुक्खम’ में किया है। जब विध्यावती की बहू इन्दु दूसरी बार बेटी को जन्म देती है, तो विध्यावती की मानसिक अवस्था का वर्णन इस प्रकार किया गया है— “दादी का चेहरा पीला पड़ गया। अब तक ऑपरेशन थिएटर के दरवाजे से सटी खड़ी थी, अब धम्म से बेंच पर बैठ गई। उनकी आँखों के सामने अंधेरा छा गया और गले में आँसुओं का नमक भर आया।” लड़की के जन्म पर घर में शोक-सा माहौल बना दिया जाता है। इस सामाजिक व्यवहार को ममता कालिया इस प्रकार चित्रित करती हैं—जिस दिन वह पैदा हुई, घर में

कोई उत्सव नहीं मनाया गया। लड्डू नहीं बँटे, बधावे नहीं गाए गए, उलटे घर की मनहूसियत ही बढ़ गई। दादी ने तो चूल्हा तक नहीं जलाया।

पुरुष-प्रधान समाज में एक स्त्री स्वयं भी बेटी के जन्म को अपनी पराजय के रूप में अनुभव करती है। यही अनुभूति इन्दु के मन में भी थी, जबकि उसकी सास विध्यावती स्वयं तीन बेटियों की माँ रह चुकी थी। विध्यावती को भी अपनी बेटियों के जन्म के समय समाज द्वारा दिए गए ताने और मानसिक यातनाएँ याद आ जाती हैं— कैसे वह बार-बार टूटती रही, अपमानित होती रही। इसी प्रकार ममता कालिया ने अपने एक अन्य उपन्यास 'प्रेम कहानी' में यह स्पष्ट किया है कि पुत्र की इच्छा केवल अशिक्षित स्त्रियों तक सीमित नहीं है, बल्कि पढ़ी-लिखी, आत्मनिर्भर महिलाएँ भी इस मानसिकता से ग्रसित हैं। जब डॉ. गिनेस अस्पताल में कुछ गृहिणियों और कामकाजी स्त्रियों से साक्षात्कार करता है, तो वह चकित रह जाता है, उसने पाया कि ये स्त्रियाँ अपनी गर्भावस्था का समय एक विशेष मानसिक तनाव में बिताती हैं। तनाव का प्रमुख कारण यह होता कि कहीं शिशु कन्या न हो जाए। यहाँ तक कि जिस स्त्री के पहले से तीन बेटे थे, वह भी चौथे के रूप में बेटे की ही कामना कर रही थी। जिसने पहली बार गर्भ धारण किया था, उसकी भी यही चाह थी कि पुत्र हो। झुग्गी-झोंपड़ी से लेकर कोठी-बँगले तक, गिनेस को पुत्र-प्राप्ति के प्रति यह आग्रह सर्वत्र देखने को मिला। इन उदाहरणों के माध्यम से ममता कालिया ने लिंगभेद की सामाजिक संरचना को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से उद्घाटित किया है। उन्होंने यह दर्शाया है कि भारतीय समाज में पुरुष संतान की आकांक्षा कितनी गहरी और व्यापक है। यह विषय न केवल उनके लेखन का केंद्र रहा है, बल्कि उनके निजी जीवन के अनुभवों में भी यह मानसिकता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

2.3.2 मानदंड के प्रति दृष्टिकोण-

सामाजिक मानदंडों से लोगों को अपने आसपास के वातावरण को समझने में सहायता मिलती है। ये मानदंड लोगों को एक प्रकार का आश्वासन प्रदान करते हैं, क्योंकि उनसे एक निश्चित प्रकार के व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। यदि कोई व्यक्ति इन मानदंडों के विरुद्ध आचरण करता है, तो समाज उसे स्वीकृति नहीं देता। उदाहरणस्वरूप, विवाह से पूर्व या बिना विवाह के स्त्री-पुरुष का एक साथ रहना भारतीय समाज में मान्य नहीं है। ऐसे

संबंधों को समाज उचित नहीं मानता। ममता कालिया की कहानियाँ 'अपत्नी' और 'साथ' इसी प्रकार के विषयों पर केंद्रित हैं। इन कहानियों के पात्र विवाहपूर्व अथवा बिना पहली पत्नी से तलाक लिए सहजीवन जीते हैं, जो समाज में स्वीकृत नहीं हैं। ऐसे जोड़े या तो समाज से छिपकर रहते हैं अथवा सामाजिक आलोचना का शिकार बनते हैं। कहानी का एक प्रसंग देखिए— "लीला हमारे सामने की कुर्सी पर बैठ गई। वह हमेशा पाँव फैलाकर बैठती थी, हालांकि उसका कोई बच्चा नहीं था। उसके चेहरे की बेफिक्री मुझे अखरती थी। उसे इतना बेफिक्र होने का अधिकार नहीं था। अभी तक प्रमोद को पहली पत्नी से तलाक नहीं मिला था और प्रमोद को दूसरी शादी की कोई जल्दी भी नहीं थी। मेरी समझ से लड़की को चिंतित होने के लिए यह पर्याप्त कारण था।" (कालिया, 39) सामाजिक मानदंड समाज को नैतिकता का बोध कराते हैं। ये मानदंड हमें यह समझने में सहायता करते हैं कि किसी सामाजिक परिस्थिति में किस प्रकार का आचरण अपेक्षित है।

ममता कालिया की कहानी 'लगभग प्रेमिका' में 'कृष्णा' मुंबई के एक होटल में रहती है जबकि उसका पति दिल्ली में नौकरी करता है। अकेलेपन से जूझती कृष्णा अपने पति के मित्र कक्कड़ से मिलने लगती है, किंतु जैसे ही उसे अपने पति का पत्र प्राप्त होता है, उसे अपनी भूल का आभास होता है और वह अपने पति के पास लौट जाती है। यह प्रसंग दर्शाता है कि समाज में स्वीकृत व्यवहार की चेतना व्यक्ति के मन में गहराई से व्याप्त होती है। प्रत्येक सामाजिक समूह के लिए उपयुक्त आचरण को परिभाषित करने के लिए मानदंड आवश्यक होते हैं। ये समाज को एक व्यवस्थित रूप प्रदान करते हैं। समय के साथ इनमें परिवर्तन भी होता है। जैसे— पहले दहेज प्रथा को सामाजिक स्वीकृति प्राप्त थी, किंतु वर्तमान में यह एक अमान्य एवं दंडनीय अपराध है। हालांकि कुछ स्थानों एवं वर्गों में यह आज भी प्रचलित है। ममता कालिया की कहानी 'बिटिया' दहेज प्रथा की इस सामाजिक विडंबना को उजागर करती है। भारतीय समाज एक पुरुष प्रधान संरचना में ढला हुआ है।

ममता कालिया की कई कहानियाँ इस यथार्थ को उभारती हैं। जैसे उनकी कहानी 'थोड़ा सा प्रगतिशील'— जिसमें चेतना नामक नायिका अपने सहपाठी विनीत से प्रेमविवाह करती है, किंतु विवाहोपरांत विनीत का दृष्टिकोण बदल जाता है। वह चेतना के स्वाभाविक हाव-भाव, मिलनसारिता और स्वतंत्र सोच से असहज हो उठता है, उसे रोकने-टोकने लगता

है। वह चेतना की बुद्धिमत्ता से जहाँ एक ओर प्रभावित है, वहीं भीतर ही भीतर हीनभावना से ग्रस्त भी है। उसे भय है कि कहीं चेतना उसे जीवन की दौड़ में पीछे न छोड़ दे, कहीं वह नौकरी करने का निर्णय न ले ले। 'जांच अभी जारी है', 'बाथरूम', 'काली साड़ी', और 'निर्मोही' जैसी कहानियाँ भी पुरुष प्रधान मानसिकता और स्त्री की स्वायत्तता को लेकर समाज के दोगलेपन को उजागर करती हैं।

ममता कालिया ने अपने कथा-साहित्य में दांपत्य जीवन, सामाजिक व्यवस्था, परंपराएँ, मान्यताएँ तथा स्त्री-पुरुष संबंधों का अत्यंत यथार्थ चित्रण किया है। एक स्त्री होने के नाते उन्होंने स्त्री जीवन की विडंबनाओं को नजदीक से देखा, महसूस किया और उन्हें संवेदनशीलता के साथ अपनी कहानियों में पिरोया। शिक्षिका होने के कारण उन्होंने शिक्षा से जुड़ी समस्याओं को भी गहराई से समझा। स्त्री-पुरुष संबंध उनके लेखन का प्रिय विषय रहे हैं। उनकी अनेक कहानियाँ विवाह संस्था पर प्रश्नचिन्ह खड़ा करती हैं— कहीं यह संबंध पवित्रता के संरक्षण की बात करता है, तो कहीं व्यक्ति की सुख-प्राप्ति के लिए विवाहेतर संबंधों के पक्ष में खड़ा दिखाई देता है। ममता कालिया शब्दों की कुशल चितेरी ही नहीं, बल्कि समाज की यथार्थपरक चित्रकार भी हैं। उनकी कहानियाँ सामाजिक मानदंडों के विविध पक्षों का प्रमाणिक चित्र प्रस्तुत करती हैं। उनके कथा-साहित्य में भारतीय समाज के हर स्तर और हर पहलू की झलक स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

2.4 सामाजिक बदलाव

समय के साथ समाज में निरंतर बदलाव होते रहते हैं, क्योंकि बदलाव प्रकृति का एक नियम है। समाज में होने वाले इन बदलावों के साथ-साथ सामाजिक मानदंडों और नियमों में भी परिवर्तन होते हैं। समाज में प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक मानदंडों, नियमों और बंधनों का पालन करते हुए अपनी सामाजिक स्थिति का सामना करना पड़ता है। समाज में विभिन्न वर्गों और धर्मों के लोग रहते हैं, जिनकी पारिवारिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्थितियाँ भिन्न होती हैं। फिर भी, समाज में रहते हुए सभी को सामाजिक नियमों का पालन करना आवश्यक होता है।

व्यक्ति से परिवार और परिवार से समाज तक का विकास क्रमबद्ध रूप से होता है। सामाजिक बदलाव व्यक्ति के व्यक्तित्व पर भी प्रभाव डालते हैं, और व्यक्तित्व का प्रभाव

पारिवारिक संबंधों पर भी पड़ता है। कई बार समाज और व्यक्ति के बीच इतना वैषम्य उत्पन्न हो जाता है कि स्थिति बिगड़ने लगती है। सामाजिक मान्यताओं के दबाव में व्यक्ति को मानसिक तनाव और टूटन का अनुभव होता है। सामाजिक संरचना में परिवर्तन या बदलाव को ही सामाजिक बदलाव कहा जाता है। सामाजिक बदलाव एक ऐसा विषय है, जिसमें समाज के आधारभूत परिवर्तन पर प्रकाश डाला जाता है। यह एक कठिन और विस्तृत विषय है, जिसमें समाज की संरचना और कार्यप्रणाली में नए बदलाव होते हैं। इस प्रक्रिया के तहत परिस्थितियाँ, वर्ग, स्तर और व्यवहार के अनेकानेक प्रतिमान बनते और बिगड़ते हैं। समाज गतिशील है, और समय के साथ परिवर्तन अवश्यंभावी है।

2.4.1 सामाजिक बदलाव का स्वरूप-

आधुनिक समाज में प्रत्येक क्षेत्र में विकास हुआ है। समय के अनुसार समाज में विकास के साथ जो बदलाव हुए हैं, उन्हें विभिन्न समाजों ने अपने तरीके से अपनाया है। इन परिवर्तनों की गति कभी तीव्र होती है तो कभी मंद, और कभी ये परिवर्तन अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं, तो कभी बिल्कुल महत्वहीन। कुछ बदलाव आकस्मिक होते हैं, कुछ कल्पना से परे होते हैं और कुछ बदलाव ऐसे होते हैं जिनकी पहले से भविष्यवाणी की जा सकती है। कुछ बदलावों को स्वीकारना सरल और सहज होता है, जबकि कुछ बदलावों को कठिनाई से स्वीकार किया जाता है। कुछ परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं, जबकि कुछ या तो दिखाई नहीं देते या फिर कुछ समय बाद दिखाई देते हैं। कई परिवर्तन हमारी इच्छा के विरुद्ध हम पर थोपे जाते हैं। सामाजिक व्यवस्था के अभ्यस्त होने के कारण मानव मस्तिष्क धीरे-धीरे इन बदलावों को स्वीकार कर लेता है। जब भी समाज के किसी भी क्षेत्र में कुछ ऐसा घटित होता है या हो रहा होता है जो मानवता या समाज के द्वारा असहनीय हो, तो बदलाव अवश्य होते हैं। कई बदलाव स्थिति-परिस्थिति के अनुसार भी होते हैं।

सामाजिक संरचना के बदलाव की प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया होने के बावजूद समाज में बदलाव आते हैं। ये बदलाव प्रकृति द्वारा या मानव द्वारा योजनाबद्ध रूप से हो सकते हैं। ये बदलाव पूरे समाज में भी हो सकते हैं, या समाज के किसी विशेष वर्ग तक सीमित रह सकते हैं। बदलाव एक सर्वकालिक घटना है, जो किसी न किसी रूप में निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। किसी भी समाज में परिवर्तन की मात्रा, समय और गति का निर्धारण

परिस्थितियों पर निर्भर करता है। सामाजिक परिवर्तन संसार के प्रत्येक समाज में होते हैं। संसार का कोई भी समाज लंबे समय तक स्थिर नहीं रहता। बदलाव की गति अनिश्चित और अत्यधिक होती है। इसकी कोई निश्चित भविष्यवाणी नहीं की जा सकती, क्योंकि समाज या मानव समूह की आवश्यकताएँ अनंत और समय के अनुसार भिन्न होती हैं।

आज के समाज में बदलाव बहुत तीव्र गति से हो रहे हैं। हमारे बदलते विचार और रहन-सहन के बदलाव सामाजिक संरचना में बदलाव को स्वाभाविक बना देते हैं। आज का समाज स्वतंत्र और आत्मनिर्भर रहना पसंद करता है, जो सामाजिक बदलाव का एक महत्वपूर्ण कारण है। पुरुषों के साथ-साथ आज समाज में महिलाएं भी आत्मनिर्भर हो चुकी हैं। ममता कालिया ने आधुनिक काल के इन बदलावों का अपनी कहानी साहित्य में विस्तार से वर्णन किया है। उन्होंने समाज के रहन-सहन, स्त्री-पुरुष के बदलते संबंधों, समाज के भौतिक जीवन और भौतिक जीवन से मानव जीवन में आने वाले बदलावों और समस्याओं को भी चित्रित किया है। ममता कालिया स्वयं एक आत्मनिर्भर स्त्री हैं। एक कामकाजी स्त्री को जीवन में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

इन सब की साक्षी ममता कालिया स्वयं हैं, और उनका यथार्थ वर्णन उन्होंने अपनी कहानियों में किया है। बद्रीनारायण को दिए एक साक्षात्कार में ममता कालिया ने सामाजिक बदलाव के बारे में कहा है, सामाजिक व्यवस्था और मूल्य ना तो शाश्वत होते हैं और ना ही निरपेक्ष होते हैं। समय के अनुसार इनमें परिवर्तन अवश्य होता है। इसी साक्षात्कार में ममता कालिया का यह कथन भी है, “जब समाज में यथा स्थिति जड़ें जमाने लगती हैं, तो कोई ना कोई आंदोलन उस यथा स्थिति को तोड़ता है। जब-जब समाज करवट लेता है, सामाजिक आंदोलन पैदा होते हैं। ये आंदोलन ही हमें जड़ता, मूढ़ता और आत्ममुग्धता से बचा लेते हैं। एक बात और, इन आंदोलनों को बुद्धिजीवी आंख मूंदकर स्वीकृति नहीं देते। उन्हें उलट-पुलट कर इतनी बार जांचते हैं कि उनमें एक पारदर्शिता आ जाती है। यही पारदर्शिता परिवर्तन का कारण बनती है। ऐसा न होता, तो हमारे समाज में अब तक बाल विवाह, सती प्रथा, विधवा उत्पीड़न जैसे रूढ़ अर्थ चलते रहते। मैं सोचती हूँ कि एशियाई देशों, विशेषकर भारत में आने वाले समय में दहेज और बाल विवाह के विषय में जोरदार जन आंदोलन चलने चाहिए।” (बद्रीनाथ, 51) ममता कालिया मानती हैं कि समाज में

बदलाव आने पर भी पूर्ण बदलाव नहीं हो सकता। कहीं न कहीं उस समय का समाज उस बदलाव को उतनी शीघ्रता से ग्रहण नहीं करता, जिसके कारण वहां संघर्ष करना पड़ता है।

2.4.1.1 लिंग समानता की ओर कदम-

लिंग समानता की ओर कदम बढ़ाने का उदाहरण ममता कालिया ने अपनी कई कहानियों में दिया है। उनकी कहानियाँ, जैसे सात घंटे बाद की, थोड़ा सा प्रगतिशील, बोलने वाली औरत, बाथरूम, वसंत एक तारीख, बड़े दिन की पूर्व साँझ, लैला मजनू, छुटकारा, काली साड़ी, एक पत्नी के नोट्स आदि, लिंग समानता की दिशा में उठाए गए कदमों को दर्शाती हैं। कामकाजी और आत्मनिर्भर होने के कारण उन्हें निरंतर समाज के संपर्क में रहना पड़ता था। इस कारण उन्होंने सामाजिक बदलावों को निकट से समझा और जाना है, जिसका चित्रण वे अपने यथार्थबोध से सफलतापूर्वक कर पाई हैं। उन्होंने समाज के विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे बदलावों का विस्तार से वर्णन अपनी कहानियों में किया है। सामाजिक बदलाव के विषय पर उन्होंने कई कहानियाँ लिखी हैं। पहले हम उनकी कहानियों में पारिवारिक बदलावों के बारे में जानते हैं। समाज की सबसे छोटी, लेकिन महत्वपूर्ण संस्था परिवार में हो रहे बदलावों पर ममता कालिया ने कई कहानियाँ लिखी हैं। पारिवारिक समस्याओं को उन्होंने निकट से समझा है। परिवार समाज और मानव जीवन की आधारभूत संस्था है। मानव जीवन को सुरक्षा और संस्कार परिवार से ही मिलते हैं। सम्पूर्ण सामाजिक संरचना इसी संस्था के ऊपर निर्भर करती है। समाज का निर्माण परिवार से ही होता है। दूसरे किसी समूह या संस्था की अपेक्षा परिवार का समाज पर अधिक प्रभाव होता है।

परिवार की सबसे अहम कड़ी पति-पत्नी होते हैं। ममता कालिया ने अपनी रचनाओं में पति-पत्नी के बदलते रिश्तों पर खूब लेखनी चलाई है। उन्होंने संयुक्त परिवार और एकल परिवार दोनों का चित्रण अपनी कहानियों में किया है। उनकी कहानी बड़े दिन की पूर्व साँझ में उन्होंने दिखाया कि जैसे पहले परिवारों में बहू या पत्नी को घर से बाहर भी नहीं निकलने दिया जाता था, वहीं आज के आधुनिक समाज में पति ही पत्नी को ऐसी पार्टियों में लेकर जाते हैं, जहाँ शराब के साथ अत्यधिक आधुनिक वातावरण होता है। पति शराब में धुत्त हो जाता है और पत्नी किसी और के साथ डांस कर सकती है। यह आज के समाज में बदलाव का ही परिणाम है। इतना ही नहीं, जब नायिका में उस अजनबी

युवक के साथ नृत्य कर रही थी, तो उसने महसूस किया कि- “वह रूप से बात कर झुकने पर मेरी और ऐसे बढ़ा कि उसे अनुमति मिल गई। मैंने रूप की ओर बिल्कुल पत्नियों वाली निगाह से देखा। वह चौथा बड़ा पैग मुँह में उँडेल रहा था। हमारे फ्लोर पर आते ही बेंड शुरू हो गया। वह लड़का खुश था। उसने मोमबत्ती जला ली थी और ढूँढ़-ढूँढ़कर दोस्तों की ओर देख रहा था। जिस समय किसी दोस्त से उसकी आँख मिल जाती, वह मुझे अधिक कसकर पकड़ लेता जैसे बच्चा एक और बच्चे को देखकर अपना खिलौना पकड़ता है।” (कालिया, 10) इस कहानी में यह भी दर्शाया गया है कि आजकल के युवाओं में यदि आपस में कोई 'आप' संबोधन से बात करता है, तो उसे ताज्जुब की नजर से देखा जाता है।

उनकी कहानी उसी शहर में दिखाया गया है कि आज समाज इतना व्यस्त हो गया है कि किसी के पास किसी से मिलने का समय नहीं होता। सभी इतने व्यस्त हैं कि पास होने पर भी कोई किसी से मिल नहीं पाता। कहानी की नायिका मैं जब विवाह के बाद अपने घर आती है, तो उसे सब कुछ बदला हुआ लगता है: “सारी सहेलियाँ यही थीं। पढ़ने में मशगूल। मैं चार-पाँच से मिल आई थी। पर पता नहीं क्यों, वहाँ भी यहाँ जैसा मन नहीं लगा। उन लोगों ने थोड़ी बातें की, पूछी, फिर हम लोग चुप बैठ गए थे। चाय-वगैरा ने सिर्फ कुछ देर को हमारी रक्षा की थी। सुधा और प्रभा घर पर आई पर वे मेरी अपेक्षा आपस में ही ज्यादा बोल रही थीं। मैंने अपने को बहुत छूटा हुआ पाया। यहाँ मैं सबसे व्यस्त और बेफिक्र दिन बिताती थी। सुबह से जो साइकिल लेकर निकलती थी, दिन का पता ही नहीं चलता था। क्लास में हो, कॉलेज की लेडीज रूम में ही दो बज जाते थे।” (कालिया, 55) ममता कालिया ने संयुक्त परिवार की बदलती स्थिति का भी वर्णन अपनी कहानियों में किया है। उनकी कहानी बोलने वाली औरत एक पढ़ी-लिखी स्त्री की कहानी है, जो विवाह के बाद पहले की तरह गऊ बनी बहू की तरह नहीं रहती थी। वह एक शिक्षित नारी है, भले ही उसे इसके लिए संघर्ष करना पड़ता है। वह बेखौफ अपने विचार अपनी सास के सामने रखती है-

“यह झाड़ सीधी किसने खड़ी की?” बीजी ने तिवोरी चढ़ाकर विकट मुद्रा में पूछा। जवाब न मिलने पर उन्होंने मीरा को धमकाया, “इस तरह फिर कभी झाड़ू खड़ी की तो ”वे कहना चाहती थीं कि मीरा को काम से निकाल देंगे, पर उन्हें पता था कि नौकरानी कितनी मुश्किल से मिलती है। फिर मीरा तो वैसे भी हमेशा छोड़ें-छोड़ें मुद्रा में रहती थी।

“मैंने नहीं रखी,” मीरा ने ऐंठकर जवाब दिया।

“मैंने रखी थी, बीजी,” शिखा ने आंगन से आते हुए कहा।

“क्यों रखी थी! तुझे इतना नहीं मालूम कि झाड़ू खड़ी रखने से घर में दलदल आता है, कर्ज बढ़ता है, रोग जड़ पकड़ लेता है।”

“यह तो मैंने कभी नहीं सुना।” “जाने कौन गाँव की है तू! माँ के घर से कुछ भी तो सीख कर नहीं आई। काके का काम वैसे ही ढीला चल रहा है, तू और तेरी ! झाड़ू खड़ी रख, यही सीख है।”

“मेरा ख्याल है झाड़ू गुसलखाने के बीचोबीच भीगती हुई, पसरी हुई छोड़ देने से दलदल आ सकता है। तीलियाँ गल जाती हैं, रस्सी ढीली पड़ जाती है और गंदी भी कितनी लगती है।”

“आज तो मैंने माफ़ कर दिया, फिर कभी झाड़ू खड़ी न मिले, समझी।”

“इस बात में कोई तुक नहीं है बीजी, झाड़ू कैसे भी रखी जा सकती है।”

बीजी झुंझला गई। “कैसी जाहिल और ज़िद्दी लड़की ले आया है काका। लाख बार कहा था इस कुदेसिन से ब्याह न कर, पर नहीं, उसके सिर पर तो भूत सवार था।”

शिखा को हँसी आ गई। बीजी अपने को बहुत समझदार मानती हैं, जबकि अक्सर उनकी बातों में कोई तर्क नहीं होता।

उसे हँसते देखकर बीजी का खून खौल गया।” (कालिया, 80)

विवाह के बाद कामकाजी बहू से घर-परिवार के काम और पूर्ण जिम्मेदारियों की अपेक्षाएँ की जाती हैं।

समाज में एकल परिवार का चलन बढ़ गया है। कामकाजी पति-पत्नी मजबूरी या पसंद से एकल परिवार में रहते हैं, किंतु इससे जीवन में कई समस्याएँ भी उत्पन्न हो गई हैं। घर खर्च का सारा बोझ पति-पत्नी पर पड़ता है, जिसके कारण स्वभाव में चिड़चिड़ापन हमेशा बना रहता है। आपस में लड़ाई-झगड़े बढ़ जाते हैं। ममता कालिया ने एकल परिवारों के कारण होने वाले सामाजिक बदलावों को अपनी कहानियों में दर्शाया है। उनकी कहानियाँ लैला मजनूँ, काली साड़ी, यह जरूरी नहीं, काके दी हट्टी, बातचीत बेकार है, तरक्की को हम ना रोएं, एक जीनियस की प्रेम कथा, तथा मंदिरा आदि एकल परिवारों के कारण समाज में आए बदलावों की यथार्थ कहानियाँ हैं।

“ऐसे ही एक वृद्ध दम्पति के आधी रात में आने पर वह आँखें मलती हुई उठ बैठी थी। पंकज ने जाकर दरवाज़ा खोला। वे उसके बचपन के मोहल्ले में रहने वालों में से थे। रिश्तेदार नहीं, पर रिश्तेदारों से ज्यादा अज़ीज़। मोहल्ले में उनकी पुश्तैनी बेकरी थी, जिसे अब उनके लड़के कुशलतापूर्वक चला रहे थे। लिहाज़ा वे पुण्य कमाने के लिए स्वतंत्र थे। शोभा ने बमुश्किल आँखें खोलीं, कपड़े पहने, ढीली-ढाली एक अदद मैक्सी नहीं, वरन साड़ी-ब्लाउज़ ताकि बाकायदा आँचल सिर पर डालकर पैर छूने की रस्म अदा की जा सके। वैसे उसे समझ नहीं आ रहा था कि तीन लोक से न्यारी नगरी मथुरा, जो स्वयं तीर्थ है, छोड़कर वह दम्पति यहाँ क्या करने आए हैं? किन्तु ऐसे सवाल पूछे नहीं जा सकते थे।” (कालिया, 12)। काली साड़ी’ कहानी में ममता कालिया ने बढ़ती महंगाई के कारण सामाजिक और पारिवारिक जीवन पर आने वाले बदलावों को चित्रित किया है।

2.4.1.2 आर्थिक और सामाजिक वर्गों में परिवर्तन-

ममता कालिया ने अपनी कई कहानियों में लिंग समानता के कदम का उदाहरण प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियाँ जैसे सात घंटे बाद की, थोड़ा सा प्रगतिशील, बोलने वाली औरत, बाथरूम, वसंत एक तारीख, बड़े दिन की पूर्व सांझ, लैला मजनू, छुटकारा, काली साड़ी, एक पत्नी के नोट्स आदि लिंग समानता की दिशा में महत्वपूर्ण कदम दिखाती हैं। आज समाज में सामाजिक और आर्थिक दोनों दृष्टियों से बदलाव स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे हैं। पहले जहां स्त्री-पुरुष की समानता के बारे में सोचा भी नहीं जाता था, वहीं अब स्त्रियाँ समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी सक्रिय भागीदारी निभाती दिखाई देती हैं। पुरुष भी स्त्रियों की उन्नति और प्रगति में उनका पूरा सहयोग देते हैं। आज के आधुनिक समाज में स्त्री-पुरुष मिलकर गृहस्थी और कार्यस्थल पर अपना योगदान देते हैं। ममता कालिया ने अपनी कहानियों में सामाजिक और आर्थिक बदलावों के साथ-साथ स्त्रियों की भूमिका, गृहकार्य और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर स्त्री का चित्रण किया है।

आधुनिक समय में मनुष्य ने कई प्रकार के शौक पाल रखे हैं, जो उसकी जेब से बाहर हो जाते हैं। ममता कालिया अपनी कहानी 'यह जरूरी नहीं' में इस पर विस्तार से लिखती हैं। वे एक उदाहरण देती हैं, "कितनी अच्छी बात है, पर्स अक्सर खाली रहता है, अन्यथा घर अलाबला से भर जाता। नहीं, वह गलत कह रही है। पर्स तो इस कदर भरा

रहता है कि कई बार जिप भी ठीक से बंद नहीं हो पाती। पर उसमें रहते हैं दो-एक मटमैले रुमाल, सड़ियल-सा एक पेन, जूड़े के कांटे, मीठी सुपारी की छोटी-सी डिबिया, कॉलेज के लॉकर की चाबियाँ, साइंस की नवीं कक्षा की पाठ्य-पुस्तकें, डायरी और एक छोटी डिक्शनरी।" (कालिया, 104) कहानी 'बातचीत बेकार है' और 'अट्ठावनवाँ साल' में ममता कालिया ने यह दिखाया है कि बदलते समाज में मानव किस प्रकार कमाई में उलझ कर अपनी पूरी जिंदगी निकाल देता है। इस कारण पति-पत्नी के बीच बातचीत का कोई अर्थ नहीं रह जाता, और वे अपने-अपनों से भी दूर हो जाते हैं। समाज में बढ़ते एकल परिवारों के कारण झगड़े भी बढ़ रहे हैं, और पति-पत्नी एक-दूसरे पर आरोप लगाने से भी नहीं चूकते।

ममता कालिया ने प्रेम विवाह के बढ़ते प्रभाव को भी अपनी कहानियों में उजागर किया है, जैसे पीठ, बोलने वाली औरत, एक पत्नी के नोट्स, थोड़ा सा प्रगतिशील आदि। इन कहानियों में विवाह के पहले और बाद में पुरुषों की मानसिकता को दर्शाया गया है। 'एक पत्नी के नोट्स' की नायिका कविता अपने पति संदीप के व्यवहार से बहुत परेशान रहती थी, क्योंकि उसका व्यवहार हमेशा बदलता रहता था। वहीं, 'थोड़ा सा प्रगतिशील' में विनीत का चेतना के प्रति शक और ईर्ष्या साफ दिखाई देता है, और 'बोलने वाली औरत' में कपिल ने शिखा को सिर्फ घर की सेवा करने वाली बहू और आज्ञाकारी पत्नी के रूप में देखा। उसके विरोध करने पर उसे सिर्फ "बोलने वाली औरत" ही समझा गया। इसके अलावा, बच्चे भी अपनी माँ शिखा से बदतमीजी करते थे, लेकिन उन्हें कुछ नहीं कहा जाता था। आज की सामाजिक और आर्थिक रूप से स्वतंत्र स्त्री आत्मनिर्भर है और स्वयं का जीवन यापन करने में सक्षम है। वह समाज की प्रगति में भी सक्रिय योगदान देती है। ममता कालिया ने अपनी कहानियों में समाज के इन परिवर्तनों को सुंदरता से प्रदर्शित किया है।

2.4.2 प्रमुख कहानियाँ और सामाजिक बदलाव-

ममता कालिया की कहानियाँ, जैसे सात घंटे बाद की, थोड़ा सा प्रगतिशील, बोलने वाली औरत, बाथरूम, वसंत एक तारीख, बड़े दिन की पूर्व सांझ, लैला मजनू, छुटकारा, काली साड़ी, एक पत्नी के नोट्स आदि, सामाजिक बदलावों को दर्शाने वाली कहानियाँ हैं। इन्होंने समाज के बदलते रिश्तों पर भी अपनी लेखनी चलाई है। 'बीमारी' कहानी में समाज के रिश्तों में बदलाव को दर्शाया गया है। समाज के सबसे पवित्र रिश्ते, जैसे भाई-बहन और

भाभी के रिश्तों में भी समय के कारण बदलाव आ गया है। जहाँ पहले भाई-बहन के बीच एक गहरी भावनात्मक बंधन होती थी, वहीं अब भाई बीमारी में अपनी बहन का अस्पताल का खर्चा उठाने से बचता है और भाभी उसकी किडनी की बीमारी को उसके चरित्र से जोड़ कर देखती है- “वास्तव में मैं उसकी पत्नी के साथ मन लगाने के सुझाव से ही घबरा गई थी। मुझे यह भी पता था कि मेरी इस बीमारी को वह संदिग्ध समझ रही थी। उसके ख्याल में कुँआरेपन में किसी भी प्रकार का इन्फेक्शन होना, चाहे किडनी में हो, सरासर दुश्चरित्र होने की निशानी था। एक दिन वह मुझे सोता समझ यह बात अपने पति से कह रही थी। भाई की अपनी समझ शायद ऐसे मौकों पर काम नहीं करती थी, वह चुप ही रहा करता था। इस कहानी में लेखिका ने समाज में बढ़ती संवेदनहीनता पर भी प्रकाश डाला है। बीमारी के शुरू के दिनों में मुझे दफ्तर के पाँच लोग एक साथ देखने आ गए थे, पाँच आदमियों के बैठने की जगह कमरे में नहीं थी। वे सब विवाहित थे, इसलिए पलंग के किनारे बैठना उनके विचार में अनैतिक था। आखिर उन लोगों ने मेज से दवाइयों की शीशियाँ उठा कर मेज खाली की और दो आदमी उस पर पैर लटकाकर बैठ गए। वे सब दफ्तर से सीधे आ गये थे, अपना-अपना बैग और छाता उठाए। उन्हें बराबर चाय की तलब होती रही थी, जिसे वे कमरे की खूबसूरती की बातें कर-कर के टालते रहे थे। उन्होंने रेडियो चलाया था और डिसूजा रसोई से सबके लिए पानी लाया था। मुझे बराबर बुरा लगता रहा था कि उन लोगों ने मेरी बीमारी की बाबत पर्याप्त पूछताछ नहीं की। वे आपस में ही बातचीत करते रहे थे। बिस्तर पर पड़े-पड़े और डॉक्टर के नुस्खे ले-लेकर मुझे अपनी बीमारी खासी महत्वपूर्ण लगने लगी थी। मैं चाहती थी कि विस्तार से बताऊँ कि बीमारी कैसे शुरू हुई और इस बीमारी में सुधार की रफ्तार कितनी धीमी होती है, बावजूद इसके कि अब तक 155 रुपए की दवाइयाँ आ चुकी हैं और 125 रुपये एक्सरे में लग गए।” (कालिया, 34)

सामाजिक बदलाव ने स्त्री के जीवन में भी बदलाव ला दिया है। अब स्त्री कामकाजी होने के साथ बड़े शहरों में अकेली भी रहती है और घर में वित्तीय सहायता भी करती है। विवाह के बाद, वह घर और बाहर दोनों स्थानों पर अपनी कार्यकुशलता साबित कर रही है। बीमारी और जिंदगी सात घंटे की मैं नायिकाएँ बड़े शहर में अकेले रहकर स्वयं अपना जीवन चलने में सक्षम हैं। समाज के बदलते और संवेदनहीन होते रिश्तों को इन कहानियों

में उजागर किया गया है- “छुट्टी के दिन का रंग आत्मीया को कतई पसंद नहीं था। काम वह इतनी फुर्ती से करती है कि घर लाने को कुछ बचता ही नहीं। बस, प्रोड्यूसर-स्कीम आने का यही एक फायदा हुआ है। जिम्मेदारियाँ बंट गई हैं। पहले स्टूडियो और ऑफिस के चक्कर लगाते-लगाते पसीना-पसीना हो जाती थी। अब स्टूडियो से बहुत कम संबंध रह गया है, अपने कमरे में ही अधिक बैठती है। पहले बेशुमार काम था; किसी मंत्री को छींक भी आई नहीं कि जाकर सारे शोक-सभा के रिकार्ड एडवांस में ढूँढ़ कर रखने पड़ते; किसी आर्टिस्ट ने वक्त पर आने से इंकार कर दिया तो पचासों टेलिफोन खड़काने पड़ते; स्क्रिप्ट समय पर न आए तो दर्जनों स्मरण पत्र भिजवाने पड़ते। अब यह सारा सिरदर्द प्रोड्यूसरों के मत्थे। अभी उस दिन कोहली साहब कह रहे थे, “मिस सेन, रेडियो स्टेशन में अब रेडियो का काम हम और स्टेशन का काम आप करती हैं।” (कालिया, 55) आत्मीया को भी महसूस होता है कि उसके पद को प्रोग्राम-एक्जीक्यूटिव नहीं, स्टेशन एक्जीक्यूटिव कहना चाहिए।

ममता कालिया ने ‘छुटकारा’ कहानी द्वारा समाज में प्रेम प्रसंग में आए बदलाव और मानसिकता को दर्शाया है। आधुनिक समाज में दो प्रेमी समय के साथ यदि अपने प्रेमी से ऊब जाते हैं तो वे एक-दूसरे से छुटकारा पाने की मानसिकता भी रखते हैं। कहानी की नायिका में और नायक बत्रा कॉलेज समय में अच्छे दोस्त थे। कॉलेज के कुछ महीने बाद दोनों मिलते हैं तो एक-दूसरे से उदासीन और छुटकारा लेना ही ठीक समझते हैं-“बिना सिगरेट के पूरे होंठों से उसने ‘बाय’ कहा तो मैं गेट की ओर मुड़ गई। वह लाइब्रेरी वाली छोटी सड़क पर पहुँच गया था। अभी शाम बाकी थी। लाइब्रेरी में बैठने वाले सभी विद्यार्थी अभी बाहर टहल रहे थे। हमने एक-दूसरे की ओर दूर से खुलकर देखा। गहरी शाम में बत्रा की क्रीम रंग की बुशर्ट सफेद नजर आ रही थी। उसका कद दूर से औसत से कम लग रहा था। वैगर्ज में उसके शरीर में एक कड़ापन था, वह अब ढीला हो आया था। दिन और रात के इस गाढ़े संधिस्थल में हमें एक-दूसरे की चाल ऐसी लगी जैसे डाक बांट लेने के बाद खाली थैला हिलाते डाकिये की।” (कालिया, 50)

इस तरह हम देखते हैं कि इनकी कहानियों में सामाजिक बदलाव के साथ समाज में नैतिकता का भी पतन चित्रित हुआ है।

2.4.3 सामाजिक बदलाव का संघर्ष-

पाश्चात्य संस्कृति के संपर्क और भौतिकवाद के कारण समाज नैतिक पतन की गर्त में जा रहा है। भारतीय समाज में विवाह से पहले संबंध बनाना और विवाह के बाद पराई स्त्री या पुरुष से संबंध बनाना सामाजिक मान्यताओं के विरुद्ध है, किंतु आधुनिकता की इस दौड़ में लोग इस गर्त में डूबते जा रहे हैं। ममता कालिया की कहानियाँ समाज के इस बदलाव का विस्तार से वर्णन करती हैं। उनकी कहानियाँ जैसे निवेदन, जितना मैं तुम्हारा हूँ, अपत्नी, और लगभग प्रेमिका समाज के बदलाव को प्रदर्शित करने वाली कहानियाँ हैं। 'लगभग प्रेमिका' का एक प्रसंग देखें- "लीला हमारे सामने की कुर्सी पर बैठ गई। वह हमेशा पैर चौड़े करके बैठती थी, हालांकि उसके एक भी बच्चा नहीं हुआ था। उसके चेहरे की बेफिक्री मुझे नापसंद थी। उसे बेफिक्र होने का कोई हक नहीं था। अभी तो पहली पत्नी से प्रबोध को तलाक भी नहीं मिला था। और फिर प्रबोध को दूसरी शादी की कोई जल्दी भी नहीं थी। मेरी समझ में लड़की को चिंतित होने के लिए यह पर्याप्त कारण था।" इस प्रकार के सामाजिक बदलावों से सबसे ज्यादा प्रभाव बच्चों के जीवन पर पड़ा है। बच्चों का जीवन आधुनिक समाज के बदलावों ने एकाकीपन से भर दिया है। समाज के छोटे होते परिवारों, भौतिकवादी जीवन, महत्वाकांक्षाओं, असमित इच्छाओं और पति-पत्नी के झगड़ों ने बच्चों के जीवन को कठिन बना दिया है। इससे बच्चों के मानसिक रोग बढ़ गए हैं। बच्चों के एकाकी जीवन को उजागर करने के लिए लेखिका ने अपनी कहानियों में इस बदलाव को विस्तृत रूप से प्रस्तुत किया है।

आधुनिक समाज के संबंधों के सिकुड़ते दायरों ने समाज में एक नया पारिवारिक बदलाव उत्पन्न किया है। कामकाजी माता-पिता के कारण पारिवारिक विघटन में सबसे ज्यादा बच्चे प्रभावित होते हैं। पहले संयुक्त परिवार में बच्चा स्वयं को सुरक्षित महसूस करता था, और दूसरी माँ या दादी उनके साथ रहती थी। जिस कारण उनका पालन-पोषण अच्छे से होता था, परंतु आजकल जीवन की भाग-दौड़ और पैसों के महत्व के कारण बच्चों की अपेक्षाएँ बढ़ गई हैं। कामकाजी महिलाएं अपने बच्चों को उतना समय नहीं दे पातीं जितना बच्चे के बेहतर विकास के लिए आवश्यक होता है। काम से थके-हारे माता-पिता के पास इतना समय और शक्ति नहीं होती कि वे बच्चों की बातें सुनें, उनके साथ खेलें या उनकी समस्याओं का समाधान करें। इसी कारण बच्चे अपना अधिकतर समय टीवी, कंप्यूटर, वीडियो गेम्स या गलत संगत में बिताने लगे हैं, जिससे उनका एकाकीपन और

बढ़ गया है। ऐसे में बच्चे सुरक्षित भी नहीं हैं। ममता कालिया स्वयं एक कामकाजी महिला रही हैं, और उन्होंने इस समस्या को महसूस किया है तथा इसका वास्तविक चित्रण अपनी कहानियों में किया है। 'प्रेम' कहानी में उन्होंने डॉ. गुप्ता के बच्चे के माध्यम से इस विषय को उजागर किया है। इस संबंध में यह पंक्तियाँ देखें-

"गिनेस डैडी को याद करने लगता, 'डैडी हरदम हमारे साथ रहते थे। मेरे लिए स्कूल बस लगी हुई थी, फिर भी छुट्टी होने पर मुझे स्कूल के फाटक पर इंतजार करते मिलते। किताबों में दिए गए लैसन मुझे बाद में याद होते, डैडी को पहले। सच पूछो तो डैडी मेरे बेस्ट फ्रेंड थे।'

आकार बिगड़ जाता, 'और एक हैं हमारे पापा! जब देखो अस्पताल, क्लीनिक, विजिट, फोन। हमें स्टेशन से लाने और स्टेशन छोड़ने के अलावा जैसे उनका हमसे कोई मतलब नहीं। क्या फायदा पैसों का। रात ग्यारह बजे जब पापा क्लीनिक से उठते हैं, सारे सिनेमा-हाउस, रेस्तरां, बाजार बंद हो जाते हैं। उस समय वह इतने थके होते हैं कि न ठीक से खाना खाते हैं, न बात करते हैं, बस सो जाते हैं। उनसे उस वक्त कहा भी नहीं जा सकता कि कहीं चलो। रात ग्यारह बजे किसी के घर नहीं जा सकते, जब तक कि कोई फीस देकर ही न बुलाए।" (कालिया, 154) यहाँ बढ़ती आकांक्षाओं के पीछे रिश्तों की क्षति को दर्शाया गया है। बच्चों के एकाकीपन का एक मुख्य कारण समाज में तलाक की बढ़ती स्थिति भी है। पहले समाज में बच्चों की परवरिश संयुक्त परिवार में होती थी, लेकिन अब एकल परिवारों का बढ़ता चलन, पति-पत्नी के आपसी झगड़े और फिर तलाक ने बच्चों की स्थिति को दयनीय बना दिया है। ममता कालिया ने एक पति की मौत, सिया, अपत्नी, एक पत्नी के नोट्स आदि कहानियों में तलाक के विषय को उजागर किया है।

आधुनिकता और पाश्चात्य संस्कृति के कारण समाज में आए बदलावों से तलाक के मामलों में वृद्धि हुई है। तलाक के कारण आज समाज में कितने बच्चे मानसिक बीमारियों, अकेलेपन और उदंडता का शिकार हो रहे हैं। ममता कालिया ने समाज में शिक्षा के क्षेत्र में आए बदलाव को भी चित्रित किया है, जिसके कारण बेरोजगारी, भ्रष्टाचार आदि समस्याएं उत्पन्न हुई हैं। उनकी कहानी वसंत एक तारीख, नई दुनिया, लड़के और नायक शिक्षा के क्षेत्र में आए बदलाव और बदलती मानसिकता को दर्शाने वाली कहानियाँ हैं। 'नायक' कहानी में युवा प्रोफेसर के माध्यम से युवाओं को गुमराह कर उन्हें अपने साथ घूमने ले जाता

है। इस कहानी में शिक्षक ही शिष्यों के भविष्य के साथ किस प्रकार खिलवाड़ करते हैं, यह दर्शाया गया है। समाज के भ्रष्ट शिक्षक के आचरण को चित्रित किया गया है। शिक्षा में भ्रष्टाचार को दिखाने और भ्रष्टाचार के कारणों को उजागर करने वाली ममता कालिया की कहानियाँ जैसे लड़के, मुखौटा, नर्क दर नर्क, एक रंगकर्म की उदासी आदि हैं। 'मुखौटा' कहानी में श्रवण एक एम.पी. के जरिए ओ.बी.सी का झूठा प्रमाण पत्र हासिल कर लेता है। इसके माध्यम से ममता कालिया ने आरक्षण के कारण शिक्षा जगत में आई विसंगतियों का वर्णन किया है। नर्क-दर-नर्क में नायक 'जोगिंदर' को अंग्रेजी विषय में केवल अड़तालीस प्रतिशत अंक होने के बावजूद भी नौकरी मिल जाती है। शिक्षा में यह धोखाधड़ी समाज में बेरोजगारी का कारण बनती है। बढ़ते भौतिक जीवन, असमित इच्छाएँ और विलासिता भी समाज में बेरोजगारी और भ्रष्टाचार के कारण बन रहे हैं। 'मुखौटा' कहानी में ममता कालिया ने आधुनिकता के शिकार युवक के जीवन का वर्णन किया है। लेखिका ने इस कहानी में छात्रों के जीवन की आकर्षण की लालसा तथा दोहरे झूठ का चित्रण किया है। ममता कालिया ने बदलते समाज में आरक्षण जैसे मुद्दे पर समाज के तनाव का यथार्थ चित्रण किया है। 'एक रंगकर्म की उदासी' में शिक्षा के क्षेत्र में फैले भ्रष्टाचार के कारण स्कूलों की स्थिति और त्रुटियों को उजागर किया गया है।

आधुनिक समाज के बदलते सामाजिक जीवन ने सिर्फ विद्यार्थियों को ही नहीं, बल्कि शिक्षकों को भी अपने कर्तव्य पथ से विमुख कर दिया है। ममता कालिया ने अपनी कहानी 'नायक' में समाज के शिक्षक वर्ग की बदलती मानसिकता को दर्शाया है। इस कहानी में लेखिका ने अपनी प्रतिभा का दुरुपयोग करने वाले तथा विद्यार्थियों को गुमराह करने वाले शिक्षक का चित्रण किया है। ममता कालिया ने बच्चों, छात्रों और स्त्रियों के साथ-साथ वृद्धों के सामाजिक जीवन में बदलाव को भी अपनी कहानियों में चित्रित किया है। उनकी कहानियाँ जैसे सेवा, किताबों में कैद, अट्ठावनवाँ साल आदि में समाज के बदलते रहन-सहन के बीच बुजुर्गों की दशा का वर्णन किया गया है। कहानी 'सेवा' में नरोत्तम सहाय के तीन बच्चे हैं। दो लड़कियाँ और एक लड़का। जब उनकी पत्नी को ब्रेन हेमरेज होता है, तो वह जब थोड़ा होश में आती हैं, तो अपने बच्चों को पुकारती हैं, लेकिन किसी के पास इतना समय नहीं है कि वे अपनी माँ की देखभाल कर सकें। ये सभी अपने कार्यों में व्यस्त रहते हैं। ममता कालिया ने इस कहानी में समाज की बदलती व्यवस्था के बीच बुजुर्गों की

स्थिति का कटु सत्य उजागर किया है। 'अट्टावनवाँ साल' में इन्होंने सेवानिवृत्त व्यक्ति के समाज में अकेले पड़ने की स्थिति का यथार्थ चित्रण किया है। इस कहानी का नायक ताउम्र अपनी नौकरी में व्यस्त रहता है। सेवानिवृत्त होने के बाद उनके बच्चे न उनके पास रहते हैं, न ही उनके लिए समय होता है। दंपत्ति को अकेले रहना पड़ता है। 'गुस्सा' कहानी में माया के लड़के नौकरी के कारण अलग रहते हैं। माँ-बाप के प्रति उनकी संवेदनशीलता समाप्त हो जाती है। ममता कालिया ने समाज में आए खान-पान के बदलाव को भी अपनी कहानी नमक में चित्रित किया है। इस कहानी में नायिका बीमारी के दौरान अपने आहार में अंडे आदि खाना शुरू करती है और सोचती है कि हम सभी धर्म आदि के नाम पर अपने जीवन में कितने मिथक पालकर रखते हैं। यह कहानी समाज के बदलते जीवन में बदलते स्वभाव को उजागर करती है।

2.4.4 बदलाव की दिशा-

ममता कालिया ने अपनी कहानियों में समाज में हो रहे सामाजिक बदलावों का यथार्थपूर्ण चित्रण किया है। समाज में बदलते भौतिक जीवन, आधुनिकता और असीमित इच्छाओं के कारण संपूर्ण व्यवस्था में बदलाव आ चुका है। आज का समाज ज्यादा पाने की इच्छा में बेचैन और असंतुष्ट रहता है। इच्छाओं की पूर्ति के लिए मनुष्य अपने जीवन मूल्यों और रिश्तों को भी नजरअंदाज करने के लिए तैयार रहता है। ममता कालिया ने बच्चों, छात्रों, स्त्रियों और वृद्धों के सामाजिक जीवन में बदलाव को भी अपनी कहानियों में चित्रित किया है। उनकी कहानियाँ जैसे सेवा, किताबों में कैद, और अट्टावनवाँ साल में समाज के बदलते रहन-सहन के बीच बुजुर्गों की दशा का वर्णन किया गया है। कहानी 'सेवा में' में नरोत्तम सहाय के तीन बच्चे हैं—दो लड़कियाँ और एक लड़का। जब उनकी पत्नी को ब्रेन हेमरेज होता है और वह होश में आने पर अपने बच्चों को पुकारती हैं, तो किसी के पास इतना समय नहीं होता कि वे अपनी माँ की देखभाल कर सकें। वे सब अपने-अपने कामों में व्यस्त रहते हैं। ममता कालिया ने इस कहानी के माध्यम से समाज की बदलती व्यवस्था में बुजुर्गों की स्थिति के कटु सत्य को उजागर किया है। कहानी 'अट्टावनवाँ साल' में ममता कालिया ने सेवानिवृत्त व्यक्ति के अकेलेपन का यथार्थ चित्रित किया है। इस कहानी का नायक ताउम्र अपनी नौकरी में व्यस्त रहता है। सेवानिवृत्त होने के बाद उसके बच्चे न तो

उसके पास रहते हैं और न ही उसके लिए समय निकालते हैं। परिणामस्वरूप दंपति को अकेले रहना पड़ता है। 'गुस्सा' कहानी में माया के लड़के अपनी नौकरियों के कारण अलग रहते हैं। माँ-बाप के प्रति उनकी संवेदनशीलता समाप्त हो जाती है। ममता कालिया ने इस स्थिति का वर्णन कई पंक्तियों में किया है: "उसके दोनों लड़के अपनी बीवियों और नौकरियों में मशगूल थे। उन्हें कभी ख्याल ही नहीं आया कि उनके माँ-बाप अपना वक्त कैसे काटते होंगे। कभी उन्हें ज्यादा लिखते तो वह एक मनीऑर्डर भेज देते" (कालिया, 129)।

'नमक' कहानी में ममता कालिया ने समाज में खान-पान में आए बदलाव को चित्रित किया है। इस कहानी में नायिका बीमारी की अवस्था में अंडे और अन्य खाद्य पदार्थ खाना शुरू करती है और सोचती है कि हम सब धर्म और संस्कृति के नाम पर अपने जीवन में कितने मिथक पाल रखते हैं। यह समाज के बदलते जीवन और स्वभाव को उजागर करती है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया ने अपनी कहानी साहित्य में समाज की संरचना और सामाजिक बदलावों का यथार्थ चित्रण किया है। समाज में भौतिक जीवन, आधुनिकता और असीमित इच्छाओं के कारण समग्र व्यवस्था में बदलाव आ चुका है। आज का समाज ज्यादा पाने की इच्छा में बेचैन और असंतुष्ट रहता है। इच्छाओं की पूर्ति के लिए मनुष्य अपने जीवन मूल्य और रिश्तों को भी नजरअंदाज कर देता है।

ममता कालिया की कहानियों में समाज में हो रहे परिवर्तनों, टकरावों और नई चुनौतियों का स्पष्ट वर्णन मिलता है। वे यह दिखाती हैं कि कैसे आधुनिकता, शिक्षा और बदलते सामाजिक मूल्य पारंपरिक ढांचों को चुनौती दे रहे हैं और समाज के विभिन्न वर्गों, विशेषकर महिलाओं की स्थिति को प्रभावित कर रहे हैं। उनकी कहानियों में स्त्रियों के प्रति पारंपरिक दृष्टिकोण और बदलती सामाजिक अपेक्षाओं का महत्वपूर्ण चित्रण है। वे यह दिखाती हैं कि कैसे महिलाएँ पारंपरिक भूमिकाओं से बाहर निकलकर शिक्षा, रोजगार और सामाजिक स्वतंत्रता की ओर बढ़ रही हैं। उनकी कहानियों में महिलाओं के संघर्ष, आत्मनिर्भरता की चाह और पितृसत्तात्मक ढांचे से मुक्ति की कोशिशों को प्रमुखता दी गई है। यह बदलाव महिलाओं की सोच, उनके जीवन के निर्णयों और समाज में उनकी भूमिका में भी दिखाई देता है।

ममता कालिया पारिवारिक संरचना में हो रहे बदलावों का भी चित्रण करती हैं। उनकी कहानियों में संयुक्त परिवार की परंपरा और नई पीढ़ी की व्यक्तिगत स्वतंत्रता के

बीच टकराव देखा जा सकता है। वे यह दर्शाती हैं कि कैसे बदलती सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ पारिवारिक रिश्तों और भूमिकाओं को पुनर्परिभाषित कर रही हैं। पारंपरिक पारिवारिक मूल्यों में बदलाव और नई सोच का प्रवेश एक महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन के रूप में उभरता है। कुल मिलाकर, ममता कालिया की कहानियाँ समाज में हो रहे बदलावों की गाथा हैं, जो समाज की बदलती धारणाओं, संबंधों और संरचनाओं को एक नई दृष्टि से प्रस्तुत करती हैं। उनकी रचनाएँ पाठकों को यह सोचने पर मजबूर करती हैं कि बदलाव की दिशा कैसी होनी चाहिए और इसमें प्रत्येक व्यक्ति की क्या भूमिका हो सकती है।

संदर्भ सूची

- कालिया, ममता उसका यौवन. लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद 2011, पृ. सं.142.
- कालिया, ममता. काके दी हट्टी. नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2017, पृ. सं. 52.
- कालिया, ममता .छुटकारा. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, पृ. सं. 22, 39, 125, 11, 55, 10, 50, 147
- कालिया, ममता .जाँच अभी जारी है. राजपाल प्रकाशन, वाणी प्रकाशन, 2019, पृ. सं. 11.
- कालिया, ममता .तीन लघु उपन्यास. किताबघर प्रकाशन, शाहदरा दिल्ली 2023, पृ. सं. 80, 117, 154.
- कालिया, ममता .दुःखम-सुखम. लोकभारती प्रकाशन, 2013, पृ. सं.121, 45, 34, 75, 67, 23, 63, 125.
- कालिया, ममता. नरक-दर-नरक. लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली, 2025, पृ. सं. 27, 32.
- कालिया, ममता .निर्मोही. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. सं. 45, 7, 74,129, 143.
- कालिया, ममता. परदेस. साहित्य के खज़ाने से, 2023.
- कालिया, ममता .प्रतिनिधि कहानियाँ. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2023, पृ. सं.135, 123, 78, 83, 117, 80.
- कालिया, ममता. मुखौटा. वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2018, पृ. सं. 78
- कालिया, ममता .मेरी प्रिय कहानियाँ. राजपाल प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, पृ. सं. 104, 32, 69, 88, 59, 35, 27, 12, 97.
- दिनकर, श्री रामधारी सिंह .चार अध्याय. 2012, पृ. सं. 653
- बद्रीनाथ, साक्षात्कार .लमही प्रत्रिका. जुलाई से सितंबर. 2007, पृ. सं.117, 51.

तृतीय अध्याय

ममता कालिया के कहानी साहित्य में सांस्कृतिक संदर्भ और यथार्थबोध

ममता कालिया के कहानी-साहित्य में सांस्कृतिक संदर्भ और यथार्थबोध ऐसी महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं, जो उनके लेखन को विशिष्ट और प्रासंगिक बनाती हैं। उनकी कहानियाँ भारतीय समाज के विविध पक्षों को गहराई से समझने का प्रयास करती हैं तथा यथार्थ को उसके वास्तविक रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनका कहानी-साहित्य भारतीय समाज की सांस्कृतिक विविधता और यथार्थ के जटिल स्वरूपों को समझने का एक प्रभावशाली माध्यम है। उनके लेखन में जीवन की सच्चाइयों को केवल दर्शाया ही नहीं जाता, बल्कि पाठकों को उनसे रूबरू भी कराया जाता है, जिससे वे समाज के विभिन्न पक्षों पर विचार करने के लिए प्रेरित होते हैं। उनकी कहानियाँ समाज का एक ऐसा दर्पण प्रस्तुत करती हैं, जिसमें उसके समस्त रंग और छायाएँ स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित होती हैं।

3.1 सांस्कृतिक आधार

किसी भी देश की संस्कृति वहाँ के लोगों के लिए अत्यंत मूल्यवान होती है। इस संस्कृति के आधार सामाजिक और आर्थिक संसाधन होते हैं, जो जनकल्याण एवं आत्म-चेतना के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सांस्कृतिक आधार से अभिप्राय उस समाज में व्याप्त गुणों, आदर्शों और परंपराओं के समष्टिगत स्वरूप से है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी हमारे पूर्वजों से हमें विरासत में प्राप्त होते हैं। इन मूल्यों की रक्षा श्रद्धा और सम्मानपूर्वक की जाती है तथा इन्हें आगामी पीढ़ियों तक सुरक्षित रूप से पहुँचाया जाता है। संस्कृति एक विकासशील प्रक्रिया है, जो सामाजिक अनुवंश के साथ निरंतर विकसित होती रहती है। यह जीवन जीने की एक शैली है। जो भोजन हम ग्रहण करते हैं, जिन वस्त्रों को धारण करते हैं, जिस भाषा का हम प्रयोग करते हैं तथा जिन देवी-देवताओं की हम आराधना करते हैं—ये सभी हमारी सभ्यता के अंग हैं, और इन्हीं के माध्यम से संस्कृति भी अभिव्यक्त होती है। सरल शब्दों में कहें तो संस्कृति उस पद्धति का प्रतीक है, जिसके आधार पर हम सोचते हैं, अनुभव करते हैं और व्यवहार करते हैं। संस्कृति में ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता,

विधि, नीतियाँ और अच्छी आदतें सम्मिलित होती हैं, जिन्हें मनुष्य समाज के सदस्य के रूप में अर्जित करता है। अतः मनुष्य की आवश्यकताएँ, ज्ञान और विश्वास ही सांस्कृतिक आधार बनाते हैं।

समाज में रहते हुए मनुष्य एक-दूसरे पर परस्पर निर्भर रहता है। अपनी आवश्यकताओं, विश्वासों, ज्ञान और व्यवहार के माध्यम से वह सामाजिक बंधनों एवं नियमों का निर्माण करता है – यही संस्कृति कहलाती है। संस्कृति का निर्माण भाषा, ज्ञान, धर्म, मानदंड, परंपराएँ, रीति-रिवाज, विश्वास, मूल्य और जीवन-शैली जैसी संरचनाओं एवं सामूहिक पहचान के माध्यम से होता है, जो पीढ़ियों से समाज के विभिन्न वर्गों के बीच हस्तांतरित होते हैं। यही तत्व किसी समाज के सांस्कृतिक आधार होते हैं। संस्कृति विभिन्न समाजों और समुदायों में भिन्न-भिन्न रूपों में विद्यमान होती है। प्रत्येक देश की संस्कृति वहाँ के लोगों, धर्म, संस्कारों, मान्यताओं, परंपराओं, रीति-रिवाजों तथा भाषा आदि से निर्मित होती है। उस देश की संस्कृति इन्हीं सामाजिक मानदंडों पर आधारित होती है। संस्कृति की व्याख्या करते हुए प्रसिद्ध कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' लिखते हैं— “संस्कृति जीवन जीने का एक तरीका है, और यह तरीका सदियों के अनुभवों और मूल्यों से निर्मित होकर उस समाज में व्याप्त रहता है, जिसमें हम जन्म लेते हैं।” इसलिए, जिस समाज में हम जन्म लेते हैं या जिसमें जीवन व्यतीत कर रहे हैं, उसकी संस्कृति ही हमारी अपनी संस्कृति होती है। भारतीय संस्कृति में आत्मगुण, संस्कार और आचरण को विशेष महत्त्व दिया गया है। ये गुण अथवा नियम व्यक्ति को आत्मविकास एवं सामाजिक अनुशासन के पथ पर चलने का मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

3.1.1 सांस्कृतिक संदर्भ:

ममता कालिया समकालीन हिंदी कथा-साहित्य की एक महत्वपूर्ण एवं सशक्त स्वर हैं, जिनके लेखन में भारतीय समाज और संस्कृति के अनेक पहलू अत्यंत संवेदनशीलता और गहराई के साथ उजागर होते हैं। वे समाज के स्थूल और सूक्ष्म पक्षों को पकड़ने में दक्ष हैं। उनका साहित्य मात्र कथा नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ का गहन अवलोकन है। उनके पात्र जीवन से उठाए गए हैं— वे न तो आदर्शवादी हैं और न ही पूर्णतः विद्रोही, बल्कि वे हमारे समाज के उसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं जो परंपरा और आधुनिकता की दोधारी

तलवार पर चल रहा है। ममता कालिया अपने पात्रों और उनकी परिस्थितियों के माध्यम से समाज की विविध परतों को उघाड़ती हैं। उनकी कहानियाँ और उपन्यास मध्यम वर्गीय जीवन की जटिलताओं, स्त्री की अस्मिता, पारिवारिक संरचनाओं, सामाजिक मान्यताओं और आधुनिकता से टकराते मूल्यों का चित्रण करती हैं। उनका लेखन विशेष रूप से स्त्री चेतना से ओतप्रोत है, जहाँ एक स्त्री केवल सहनशील नहीं है, बल्कि सजग, सशक्त और निर्णय लेने में सक्षम है। वे अपने कथा-प्रसंगों में भारतीय पारिवारिक ढाँचे, रिश्तों की बुनावट, पीढ़ियों के बीच अंतर, आर्थिक दबाव, वैवाहिक तनाव और सामाजिक ढकोसलों को अत्यंत सूक्ष्मता से प्रस्तुत करती हैं। उदाहरण के लिए, 'बाथरूम', 'थोड़ा सा प्रगतिशील', 'परदेसी', 'काके दी हट्टी' और 'बातचीत बेकार है' जैसी कहानियाँ समाज में व्याप्त जड़ता, विघटन, अकेलेपन और संवेदनहीनता को उजागर करती हैं।

ममता कालिया का लेखन केवल आलोचना नहीं करता, बल्कि वह एक वैकल्पिक दृष्टिकोण भी प्रस्तुत करता है – जहाँ पात्र कभी सहमते हैं, कभी प्रतिकार करते हैं, और कभी आत्म-मंथन में उतर कर स्वयं को पुनः परिभाषित करते हैं। उनकी भाषा सरल होते हुए भी प्रभावशाली है, और उनकी शैली व्यंग्यात्मक होते हुए भी गंभीर है। इस प्रकार, ममता कालिया का लेखन भारतीय समाज और संस्कृति का एक जीवन्त दर्पण है – जिसमें परंपरा, बदलाव, संघर्ष और संभावनाओं के अनेक प्रतिबिंब स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। वे नारी जीवन की त्रासदी को केवल भावुक होकर नहीं, बल्कि ठोस सामाजिक संदर्भों में रखकर देखती हैं। उनके साहित्य में संस्कृति की छवियाँ केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि पात्रों के निर्णयों और भावनाओं का निर्धारक तत्व बनकर उभरती हैं।

3.1.1.1 परंपरा और आधुनिकता का संघर्ष:

ममता कालिया की कहानियों में यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि भारतीय समाज में परंपरागत मूल्यों और आधुनिकता के बीच गहन संघर्ष विद्यमान है। वे इस संघर्ष को न केवल बाहरी स्वरूप में, बल्कि आंतरिक मानसिक द्वंद्व के रूप में भी चित्रित करती हैं। ममता कालिया स्त्री के आधुनिक, शिक्षित और आत्मसजग रूप को सामने लाती हैं, जो अपने अधिकारों के प्रति सचेत और सजग है। वह स्त्री-विरोधी मान्यताओं एवं पुरुष वर्चस्व का सशक्त विरोध करती हैं। इनकी कहानियों की कई नारी पात्र अपनी स्वतंत्रता

की रक्षा हेतु अविवाहित रहने का निर्णय लेती हैं, तो विवाहित स्त्रियाँ भी अपने प्रति होने वाले शोषण का प्रतिरोध करती दिखाई देती हैं। ममता कालिया ने अत्यंत संवेदनशीलता के साथ स्त्री-मन की गहराइयों को उजागर करने का प्रयास किया है। उनकी कहानियों के पात्र परंपरा और आधुनिकता के बीच सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास करते दिखाई देते हैं। 'बाथरूम' कहानी की नायिका कांता एक पढ़ी-लिखी, जागरूक स्त्री है, जो अपने अधिकारों से परिचित होते हुए भी परिवार और बच्चों के प्रति सेवा, दया और स्नेहभाव बनाए रखती है। वहीं, 'थोड़ा सा प्रगतिशील' की नायिका चेतना आधुनिक विचारधारा वाली है, परंतु अपने पति के विरोध के बावजूद उसमें सम्मान भाव बनाए रखती है। वह एक गरीब रिक्शेवाले को ठंड में आश्रय और गर्म कपड़े देती है— जो उसके भीतर मानवीय संवेदना की स्पष्ट झलक प्रस्तुत करता है।

'परदेसी' कहानी में ममता कालिया ने देश और प्रदेश के जीवन-संघर्ष का यथार्थ चित्रण किया है। नीरद को अपने देश पर गर्व है। वह रिचर्ड से कहता है— "मैं तो तभी जानता था कि रोटी के लिए कोई अपनी मिट्टी नहीं छोड़ता। मेरा काम लिखने-पढ़ने का है, शोहरत और बदनामी जो मिलनी है, यहीं मिले। सात समुंदर पार चला गया तो कौन सुनेगा मेरी आवाज़? मेरे शब्दों की सारी खुशबू निकल जाएगी। रिचर्ड उत्तर देता है— "तुम्हारे भाई को इसका एहसास है। अभी तुम्हारे घर में तीन पीढ़ियाँ एक साथ बैठकर खाना खा रही थीं। यह दृश्य देखे मुझे बरसों हो गए हैं— जब बच्चे अपने माता-पिता के सामने आज्ञाकारी बनकर बैठते हैं। तीन पीढ़ियाँ एक छत के नीचे प्रेमपूर्वक एकत्रित थीं, कहीं कोई तनाव नहीं। तुम्हारे बच्चों को एक सामान्य, स्वस्थ बचपन मिल रहा है — यह बहुत बड़ी बात है। इसे कभी हल्के में मत आंकना। रिचर्ड अगले दिन बनारस चला गया, लेकिन जीवनभर के लिए एक गहरी सीख दे गया। वह अलमस्त परदेसी मात्र सैलानी नहीं था, बल्कि संवेदना का वाहक था।" (कालिया, 78) लेकिन आज के समय में इन परंपरागत मूल्यों को महत्व देने का अवसर बहुत कम लोगों के पास बचा है। आधुनिकता और जीवन की तीव्र गति ने समाज को अत्यंत व्यस्त बना दिया है। स्त्री और पुरुष दोनों ही अपने-अपने दायित्वों में इतने उलझे हैं कि उनके पास न तो बच्चों और बुजुर्गों के लिए समय है और न ही स्वयं के लिए— यहाँ तक कि संवाद के लिए भी समय नहीं बचा।

ममता कालिया की कहानियाँ जैसे— ‘बातचीत बेकार है’, ‘काके दी हट्टी’, ‘प्रेम कहानी’, ‘बीमारी’, ‘एक पति की मौत’, ‘गुस्सा’ आदि— आधुनिक जीवन की इसी व्यस्तता और संवेदनहीनता को बारीकी से चित्रित करती हैं। ‘बातचीत बेकार है’ कहानी में पति-पत्नी दोनों अपने कार्यों में इतने व्यस्त हो जाते हैं कि वे एक-दूसरे से संवाद तक नहीं करते। धीरे-धीरे स्थिति यह हो जाती है कि उन्हें आपसी संवाद में भी रुचि नहीं रहती। यह पारंपरिक मूल्यों के क्षरण और व्यस्तता से उपजे मानसिक शून्य की स्थिति है। बच्चे भी रोजगार की तलाश में अन्य शहरों में रहने को विवश हैं। जीवन की आपाधापी में, चाह कर भी वे एक-दूसरे को समय और सहयोग नहीं दे पाते। ‘काके दी हट्टी’ की ‘पिंकी’ एक कॉल सेंटर में रात की शिफ्ट में कार्यरत है, जबकि ‘काके’ की दुकान सुबह से शाम तक चलती है। इस कारण दोनों के बीच संवाद और संबंध सीमित रह जाते हैं। ‘पिंकी’ की सास को उसकी रात की झूटी पर आपत्ति होती है। यह सब मिलकर ‘पिंकी’ को ‘काके’ का घर छोड़कर अपने मायके जाने को विवश कर देता है। यह कहानी आधुनिक व्यस्तता से उत्पन्न वैवाहिक तनाव को सजीव रूप में प्रस्तुत करती है। ‘प्रेम कहानी’ उपन्यास में ‘जया’ और ‘गिनेस’ का प्रेम-विवाह तो होता है, लेकिन गिनेस की व्यस्तता के कारण वह जया को पर्याप्त समय नहीं दे पाता, जिससे जया भीतर ही भीतर टूटने लगती है।

3.1.1.2 महिला जीवन की वास्तविकताएँ:

ममता कालिया की कहानियाँ प्रायः महिलाओं की स्थिति और उनके संघर्षों को उजागर करती हैं। वे भारतीय परिवार, विवाह, मातृत्व और महिलाओं की स्वायत्तता से जुड़े मुद्दों को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती हैं। भारतीय समाज में स्त्री की दशा सदैव दयनीय रही है। मर्यादा, कर्तव्यों और संस्कारों के नाम पर उसका निरंतर शोषण होता रहा है। ममता कालिया ने अपने कथा-साहित्य में आधुनिक, शिक्षित स्त्री का चित्रण किया है, जो घर और कार्यक्षेत्र— दोनों में अपनी दक्षता सिद्ध करने के बावजूद पारिवारिक बंधनों और परंपरागत संस्कारों में जकड़ी रहती है। कामकाजी होने के बाद भी स्त्री को घर-परिवार और बच्चों के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना पड़ता है, जबकि पुरुष प्रायः पूर्णतः स्वतंत्र होता है। महिलाएँ केवल विवाह के बाद ही नहीं, बल्कि विवाह से पहले भी अपने माता-

पिता और परिजनों के दुर्व्यवहार को झेलती हैं, और विवाहोपरांत पति तथा ससुराल वालों से भी उन्हें अपेक्षित सम्मान नहीं मिलता।

ममता कालिया की कहानी 'मनुसाबी' की नायिका उषा, बचपन से ही उपेक्षित जीवन जीती है। विवाह के बाद भी उसे पति और बच्चों से आदर-सम्मान प्राप्त नहीं होता। वहीं, 'एक पति की मौत' की नायिका सिया, प्राध्यापिका होते हुए भी अपने पति नमन की उपेक्षा की शिकार है। नमन, सिया को बिना किसी ठोस कारण के तलाक दे देता है और अपनी बेटी के भविष्य की चिंता भी नहीं करता। सिया की सास तलाक के बाद भी उससे पत्नी-धर्म निभाने की अपेक्षा करती है। सिया अकेले ही अपनी बेटी का पालन-पोषण करती है, लेकिन विडंबना यह है कि बेटी भी उसे अपेक्षित सम्मान नहीं देती। 'दर्पण' कहानी की नायिका, एक सुंदर एवं शिक्षित स्त्री होने के बावजूद अपनी छोटी-सी इच्छा – एक बड़े दर्पण में स्वयं को देखने की – को भी पूर्ण नहीं कर पाती। उसका पति इसे फिजूलखर्ची मानते हुए नकार देता है। इस प्रकार ममता कालिया अपनी कहानियों के माध्यम से समाज की पितृसत्तात्मक मानसिकता और स्त्री की दयनीय दशा को गहरी संवेदनशीलता से उजागर करती हैं, और पाठकों के समक्ष एक मौन किंतु गंभीर प्रश्न छोड़ जाती हैं। 'प्रेम कहानी', 'बिटिया', 'एक पत्नी के नोट्स', 'वसंत सिर्फ एक तारीख' जैसी कहानियाँ भी स्त्री जीवन की इन्हीं यथार्थपूर्ण विडंबनाओं को प्रकट करती हैं। घर और नौकरी, दोनों स्थानों पर स्त्री को निरंतर संतुलन बनाए रखना पड़ता है। स्वयं नौकरीशुदा होने के कारण ममता कालिया ने कामकाजी स्त्रियों की समस्याओं को निकट से अनुभव किया है, जिसका सजीव और सशक्त चित्रण उन्होंने अपने कथा-साहित्य में किया है। एक स्त्री रचनाकार होने के नाते ममता कालिया स्त्री-जीवन की संवेदनाओं, संघर्षों और मनोविज्ञान को अत्यंत गहराई और मार्मिकता के साथ समझती हैं। उनके साहित्य में नारी केवल एक पात्र नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की संभावना बनकर उभरती है।

3.1.1.3 भाषाई विविधता:

ममता कालिया की कहानियों की भाषा में लोकजीवन, बोलचाल की शैली और सांस्कृतिक विविधता का समावेश होता है, जो उनके लेखन को प्रामाणिकता प्रदान करता है। उनकी कहानियों में भाषा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह भाषा न केवल सहज और

स्वाभाविक है, बल्कि समाज की वास्तविकताओं को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने में भी सक्षम है। उनकी शैली में गहराई, सजीवता और स्पष्टता है, जो पाठक को कहानी के परिवेश, पात्रों और भावनाओं से जोड़ देती है। ममता कालिया की भाषा जीवन के यथार्थ और समाज की ज़मीनी सच्चाइयों को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम है। वे शब्दों की पारखी हैं और उनका भाषा-ज्ञान उच्च कोटि का है। वे अपने साहित्य में विभिन्न शैलियों का प्रयोग करती हैं तथा प्रसंगानुकूल भाषा का चयन करती हैं। उनकी रचनाओं की भाषा में सरलता, सुंदरता, वास्तविकता और रोचकता का सुंदर समन्वय है। उनकी कहानियाँ जैसे सीट नंबर छह, छुटकारा, बीमारी, बड़े दिन की पूर्व संध्या, आत्मरक्षा, पच्चीस साल की लकड़ी, अलमारी, प्रिय पाक्षिक आदि आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई हैं। वहीं शहर-शहर की बात में उन्होंने वर्णनात्मक शैली का प्रभावी प्रयोग किया है। उदाहरणस्वरूप—“किराएदार यहाँ की सुविधाओं का रोना रोते, लिफ्ट के आए दिन खराब रहने पर जीते चेंबर में ‘लीज़ मीन’ की धमकी देते, फिर भी साल दर साल यहीं जमे रहते।”

ममता कालिया ने अपने कथा-साहित्य में प्रचलित मुहावरों और लोकोक्तियों का सुंदर प्रयोग किया है। इनके प्रयोग से रचना की प्रवाहमयता और सौंदर्य में वृद्धि होती है। उन्होंने सहजता से इन्हें अपनी कहानियों में शामिल किया है। कई कहानियों के शीर्षक ही मुहावरों पर आधारित हैं, जैसे— बाल-बाल बचने वाले। उन्होंने कहानियों में भी मुहावरों का सटीक प्रयोग किया है, जैसे— “आँखें चकराई हुई लग रही थीं”, “मिट्टी के माधो”, “मिर्चे लग गई”, “नाक पर मक्खी नहीं बैठने देना” आदि। ममता कालिया ने कहानियों में अंग्रेज़ी शब्दों का भी उपयुक्त प्रयोग किया है। विशेषतः उच्च शिक्षित पात्रों के संवादों में अंग्रेज़ी वाक्यों का प्रयोग स्वाभाविक रूप से किया गया है। उनके पति रविंद्र कालिया पंजाबी थे, जिससे उन्हें पंजाबी भाषा और संस्कृति का भी अच्छा ज्ञान है। इसीलिए उनकी कहानियों में पंजाबी पृष्ठभूमि के पात्र पंजाबी शब्दों और वाक्यांशों का प्रयोग करते हैं, जैसे— “हाय नी मैं सदके जावाँ”, “काके हुण तू फड़ाई सौदा”, “तैनू की दिसदा पैया” आदि। उनकी कहानी सफ़र में मैं बिहार जा रही रेलगाड़ी का वर्णन है, जिसमें पात्रों के माध्यम से भोजपुरी भाषा का प्रयोग किया गया है, जैसे— “आप एसिन बैठे ना?”, “दर्द होत बा”, “सप्तमी पूज गई तो फाग डलेगा न”, “हियाँ से लुकाएगा, उहाँ से भी लुकाएगा” आदि।

ममता कालिया बचपन में अपने दादा-दादी के पास मथुरा जाया करती थीं। इस कारण उन्हें ब्रज भाषा का भी अच्छा ज्ञान है। उन्होंने दुःखम-सुखम उपन्यास में ब्रज भाषा का प्रयोग पात्रों की पृष्ठभूमि-आगरा और मथुरा-के अनुसार किया है। जैसे- “जीजी यो कोई रोकनेवाली चीज़ तो है नायै”, “कहाँ फरागत कराएँ”, “इत्ता सरंजाम हो तो यह महरानी नहाएँ”, “नक चढ़े होएँ”, “बैठने देवै”, “ब्यालू” आदि। उनकी कहानी ‘निर्मोही’ में भी दादी द्वारा सुनाई गई लोककथा ब्रज भाषा में प्रस्तुत की गई है- “सात दिना रानी फूलमती अपना सिर सातों दरबज्जों पे पटकती रही। माथा फूटकर खून-खच्चर हो गयी। और सूरसेन नायँ पसीजौ।” इस प्रकार स्पष्ट है कि ममता कालिया ने अपनी रचनाओं में विविध शैलियों और भाषाओं का प्रयोग करके न केवल साहित्य को सजीव रूप प्रदान किया है, बल्कि भाषा के माध्यम से पाठकों को भी अपनी ओर आकर्षित करने में सफलता प्राप्त की है।

3.1.2 यथार्थबोध:

ममता कालिया के साहित्य में यथार्थबोध की एक अत्यंत स्पष्ट और सशक्त छाप दिखाई देती है। उनकी कहानियाँ केवल कल्पना या भावुकता की उड़ान नहीं हैं, बल्कि समाज के कठिन, जटिल और अक्सर उपेक्षित पहलुओं को उभारने का प्रयास हैं। वे अपने लेखन में जीवन की उन विडंबनाओं को उजागर करती हैं, जिनसे आम व्यक्ति प्रतिदिन जूझता है, लेकिन जिन पर अक्सर साहित्य में ध्यान नहीं दिया जाता। उनकी कहानियों में नारी के संघर्ष, सामाजिक दबाव, आर्थिक असमानता, रिश्तों की जटिलता, मध्यवर्गीय जीवन की विसंगतियाँ और आधुनिकता की ऊपरी चमक के भीतर छिपे हुए अंतर्विरोध- सभी को बड़ी संजीदगी और निर्भीकता के साथ प्रस्तुत किया गया है। वे अपने पात्रों के माध्यम से इस बात को प्रमाणित करती हैं कि समाज में बदलाव के तमाम दावे होने के बावजूद, आम आदमी आज भी असुरक्षा, हाशियाकरण, मानसिक द्वंद्व और असमंजस के जाल में फंसा हुआ है।

ममता कालिया के कथा-संसार में महिलाएँ केवल करुणा की पात्र नहीं हैं, बल्कि वे अपने जीवन की विसंगतियों का मुकाबला करती हुई, आत्मसम्मान और पहचान की तलाश में जुटी हुई स्त्रियाँ हैं। उनकी कहानी छुटकारा एक विवाहित महिला के मानसिक द्वंद्व और सामाजिक अपेक्षाओं के बीच फँसी उसकी चेतना को दर्शाती है, तो वहीं आत्मरक्षा जैसे

कथा में स्त्री की सामाजिक असुरक्षा और प्रतिरोध का चित्रण है। ये कहानियाँ पाठक को सोचने पर विवश करती हैं कि आज का समाज बाहर से भले ही आधुनिक दिखे, भीतर से अभी भी परंपराओं, पितृसत्ता और छल-प्रपंचों से जकड़ा हुआ है। उनकी भाषा में भी यथार्थ का सौंदर्य है— वे बिना अलंकरण या आडंबर के, साधारण शब्दों में गहरी बातें कह जाती हैं। घटनाएँ और पात्र इतने वास्तविक होते हैं कि लगता है जैसे ये हमारे आसपास ही जी रहे हों। वे किसी आदर्शवादी दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि एक सजग, संवेदनशील और अनुभव-संपन्न दृष्टिकोण से समाज को देखती हैं और उसे अपनी लेखनी से विश्लेषित करती हैं। इस प्रकार ममता कालिया का साहित्य एक दस्तावेज़ की तरह है, जो समाज की बदलती मानसिकता, स्त्री की चेतना, और जीवन की विडंबनाओं का जीवन्त चित्र प्रस्तुत करता है। उनके यथार्थबोध से युक्त लेखन न केवल सामाजिक विमर्श को समृद्ध करता है, बल्कि पाठकों को आत्ममंथन की ओर भी प्रेरित करता है।

3.1.2.1 आर्थिक और सामाजिक असमानता:

ये कहानियाँ समाज में व्याप्त आर्थिक और सामाजिक असमानताओं को उजागर करती हैं तथा यह दर्शाती हैं कि किस प्रकार ये असमानताएँ व्यक्तियों के जीवन को गहराई से प्रभावित करती हैं। भारतीय समाज में विविध प्रकार की सामाजिक विषमताएँ पाई जाती हैं, और एक यथार्थवादी रचनाकार अपने परिवेश से प्रेरणा ग्रहण करता है। यही कारण है कि ममता कालिया की कहानियों में समाज की विभिन्न अंतर्विरोधी परतें स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। यह सामाजिक विषमता न केवल व्यक्ति की सामाजिक स्थिति को निर्धारित करती है, बल्कि उसकी आर्थिक दशा को भी प्रभावित करती है। उनकी कहानी 'नरक-दर-नरक' इसका सशक्त उदाहरण है, जिसमें नायक योगेंद्र साहनी को नौकरी के चयन में जातिगत और सामाजिक पक्षपात का सामना करना पड़ता है। चयन प्रक्रिया में दो वैश्य भाइयों का प्रभाव हावी है और योग्यता की बजाय सजातीयता को प्राथमिकता दी जाती है।

ममता कालिया ने इस प्रसंग का चित्रण अत्यंत सूक्ष्मता और व्यंग्यात्मक शैली में किया है। कहानी में योगेंद्र को इसलिए चयनित किया जाता है क्योंकि वह दो प्रभावशाली उम्मीदवारों के बीच में फँस जाता है। पहले नंबर पर लक्ष्मण देशमुख था, जिसे प्रिंसिपल सजातीय होने के कारण लेना चाहता था, और तीसरे नंबर पर रंजना पारीख थी, जिसे

मैनेजर अपनी जाति की होने के कारण नियुक्त करना चाहता था। योगेंद्र इन दोनों के बीच द्वितीय स्थान पर होने के कारण मजबूरीवश चयनित कर लिया जाता है। यह पूरा प्रसंग समाज में व्याप्त जातिवाद, सिफारिश, और अवसरों की असमानता जैसे मुद्दों को उजागर करता है। ममता कालिया ने इस कथा के माध्यम से यह संकेत दिया है कि आज भी समाज में योग्यता के स्थान पर जातिगत समीकरण और सामाजिक संबंधों को अधिक महत्व दिया जाता है।

3.1.2.2 शहरी और ग्रामीण जीवन का चित्रण:

ममता कालिया की कहानियों में शहरीकरण के प्रभाव और ग्रामीण जीवन की चुनौतियों का सजीव चित्रण मिलता है। वे दोनों ही परिवेशों के यथार्थ को समान रूप से उजागर करती हैं। उनकी कहानियों में ग्रामीण पात्रों की स्थिति का चित्रण सरल, सहज और आत्मीय भाषा में मिलता है। 'निर्मोही' कहानी की दादी की कुछ पंक्तियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं—

"मैं दादी के पैर दबाती। उन्हें थपकती कि किसी तरह वे सो जाएँ। सुबह सौंताल की ओर दादी के साथ जाते हुए कहती—'दादी, इस बार तुम हमारे साथ दिल्ली चलो।'

दादी निहाल हो जातीं। मुझे कमर से चिपका कर मेरे बिखरे बालों पर हाथ फेरतीं—'बिल्कुल बाप पे गयौ है मेरौ लटूरबाबा। मैं जानूं, बिदाभूसण भी मुझे हुड़कता होगौ। जब बारहवीं में आगरे पढ़े था, रात में मेरी पाटी पर आकर पूछै—'जीजी, च्यों रो रई हो?"

मैं चुप।

"कान में दरद है?"

मैं फिर भी चुप।

"दाँत में दरद है?"

तब भी चुप, बस आँखें भीगीं।

"पैर दबा दूँ?"

"नई।"

"जीजी, सुबह तुम्हें डाक्टर के लै चलूँगा, चुप हो जाओ।"

तभी तेरे बाबा अपने तख्त पे से चिल्ला उठे— "या के लिए तेरे पास डागडर की फीस है तो मेरे को दे दीजौ, कातिक में आदत भरनी है, काम आएगी।"

बिद्धाभूषण में ऐसी खटास भर जाती कि अगले ही रोज़ वह अपना बिस्तरा गोल कर लेती।” (कालिया, 138)

यह संवाद न केवल ग्रामीण स्त्री की संवेदनशील स्मृतियों को उजागर करता है, बल्कि परिवार, गरीबी और मानवीय संबंधों की कड़वाहट को भी बहुत आत्मीयता से सामने लाता है। ममता कालिया शहरी जीवन का भी अत्यंत सटीक और चित्रात्मक वर्णन करती हैं। उनके वर्णन में शहरी जीवन की गति, संवेदनहीनता और सौंदर्य सभी एक साथ समाहित रहते हैं। उदाहरणस्वरूप देखिए-

“धूप और भी तेज़ लग रही थी। इस लिहाज से यह शहर कपड़े धोने के लिए सर्वोत्तम था। बम्बई में ऐसी तीखी धूप नहीं पड़ती थी। वहाँ अक्सर मौसम ‘फिल्मी’ हो जाता। यह बात और थी कि रेल और बसों के लिए भागते रहने के कारण हम उस मौसम को कभी फुर्सत से देख ही नहीं पाए।

इस शहर का असली चरित्र रात में उभरता था, जब हमारे घर के सामने वाली सड़क से तरबूज़, खरबूज़े और लौकियाँ लादे ऊँटों की कतारें गुजरती थीं। ऊँट की चाल इतनी कलात्मक और लयबद्ध होती है—यह मैंने अब जाना। उनके पैरों और गले में बँधे घुँघरू धीमी ताल में बजते थे, जैसे कोई मणिपुरी नृत्य हो रहा हो।

उस रोज़ हम घूमते-घूमते चर्च की ओर निकल गए थे। सुरेन्द्र ने पूछा—‘तुमने कौन-सा परफ्यूम लगाया है, बहुत महक रहा है।’ (कालिया, 82) इस प्रकार ममता कालिया के साहित्य में जहाँ एक ओर ग्रामीण स्त्रियों की सादगी, संघर्ष और आत्मीय संबंधों की झलक मिलती है, वहीं दूसरी ओर शहरी जीवन की दौड़, संवेदना की कमी और भीतर छिपे सौंदर्य का सजीव चित्रण भी दिखाई देता है।

3.1.2.3 मध्यवर्गीय जीवन की जटिलताएँ:

ममता कालिया के साहित्य में भारतीय मध्यवर्गीय जीवन की कठिनाइयों, आशाओं और निराशाओं का सजीव चित्रण देखा जा सकता है। वे अपने पात्रों के माध्यम से उनकी मनोवैज्ञानिक स्थितियों और सामाजिक दबावों का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती हैं। उन्होंने मध्यवर्ग की विडंबनाओं, हताशा और पाखंड को गहरी संवेदनात्मक दृष्टि से उजागर किया है। उनकी कहानियाँ छोटे-छोटे घटनाक्रमों के माध्यम से जीवन के यथार्थ को प्रभावशाली

रूप में प्रदर्शित करती हैं। 'काली साड़ी' कहानी में उन्होंने मध्यवर्गीय जीवन की छोटी-छोटी खाहिशों को गहरी विडंबना के रूप में उकेरा है। 'लड़के' कहानी में उन्होंने अपने लक्ष्य से भटके हुए मध्यवर्गीय नौजवानों का चित्रण किया है, जो आगे चलकर बेरोजगारी का कारण बनते हैं।

ममता कालिया ने अपनी कहानियों में यह भी दर्शाया है कि मध्यवर्गीय समाज में स्त्रियों की स्थिति अधिक दयनीय और जटिल है। 'बीमारी' कहानी में किडनी की बीमारी को चरित्र से जोड़कर देखा गया है, जहाँ पढ़ी-लिखी स्त्री होने के बावजूद उसे उत्पीड़न और अपमान सहना पड़ता है। स्त्री पर घर, बच्चे और परिवार की समस्त जिम्मेदारियाँ होती हैं। वह सारा दिन घर के कामों और बच्चों में उलझी रहती है, फिर भी पति की नाराजगी का शिकार बनती है। इसी प्रकार 'अपत्नी' कहानी में ममता कालिया ने पुरुष मानसिकता का पर्दाफाश किया है, जिसमें पात्र प्रबोध अपनी पत्नी को तलाक दिए बिना दूसरी स्त्री के साथ रहने लगता है। 'एक पत्नी के नोट्स' में संदीप अपनी पत्नी को इस हद तक प्रताड़ित करता है कि वह घर छोड़ने पर मजबूर हो जाती है। ममता कालिया ने इन रचनाओं के माध्यम से न केवल स्त्री की स्थिति का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है, बल्कि परिवार में उपजे आपसी संघर्षों की कटुता को भी गहराई से उजागर किया है।

रिश्तों में आपसी संवेदना, सहनशीलता और मर्यादा का हास हो रहा है। लोग धैर्य खो बैठते हैं और उसका स्थान क्रोध ले लेता है, जिसके कारण रिश्तों में विघटन, झुंझलाहट तथा मानसिक तनाव उत्पन्न होता है। यही कारण है कि परिवार बिखरने लगते हैं और उसका सीधा असर बच्चों पर पड़ता है। कई बार बच्चों को एकाकी जीवन जीना पड़ता है। तलाक की स्थिति में बच्चे माता या पिता में से किसी एक के स्नेह से वंचित रह जाते हैं, या फिर उन्हें "किस्तों में" देखभाल मिलती है। इसका परिणाम यह होता है कि जिन्हें देश का भविष्य माना जाता है, उन्हीं बच्चों का भविष्य अंधकारमय हो जाता है। बच्चों की मानसिकता विक्षुब्ध, कटु या हिंसात्मक हो सकती है। इन सभी कारणों से उनकी मानसिक स्थिति पर गहरा नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ममता कालिया ने इन पारिवारिक स्थितियों को आधार बनाकर अपनी कहानियों की रचना की है, जिनमें सामाजिक, मानसिक और सांस्कृतिक यथार्थ का गंभीर चित्रण मिलता है।

3.1.3 सांस्कृतिक प्रतीकों और मान्यताओं का उपयोग-

भारत विभिन्न धर्मों, वर्गों, संप्रदायों और भाषाओं का देश है। अतः यहाँ प्रत्येक धर्म और वर्ग की अपनी अलग मान्यताएँ, परंपराएँ और विश्वास हैं। भारत में भगवान के प्रति श्रद्धा, विश्वास, व्रत, त्योहार, रीतियाँ और मान्यताएँ यहाँ की संस्कृति के प्रमुख पहलू हैं। कई बार इन मान्यताओं, रीतियों या विश्वासों में इतनी गहरी श्रद्धा हो जाती है कि यह विश्वास अंधविश्वास या रीतियाँ कुरीतियों का रूप ले लेती हैं। धर्म के नाम पर अनेक अधार्मिक कर्मकांड, आडंबर और अंधविश्वास की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। भारतीय संस्कृति में इस प्रकार के आडंबरों का आना-जाना रहा है। ममता कालिया ने अपनी कहानी साहित्य में भारतीय संस्कृति की इन सभी मान्यताओं, धर्म, रीतियों-कुरीतियों और विश्वासों का विस्तृत चित्रण किया है। इन्होंने अधिकतर हिंदू धर्म और संस्कृति को उजागर किया है। विभिन्न भाषाओं का प्रयोग करते हुए इन्होंने अपनी कहानियों में भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहलुओं का चित्रण किया है। भारतीय संस्कृति में विवाह संस्कार एक महत्वपूर्ण संस्कार माना जाता है। ममता कालिया ने स्त्री-पुरुष संबंध और विवाह संस्कार पर अपने विचार विस्तृत रूप में व्यक्त किए हैं, क्योंकि वे स्वयं भी एक हिंदू परिवार से हैं और उनके पति पंजाबी परिवार से हैं। इस कारण उनका विवाह दो संस्कृतियों का मिलन था। इनकी माँ और दादी पुरानी रीति-रिवाजों को मानने वाली थीं, जबकि इनके पति विवाह के समय बिना रस्मों-रिवाज के कोर्ट मैरिज करना चाहते थे। लेकिन ममता कालिया के कहने पर पूरा विवाह पारंपरिक रीति-रिवाजों के साथ हुआ।

इन्होंने अपनी कहानी साहित्य में भारतीय संस्कृति का विस्तार से उल्लेख किया है और भारतीय सांस्कृतिक समस्याओं को भी अपने लेखन में शामिल किया है। ममता कालिया ने अपनी कहानियों में अंधविश्वास, आडंबर, धार्मिक रूढ़ियाँ, धर्म के नाम पर हिंसा, कुप्रथाएँ आदि का वर्णन किया है। भारतीय संस्कृति में अनेक ऐसी मान्यताएँ हैं जो प्रथा के नाम पर कुप्रथा का रूप ले चुकी हैं। इन मान्यताओं के नाम पर कुछ लोग समाज के कई लोगों, कभी-कभी तो बहुत सारे लोगों को विकट स्थिति में डाल देते हैं। ममता कालिया ने अपने साहित्य में नारी को एक व्यक्तित्व दिया है। मानव मूल्यों का आधार व्यक्ति विशेष की इच्छा, अनुमान, निर्णय बोध, क्षमता और संवेदना है। इनके कहानी साहित्य में नारी की आज़ादी और आत्म-सम्मान के लिए संघर्ष का संदेश मिलता है।

इन्होंने नारी के संघर्ष और उसकी छटपटाहट को मार्मिक प्रसंगों के माध्यम से प्रदर्शित किया है। ममता कालिया की कहानियों में सांस्कृतिक आधार कई पहलुओं से देखा जा सकता है। उन्होंने अपनी कथा साहित्य में धार्मिक आडंबरों और अंधविश्वास को उजागर किया है। इन्होंने सामाजिक और पारिवारिक उत्तरदायित्वों के बीच पति-पत्नी के संबंध को चित्रित किया है। ममता कालिया ने अपने साहित्य में नारी को एक व्यक्तित्व देने के साथ-साथ नारी के संघर्ष, उसकी छटपटाहट और निर्णय लेने की स्वतंत्रता को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। इनके कहानी साहित्य में कामकाजी स्त्री के जीवन संघर्ष और पारिवारिक तनाव को भी चित्रित किया गया है। इन्होंने पारिवारिक संघर्ष, तनाव, अजीबपन और अलगाव की स्थिति को दर्शाया है। इनके साहित्य में दांपत्य संबंधों के विघटन के विभिन्न कारणों का चित्रण हुआ है। ममता कालिया ने अपने कहानी साहित्य में नारी को अपमानित करने वाले लोगों के प्रति नारी की प्रतिक्रिया और समाज की विकृत मानसिकता को भी प्रदर्शित किया है। इनके साहित्य में नारी को अपने व्यक्तित्व को उजागर करने की कोशिश करते हुए दिखाया गया है। इन्होंने स्त्री-पुरुष संबंध, नारी चेतना, दांपत्य संबंधों की कड़वाहट आदि समस्याओं को उजागर किया है। आधुनिकतावाद के कारण बदलते विवाह संस्कार, बेमेल विवाह और पुरुष की बदलती मानसिकता जैसे मुद्दों को भी अपनी कहानियों में चित्रित किया है।

ममता कालिया ने अपने कहानी साहित्य में सांस्कृतिक संदर्भ से समाज के यथार्थ को अपने यथार्थबोध के माध्यम से सफलतापूर्वक चित्रित किया है। वे समाज के सांस्कृतिक पहलुओं को अपने यथार्थबोध से परखने की क्षमता रखती हैं। उनकी कहानियों में भारतीय संस्कृति के दर्शन मिलते हैं, और ये कहानियाँ सांस्कृतिक आधार पर लिखी गई हैं। ममता कालिया एक संवेदनशील साहित्यकार हैं। समाज की धार्मिक रूढ़ियों और परंपराओं के यथार्थ का बोध रखते हुए इन्होंने अपने साहित्य में धार्मिक परिस्थितियों का उल्लेख किया है। उनकी कहानियों के पात्रों के संवाद इनकी स्वयं की सोच और विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। 'मेला' और 'लड़के' कहानियों में धार्मिक आडंबरों का चित्रण किया गया है। 'लड़के' कहानी में आम आदमी से लेकर सरकार तक सभी कार्तिक पूर्णिमा को गंगा घाट पर स्नान करने आते हैं- "बाँध पर काफ़ी भीड़ थी। आज कार्तिक पूर्णिमा थी। लंबा-चौड़ा घाट था। अपार भीड़ स्नान कर रही थी। तिलक लगा रही थी, कपड़े बदल रही थी। ढेर-के-ढेर स्कूटर

खड़े थे और साइकिलें। वहीं एक तरफ खड़ी थीं कई जीपें। लड़कों ने गिना सात पर भारत सरकार की तख्ती लगी थी। तीन पर प्रादेशिक सरकार की। जाहिर है, भारत सरकार नहाने आई थी।”(कालिया, 126)

3.1.3.1 सामाजिक रूढ़ियों और आधुनिक सोच के बीच संघर्ष-

भारतीय संस्कृति में अभी भी कई रूढ़ियाँ और अंधविश्वास प्रचलित हैं, जिनका उल्लेख ममता कालिया ने अपने साहित्य में विभिन्न स्थानों पर किया है। उनके उपन्यास दुःखम-सुखम में एक संवाद का उदाहरण है, जिसमें जब बेबी दूध नहीं पीती, तो दादी विद्यावती उसकी नज़र उतारने की प्रक्रिया करती हैं। ममता कालिया ने इसे इस प्रकार लिखा है- “तब दादी लोहे की छोटी डिबिया से फिटकरी का टुकड़ा निकाल कर जलते कोयले पर रखती। फिटकरी पिघलकर मुड़- तुड़ जाती। दादी बतातीं, 'देख, यह बिल्कुल रामों की शक्ल है। यह उसका सिर, यह धोती का पल्ला और यह उसका हाथ।' सभी को वाकई फिटकरी में रामों की शक्ल नजर आने लगती। फिर सब बारी-बारी से उसे चप्पल से पीटते।” (कालिया, 83)

इसी प्रकार, दादी विद्यावती यह भी कहती हैं कि 'गर्भावस्था में यदि मां का मीठा खाने का मन करता है तो बेटा होगा, और यदि नमकीन खाने का मन करे तो बेटी होगी।' ममता कालिया की कहानी 'आपकी छोटी लड़की' में एक उत्कृष्ट उदाहरण है। कहानी का पात्र साहित्यकार मुक्ति दूत जब दुनिया से कहते हैं- "क्या हमारे देश में कभी ईश्वर से विश्वास खत्म हो सकता है? अभी मैं चौराहे के बीचोबीच एक बौड़म-सा पत्थर रख दूँ, सिंदूर में रंगकर, और खुद उस पर जाकर दो फूल चढ़ा आऊँ। फिर देखना तुम, अपने लोगों की कितनी आस्था है। दस में से नौ आदमी यहाँ रुकेंगे, मत्था टेकेंगे, फूल-फल चढ़ाएंगे। इसे कहते हैं आस्था। या अंधविश्वास!” इन पंक्तियों में ममता कालिया ने लोगों की अंधश्रद्धा और अंधविश्वास को बहुत सुंदर तरीके से चित्रित किया है। उनकी एक और कहानी 'मेला' में अंधश्रद्धा की चरम स्थिति का चित्रण मिलता है- “सबके मन में एक ही आस थी, मौनी अमावस्या पर बस एक डुबकी लगा ले, इन्हें पूरा विश्वास था कि अब तक के उनके जीवन में जो कुछ भी अधम-विषम हुआ है, वह संगम की धार में सुबह-धूल-पूछ कर उन्हें नया जीवन प्रदान करेगा और वे स्वर्ग में एक सीट आरक्षित करवा लेंगे।” (कालिया, 88) यहां ममता कालिया यह भी दर्शाती हैं कि पाखंडी साधु इन अंधविश्वासों का खूब फायदा उठाते

हैं। यह धर्म और आचरण से बिल्कुल मेल नहीं खाते, फिर भी लोग अपने अंधविश्वास के कारण इनके जाल में फंस जाते हैं, और यही कारण है कि स्वच्छ नदियाँ भी दूषित हो रही हैं।

पाखंडी साधुओं पर ममता कालिया की एक और टिप्पणी है- “कुम्भ क्षेत्र में साधुओं की भी त्रिपथगा है, सच्चे पाखंडी और मक्कार। यह धर्म, आस्था और आडंबर का संगम चल रहा है। हर चीज यहां तीन के पहाड़े में है, जैसे त्रिवेणी से सीखा है यह। होमगार्ड, पुलिस, पी.ए.सी; गुरु, गोविंद और शिष्य; भक्त, बगलाभक्त और अंधभक्त।” (कालिया, 129) ममता कालिया की इन कहानियों का मुख्य उद्देश्य धार्मिक आडंबरों को उजागर करना है। धर्म के नाम पर समाज में पहले अंधविश्वास और अंधश्रद्धा पर व्यंग्यात्मक टिप्पणी की गई है। इनकी कहानियों में पति-पत्नी के संबंधों और सामाजिक जिम्मेदारियों के बीच के द्वंद्व को भी चित्रित किया गया है।

समाज में हर व्यक्ति को सामाजिक नियमों और बंधनों का पालन करते हुए सामाजिक स्थितियों का सामना करना पड़ता है, और इनका प्रभाव विशेष रूप से पति-पत्नी के संबंधों पर अधिक होता है। आधुनिकता और एकल परिवारों ने इस स्थिति को और भी कठिन बना दिया है। ममता कालिया खुद एक कामकाजी महिला रही हैं और उन्होंने घर और बाहर दोनों के उत्तरदायित्व को नजदीक से समझा और अनुभव किया है। इनकी कहानियों में सांसारिक जिम्मेदारियों के बीच पति-पत्नी के संबंधों का विस्तार से वर्णन मिलता है। कहानी 'बातचीत बेकार है' में ममता कालिया ने पति-पत्नी के आपसी संबंधों को इस प्रकार दर्शाया है कि वे अपने कामों में इतने व्यस्त रहते हैं कि उनके पास आपस में बात करने का समय नहीं होता। बाद में उन्हें एक-दूसरे से बात करने में भी अच्छा नहीं लगता, जिससे उनके संबंधों में कटुता आ जाती है। 'काके दी हट्टी' कहानी में भी यही दिखाया गया है कि काम के कारण पति-पत्नी को एक-दूसरे के लिए समय नहीं मिल पाता। नायिका 'पिंकी' कॉल सेंटर में काम करती है और रात में काम करने के कारण वह दिन भर सोती है, जिससे उसकी सास गुस्से में रहती है। झगड़ों से तंग आकर पिंकी अपने मायके चली जाती है।

ममता कालिया की कहानियों में नारी को एक स्वतंत्र व्यक्तित्व मिला है। उनकी कहानियों में नारी अपने निर्णय स्वयं लेती है। कहानी 'बीमारी' में नायिका 'मैं' घर से दूर

शहर में नौकरी करती है और बीमार होने के बावजूद अपने खर्चे स्वयं उठाती है, और बिना किसी सहारे के अनजान शहर में अकेली रहती है- “मैंने भाई से पूछा, 'तुम्हारे अपने पैसे तो नहीं लगे किसी चीज में?' भाई ने झेंपते हुए अपनी जेब से पर्स निकाला और कई कागज उलट-पलट कर एक कागज मुझे थमा दिया। उनमें उन पैसे का हिसाब था, जो इधर-उधर मेरे सिलसिले में आने-जाने में खर्च हुए थे और जो फल मेरे लिए लाए गए थे। मैंने भाई से कहा, 'कैश मैं अपने पास ही रख रही हूँ, जरूरत पड़ सकती है। तुम चैक ले लोगे?' उसकी पत्नी ने तुरंत सिर हिलाया, 'हाँ, हाँ, बैंक में अकाउंट है इनका।' मैंने एक चैक अस्पताल के नाम काट कर पर्स में रखा और एक भाई को थमाया। फिर मैं टैक्सी का इंतजार करने लगी।” (कालिया, 36)

यहां ममता कालिया ने समाज के बदलते और संवेदनहीन होते रिश्तों को उजागर किया है। रिश्तों की अहमियत घटने और स्वार्थी दृष्टिकोण के कारण आपसी रिश्तों में दूरी बढ़ती जा रही है। कहानी 'वे' की नायिका अरुण एक मुक्त विचारों वाली महिला है। वह रात के समय बस में निडरता से यात्रा करती है और देर रात अजनबी के घर रुकने का निर्णय लेती है। अगले दिन सुबह, बिना किसी औपचारिकता के वह वहां से अपनी अटैची लेकर अपने घर के लिए निकल पड़ती है। इसी प्रकार, 'जिंदगी सात घंटे की' में नायिका भी अपने फैसले स्वयं लेती है और अकेले रहती है, अपने कार्यों में व्यस्त रहती है। ममता कालिया ने अपने साहित्य में समाज में स्त्री के बदलते आयाम, आत्मनिर्भरता और स्वतंत्रता को बखूबी चित्रित किया है।

3.1.3.2 महिला केंद्रित दृष्टिकोण-

ममता कालिया के कहानी साहित्य में नारी के संघर्ष और उसकी छटपटाहट को अत्यंत मार्मिक प्रसंगों के माध्यम से चित्रित किया गया है। उन्होंने कामकाजी स्त्री के जीवन-संघर्ष एवं पारिवारिक द्वंद्व को सजीवता से प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियाँ नारी-केंद्रित हैं, जो मूलतः स्त्री के जीवन और उसके इर्द-गिर्द की सामाजिक संरचनाओं के इर्द-गिर्द घूमती हैं। ममता कालिया ने अपने कथा-साहित्य में समाज में स्त्री की स्थिति और उसके सतत संघर्ष को प्रभावशाली ढंग से दर्शाया है। उनकी कहानियाँ जैसे- 'बाथरूम', 'बोलने वाली औरत', 'आईना', 'मनहूसाबी', 'गुस्सा', 'उमस', 'रायवाली', 'निर्मोही' आदि में नारी-संघर्ष

और उसकी सामाजिक दशा का गहन चित्रण मिलता है। 'बाथरूम' कहानी में उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि किस प्रकार घरों में स्त्रियों को बुनियादी सुविधाओं से भी वंचित रखा जाता है, यहाँ तक कि उन्हें बाथरूम जैसी साधारण आवश्यकता के लिए भी संघर्ष करना पड़ता है—

“काफ़ी देर बैठने के बाद कांता मामी ने मुझसे कहा, ‘हमें बाथरूम जाना है, रास्ता बताओगी?’

मैं एकदम हकबका गई... मैंने जाकर बड़ी मामी से कहा। बड़ी मामी ने मुँह चढ़ाकर कहा, ‘कह दो इटावावाली से, इतना ही बाथरूम का शौक है तो अपने बाप से कहो, आकर बनवा दें। इत्ते बरस हमें इस घर में आए हो गए, हमने तो कभी बाथरूम नहीं देखा।’

‘चटाक्’... मेरे गाल पर माँ का तमाचा पड़ा... पता नहीं कांता मामी की ज़रूरत को कैसे निपटाया गया।” (कालिया, पृ. 87)

उपर्युक्त प्रसंग में हम देखते हैं कि विवाहोपरांत कामकाजी बहू से भी घर-परिवार के समस्त दायित्वों के निर्वहन की अपेक्षा की जाती है, लेकिन उसे अपनी आवश्यकताओं के लिए कुछ भी कहने या माँगने का अधिकार नहीं होता। ‘बोलने वाली औरत’ कहानी में उन्होंने एक ऐसी आधुनिक विचारों वाली स्त्री ‘शिखा’ का चित्रण किया है, जो अपने ही प्रेमी-पति और परिवार द्वारा प्रताड़ित होती है। वह अंधविश्वास और आडंबरों का विरोध करती है, जो किसी को भी रास नहीं आता— “शिकार तो मैं हूँ, तुम सब शिकारी हो— शिखा कहना चाहती थी... पर जबड़ा जाम था... वह मन ही मन यह चाहती थी कि घर के लोग उसके समस्त रंघ बंद कर दें, फिर भी उसके भीतर के शब्द खदकते रहें... यदि वह उन्हें लिख दे, तो वे असहमति के तीखे, नुकीले, कँटीले अग्रलेख बनकर पूरे घर पर छा जाएँ... मुँह सूजा हुआ था, पर मुँह बंद रखना चुप रहने की शर्त नहीं है... ये शब्द उसकी लड़ाई लड़ते रहेंगे।” (कालिया, पृ. 83) ‘रायवाली’ कहानी की नायिका ‘कालिंदी’ को अपने मायके माँ के निधन पर भी नहीं जाने दिया जाता, क्योंकि देवर के विवाह की तैयारियों में उसे घर के कामों के लिए आवश्यक समझा जाता है— “मोहन तमककर बोला, ‘मज़ाक करते होंगे तेरे यार, हम तो साफ़ बात करते हैं... सोच लो, यह घर या वह घर... इस मौके पर चली गई तो वापस घुसने न दूँगा।’

कालिंदी सन्न रह गई... एक मन हुआ आधी रात में उठ कर भाग जाए... पर उसके हाथ में अधेला भी न था... सुबह मेहमानों से भरा घर और वह सूखे मुँह पूरे दिन दौड़ती रही...” (कालिया, पृ. 116)

‘निर्मोही’ कहानी में फूलमती के माध्यम से यह दिखाया गया है कि किस प्रकार स्त्री को केवल संदेह के आधार पर घर से निकाल दिया जाता है। माली के लड़के से बात कर लेने भर से उसे राजमहल के दरवाज़े से दूर कर दिया जाता है—

“राजाजी का हुकुम मिला है— जो दरवज्जा खोले, सो सिर कटाय।

सात दिना रानी फूलमती अपना सिर सातों दरवज्जों पे पटकती रही... माथा फूटकर खून-खच्चर हो गयौ।” (कालिया, पृ. 142)

इसी तरह ‘दर्पण’ कहानी में बानी एक ऐसी स्त्री है जिसकी छोटी-छोटी आकांक्षाएँ भी दम तोड़ती हैं। उसका पति उसकी नौकरी छुड़वा देता है, और फिर घर पर रहते हुए वह एक बड़े दर्पण तक की इच्छा पूरी नहीं कर पाती। ‘मनहूसाबी’ में उषा पति के वर्चस्व से त्रस्त होकर जीने को विवश है, वहीं ‘उमस’ में रानी का पति छोटी-छोटी बातों पर इस कदर नाराज़ हो जाता है कि उसे घर में घुटन होने लगती है। इन सभी कहानियों में ममता कालिया ने समाज में स्त्री की दायम दर्जे की स्थिति को केंद्र में रखकर कथा का ताना-बाना बुना है। उन्होंने पारिवारिक संघर्ष, तनाव, अजनबीपन और स्त्री के अंतर्द्वंद्व को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ उकेरा है। उनके कथा-साहित्य में दांपत्य संबंधों के विघटन के कारणों का भी मनोवैज्ञानिक विश्लेषण मिलता है।

3.1.3.3 परिवार और विवाह-

ममता कालिया ने समाज को निकट से समझा और परखा है। इसी कारण उन्होंने पारिवारिक परिस्थितियों तथा पति-पत्नी संबंधों को अपनी रचनाओं में विस्तारपूर्वक अभिव्यक्त किया है। प्राचीन काल में लोग संयुक्त परिवारों में निवास करते थे, जहाँ एक मुखिया होता था और परिवार के सभी सदस्य उसका सम्मान करते थे। उसके आदेशों का पालन होता था। किंतु आधुनिक युग में शिक्षा, नौकरी और संबंधों में बढ़ते तनाव के कारण संयुक्त परिवारों का विघटन हो रहा है। एकल परिवारों के प्रचलन से पारिवारिक समस्याओं में वृद्धि हुई है। आपसी संबंधों में संवेदना का हास हो रहा है और धैर्य समाप्त होता जा रहा है।

परिणामस्वरूप समाज में असंतोष, अलगाव, संबंधों में कटुता, तलाक, एकाकीपन, तनाव तथा असुरक्षा जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। इस प्रकार की सामाजिक जटिलताओं का चित्रण ममता कालिया की कहानियों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

‘एक पति की मौत’ कहानी में एक शिक्षित स्त्री ‘सिया’ के माध्यम से तलाक के पश्चात स्त्री की मानसिक वेदना और सामाजिक स्थिति को उकेरा गया है। इसमें तलाक के कारण उत्पन्न तनाव, पीड़ा और कुंठा को प्रभावी ढंग से दर्शाया गया है। सिया का पति उसे छोड़कर विदेश में दूसरी स्त्री से विवाह कर लेता है, और सिया को अकेले ही अपनी बेटी की परवरिश की ज़िम्मेदारी उठानी पड़ती है। वर्षों बाद जब उसे पति ‘नमन’ की मृत्यु का समाचार मिलता है, तो वह असमंजस में पड़ जाती है कि क्या प्रतिक्रिया दे। नमन ने तेरह वर्ष पूर्व उसे तलाक दिया था। स्मृतियों में डूबकर सिया को यह अनुभव होता है कि तलाक उसने नहीं, बल्कि ‘नमन’ ने लिया था और उसमें उसकी कोई गलती नहीं थी। कहानी में इस मनोदशा का वर्णन ममता कालिया ने इस प्रकार किया है— “संबंध तो नमन ने तोड़ दिया था—माचिस की तीलियों की तरह दो टूक—पर उस पर से अपना अधिकार कहाँ छोड़ा था। वह बार-बार उस कीमत की याद दिलाता जो उसने तलाक की खातिर चुकाई थी।” (कालिया, 103)

‘नमन’ के रहते ‘सिया’ केवल मानसिक प्रताड़ना सहती रही। उसकी सास तलाक के पश्चात भी उससे पत्नी धर्म निभाने की अपेक्षा करती है। ‘सिया’ की बेटी भी उसे आदर नहीं देती। ‘नमन’ ने दूसरी शादी कर सुखपूर्वक जीवन जिया, जबकि ‘सिया’ को बिना किसी भूल के निरंतर दुख झेलने पड़े। उसे स्मरण होता है कि पारिवारिक परिस्थितियाँ ही ‘नमन’ के उससे दूर होने का कारण बनीं। इस प्रसंग को ममता कालिया ने इस प्रकार उकेरा है— “उसे उन दिनों की अपनी अनिच्छा भी याद आई। परिवार की दिनचर्या ने उसके जिस्म के कई हिस्से बर्फ बना दिए थे, जिन क्षणों में नमन को एक उत्कट प्रिया की सख्त आवश्यकता थी, वहाँ उसे मिली एक थकी, पीसी, झुँझलाई हुई औरत। उन्हीं क्षणों में नमन ने उसे पाया और उसने नमन को खो दिया।” (कालिया, पृ. 99) पति-पत्नी एक-दूसरे को समय नहीं दे पाते, विशेषकर स्त्री पर तो घर, बच्चे और परिवार की समस्त ज़िम्मेदारियाँ होती हैं। वह सारा दिन काम में उलझी रहती है और अंततः पति की नाराजगी का शिकार बनती है।

इसी प्रकार 'अपत्नी' कहानी में ममता कालिया ने पुरुष मानसिकता को उजागर किया है। पात्र 'प्रबोध' अपनी पत्नी को तलाक दिए बिना ही दूसरी स्त्री के साथ जीवन बिताता है। 'एक पत्नी के नोट्स' में 'संदीप' अपनी पत्नी को इतना प्रताड़ित करता है कि वह घर छोड़ देती है। इन रचनाओं के माध्यम से ममता कालिया ने नारी की दयनीय स्थिति और पारिवारिक संघर्षों की कटुता को यथार्थ रूप में चित्रित किया है। रिश्तों में संवेदना, सहनशीलता और मर्यादा का हास होता जा रहा है। धैर्य का स्थान क्रोध ने ले लिया है, जिसके परिणामस्वरूप पारिवारिक रिश्ते टूट रहे हैं, झुँझलाहट और मानसिक तनाव बढ़ता जा रहा है। इन परिस्थितियों का गहन चित्रण ममता कालिया ने अपनी कहानी 'गुस्सा' में किया है। कहानी की नायिका 'माया' अपने गुस्से और झुँझलाहट के कारण अपने सारे प्रियजन खो बैठती है। कहानी में वर्णित है— "उनके दोनों लड़के अपनी बीवियों और नौकरियों में मशगूल थे। उन्हें कभी ख्याल ही नहीं आया कि उनके मां-बाप अपना वक्त कैसे काटते होंगे। कभी उन्हें ज़्यादा पत्र लिखते कि उनकी याद आ रही है, तो वे एक मनीऑर्डर भेज देते। पति-पत्नी के संबंधों में भी गुस्से के कारण कटुता उत्पन्न हो जाती है— देख लेना, जिस दिन मैं तुम्हारी इस किच-किच से तंग आ गया, तो बस उठा अपनी रामायण लेकर चला जाऊँगा। पीछे मुड़कर भी नहीं देखूँगा।" (कालिया, 30)

ममता कालिया ने अपने कथा-साहित्य में नारी को अपमानित करने वाली परिस्थितियों और समाज की विकृत मानसिकता को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया है। पितृसत्तात्मक समाज में पुरुषों को मनमानी की छूट होती है, जबकि स्त्रियाँ निरंतर कष्ट सहती हैं। तलाक के बाद पुरुष तो जिम्मेदारियों से मुक्त हो जाता है, परंतु स्त्री को बच्चों और परिवार की जिम्मेदारी उठानी पड़ती है। यही स्थिति 'एक पत्नी की मौत' में दिखाई गई है। 'एक पत्नी के नोट्स' में भी संदीप अपनी पत्नी कविता को निरंतर प्रताड़ित करता है। जब कविता के लिए स्थिति असहनीय हो जाती है, तो वह घर छोड़ने पर विवश हो जाती है। संदीप फिर भी सोचता है कि वह जाएगी कहाँ? क्योंकि उसके मायके में भी अब उसके लिए स्थान नहीं बचा। 'रायवाली' कहानी में ममता कालिया ने स्त्री के धैर्य, अपमान और सहनशीलता का सजीव चित्रण किया है। नायिका 'कालिंदी' को माँ की मृत्यु के पश्चात भी अपने मायके नहीं जाने दिया जाता। विवाह समारोहों में उसके सिर दर्द के बावजूद उसे कार्यों में भाग लेने के लिए विवश किया जाता है। "शाम चार बजे,

जब गीतों के लिए औरतों ने ढोलक सँभाली, कालिंदी का सिर फटा जा रहा था... माँ की सूरत आँखों के आगे मँडराती रही... तभी बाहर से औरतों की चहल-पहल—'रायवाली को बुलाओ'— शुरू हो गई।... सास की घुड़की—'मेरे घर में आज के दिन असगुन न मना रायवाली, कल अपने घर जाकर जी भर रोड़यो।'... कालिंदी ने जबरन ढोलक उठाई और नाचने लगी, जब तक गिरकर चित्त नहीं हो गई।" (कालिया, पृ. 116)

उपर्युक्त विवरण के आधार हम कह सकते हैं कि पितृसत्तात्मक समाज में बहुओं के दुःख-दर्द को महत्व नहीं दिया जाता। 'मनहूसाबी' और 'उमस' कहानियाँ समाज की विकृति और स्त्री-विरोधी मानसिकता पर आधारित हैं। 'मनहूसाबी' की नायिका विवाह से पूर्व और पश्चात दोनों स्थानों पर समाज की कुत्सित सोच का शिकार बनती है। 'बोलने वाली औरत' कहानी में एक पढ़ी-लिखी स्त्री को केवल उसके आत्माभिव्यक्ति के अधिकार के कारण अपमानित होना पड़ता है। स्त्री के चरित्र पर बिना किसी आधार के संदेह करना समाज की विकृति का प्रतीक है। 'पीठ', 'थोड़ा सा प्रगतिशील', 'बीमारी' जैसी कहानियाँ भी इसी मानसिकता को आधार बनाकर रची गई हैं— "चेतना की प्रखरता से विनीत प्रभावित भी था और प्रताड़ित भी। उसे लगता कि ज़िंदगी की दौड़ में चेतना उसे पीछे छोड़ देगी। फेसबुक पर चेतना के हजारों मित्र बन गए। अब वह घर में भी पूर्णतः संलग्न रहने लगी थी। विनीत कुढ़ रहा था और चिंतित था कि कहीं वह नौकरी करने न लग जाए।" (कालिया, पृ. 102)। ममता कालिया के साहित्य में स्त्री अपने अस्तित्व को पहचानने का संघर्ष करती दिखाई देती है। उन्होंने स्त्री-पुरुष संबंधों, नारी चेतना और दांपत्य जीवन की कटु सच्चाइयों को प्रभावी ढंग से उकेरा है।

3.1.3.4 शिक्षा और वैश्वीकरण के प्रभाव से सांस्कृतिक मूल्यों में बदलाव-

स्त्री शिक्षा के कारण समाज में महिलाओं की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। आधुनिक स्त्री आज न केवल घर की जिम्मेदारियाँ कुशलता से निभा रही है, बल्कि कार्यक्षेत्र में भी अपनी दक्षता सिद्ध कर रही है। यद्यपि उसे अब तक समाज में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त नहीं हुई है, फिर भी शिक्षित स्त्री अपने कर्तव्यों के साथ-साथ अपने अधिकारों को भी समझने लगी है। वह अपने अधिकारों की रक्षा के लिए परिवार और समाज के विरुद्ध आवाज़ उठाने से भी नहीं हिचकिचाती। 'बोलने वाली औरत' कहानी की नायिका 'शिखा' आधुनिक विचारों

वाली एक शिक्षित महिला है। उसकी सास को उसके विचार पसंद नहीं आते, फिर भी शिखा साहसपूर्वक अपनी बात कहती है-

“गीली झाड़ू को जब शिखा ने सीधा खड़ा किया तो सास ने त्योरी चढ़ाकर कड़क स्वर में पूछा – ‘क्यों खड़ी रखी थी! तुझे इतना भी नहीं मालूम कि झाड़ू खड़ी रखने से घर में दरिद्रता आती है, कर्ज बढ़ता है, और रोग घर कर लेते हैं! यह तो मैंने कभी नहीं सुना।’

‘जाने कौन-से गाँव की है तू! माँ के घर से कुछ भी नहीं सीखकर आई। काका का काम वैसे ही ढीला चल रहा है, ऊपर से तू झाड़ू खड़ी रखती है – यही शिक्षा मिली है तुझे? मेरा तो मानना है कि झाड़ू को गुसलखाने के बीचोंबीच भीगता हुआ छोड़ देने से ही दरिद्रता आती है – तीलियाँ गल जाती हैं, रस्सी ढीली पड़ जाती है और गंदा भी कितना लगता है!’

‘आज तो माफ कर दिया, आगे से झाड़ू खड़ी न मिले, समझी?’

‘इस बात में कोई तर्क नहीं है बीजी, झाड़ू जैसी वस्तु को किसी भी प्रकार रखा जा सकता है,’ शिखा ने शांत किंतु दृढ़ स्वर में कहा।

बीजी झुंझला गई – ‘कैसी जाहिल और ज़िद्दी लड़की ले आया है काका! लाख बार कहा था इस कुलच्छिनी से ब्याह मत कर, पर नहीं— उसके सिर पर तो भूत सवार था।’

शिखा को बीजी की बातों पर हँसी आ गई। बीजी स्वयं को बहुत समझदार मानती हैं, जबकि उनकी बातों में अक्सर कोई तर्क नहीं होता। शिखा को हँसता देखकर बीजी का क्रोध और बढ़ गया। उन्होंने मीरा से कहा— ‘इसे तो बिल्कुल अकल नहीं है।’

(कालिया, पृष्ठ 77) कुछ ऐसा ही स्वाभिमान और तर्कसंगतता हम ‘बसंत एक तारीख’ की नायिका चंदा में भी देखते हैं। ‘बसंत एक तारीख’ कहानी की नायिका चंदा स्वयं बेरोजगार होने के बावजूद, एक प्राध्यापिका द्वारा दूसरी अध्यापिका के साथ किया गया अपमानजनक व्यवहार देखकर वह नौकरी का प्रस्ताव अस्वीकार कर देती है। यह उसके आत्मसम्मान और स्त्री-एकता की मिसाल है। इसी प्रकार ‘बाथरूम’ कहानी की नायिका, घर की छोटी बहू ‘कांता’, विवाहोपरांत जब अपने ससुराल आती है, तो उसे पता चलता है कि घर में बाथरूम जैसी मूलभूत सुविधा भी नहीं है। वह इस सुविधा के लिए अपने पति और परिवार से संघर्ष करती है-

“नहाने को लेकर कांता मामी का जेहाद जारी था। दो दिन की छुट्टी पर जब अजय मामा आए, तो मामी ने दो टूक कह दिया— ‘या तो नहाने-धोने की समुचित व्यवस्था करके जाओ, नहीं तो मैं यहाँ नहीं रहूँगी।’

उनकी ज़िद के आगे कमरे के कोने में टीन की चादरों से एक छोटा-सा नहानघर बनाया गया। जब वे सुबह आँगन के नल से दो बाल्टियाँ पानी भरकर वहाँ रखतीं, तो दोनों बड़ी मामियाँ मुँह बिचकाकर हँसतीं और बच्चों को सुनाकर कहतीं— ‘जिसे नंगा नहाने का शौक हो, वह छिप-छिपकर नहाए। हमने तो कभी अपना उघाड़ा देखा ही नहीं।’

यदि हम बच्चों में से कोई नहाने से कतराता, तो बिचली मामी कान उमेठकर कहतीं— ‘चल, तुझे बाथरूम में बंद करूँगी— पड़ी रहना वहाँ दिनभर।’

(कालिया, पृष्ठ 69)

इन कहानियों में यह स्पष्ट होता है कि स्त्रियाँ आज भी परिवार की सभी जिम्मेदारियाँ निभाने के बाद भी उपेक्षा, तिरस्कार और तानों का सामना करती हैं। सुविधाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति की माँग करना उनके लिए कठिन बना दिया जाता है। फिर भी, वे धीरे-धीरे अपनी आवाज़ बुलंद कर रही हैं— और यही है स्त्री शिक्षा और जागरूकता का वास्तविक प्रभाव।

3.1.3.5 पुराने रीति-रिवाजों और आधुनिक सोच के बीच संघर्ष

ममता कालिया ने आधुनिकतावाद के प्रभावस्वरूप बदलते विवाह-संस्कार, बेमेल विवाह, पुरुष की परिवर्तित मानसिकता आदि समस्याओं को अपनी कहानियों में प्रभावी रूप से चित्रित किया है। उन्होंने आधुनिक समय में समाज में आए मूल्यों और मानदंडों में परिवर्तन को आधार बनाकर कहानियों की रचना की है। जैसे—शिक्षित स्त्री-पुरुष की मानसिकता में बदलाव, विवाह-संस्कारों की परंपरागत अवधारणाओं में परिवर्तन आदि, इसी सामाजिक संक्रमण की उपज हैं। ‘अपत्नी’, ‘साथ’, ‘लगभग प्रेमिका’ जैसी कहानियों में ममता कालिया ने समाज में तेजी से बदलती परिस्थितियों के कारण उत्पन्न नई प्रकार की जटिलताओं और संबंधों को आधार बनाया है। ‘अपत्नी’ कहानी में ‘प्रमोद’ नामक पात्र अपनी पत्नी को तलाक दिए बिना एक अन्य स्त्री के साथ सहजीवन व्यतीत करता है, और यह स्थिति उस

स्त्री को भी विचलित नहीं करती। 'साथ' कहानी में भी ऐसे ही एक असामान्य और सामाजिक रूप से स्वीकृत न होने वाले संबंध को चित्रित किया गया है।

भारतीय समाज में विवाह-संस्कार को अत्यंत महत्वपूर्ण और पवित्र माना जाता है। विवाह से पूर्व स्त्री-पुरुष संबंधों को सामाजिक और नैतिक मूल्यों के विरुद्ध समझा जाता है। विवाह के उपरांत यदि कोई स्त्री या पुरुष किसी अन्य व्यक्ति से संबंध स्थापित करता है, तो यह भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के प्रतिकूल माना जाता है। ममता कालिया ने 'लगभग प्रेमिका' कहानी में इन्हीं बदलते संबंधों को रेखांकित किया है। 'थोड़ा सा प्रगतिशील', 'बोलने वाली औरत', 'एक पत्नी के नोट्स' जैसी कहानियों में उन्होंने पुरुष मानसिकता में विवाह से पहले और बाद में आने वाले परिवर्तन तथा प्रेम विवाह के संभावित दुष्परिणामों को आधार बनाया है। 'थोड़ा सा प्रगतिशील' कहानी में 'विनीत' और 'चेतना' का प्रेम विवाह होता है, किंतु विवाह के पश्चात विनीत अपनी शक्की प्रवृत्ति के कारण चेतना पर विश्वास नहीं कर पाता। कहानी में वर्णित है- "विनीत ने अपनी सहपाठी चेतना दीक्षित के साथ दोस्ती, मुहब्बत और विवाह की सीढ़ियाँ दो साल में कुछ इस तरह चढ़ लीं कि एक दिन चेतना उसके घर हमेशा के लिए आ बसी। अपनी सफलता पर अभिभूत हो गया विनीत, साथ ही सावधान। प्रेम का प्रथम ज्वार ज़रा धीमा पड़ा तो उसे सबसे पहले यह चिंता हुई कि जिस आसानी से उसने चेतना को पा लिया, उतनी ही आसानी से कोई और भी उसे पा सकता है। चेतना की आकर्षकता में कोई कमी नहीं आई थी, बल्कि उसमें वृद्धि ही हुई थी। उसकी शोखी अब न केवल बातों में, बल्कि उसकी आँखों में भी उतर आई थी। दरअसल, विनीत आज़ाद भारत के अधिसंख्य शिक्षित नवयुवकों जैसा ही था—थोड़ा-सा आधुनिक, थोड़ा-सा पारंपरिक; थोड़ा-सा प्रतिभावान, थोड़ा-सा कुंद; थोड़ा चैतन्य, थोड़ा जड़; थोड़ा-सा प्रगतिशील, थोड़ा-सा पतनशील। उसके सपनों की स्त्री वही हो सकती थी—जो शिक्षित हो किंतु दबकर रहे, आधुनिक हो परंतु आज्ञाकारी, समझदार हो किंतु स्वतंत्र चिंतनशील न हो।" (कालिया, 97)

इसी प्रकार 'एक पत्नी के नोट्स' में ममता कालिया ने प्रेम विवाह के पश्चात पुरुष की मानसिकता में आए बदलाव को रेखांकित किया है। कहानी में संदीप नामक पात्र विवाह के पश्चात उस प्रेम-संबंध से उबाव महसूस करने लगता है, जो कभी उसके लिए अत्यंत आकर्षण का केंद्र था। उद्धरण है- "प्रणय से लेकर परिणय तक संदीप ने उस प्रेम-संबंध को

इतनी ऊष्मा दी थी कि विवाह के बाद वह यकायक अपने को फुर्सत में पाने लगा। उसके पास ढेर-सा खाली वक्त बच रहा था। अब प्रथमोल्लास की तीव्रता और तन्मयता आसानी से कमरे के भीतर पूरी की जा सकती थी। कविता के मात्र स्पर्श के लिए संघर्ष अब समाप्त हो गया था, समूची कविता उसे हर क्षण, हर दिन उपलब्ध थी। जैसे ही संघर्ष नामक खलनायक हट गया, संदीप हतप्रभ हो गया। अब वह दफ्तर के काम में अधिक रुचि लेने लगा। अकसर देर तक काम करता और घर देर से पहुँचता। इस बीच कविता, टी०वी० देखते-देखते पथराई आँखों से उस पर दृष्टि टिकाकर शिकायत करती—‘देखो, आज भी देर कर दी तुमने?’ (कालिया, 21) धीरे-धीरे संदीप, कविता को मानसिक रूप से इतना परेशान करने लगता है कि वह इन यातनाओं से तंग आकर घर छोड़ देती है।

इस प्रकार ममता कालिया ने भारतीय संस्कृति और उसकी वर्तमान अवस्था को अपने कथा-साहित्य का आधार बनाकर गहन सामाजिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। उनकी प्रत्येक कहानी न केवल सामाजिक यथार्थ को उजागर करती है, बल्कि भारतीय संस्कृति में पाश्चात्य प्रभावों से उत्पन्न परिवर्तनों और उनके परिणामों को भी प्रभावशाली ढंग से चित्रित करती है।

3.2 सांस्कृतिक पहचान

सांस्कृतिक पहचान किसी भी व्यक्ति के जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखती है। यह केवल किसी समुदाय या समाज विशेष की परंपराओं, विश्वासों और जीवनशैली की अभिव्यक्ति नहीं होती, बल्कि व्यक्ति की आंतरिक आत्मा और उसकी चेतना का भी परिचायक होती है। सांस्कृतिक पहचान से यह निर्धारित होता है कि कोई व्यक्ति किस सामाजिक, ऐतिहासिक और भावनात्मक परिवेश से जुड़ा हुआ है। यह व्यक्ति की सोच, व्यवहार, मूल्यों और दृष्टिकोण को आकार देती है। जब एक बच्चा जन्म लेता है, तो वह भाषा, रहन-सहन, धार्मिक अनुष्ठान, पहनावे और रीति-रिवाजों के माध्यम से अपने समाज की संस्कृति को आत्मसात करता है। यही संस्कृति धीरे-धीरे उसकी पहचान का हिस्सा बन जाती है। व्यक्ति जिस समूह या समुदाय से संबंध रखता है, उस समूह की मान्यताएँ, परंपराएँ और मूल्य उसकी सांस्कृतिक पहचान को निर्मित करते हैं। इसी के आधार पर यह तय होता है कि वह व्यक्ति किस प्रकार के सामाजिक परिवेश में जीवन यापन करता है,

उसकी प्राथमिकताएँ क्या हैं और वह विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में कैसे प्रतिक्रिया करता है।

सांस्कृतिक पहचान केवल जातीयता, धर्म या भाषा तक सीमित नहीं होती, बल्कि यह व्यक्ति की राष्ट्रीयता, सामाजिक वर्ग, पीढ़ीगत अनुभव, लैंगिक पहचान तथा भौगोलिक क्षेत्र तक विस्तृत होती है। एक ही देश में रहने वाले विभिन्न समुदायों की सांस्कृतिक पहचान अलग-अलग हो सकती है, और यही विविधता किसी राष्ट्र की सांस्कृतिक समृद्धि को दर्शाती है। इसके अतिरिक्त, सांस्कृतिक पहचान व्यक्ति की भावनात्मक सुरक्षा और आत्मसम्मान का भी आधार बनती है। जब कोई व्यक्ति अपनी संस्कृति से जुड़ा होता है, तो उसे अपने अस्तित्व पर गर्व होता है। उसे अपने जीवन की दिशा स्पष्ट दिखाई देती है। वहीं दूसरी ओर, यदि कोई व्यक्ति अपनी सांस्कृतिक पहचान से कट जाता है या उसमें हीनता का अनुभव करता है, तो उसका मानसिक संतुलन, आत्मविश्वास और सामाजिक योगदान भी प्रभावित हो सकता है।

वैश्वीकरण के इस दौर में, जहाँ लोग अपनी जड़ों से दूर होते जा रहे हैं, सांस्कृतिक पहचान का संरक्षण और संवर्धन अत्यंत आवश्यक हो गया है। यह न केवल व्यक्ति की आंतरिक स्थिरता और सामाजिक सामंजस्य बनाए रखने में सहायक है, बल्कि यह वैश्विक मंच पर विविधताओं का सम्मान और सहअस्तित्व को भी सुनिश्चित करती है। अतः यह कहा जा सकता है कि सांस्कृतिक पहचान न केवल व्यक्ति की निजी पहचान होती है, बल्कि समाज की सामूहिक चेतना का भी दर्पण होती है। यह पहचान व्यक्ति के जीवन को दिशा, उद्देश्य और गौरव प्रदान करती है तथा उसे सामाजिक और नैतिक मूल्यों से जोड़ती है। इसीलिए सांस्कृतिक पहचान का संरक्षण और उसके प्रति जागरूकता, आज के समय की एक अनिवार्य आवश्यकता बन चुकी है।

3.2.1 सांस्कृतिक पहचान का स्वरूप-

सांस्कृतिक पहचान में किसी भी व्यक्ति के समूह या समुदाय के मूल्य, परंपराएँ, रीति-रिवाज, भाषा, व्यवहार तथा विश्वास शामिल होते हैं, जो उसे परिभाषित करते हैं। सांस्कृतिक पहचान उस साझा अनुभव का परिणाम होती है जिसे एक बड़े समुदाय के लोग मिलकर

जीते हैं। यह व्यक्ति के अर्जित एवं संचित अनुभवों की समग्रता है, जो सामाजिक रूप से प्रसारित होती है। सांस्कृतिक पहचान न केवल इतिहास को संरक्षित करने का माध्यम है, बल्कि यह व्यक्ति को अपनी संस्कृति से जुड़ाव का अनुभव कराती है। संस्कृति लोगों के सोचने और जीने के ढंग को प्रभावित करती है। यह एक अदृश्य बंधन की भांति कार्य करती है, जो समाज के लोगों को आपस में जोड़ कर रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लोग अपनी पारंपरिक पोशाकें पहनकर, विशेष व्यंजन बनाकर, धार्मिक और सांस्कृतिक प्रथाओं का पालन कर अपनी सांस्कृतिक पहचान को अभिव्यक्त करते हैं। कुछ संस्कृतियों में विशेष अवसरों पर विशेष व्यंजन बनाए जाते हैं, जबकि कुछ चीजों का निषेध भी सांस्कृतिक पहचान का प्रतीक बनता है। भोजन, पेय, भाषा, धर्म, विश्वास, प्रथाएँ, त्योहार, वस्त्र, संगीत आदि सभी के माध्यम से लोग अपनी सांस्कृतिक पहचान को प्रदर्शित करते हैं।

सांस्कृतिक पहचान से सामूहिक एकता को बल मिलता है, विरासत का संरक्षण होता है, और लोकतांत्रिक मूल्यों को भी बढ़ावा मिलता है। किसी भी व्यक्ति की सांस्कृतिक पहचान उसकी व्यक्तिगत पहचान का अभिन्न अंग होती है, जो उसके द्वारा संस्कृति के मूल्यों, विश्वासों, व्यवहारों तथा मानदंडों को अपनाने या अस्वीकार करने की प्रक्रिया में विकसित होती है। सांस्कृतिक पहचान एक निरंतर गतिशील प्रक्रिया है। यह समय, परिस्थितियों और सामाजिक बदलावों के साथ परिवर्तित और विकसित होती रहती है। हालांकि कुछ लोग अपनी सांस्कृतिक पहचान के विषय में गंभीरता से विचार नहीं करते, परंतु जब उनकी पहचान को चुनौती मिलती है, तब वे इसके प्रति जागरूक होते हैं। व्यक्ति के लिए सांस्कृतिक पहचान इसीलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उसकी समझ, दृष्टिकोण और सफलता को भी प्रभावित करती है।

भारतीय संस्कृति की पहचान अनेक सभ्यताओं और विविधताओं के संगम से बनी है। भारत में प्राचीन काल से ही विभिन्न संस्कृतियों, प्रजातियों, भाषाओं तथा भौगोलिक क्षेत्रों के लोगों का आवागमन होता रहा है। समय के साथ इन विविधताओं ने भारतीय समाज में रच-बसकर एक समन्वित संस्कृति का निर्माण किया। यह संस्कृति धर्म, भाषा, त्योहार, संगीत, नृत्य, वास्तुकला और भोजन जैसे अनेक तत्वों का समावेश करती है। भारत में हिंदू, मुस्लिम, सिख और ईसाई जैसे प्रमुख धर्मों के अनुयायी निवास करते हैं।

यहाँ बैसाखी, सांझी, लठमार होली, ओणम, पोंगल और बिहू जैसे त्योहार विभिन्न क्षेत्रों एवं समुदायों द्वारा उत्साहपूर्वक मनाए जाते हैं। भारतीय खानपान की विविधता भी इसकी सांस्कृतिक पहचान का हिस्सा है। जैसे दक्षिण भारत में इडली और डोसा प्रसिद्ध हैं, तो उत्तर भारत में मक्के की रोटी और सरसों का साग प्रमुख हैं। गुजरात और राजस्थान जैसे पश्चिमी राज्यों में ढोकला और खांडवी लोकप्रिय हैं। भारत की भाषाएँ भी विविध और समृद्ध हैं। यहाँ दो प्रमुख भाषा परिवार पाए जाते हैं— भारतीय आर्य भाषाएँ और द्रविड़ भाषाएँ। उत्तर भारत में हिंदी, पंजाबी, गुजराती आदि प्रचलित हैं, जबकि दक्षिण भारत में तमिल, तेलुगू, मलयालम और कन्नड़ जैसी भाषाएँ बोली जाती हैं।

भारतीय समाज में प्राचीन काल से संयुक्त परिवार व्यवस्था का प्रचलन रहा है। भारतीय संस्कृति में नैतिक मूल्यों के साथ-साथ दान, सादगी, मितव्ययिता तथा भौतिक और आध्यात्मिक तत्वों के संतुलन को विशेष महत्व दिया गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय सांस्कृतिक पहचान अत्यंत विस्तृत, गहन और विविधतापूर्ण है। ममता कालिया की साहित्यिक रचनाओं में भी भारत की इन विविध सांस्कृतिक पहचान की झलक मिलती है, जो साहित्य को सामाजिक यथार्थ से जोड़ती है और सांस्कृतिक चेतना को जागृत करती है।

3.2.1.1 परंपरागत मूल्य और मान्यताएँ-

व्रत और त्योहार भारतीय संस्कृति की पहचान हैं। भारतीय संस्कृति में व्रतों और त्योहारों का विशेष महत्व है। ममता कालिया की कहानियों में इनका उल्लेख सहजता और संवेदनशीलता के साथ किया गया है। 'दूसरा देवदास' कहानी में विवाह उपरांत घर में पूजा की तैयारी की खुशी को ममता कालिया ने इस प्रकार चित्रित किया है— "आरती से पहले स्नान, हर-हर बहता गंगाजल—निर्मल, नीला, निष्पाप। औरतें डुबकी लगा रही हैं, बस उन्होंने तट पर लगे कुंडों से बँधी जंजीरें पकड़ रखी हैं। पास ही कोई न कोई पंडा जजमानों के कपड़ों-लत्तों की सुरक्षा कर रहा है। हर एक के पास चंदन और सिंदूर की कटोरी है। मर्दों के माथे पर चंदन तिलक और औरतों के माथे पर सिंदूर का टीका पंडे लगा देते हैं। कहीं कोई दादी-बाबा पहले पोते के जन्म की खुशी में आरती करवा रहे हैं, कहीं कोई नई बहू के आगमन की खुशी में। अभी पूर्ण अंधकार नहीं छाया है—गोधूलि बेला है। इसी कहानी में

आगे उन्होंने गंगा घाट पर सुबह के आध्यात्मिक दृश्य को अत्यंत जीवंतता के साथ चित्रित किया है—

औरतें अधिकांशतः नहाकर वस्त्र नहीं बदलतीं, गीले कपड़ों में ही खड़ी-खड़ी आरती में शामिल हो जाती हैं। पीतल की पंचमंजिली नीलांजलि गरम हो उठी है। पुजारी नीलांजलि को गंगाजल से स्पर्श कर, हाथ में लिपटे अंगोछे को सहज भाव से गीला कर लेते हैं। यह दृश्य देखकर प्रतीत होता है कि वे अपना संबोधन गंगाजी के गर्भ-गृह तक पहुँचा रहे हैं। पानी पर सहस्र बाती वाले दीपकों की प्रतिच्छविyaँ झिलमिल रही हैं। पूरे वातावरण में अगरु-चंदन की दिव्य सुगंध व्याप्त है।

आरती के बाद संकल्प और मंत्रोच्चार की बारी आती है। भक्त आरती ग्रहण करते हैं, चढ़ावा चढ़ाते हैं। विशेष भक्तों से पुजारी ब्राह्मण-भोज, दान एवं मिष्ठान्न की धनराशि स्वीकारते हैं। आरती के वे क्षण इतने भव्य और दिव्य होते हैं कि भक्त किसी प्रकार की हुज्जत नहीं करते, बल्कि प्रसन्नतापूर्वक दक्षिणा अर्पित करते हैं। पंडित जी प्रसन्न होकर भगवान के गले से माला उतार-उतारकर यजमानों के गले में डालते हैं और फिर जी खोलकर प्रसाद वितरित करते हैं—इतना कि स्वयं खाकर भी ढेर सारा शेष रह जाए, बाँटने के लिए—मुरमुरे, इलायचीदाना, केले और पुष्प।” (कालिया, 114)

3.2.2 सांस्कृतिक पहचान के पहलू-

भारतीय संस्कृति विभिन्न प्रकार के विश्वासों पर आधारित है। यहां पत्थरों और वृक्षों तक की पूजा ईश्वर के रूप में की जाती है। यह विश्वास, कब अंधविश्वास में परिवर्तित हो जाता है, यह कहना कठिन है। ममता कालिया ने अपनी कहानी ‘आपकी छोटी लड़की’ में इस भाव को बहुत सजीव रूप में चित्रित किया है—

“टुनिया रानी, अलग से सोचो, क्या हमारे देश में कभी ईश्वर पर से विश्वास समाप्त हो सकता है? अभी मैं चौराहे के बीचोंबीच एक बौड़म-सा पत्थर रख दूँ, उसे सिंदूर से रंग दूँ और उस पर जाकर दो फूल चढ़ा आऊँ। फिर देखना तुम, अपने लोगों की कितनी आस्था है। दस में से नौ लोग वहाँ रुकेंगे, मत्था टेकेंगे, फूल-फल चढ़ाएँगे। इसे कहते हैं आस्था।

— ‘या अंधविश्वास?’

— नहीं, विश्वास। वैसे विश्वास और अंधविश्वास में बहुत महीन-सा फ़र्क होता है। तुम अभी बहुत छोटी हो, वरना तुम्हें समझाता।” (कालिया, पृ. 88)

भारतीय संस्कृति में तीर्थ स्थलों और पवित्र नदियों में स्नान का विशेष महत्व है। लोग विभिन्न अवसरों और त्योहारों पर नदियों में स्नान कर स्वयं को धन्य मानते हैं। भारतीय नदियों में गंगा को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। यह विश्वास है कि गंगा-स्नान से सभी पापों का नाश होता है और पुण्य की प्राप्ति होती है, जो मोक्ष तथा ईश्वर-प्राप्ति के लिए आवश्यक है। ममता कालिया ने अपनी अनेक कहानियों— लड़के, मेला, दूसरा देवदास, निर्मोही आदि— में गंगा-स्नान तथा भारतीय संस्कृति में इसके महत्व को विस्तार से दर्शाया है। गंगा भारतीय सांस्कृतिक चेतना की प्रतीक है। इसका उल्लेख वैदिक ग्रंथों में भी मिलता है। गंगा को मां के रूप में पूजा जाता है और उसे मोक्षदायिनी माना जाता है। विशेष अवसरों पर गंगा-स्नान आस्था, पवित्रता और धार्मिक विश्वास का प्रतीक बन जाता है। कुंभ मेला ऐसे ही एक अवसर का विशाल रूप है। ममता कालिया की कहानी ‘मेला’ में गंगा-स्नान, कुंभ मेले की संस्कृति, और उसमें पनपती आस्था, अंधविश्वास और पाखंडों को यथार्थवादी दृष्टिकोण से चित्रित किया गया है। यह कहानी उनकी स्वयं की जीवन-घटना पर आधारित मानी जाती है। इसमें उन्होंने दर्शाया है कि मौनी अमावस्या के दिन कैसे लोग देश-विदेश से प्रयागराज (इलाहाबाद) पहुँचते हैं। कहानी की नायिका चारु के पति सत्य प्रकाश की मासी चरनी मासी जालंधर से प्रयागराज कुंभ में स्नान हेतु आती हैं। वह इतनी आस्थावान हैं कि माघ की कंपकंपाती ठंड और अपनी उम्र की सीमा को भी नजरअंदाज कर देती हैं। उनके अनुसार, पाप केवल वे नहीं होते जो जान-बूझकर किए जाएं, बल्कि अनजाने में हुए पाप भी उतने ही घातक होते हैं, जिनका प्रायश्चित्त तीर्थयात्रा और गंगा-स्नान से ही संभव है, यथा-

“स्टेशन से चौक तक रिक्शे वाले ने चार रुपये मांगे, मासी ने पाँच दे दिए— तीरथ पर आई हैं, किसी का दिल दुखे नहीं, पुन्न मिल जाए। इतनी ठंड में दो सवारी खींचकर लाया है रिक्शावाला।

चाय-पानी के बाद जब उनके लिए कमरे का एक कोना तैयार किया गया, तो बोलीं, ‘रहने दो, घंटे भर बाद स्वामी जी के आश्रम जाना है।’

सत्य ने कहा, ‘थोड़े दिन घर में रह लो मासी, वहाँ बहुत ठंड है।’

‘तीरथ करने निकली हूँ, गृहस्थ विच नहीं रहना।’

‘अच्छा मासी, यह बताओ आप तीरथ पर क्यों निकली हो?’

‘ले, मैं क्या पहली बार निकली हूँ? सारे तीरथ कर डाले मैंने— हरिद्वार, ऋषिकेश, बद्रीनाथ, केदारनाथ, पुष्कर, गया, नासिक, उज्जैन... बस प्रयाग का कुंभ बाकी था।’

‘मासी, आप इतने तीर्थ क्यों करती हैं?’

‘पाप जो धोने होते हैं।’

भानजे सत्य की आँखों में शरारत चमकने लगी, ‘कौन-से पाप आपने किए हैं?’

चरनी मासी हँस पड़ीं — भोली, निष्पाप हँसी। जब उत्तर नहीं होता, तो स्वामी जी की भाषा में कहती हैं, ‘पाप वही नहीं होता जो जानकर किया जाए, अनजाने में भी होता है। उसे धोना जरूरी है।’

स्वामी जी के अनुसार “बुरा बोलना, देखना, सुनना” भी पाप के अंतर्गत आता है। चारु, जो एक विज्ञान शिक्षिका है, तार्किक ढंग से पूछती है—

‘मासी, आपसे भी तो कभी किसी ने बुरा बोला होगा, तो जैसे जीरो से जीरो कट जाता है, पाप से पाप क्यों नहीं कटता?’

‘पाप से पाप और मैल से मैल नहीं कटता, उसकी काट पुण्य है— जैसे मैल की काट साबुन।’

‘अगर मलमल धोने से दाग नहीं छूटे, तो?’

‘छोटे-मोटे तीर्थों में यह संभव है, प्रयाग का महाकुंभ तो अनोखा है।’

ममता कालिया इस कहानी में केवल गंगा-स्नान की धार्मिकता ही नहीं, अपितु तीर्थ यात्रा से जुड़ी सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक व्यवस्था की परतें भी खोलती हैं, यथा—

“चारु एक ओर भारतीय जनमानस की आस्था से अभिभूत थी, तो दूसरी ओर साधु-संतों द्वारा परोसी जा रही पाप-पुण्य की तुरत-फुरत भुगतान व्यवस्था से चकित।

हर अखाड़े की अपनी व्यवस्था थी, हर संत की अपनी पताका। कुछ स्वामियों ने अपने-अपने ‘बिल्ले’ जारी कर रखे थे, जिसके बिना अखाड़े में प्रवेश असंभव था। मैंनेजर, चौकीदार, नागा साधु, गदा और बरछे लिए प्रहरी, शरीर पर चर्बी चढ़े महंत, कृशकाय सन्यासी, और ब्रह्मकुमारियों के बीच कमसिन युवतियाँ — यह सब देखकर चारु को पीड़ा और जिज्ञासा दोनों हुई। उसे लगा, बिना किसी गहरे मानसिक आघात के कोई इस उम्र में सन्यास नहीं

लेता। लेकिन पहली मुलाकात में इन प्रश्नों को पूछा भी नहीं जा सकता था।” (कालिया, 129)

इस प्रकार, ‘मेला’ कहानी में ममता कालिया ने भारतीय संस्कृति की श्रद्धा, धार्मिकता, आस्था, अंधविश्वास और पाखंड को गहराई से रेखांकित किया है। यह न केवल एक तीर्थ यात्रा की कथा है, बल्कि भारतीय जनमानस की सामूहिक मनोवृत्ति का सूक्ष्म चित्रण भी है।

3.2.2.1 पारिवारिक पहचान-

भारतीय संस्कृति में बड़े-बुजुर्गों की सेवा को विशेष महत्व दिया गया है। ममता कालिया ने अपनी कहानी ‘लैला मजनू’ में यह दर्शाया है कि भारतीय परंपरा में न केवल अपने माता-पिता, अपितु अन्य बुजुर्ग रिश्तेदारों के प्रति भी आदर एवं सेवा का भाव रखा जाता है, यथा-

“ऐसे ही एक वृद्ध दंपत्ति के आधी रात को आगमन पर वह आँखें मलती हुई उठ बैठी थी। पंकज ने दरवाज़ा खोला। वे लोग उसके बचपन के मोहल्ले के निवासी थे—रिश्तेदार नहीं, पर रिश्तेदारों से भी अधिक आत्मीय। मोहल्ले में उनकी पुश्तैनी बेकरी थी, जिसे अब उनके पुत्र कुशलता से चला रहे थे। इस कारण वे स्वयं को धर्म-कर्म में लगाने के लिए स्वतंत्र हो चुके थे।

शोभा ने बमुश्किल आँखें खोलीं, कपड़े पहने। ढीली-ढाली मैक्सी नहीं, बल्कि बाकायदा साड़ी-ब्लाउज़ पहनकर आँचल सिर पर डाला, जिससे पैर छूने की रस्म अदा की जा सके। यद्यपि उसके मन में यह सवाल था कि तीनों लोकों से न्यारी नगरी मथुरा, जो स्वयं तीर्थ है, को छोड़कर वह वृद्ध दंपत्ति यहाँ क्या करने आए हैं? परंतु ऐसे प्रश्न करना शिष्टाचार के विरुद्ध था।

वह ठंड भरी रात में आँगन से कमरे और कमरे से आँगन तक दौड़ती रही। वे टीन के कनस्तर में तरह-तरह के बिस्कुट लाए थे और उन्होंने चाय के साथ पंकज एवं शोभा को बिस्कुट खिलाने का आग्रह किया। पंकज ने तो एक-दो बिस्कुट ले लिए, परंतु शोभा

उस रात कुछ भी नहीं खा सकी। अधिक आग्रह करने पर उसे खाँसी आ गई।"(कालिया, 12)

भारतीय संस्कृति में विवाह संस्कार का भी अत्यंत विशेष महत्व है। विवाह उत्सव में निभाए जाने वाले रीति-रिवाज, परंपराएँ और रस्में भारतीय संस्कृति की पहचान हैं। विवाह में बनाए जाने वाले व्यंजन भी विशेष होते हैं और भोजन में शुद्धता को एक महत्वपूर्ण मूल्य के रूप में माना जाता है, यथा- "सुबह होते-होते घर मेहमानों से भर गया। पूरी, कचौड़ी, मिठाई, नमकीन, बच्चों की धमा-चौकड़ी और नाइन की गालियों के बीच यह समझ पाना मुश्किल था कि सुबह कब हुई और दोपहर कब आ पहुँची। कालिंदी सूखे होंठों और थके चेहरों के साथ सारा दिन भागदौड़ में लगी रही—कभी शर्बत बनाते, कभी पत्तल लगाते, कभी पैर छूते, कभी पानी पिलाते हुए। सास ने कहा, 'कल से इसे बुखार है, पर देवर के विवाह का उत्साह देखो, बिना खाए-पिए लगी हुई है।' (कालिया, 116) भारतीय संस्कृति में खान-पान की शुद्धता को विशेष मान्यता प्राप्त है। यहाँ यह तय किया जाता है कि क्या खाना है, कब और कैसे खाना है।

ममता कालिया की कहानियों में इन बातों का उल्लेख अनेक स्थलों पर मिलता है। कहानी 'बाथरूम' में भी ममता कालिया ने भारतीय विवाह की रस्मों का सुंदर चित्रण किया है। घर में नई बहू के स्वागत के अवसर पर बड़ी मामी ने उसके पैर पखारे। उसके सादे श्रृंगार और शांत व्यक्तित्व को देखकर कांता मामी ने उसे घर की कोई बुजुर्ग सेविका समझ लिया और पर्स से निकालकर दो रुपये का नोट परात में तैरा दिया। बड़ी मामी का चेहरा तमतमा उठा। वही हाल बिचली मामी का भी हुआ। मुँह दिखाई की रस्म के लिए कांता मामी को बैठक में बिछी जाजम पर बिठाया गया, जहाँ मोहल्ले की स्त्रियाँ ढोलक लेकर लंबे समय से गा-बजा रही थीं। कांता मामी को सिर पर आँचल रखने की आदत नहीं थी। उनकी रेशमी साड़ी बार-बार सिर से खिसक रही थी। मैंने कहा, "मामी, चिमटी लगा दूँ?" (कालिया, 69) मामी ने मना कर दिया। बड़ी मामियों ने इसे भी उनकी अवज्ञा के रूप में लिया।

3.2.2.2 स्थानीय और क्षेत्रीय पहचान-

कई शहरों में रहने के कारण ममता कालिया को विभिन्न क्षेत्रों की विविध संस्कृतियों का गहन अनुभव है, जिसकी झलक उनकी कहानियों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। भारतीय संस्कृति में त्योहारों के अवसर पर बाज़ारों की रौनक का विशेष महत्व होता है। ममता कालिया की कहानी 'वसंत एक तारीख' में इस बाज़ारी रौनक का सजीव चित्रण मिलता है- "मैं महीनों बाद घर से निकली थी, यानी चौक से आगे। चौक तक तो पूछिए मत, दिन में दस चक्कर तो लग ही जाते थे। बेसन से लेकर बॉर्नविटा तक की खरीददारी मेरी ही जिम्मेदारी थी। अब तो हालत यह थी कि मैं आँखें मूँदकर भी बता सकती थी कि कहाँ मलाईवाली का चबूतरा है, कहाँ गुलाब की चाट का ठेला लगता है, कहाँ एक पागल आदमी बैठा है और कहाँ होम्योपैथिक डॉक्टर की उजाड़ सी दुकान है। यहीं कहीं गर्म इमरती हर वक्त छनती रहती है और भाँग की गोली भी यहीं मिलती है। आगे पुराना बजाजा है, जहाँ से टोकरियाँ मिलती हैं। नीम के पेड़ के नीचे मिर्च-मसाले बिकते हैं और उससे आगे धागों की दुकानें हैं। ठहरिए! बीच में कील वाले की दुकान तो छूट ही गई। यहीं से संगम जाने के लिए सस्ते रिक्शे मिलते हैं, और दातुनें भी। एक तरफ़ सब्ज़ी बाज़ार शुरू होता है और दूसरी ओर मिठाई बाज़ार।

भारतीय संस्कृति में बुजुर्गों के अनुभवजन्य ज्ञान, विचार और भावनाओं को विशेष महत्व दिया जाता है। यही अनुभव ऋतु-वर्णन के माध्यम से भी सामने आते हैं- ये वसंत के दिन थे- ऋतुराज का महीना। जगह-जगह गुलाबी, पीले और नीले फूल सिर उठाकर खिलखिला रहे थे। सड़क किनारे की पटरियों की दरारों तक में घास फूट आई थी।

ममता कालिया की कहानी 'निर्मोही' में भी सांस्कृतिक दर्शन, रीति-रिवाज़, त्योहारों और सामाजिक मान्यताओं का गहरा चित्रण मिलता है। संतान प्राप्ति के लिए समाज में प्रचलित आस्था और मान्यताओं को उन्होंने बड़ी सहजता से उकेरा है- "अरे बियाह को एक साल बीता, दो साल बीते, साल पे साल बीते, फूलमती की कोख हरी न भई। सास लाख झाड़-फूंक करावै, राजाजी ओझा-बैद बुलावै, ननद किशन कन्हाई की बाललीला सुनावै पर कोई उपाय नायँ फलै। एक दिन लब्बावती को सुपनौ आयौ कि तेरे भैया ने पीपर समूल उपारौ, येई मारे महल-अटारी निचाट पारै हैं। एकास्सी के दिन सौंताल के किनारे फिर से तैरी भाभी पीपर लगायें, रोज़ ताल में नहायें, पीपर पूजै बाद अन्न- जल लें तब जाके जे

कलंक मिटै। फिर तू नौ महीनन में जौले-जौले दो भतीजे खिलड़्यौ। लब्बावती ने सुबह सबको सपना बखानौ। अगले ही दिन एकास्सी थी। सो सात सुहागनें पूजा की थाली सजाए, सोलहों सिंगार किए, सोने का कूजाडा बरनैनी फूलमती के सिर पर धरा कर पीपल रोपने चलीं। महल की मालिन का इकलौता बेटा सबके आगे-आगे रास्ता सुझाए। बाके हाथ में फड़वा-खुरपी। "राजा महलन में से देखते रहे। रानी फूलमती ने लोट-लोटकर पूजा की। आपै आप बावड़ी में उतर सोने का कूजा भौ और पीपर-मूर पे जल चढ़ायौ। फिर सातों सुहागनों ने असीसें उचारीं। सब की सब राजी-खुशी घर लौटीं। रोज़ सबेरे पंछी-पखेरू के जगते-मुसकते फूलमती, लब्बावती दोनों जाग जातीं और सौंताल नहाने, पीपर पूजने निकल पड़तीं।"(कालिया, 139)

3.2.2.3 भाषा एवं संवाद-

भारत में विभिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं, जो भारतीय संस्कृति की पहचान हैं। इसी प्रकार, यहाँ विविध प्रकार के व्यंजनों का प्रचलन है। विभिन्न अवसरों पर अलग-अलग प्रकार के व्यंजन बनाए जाते हैं। ममता कालिया की कहानियों में इनका सजीव चित्रण मिलता है, यथा-

“छुट्टियों में हमें मामा के घर जाना बहुत अच्छा लगता था। वहाँ कई ऐसी चीज़ें और स्वाद मिलते थे, जो नागपुर के धरमपेठ में नहीं मिलते थे। जब हम जमना जी में नहाकर घर लौटते, तो मामी रास्ते में हमें ‘कस्सो हलवाई’ की दुकान से तेल की कचौरियाँ दिलवातीं—अधन्ने में दो—और साथ में आलू की रसेदार तरकारी मुफ्त मिलती। कभी-कभी गोले की गिरी बेचने वाले की रेहड़ी दिख जाती। वह ताजे नारियल की गिरी के बड़े-बड़े चकले बेचता—एक छेदवाले पैसे में दो। हमारे सारे मौज-मज़े की दुनिया बस एक पैसे या अधन्ने में सिमटी होती। हम गिरी के छल्ले अपनी बाँहों में पहनकर खेलते और कुछ देर बाद उन्हें चबाकर खा जाते। वैसे, गोले की गिरी डिब्बे के ऊपर की टीन की चादर देने पर भी मिल जाती थी।

दोपहर में मलाई बर्फ़ वाला लकड़ी की संदूकची में अपनी दुकान लेकर आता। ताज़े हरे ढाक के पत्ते पर वह चाकू से उतार कर मलाई बर्फ़ की पतली परतें इकट्ठी में देता।

जैसे ही आसमान में बादल घिरते, बड़ी मामी पिछले हॉल में हमारे लिए झूला डलवा देतीं और उसी के साथ हमारा सावन आरंभ हो जाता।” (कालिया, पृष्ठ 85)

इनकी कहानियों में हिंदी भाषा के विविध रूपों का प्रयोग किया गया है। ‘खिड़की’ कहानी में भोजपुरी, ‘निर्मोही’, ‘दूसरा देवदास’, ‘रायवाली’ आदि कहानियों में ब्रजभाषा के प्रयोग के उदाहरण मिलते हैं। साथ ही, अंग्रेज़ी और पंजाबी भाषा के शब्दों का भी प्रयोग देखा जा सकता है।

भोजपुरी: तेलबा, आमकली की मेटियाँ पलट गईं लागत बा, आप एहसिन बैना ना, दरद होत बा, सप्तमी पुज गई त फाग डलिहे न, हियाँ से लुकाइब, उहां से भी लुकाइब।

पंजाबी: चंगी, स्वा, हाय रब्बा, वापस जाना, एथे करदा, ओथे की रखेया, सूरज दिसदा।

3.3 सांस्कृतिक भिन्नता

प्रत्येक क्षेत्र या भू-भाग की अपनी विशिष्ट संस्कृति होती है, जो उस क्षेत्र की पहचान, जीवनशैली, परंपराओं और सामाजिक व्यवहार को निर्धारित करती है। भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में यह सांस्कृतिक भिन्नता अत्यंत गहन और रंग-बिरंगी है। यह विविधता भारत की आत्मा में बसती है और इसे विशिष्ट बनाती है। भारत की सांस्कृतिक विविधता कोई आकस्मिक घटना नहीं, बल्कि सदियों के ऐतिहासिक, सामाजिक और भौगोलिक परिवर्तनों की परिणति है। यह विविधता मुख्यतः विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में बसने वाले समुदायों, जातीय समूहों और धार्मिक परंपराओं के संपर्क, समन्वय और संघर्ष के परिणामस्वरूप विकसित हुई है। प्राचीन काल से लेकर मध्यकालीन युग तक, विभिन्न जनजातियों, राजवंशों, व्यापारियों, संतों और प्रवासी समुदायों ने भारत की सांस्कृतिक परतों को समृद्ध किया है।

भारतीय समाज में भाषा, धर्म, भोजन, वेशभूषा, कला, वास्तुकला, संगीत, नृत्य और त्योहारों में विविध प्रकार की सांस्कृतिक भिन्नताएँ विद्यमान हैं। उत्तर भारत की संस्कृति में जहाँ गंगा-जमुनी तहज़ीब की झलक मिलती है, वहीं दक्षिण भारत में द्रविड़िय सभ्यता की गूंज स्पष्ट सुनाई देती है। पूर्वोत्तर भारत की जनजातीय परंपराएँ और लोक विश्वास इस क्षेत्र की सांस्कृतिक विशिष्टता को रेखांकित करते हैं, जबकि पश्चिमी भारत की रंगीन लोककलाएँ, संगीत और मेले इस विविधता को और अधिक आकर्षक बनाते हैं।

भारत में अनेक धर्मों के अनुयायी सह-अस्तित्व में विश्वास रखते हैं। हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन, पारसी और यहूदी समुदाय अपने-अपने रीति-रिवाज और जीवनदृष्टि के साथ भारत की सामाजिक संरचना में रचे-बसे हैं। प्रत्येक धर्म के अपने पर्व-त्योहार हैं, जो सामाजिक समरसता और आनंद का संदेश देते हैं। जैसे दीपावली, ईद, गुरुपर्व, क्रिसमस, बुद्ध पूर्णिमा, महावीर जयंती, और नववर्ष आदि उत्सव भारत की धरती पर समान रूप से उल्लास के साथ मनाए जाते हैं। इस सांस्कृतिक समन्वय का प्रभाव न केवल त्योहारों तक सीमित है, बल्कि भाषा, खान-पान, पहनावे और पारिवारिक मूल्यों में भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। उत्तर भारत की कचौरी, दक्षिण भारत की इडली-दोसा, पश्चिम की ढोकला-फाफड़ा और पूर्व की मोमोज़-सिद्धु जैसी खाद्य परंपराएँ इस सांस्कृतिक समृद्धि का प्रतीक हैं। संक्षेप में, भारत की सांस्कृतिक विविधता न केवल इसकी पहचान है, बल्कि इसकी शक्ति भी है। यह विविधता एकता की भावना को सुदृढ़ करती है, और यह दर्शाती है कि विविधताओं में भी समरसता और सामंजस्य संभव है। भारतीय संस्कृति की यही विशेषता उसे विश्व पटल पर विशिष्ट स्थान प्रदान करती है।

3.3.1 क्षेत्रीय भिन्नता-

फसल की कटाई के उपलक्ष्य में भारत के विभिन्न राज्यों में अनेक पर्व मनाए जाते हैं, जो क्षेत्र विशेष की संस्कृति, परंपरा और लोकजीवन से गहराई से जुड़े होते हैं। ये पर्व न केवल कृषि कार्य से जुड़े उत्सव हैं, बल्कि सामाजिक समरसता और सांस्कृतिक पहचान के भी प्रतीक हैं। बैसाखी पंजाब का प्रमुख त्यौहार है, जिसे सिख नववर्ष की शुरुआत के रूप में भी मनाया जाता है। यह पर्व विशेष रूप से किसानों के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। ओणम, केरल का प्रमुख पर्व, वहाँ के जनजीवन में सुख, समृद्धि और उत्सवधर्मिता का प्रतीक माना जाता है। पोंगल दक्षिण भारत के तमिलनाडु राज्य का प्रसिद्ध पर्व है, जिसमें सूर्य देव की आराधना के साथ नई फसल की पूजा की जाती है। इसी प्रकार बिहू असम में बसंत ऋतु की शुरुआत के उपलक्ष्य में मनाया जाता है, जिसमें नृत्य, गीत और पारंपरिक पकवानों का विशेष स्थान होता है। सांझी त्योहार उत्तर भारत और पश्चिमी भारत के हरियाणा, दिल्ली, गुजरात, राजस्थान, मालवा और ब्रज क्षेत्र में नवरात्रि काल में मनाया जाता है। यह पर्व विशेषकर स्त्रियों के लोक-संस्कारों और सौंदर्यबोध से जुड़ा हुआ है।

लठमार होली उत्तर प्रदेश के मथुरा जिले के बरसाना और नंदगाँव में विशेष रूप से मनाई जाती है। यह पर्व न केवल रंगों का, बल्कि हास्य, प्रेम और लोक परंपरा का भी अद्वितीय उदाहरण है।

भारत में विभिन्न धर्मों के लोग—हिंदू, मुसलमान, सिख, ईसाई, बौद्ध, पारसी और यहूदी—सदियों से सह-अस्तित्व की भावना के साथ एक ही सामाजिक संरचना में रहते आए हैं। यह विविधता केवल धार्मिक विश्वासों में ही नहीं, बल्कि खानपान, वेशभूषा, भाषा और रीति-रिवाजों में भी झलकती है। देश के विभिन्न हिस्सों में खानपान की अपनी विशेषताएँ हैं। दक्षिण भारत में इडली, डोसा और सांभर लोकप्रिय हैं, तो उत्तर भारत में मक्के की रोटी और सरसों का साग विशेष प्रिय है। गुजरात में ढोकला, खांडवी, थेपला आदि पकवान रोजमर्रा के भोजन में शामिल होते हैं। इसी प्रकार, भारत की भाषिक विविधता भी अत्यंत विशिष्ट है— यहाँ हर पंद्रह-बीस किलोमीटर की दूरी पर भाषा या बोली का रूप बदल जाता है।

ममता कालिया की कहानियों में भी भारतीय जीवनशैली, खानपान और भाषिक विविधता का सुंदर चित्रण मिलता है। उन्होंने न केवल पारंपरिक व्यंजनों का वर्णन किया है, बल्कि विवाह जैसे सामाजिक अवसरों पर बनने वाले विशिष्ट भोजन और घरेलू गहमा-गहमी को भी सजीव रूप में प्रस्तुत किया है— "सुबह घर मेहमानों से भर गया। पूरी, कचौड़ी, मिठाई, नमकीन, बच्चों की धकापेल, नाइन की गाली-गलौज में कब सुबह हुई, कब दोपहर, कुछ पता न चला। कालिन्दी सूखा मुँह लिये सारा दिन दौड़ती रही—शर्बत बनाती, पत्तल लगाती, पैर छूती, पानी पिलाती।" (कालिया, 117)

वे क्षेत्रीय व्यंजनों का भी उल्लेख करती हैं, जैसे- ढोकला, थेपला, पिट्ज़ा और इडली। देखिए—

"दो-चार बार मेरी बा के हाथ का ढोकला-थेपला खाओगे न, एकदम से यहाँ के बन जाओगे।"

‘अपर्णा बरज देती, ‘न बाबा, तुम्हीं खाओ, मैं जूठा नहीं खाती।’

घर पर ढोकला-थेपला के साथ-साथ चाय-बिस्किट भी बंद था।" (कालिया, 117)

भारतीय संस्कृति में खानपान की शुद्धता और समय का विशेष महत्त्व होता है। क्या खाना है, कब खाना है, किसके साथ खाना है— ये सभी बातें भारतीय सामाजिक

संरचना में गहरे निहित हैं। ममता कालिया की कहानियों में यह विवरण यत्र-तत्र बड़ी सहजता से समाहित हुआ है। भारत में रहन-सहन की विविधता भी अत्यंत रोचक है। पंजाब में महिलाएँ सामान्यतः सलवार-कमीज़ पहनती हैं, जबकि महाराष्ट्र में लावणी शैली की नौवारी साड़ी प्रचलित है। गुजरात में पारंपरिक घाघरा-चोली लोकप्रिय है, जबकि राजस्थान और उत्तर प्रदेश में साड़ी विभिन्न ढंगों से पहनी जाती है। यह क्षेत्रीय वेशभूषा न केवल सौंदर्यबोध का प्रतीक है, बल्कि सांस्कृतिक अस्मिता का भी हिस्सा है। इस प्रकार, भारत को "विविधता में एकता" का प्रतीक देश कहा जाता है। यहाँ विभिन्न भाषा, धर्म, जाति और समुदाय के लोग एक समाज में रहते हुए परस्पर सहयोग, सौहार्द और सह-अस्तित्व के भाव से जीवन जीते हैं। भारत की यही सांस्कृतिक विभिन्नता उसे विश्व के मानचित्र पर एक विशिष्ट और अनुकरणीय स्थान प्रदान करती है।

3.3.2 धार्मिक और जातीय भिन्नता-

ममता कालिया की कहानियों में भारतीय सांस्कृतिक विविधता का चित्रण बहुत ही सजगता और गहराई से किया गया है। इन्होंने अपनी रचनाओं में विशेष रूप से हिंदू धर्म की समस्याओं, रीतियों और मान्यताओं का वर्णन किया है। इनकी कहानियाँ जैसे लड़के, दूसरा देवदास, रायवाली, निर्मोही, लैला मजनू, बाथरूम आदि में धर्म से संबंधित रीतियों और मान्यताओं का उल्लेख किया गया है। वहीं, फर्क नहीं, आजादी, माँ, आपकी छोटी लड़की आदि कहानियों में समाज में फैले बेवजह के भ्रम और अंधविश्वास को उजागर किया गया है। 'फर्क नहीं' कहानी में एक माँ अपनी बेटी को किराएदार प्रमिला के घर जाने से रोकती है, क्योंकि प्रमिला के शरीर पर सफेद दाग हैं, जिसे वह छुआ-छूत की बीमारी मानती है। माँ का मानना होता है कि प्रमिला के घर उसी के कप से चाय पीने से कहीं उसकी बेटी भी वह बीमारी न पकड़ ले और फिर उसकी शादी नहीं हो पाएगी। इसी प्रकार, 'आजादी' कहानी में दादी के पैर में दर्द होने पर भी उसे डॉक्टर के पास नहीं ले जाया जाता। उसका पति परमार्थ की चिंता करते हुए कहता है, "तुम्हें कौन ब्याह रचाना है, मर्ज और कर्ज समय पाकर जाते हैं, नंदू की माँ, डाक्टरन की चीर-फाड़ से तो जन्म भी खराब हो जाता है।" (कालिया, 129) यहाँ दवाई लेने में भी अंधविश्वास की प्रवृत्ति को व्यक्त किया गया है।

‘आपकी छोटी लड़की’ कहानी में टुनिया की माँ एक अस्पृश्यता की धारणा वाली महिला हैं। टुनिया का सारा परिवार शिक्षित और सुसंस्कृत है, लेकिन उसकी माँ छुआछूत को मानती हैं। वह अपनी नौकरानी को रसोई में खाना बनाने से पहले की सारी तैयारी तो करने देती हैं, लेकिन उसे खाना बनाने नहीं देती। कहानी में यह वाक्य मिलता है, “कोलीन सुबह-शाम आती है, डेस्कटिंग करती है, कपड़े इस्तरी करती है और रसोई में खाना बनाने के पूर्व की तैयारी करती है। खाना उससे नहीं बनवाया जाता। मम्मी कहती हैं, ‘वह पकाएगी तो छूत लग जाएगी।’ टुनिया को यह जरा भी समझ नहीं आता कि यह छूत कैसे लगती है। जैसे कोलीन आटा गूँथे, सब्जी काट दे तो ठीक, लेकिन वही सब्जी यदि छौंक दे तो छूत, वही आटा अगर सेंक दे तो छूत।” (कालिया, 21) इस प्रकार, ममता कालिया अपनी कहानियों में यह प्रश्न उठाती हैं कि अंधविश्वास किस प्रकार से लोगों के मस्तिष्क में समाया हुआ है और इसे मिटाने की आवश्यकता है। इनकी कहानियाँ न केवल सामाजिक और सांस्कृतिक मुद्दों को उजागर करती हैं, बल्कि यह भी दर्शाती हैं कि हमें अपनी सोच में सुधार लाकर अंधविश्वास के खिलाफ कदम उठाने चाहिए।

3.3.3 विविधता में एकता-

भारत को विविधता में एकता का देश कहा जाता है। यहाँ विभिन्न समूहों के लोग एक समाज में रहते हैं और आपस में सहयोग करते हैं। भारत की सांस्कृतिक विविधता विश्वभर में प्रसिद्ध है। यह विविधता भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों और प्राचीन तथा मध्यकालीन युगों में विभिन्न समुदायों के प्रवास और बसने के कारण विकसित हुई है। भारतीय समाज में विभिन्न प्रकार की सांस्कृतिक विविधताएँ पाई जाती हैं। भारत में कई प्रकार के त्योहार मनाए जाते हैं और अनेक धर्मों को मानने वाले लोग यहाँ रहते हैं। ममता कालिया ने अपनी रचनाओं में भारतीय विवाह अनुष्ठानों में बनने वाले व्यंजनों का भी उल्लेख किया है। ‘सुबह घर मेहमानों से भर गया। पूरी, कचौड़ी, मिठाई, नमकीन, बच्चों की धकापेल, नौकरानी की गाली-गलौज में कब सुबह हुई, कब दोपहर, कुछ पता न चला। कालिन्दी सूखा मुँह लिये सारा दिन दौड़ती रही, शर्बत बनाती, पत्तल लगाती, पैर छूती, पानी पिलाती। इनकी कहानियों में गुजरात और दक्षिण भारत के खाने का भी वर्णन मिलता है, दृष्टव्य है-

“तुमसे तुम्हारी भाषा में बोलना चाहता हूँ। मैं गुजरात की हूँ, पर गुजराती नहीं हूँ, श्रवण। यू.पी. की दीक्षित हूँ। पढ़ाई-लिखाई यहाँ हुई, इसलिए तुमको यहाँ की लगती हूँ। मुझे भी यहीं का बना लो ना। दो-चार बार मेरी बा के हाथ का ढोकला-थेपला खाओगे न, एकदम से यहाँ के बन जाओगे।

अपर्णा कहती है, “श्रवण, ज़रा ये बारह पन्ने फैंक्स कर दो, मैं मीटिंग में बिजी हूँ।”
करन से वह इसरार करता, “मेरा पिज़्ज़ा चखकर देखो, तुम्हारी इडली से ज्यादा मजेदार है।”

अपर्णा बरज देती, “न बाबा, तुम्हीं खाओ, मैं जूठा नहीं खाती।”

घर पर ढोकला-थेपला के साथ-साथ चाय-बिस्किट भी बंद थे। (कालिया, 117)

भारतीय संस्कृति में खानपान की शुद्धता का विशेष महत्व है। यहाँ खाने से लेकर पीने तक, क्या खाना है, कैसे खाना है, कब खाना है—इन सभी बातों का महत्व है।

ममता कालिया की कहानियों में इसका वर्णन यत्र-तत्र मिलता है। ‘बाथरूम’ कहानी में मथुरा के यमुनाघाट पर मिलने वाले खाने का वर्णन इस प्रकार किया गया है- “छुट्टियों में हमें मामा के घर आना अच्छा लगता। कितनी ऐसी चीज़ें और स्वाद थे जो नागपुर के धरमपेठ में नहीं मिलते थे। यमुनाजी में नहाकर जब हम घर लौटते तो मामी रास्ते में हमें कस्सो हलवाई की दुकान से तेल की कचौरियाँ दिलातीं, अधन्ने में दो, साथ में आलू की रसेदार तरकारी मुफ्त। कभी-कभी गोले की गिरी वाले की रेहड़ी दिख पड़ती। वह ताज़े गोले की गिरी के बड़े-बड़े चकपहिये बेचता—एक छेद वाले पैसे में दो। हमारे मौज-मज़े की सारी दुनिया बस एक पैसे या अधन्ने में हासिल हो जाती। हम गिरी के छल्ले बाँहों में पहनकर खेलते और कुछ देर बाद उन्हें कुतर डालते। वैसे गोले की गिरी, डिब्बे के ऊपर की टीन का पतरा देने पर भी मिल जाती। दोपहर में मलाई बर्फ़ वाला लकड़ी की संदूकड़ी में अपनी दुकान लेकर आता। ताज़े हरे ढाक के पत्ते पर वह चाकू से उतार कर मलाई बर्फ़ की पतली पर्तें इकट्ठनी में देता। आसमान में बादल घिरते ही, बड़ी मामी पिछले हॉल में हमारे लिए झूला डलवा देतीं और हमारा सावन आ जाता।” नमक और खानपान कहानी में लेखिका ने विभिन्न परिवारों के खानपान की मान्यताओं को चित्रित किया है।

भारत के विभिन्न क्षेत्रों में सलवार सूट पहना जाता है, तो कहीं साड़ी पहनी जाती है। कई क्षेत्रों में सलवार कमीज़ पहनना वर्जित है; यहाँ यह पहनावा शालीन नहीं समझा

जाता, देखिए- “अजय मामा की शादी इटावा में तय हुई। कान्ता मामी ने कानपुर से बी.ए. किया था। वे होस्टल में रहकर पढ़ी थीं। सगाई के बाद भांजी मारने वाले हितैषियों ने उनके बारे में तरह-तरह की खबरें प्रचारित कीं—‘कान्ता छुरी-काँटे के बिना खाना नहीं खाती, कान्ता सलवार-कमीज़ पहनती है, कान्ता गिटपिट-गिटपिट अंग्रेज़ी बोलती है।’ मामियों ने कहा, ‘भई, इटावा वालों को ना कर दो। हमें घर में बहू लानी है कि मेमसाब। उसके नखरे कौन झेलेगा।’ मध्यस्थों ने आश्वस्त किया, ऐसी कोई बात नहीं है, लड़की बड़ी शालीन है।” (कालिया, 85)

कई क्षेत्र में लहंगा विशेष मौकों पर पहना जाता है- “टुनिया को इसी तिलमिलाहट में याद आई वह लाल लहंगा, जिसके कारण उसे कितनी मार पड़ी थी। दीदी को टाउनहॉल में एकल नृत्य प्रतियोगिता में नाचना था। उसके लिए नया लाल लहंगा, ब्लाउज़ और चूनर बनवाए गए थे। प्रतियोगिता के पूर्व दीदी दोपहर में बाज़ार गई थी—लाल चुटीला और झूमर खरीदने। पीछे से दर्जी ने आकर दीदी की पोशाक दी। नई लाल पोशाक टुनिया को इस कदर भाई, उससे रहा न गया। उसने चाव-ही-चाव में अपनी फ्रॉक उतार लहंगा-ओढ़नी पहन ली। बाकायदा सिर ढंककर वह माथे पर टिकुली लगा ही रही थी कि दीदी वापस आई।” (कालिया, 80)

3.3.4 भाषाई विविधता-

ममता कालिया की कहानियों में भाषा की विविधता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उनका भाषा ज्ञान उच्च कोटि का है और वे शब्दों की पारखी हैं। उन्हें हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का गहरा ज्ञान है। इसके साथ ही, उनकी रचनाओं में ब्रज, भोजपुरी और पंजाबी भाषाओं का भी सुंदर प्रयोग देखने को मिलता है। उनकी कहानी 'निर्मोही' में भाषा का प्रयोग एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है- "जे कचनार राजा जी ने लगवायौ हौ। उनकी रसोई में एक दिन पूरी ब्यालू 'क्रचनार की स्थे ही। कचनार की भुजिया, कचनार का रायता, कचनार का अचार, बाजरे की बेड़मी। एक दिन शकरकन्दी का राज रहतौ। शकरकन्दी का हलवा, शकरकन्दी की खीर, शकरकन्दी की चाट, शकरकन्दी की पूड़ियाँ एक थी फूलमती। बाके ये बड़ी-बड़ी आँखें, कोई कहे मिरगनैनी, कोई कहै डाबरनैनी। एक बाकी ननद-लब्बावती।

राजा सूरसेन की हवेली का वर्णन करते हुए ममता कालिया ने एक विशेष स्थानीय भाषा का प्रयोग किया है, जिससे उनकी कहानी में एक अद्भुत सांस्कृतिक रंग मिलता है। उदाहरण के तौर पर, राजा जी के पीपल के पेड़ के बारे में बताते हुए सन्तरी कहता है- "राजा जी पीपल के पेड़ पर भूत-पिसाच और परेत तीनों कौ बसेरौ हैं। जैसे भी भीत उठवाओगे, पीपल की छैयाँ ज़रूर छू जाएगी, जनै उगती जनै डूबती।

'मुखौटा' कहानी में भी गुजराती, भोजपुरी और पंजाबी भाषाओं का सुंदर मिश्रण देखने को मिलता है, जैसे- "भोजपुरी-मुखौटा, तेलबा, आमकली की मेटियां पलट गयी लागत बा, आप एहसिन बैना ना, दरद होत बा, सप्तमी पुज गई तो फाग डलेगा न, हियां से लुकाएगा, उहाँ से भी लुकाएगा।'

इसके अतिरिक्त, 'खिड़की' कहानी में भोजपुरी का प्रयोग मिलता है, जिससे कहानी में और भी रंगीन सांस्कृतिक विविधता का अनुभव होता है। इस प्रकार, ममता कालिया की कहानियों में भारतीय समाज, धर्म, रीतियाँ, मान्यताएँ, परम्पराएँ, भाषा, पहनावा और संस्कृति के विविध रूपों का उल्लेख मिलता है। इनकी रचनाओं में भारतीय संस्कृति का सारपूर्ण चित्रण हुआ है, जो न केवल भाषा की विविधता को दर्शाता है, बल्कि भारतीय समाज के विभिन्न पहलुओं को भी उजागर करता है।

3.4 सांस्कृतिक नवीन मान्यताएँ

भारतीय संस्कृति एक ऐसी जीवंत धारा है, जो तैयार की गई या बनाई गई किसी विशेष वस्तु नहीं है, बल्कि यह बुजुर्गों के अनुभवों, परंपराओं और ज्ञान का परिणाम है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते हुए आज तक जीवित और प्रभावी बनी हुई है। यह ज्ञान न केवल समाज को दिशा प्रदान करता है, बल्कि जीवन जीने के सरल और प्रभावी तरीके भी सिखाता है। भारतीय संस्कृति जीवन के हर पहलू को समाहित करती है और समाज के प्रत्येक व्यक्ति को यह सिखाती है कि जीवन के विभिन्न पहलुओं को कैसे संतुलित और शांति से जी सकते हैं। किसी भी समाज की संस्कृति उसके लोगों की जीवनचर्या से जुड़ी होती है, जो उनकी परंपराओं, मूल्यों, आस्थाओं और विश्वासों के रूप में प्रकट होती है। भारतीय संस्कृति भी इस परिपेक्ष्य में अलग नहीं है। इसका सहज स्वभाव और गुण धर्म की गतिशीलता इसे अनोखा बनाती है। भारतीय संस्कृति में गतिशीलता का अर्थ है, यह

समय के साथ अपने रूपों और विचारों में बदलाव करती है, लेकिन अपनी मूल आत्मा और आस्थाओं को बनाए रखती है। यह एक ऐसी संस्कृति है, जो सदी दर सदी अपने लोगों के लिए अनुकूल और सहायक बनी रहती है।

संस्कृति समाज के लिए न केवल मार्गदर्शक होती है, बल्कि यह समाज के आचरण, आदतों, और रहने-सहने के ढंग को भी निर्धारित करती है। यह समाज में अनुशासन, आचार, और आदर्श स्थापित करने का कार्य करती है, जिनसे सभ्यता का निर्माण होता है। सभ्यता का अर्थ है समाज में एक ठोस ढांचा बनाना, जिसमें लोगों के विचार, आस्थाएँ, और उनके आपसी संबंध स्थापित होते हैं। भारतीय संस्कृति के अनुसार, समाज में रहने वाले हर व्यक्ति को आपस में सहयोग और समझ से काम करने का आदान-प्रदान होता है, जिससे हर कोई अपने जीवन में शांति, प्रेम और समृद्धि की ओर बढ़ता है। भारतीय संस्कृति न केवल एक पुरानी, समृद्ध संस्कृति है, बल्कि यह आज के समय में भी जीवित और प्रासंगिक बनी हुई है। हालांकि समय के साथ बदलाव आए हैं, फिर भी भारतीय समाज में परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन बनाने का निरंतर प्रयास किया जाता है। भारतीय समाज के लोग यह समझते हैं कि भूतकाल की परंपराएँ न केवल उनके इतिहास और संस्कृति की नींव हैं, बल्कि उन्हें वर्तमान और भविष्य की दिशा को समझने और बनाए रखने में भी मदद करती हैं। इसलिए, भारतीय संस्कृति में पुरानी परंपराओं को महत्व दिया जाता है, और साथ ही, आधुनिकता का भी स्वागत किया जाता है।

भारतीय संस्कृति में भौतिक और आध्यात्मिक दोनों तत्वों का समन्वय किया गया है। भौतिकता का मतलब जीवन के भौतिक सुख-संसाधनों की प्राप्ति और उनका सही तरीके से उपयोग करना है, जबकि आध्यात्मिकता जीवन की आंतरिक संतुष्टि, आत्मिक शांति, और ब्रह्म से जुड़ाव की ओर संकेत करती है। भारतीय संस्कृति में इन दोनों तत्वों का संतुलन इस प्रकार से किया गया है कि एक दूसरे के बिना जीवन अधूरा सा महसूस होता है। यह संस्कृति यह सिखाती है कि जीवन में भौतिक सुख और आध्यात्मिक उन्नति दोनों का समन्वय होना चाहिए, ताकि व्यक्ति समग्र रूप से खुश और संतुष्ट रह सके। इस प्रकार, भारतीय संस्कृति का स्वरूप एक ऐसा जीवंत और गतिशील मार्गदर्शक है, जो न केवल पारंपरिक ज्ञान और मूल्यों को बनाए रखता है, बल्कि समय के साथ समाज को और अधिक विकसित करने का प्रयास भी करता है। यह जीवन के हर पहलू में संतुलन

बनाए रखती है और अपने लोगों को एक दिशा प्रदान करती है, जिससे वे न केवल अपने जीवन में सफलता पा सकें, बल्कि समाज और विश्व में भी योगदान कर सकें।

3.4.1 सांस्कृतिक नवीन मान्यताओं का स्वरूप-

भारतीय संस्कृति की कुछ अपनी मौलिक विशेषताएँ हैं, जिनके कारण भारतीय समाज में "अनेकता में एकता" का सिद्धांत स्थापित हुआ है और आज भी यह विश्वभर में प्रसिद्ध है। किंतु समय और आधुनिकता के साथ भारतीय संस्कृति में नवीन मान्यताओं का चलन बढ़ा है। भारत पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से भौतिक उन्नति और पूंजीवाद की ओर आकर्षित हो गया है। आज त्याग और संतोष की जगह महत्वाकांक्षाओं ने ले ली है, जिसके कारण समाज असंतुलन और बेरोजगारी की समस्याओं से जूझ रहा है। भारत में प्राचीन काल से संयुक्त परिवार की परंपरा रही है, किंतु आज भारत में भी पश्चिमी देशों की तरह संयुक्त परिवारों ने एकल परिवार का रूप ले लिया है। संयुक्त परिवार में एक मुखिया होता था, जिसकी बातों का परिवार में सम्मान और मान्यता होती थी, लेकिन एकल परिवारों में परिवार की जिम्मेदारी स्त्री और पुरुष दोनों के कंधों पर समान रूप से आ गई है। बढ़ती महंगाई के कारण जीवन यापन के लिए शिक्षित समाज में स्त्रियाँ भी पुरुषों के समान नौकरी करने लगी हैं। आत्मनिर्भरता की चाह में वे रोजगार की तलाश करने लगी हैं, जिसके कारण परिवारों में बिखराव भी हो रहा है। बच्चों और बुजुर्गों के जीवन में अकेलापन बढ़ गया है। पहले बच्चे चाचा, मामा, दादा-दादी आदि रिश्तों के बीच बड़े होते थे, लेकिन अब वे माता-पिता दोनों के कामकाजी होने के कारण घर में अकेले रह जाते हैं, जिसका असर उनके मानसिक विकास पर पड़ता है।

पहले परिवार में विवाह बड़े-बुजुर्गों की सहमति और रज़ामंदी से होते थे, लेकिन आधुनिक समय में प्रेम विवाह का चलन बढ़ गया है। ममता कालिया ने अपनी कहानी साहित्य में इन सभी सामाजिक मान्यताओं का विस्तार से वर्णन किया है। उनकी कहानियों में नारी की बदलती सामाजिक स्थिति और स्त्री-पुरुष सहयोग की भावना का भी चित्रण मिलता है। पहले के समय में जहाँ स्त्री अपना सारा समय घर और परिवार की सेवा में व्यतीत करती थी, वहीं आज की नारी अपने गृह कार्यों के साथ-साथ अपनी व्यक्तिगत शौक और रुचियों को भी महत्व देती है। उनकी कहानी 'थोड़ा सा प्रगतिशील' में चेतना

अपने पति की असहमति के बावजूद अपने विचारों को खुलकर रखती है- "घर में आने वाले अखबार और पत्रिकाओं की संख्या बहुत थी क्योंकि दोनों पढ़ने के शौकिन थे। विनीत जहाँ हर पत्रिका को एक बार पलटकर सरसरी तौर पर पढ़ता, चेतना उसे अंत तक पढ़ती। उनमें प्रकाशित लेख, कहानी, कविता पर विचार करती और अपनी सहेलियों से या विनीत से उन पर चर्चा करती। विनीत कहता, 'देखो रचनाओं में तर्क से ज्यादा तन्मयता देखी जाती है।' चेतना कहती, 'तर्क के बिना जीवन में कुछ भी स्वीकार नहीं किया जा सकता, साहित्य भी नहीं।' सहेलियाँ समझातीं, 'तुम क्यों सारा दिन माथापच्ची करती हो, कहानियों में झूठ ही झूठ होता है।' चेतना अपनी सहमति और असहमति व्यक्त करने में ज़रा देर न लगाती। वह संपादकों को लंबे-लंबे पत्र लिखती। जिन रचनाओं में लेखकों के फ़ोन नंबर या पते दिए होते, वह उनसे भी संपर्क करने की कोशिश करती।" (कालिया, 101) ममता कालिया ने यहाँ समाज में बदलते स्त्री के आयाम, आत्मनिर्भरता और स्वतंत्र विचारों को दर्शाया है।

3.4.1.1 लैंगिक समानता और नारीवाद-

‘चिरकुमारी’ कहानी एक ऐसी स्त्री का चित्रण करती है, जो अपनी स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। यह नायिका विवाह को अपनी स्वतंत्रता की खोने के रूप में देखती है और उसे विवाहित जीवन में बंधने के बजाय अपने व्यक्तिगत आज़ादी का ज्यादा महत्व देती है। वह समाज के पारंपरिक दबावों और अपेक्षाओं से परे एक स्वतंत्र जीवन जीने का चयन करती है। उसकी मानसिकता इस हद तक स्पष्ट है कि वह शादी को एक बंधन मानती है, जो उसकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता में अवरोध डालता है, यथा- ‘दिशा के घर में हर वक्त रौनक रहती है। उसे बड़ी हैरानी होती है, जब आने वाले लोग कहते हैं, ‘कैसे रह लेती हो अकेली, दिल में नहीं धड़कता तुम्हारा?’ यह वाक्य समाज के उस मानसिकता का परिचायक है, जो आज भी एक स्त्री को अकेला और अविवाहित रहने को असामान्य मानता है। यह स्थिति उस पारंपरिक सोच को प्रदर्शित करती है, जिसमें विवाह को स्त्री के जीवन का एक प्रमुख और अनिवार्य हिस्सा माना जाता है। वहीं, दिशा का यह विचार कि वह अकेली रह सकती है और उसे किसी पुरुष के सहारे की आवश्यकता नहीं है, उसकी आत्मनिर्भरता और स्वतंत्रता की ओर संकेत करता है। दिशा

के बारे में यह टिप्पणी 'शादीशुदा लोग समझाते, पैंतिस की उम्र इतनी ज्यादा भी नहीं होती' दिखाती है कि समाज महिलाओं के विवाह को लेकर एक निर्धारित उम्र की सीमा तय करता है। इस सोच में यह धारणा है कि विवाह एक महिला के जीवन का अनिवार्य हिस्सा है और 35 साल की उम्र में भी अगर कोई महिला अविवाहित है, तो उसे एक 'संपूर्ण' महिला नहीं माना जाता।

इसके विपरीत, 'प्रति प्रश्न' कहानी की नायिका एक अविवाहित, आत्मनिर्भर और कामकाजी स्त्री है। उसकी आत्मनिर्भरता का प्रतीक है उसका दफ्तर में अतिरिक्त परिश्रम करना, जिससे वह अपने जीवन को स्वायत्त बना सकती है। यह नायिका किसी भी प्रकार की पारंपरिक अपेक्षाओं को नकारती है और समाज द्वारा दबाव डालने के बावजूद अपनी स्वतंत्रता को बनाए रखने का प्रयास करती है। एक सेमिनार में एक युवक द्वारा उसे "आंटी" कहने पर, वह अंदर ही अंदर बुरी तरह चिढ़ जाती है। यह वाक्य नायिका के आत्मसम्मान और स्वतंत्रता की पुष्टि करता है, क्योंकि वह अभी भी अपने आप को एक युवा और अविवाहित स्त्री के रूप में देखती है। उसकी यह प्रतिक्रिया समाज में महिलाओं के लिए निर्धारित उम्र और विवाह के संबंध में बनाई गई मानसिकता का विरोध करती है।

ममता कालिया की कहानियों की नायिका हर मामले में स्वतंत्र और आत्मनिर्भर है। वह किसी पुरुष के सहारे के बिना भी अपना जीवन जी सकती है। वह अपनी सोच और दृष्टिकोण में स्वतंत्र है और जीवन में अपने रास्ते खुद चुनने की क्षमता रखती है। चाहे वह पारिवारिक निर्णय हो या व्यक्तिगत, वह अपनी स्वतंत्रता को महत्व देती है और समाज के पारंपरिक बंधनों से मुक्त रहकर अपनी राह खुद चुनती है। उसकी स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता को उसकी सोच, कार्य और जीवन जीने के तरीके में पूरी तरह से देखा जा सकता है। इन नायिकाओं के माध्यम से ममता कालिया ने यह संदेश दिया है कि स्त्रियाँ अब अपनी पहचान केवल किसी पुरुष के साए में नहीं, बल्कि अपनी मेहनत, आत्मनिर्भरता और स्वतंत्रता के आधार पर बनाती हैं। वे समाज के निर्धारित ढाँचों से बाहर निकलकर अपने जीवन के निर्णय खुद ले सकती हैं और उन्हें किसी बाहरी दबाव की आवश्यकता नहीं होती।

3.4.2 परिवार और समाजिक ढाँचे में बदलाव-

आज समाज में स्त्री-पुरुष दोनों ही कामकाजी हैं। कामकाजी होने के कारण स्त्री की दिनचर्या और अधिक व्यस्त हो जाती है। समाज में स्त्री पढ़ाई के साथ-साथ नौकरी करने के लिए भी दूसरे शहरों में जाकर अकेली रहती है।

ममता कालिया ने स्वतंत्र विचारों वाली स्त्री को अपनी कहानियों में चित्रित किया है। इनकी कहानी 'बोलने वाली औरत' की 'शिखा' एक स्वतंत्र विचारों वाली स्त्री है, तो 'जिंदगी साथ घंटे के बाद' की 'आत्मीया' एक जुझारू स्त्री है। वह अपने कार्य में प्रवीण है और अकेले अजनबी शहर में नौकरी करती है। "छुट्टी के दिन का रंग आत्मीया को कतई पसंद नहीं। काम वह इतनी फुर्ती से करती है कि घर लाने को कुछ बचता ही नहीं। बस, प्रोड्यूसर-स्कीम आने का यही एक फायदा हुआ है। जिम्मेदारियाँ बंट गई हैं। पहले स्टूडियो और ऑफिस के चक्कर लगाते-लगाते पसीना-पसीना हो जाती थी। अब स्टूडियो से बहुत कम संबंध रह गया है, अपने कमरे में ही अधिक बैठती है। पहले बेशुमार काम रहता था; किसी मिनिस्टर को छींक भी आई नहीं कि जाकर सारे शोक-सभा के रिकॉर्ड एडवांस में ढूँढ़ कर रखने पड़ते; किसी आर्टिस्ट ने वक्त पर आने से इंकार कर दिया तो पचासों टेलिफोन खड़काने पड़ते; स्क्रिप्ट समय पर न आए तो दर्जनों स्मरण पत्र भिजवाने पड़ते। अब यह सारा सिरदर्द प्रोड्यूसरों के मत्थे। अभी उस दिन कोहली साहब कह रहे थे, 'मिस सेन, रेडियो स्टेशन में अब रेडियो का काम हम और स्टेशन का काम आप करती हैं।' आत्मीया को भी महसूस होता है कि उसके पद को प्रोग्राम-एक्जीक्यूटिव नहीं, स्टेशन एक्जीक्यूटिव कहना चाहिए।" (कालिया, 58) आज स्त्री यदि घर से बाहर काम करती है तो वह अपने अधिकारों को भी समझती है। वह समाज में अपनी धारणा और अपने कामकाज के प्रति सजग होती है। घर की तरह कार्य क्षेत्र में भी अपनी कार्यकुशलता सिद्ध करती है।

ऐसे ही 'वे' कहानी की नायिका 'अरुणा रात को भी अकेले बस में सफर करने का साहस रखती है और रात होने पर एक अजनबी के साथ उसके घर में रुक जाती है। 'अरुणा' ने समझदारी से घर की एक मात्र चारपाई पर सोने लायक तैयारी कर ली। गुसलखाने से आकर उसने कुछ नहीं माँगा, पानी भी नहीं। कमरे में उसकी उपस्थिति उसे उतनी ही

सहज और अनाटकीय लग रही थी जितनी अपनी। अरुणा के वहाँ होने से उसे जरा भी असुविधा नहीं हो रही थी। इस बात का आश्चर्य उसे खुशी दे रहा था। इस नई उपस्थिति में उतनी भी असुविधा नहीं थी जितनी अकस्मात् माँ के उज्जैन से आ जाने पर होती थी। तब उसे जल्दी-जल्दी 'सेक्सोलाजी' और 'वुमन' की प्रतियाँ बिस्तर के नीचे डालनी पड़ती थीं, सीढ़ियों पर बल्ब लगाना पड़ता था और सिगरेट के टुकड़ों को कोट की जेब में जमा करते जाना होता था। वह कहाँ सोएगा, इस पर अरुणा ने कोई उत्सुकता नहीं दिखाई। उसने कहा, उसके पास यही एक कमरा है। अरुणा ने स्वीकार किया, इंदौर में मकान की तंगी बढ़ती जा रही है।" (कालिया, 96) ममता कालिया ने यहां समाज में बदलते स्त्री आयाम, आत्मनिर्भरता और स्वतंत्रता को दर्शाया है।

3.4.3 संयुक्त परिवार की जगह एकल परिवार की बढ़ती प्रवृत्ति-

पहले संयुक्त परिवार में बच्चों से लेकर बुजुर्गों तक सभी को सुरक्षा का एहसास होता था। परिवार के सदस्यों को सुख-दुख में एक दूसरे का साथ मिलता था, किंतु एकल परिवार ने सभी के जीवन को अतिरिक्त असुरक्षा, जिम्मेदारियों और दिनचर्या की परेशानियों से विचलित कर दिया है। आज मनुष्य की महत्वाकांक्षाओं के कारण जीवन में शांति और संतोष का स्थान अनावश्यक बेचैनी और भागदौड़ ने ले लिया है। इसका असर बुजुर्गों के जीवन पर भी पड़ा है। बुजुर्ग माता-पिता अकेले रहते हैं। बच्चे रोजगार के लिए दूसरे शहरों में नौकरी करते हैं। बच्चों के पास बुजुर्गों के लिए संवेदना या भावना का भी कोई समय नहीं है। ममता कालिया ने अपनी कहानी में गुस्से में अकेले रह रहे बुजुर्ग माता-पिता की स्थिति को दर्शाया है। "उसके दोनों लड़के अपनी बीवियों और नौकरियों में मशगूल थे। उन्हें कभी ख्याल ही नहीं आया कि उनके माँ-बाप अपना वक्त कैसे काटते होंगे। कभी उन्होंने ज्यादा लिखा कि उनकी याद आ रही है, तो वे एक मिनी ऑर्डर भेज देते।" (कालिया, 30) समाज में एकल परिवार का चलन बढ़ गया है।

कामकाजी पति-पत्नी मजबूरी या पसंद से एकल परिवार में रहते हैं, किंतु इससे जीवन में कई तरह की समस्याएँ भी आ गई हैं। घर खर्च का सारा बोझ पति-पत्नी पर आ पड़ा है, जिस कारण स्वभाव में चिड़चिड़ापन हमेशा बना रहता है। आपस में लड़ाई-झगड़ा अधिक होने लगे हैं। ममता कालिया ने एकल परिवारों के कारण आने वाले सामाजिक

बदलाव को अपनी कहानियों में दर्शाया है। इनकी 'लैला मजनू', 'काली साड़ी', 'यह जरूरी नहीं', 'काके दी हट्टी', 'बातचीत बेकार है', 'तरक्की को हम ना रोएं', 'एक जीनियस की प्रेम कथा', और 'मंदिरा' जैसी सभी कहानियाँ एकल परिवार के कारण समाज में आए बदलाव की यथार्थ कहानी कहती हैं। "ऐसे ही एक वृद्ध दंपत्ति के आधी रात में आने पर वह आँखें मलते हुए उठ बैठी थी। पंकज ने जाकर दरवाजा खोला। वे उसके बचपन के मोहल्ले में रहने वालों में से थे। रिश्तेदार नहीं, पर रिश्तेदारों से ज्यादा अज़ीज़। मोहल्ले में उनकी पुश्तैनी बेकरी थी, जिसे अब उनके लड़के कुशलतापूर्वक चला रहे थे। लिहाजा वे पुण्य कमाने के लिए स्वतंत्र थे। शोभा ने बमुश्किल आँखें खोलीं, कपड़े पहने, ढीली-ढाली एक अदद मैक्सी नहीं, बल्कि साड़ी-ब्लाउज़ पहना ताकि बाकायदा आँचल सिर पर डालकर पैर छूने की रस्म अदा की जा सके। वैसे उसे समझ नहीं आ रहा था कि तीन लोक से न्यारी नगरी मथुरा, जो स्वयं तीर्थ है, छोड़कर वह दंपत्ति यहाँ क्या करने आए हैं? किंतु ऐसे सवाल पूछे नहीं जा सकते थे।" (कालिया, 12) 'काली साड़ी' कहानी में ममता कालिया ने बढ़ती महंगाई के कारण सामाजिक और पारिवारिक जीवन पर आने वाले बदलाव को चित्रित किया है।

एकल परिवारों के कारण संबंधों के दायरे सिकुड़ गए हैं। एकल परिवारों में कामकाजी माता-पिता बच्चों को पर्याप्त समय नहीं दे पाते, जिससे बच्चों के जीवन में अकेलापन आ गया है। बच्चे अपना अधिकांश समय टीवी, कंप्यूटर पर गेम खेलने में बिताते हैं। ममता कालिया ने अपनी रचना 'प्रेम कहानी' में डॉक्टर गुप्ता के माध्यम से इस स्थिति को दर्शाया है। डॉ. गुप्ता इतने व्यस्त रहते हैं कि उनके पास बच्चों के लिए समय ही नहीं बचता। डॉ. गुप्ता के बच्चे दूसरे डॉक्टर दिनेश से कहते हैं कि अंकल, जब आप छोटे थे, क्या आपके डैडी आपसे बात करते थे? बच्चे पिता की व्यवस्था बताते हुए कहते हैं, "क्या फ़ायदा पैसों का, रात ग्यारह बजे जब पापा क्लीनिक से उठते हैं, सारे सिनेमा-हाउस, रेस्तराँ, बाजार बंद हो जाते हैं। उस समय वह इतने थके होते हैं कि न ठीक से खाना खाते हैं, न बात करते हैं, बस सो जाते हैं। उनसे उस वक्त कहा भी नहीं जा सकता कि कहीं चलो। रात ग्यारह बजे किसी के घर नहीं जा सकते, जब तक कि कोई फीस देकर ही न बुलाए।" (कालिया, 33) ममता कालिया ने कहानियों में एकल परिवार के बढ़ते चलन और प्रभाव को विस्तार से दर्शाया है।

3.4.3.1 विवाह और रिश्तों में नई सोच-

धुनिकता के नाम पर युवाओं ने विवाह जैसे पारंपरिक संस्कारों को भी नकारना शुरू कर दिया है। ममता कालिया ने अपनी कई कहानियों में इस बदलते समाज के परिप्रेक्ष्य में विवाह, प्रेम और रिश्तों की जटिलताओं को व्यंग्यात्मक रूप से चित्रित किया है। उनकी कहानियाँ जैसे "अपत्नी", "साथ", "लगभग प्रेमिका", और "वे" इन बदलावों का सजीव उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। ममता कालिया खुद एक कामकाजी महिला रही हैं, और इन्होंने स्वयं इन सामाजिक समस्याओं को अनुभव किया है। उनकी रचनाओं में प्रेम और विवाह के बदलते रूपों, सामाजिक धारा के प्रवाह और पारिवारिक संबंधों की टूट-फूट को प्रभावशाली तरीके से प्रस्तुत किया गया है।

आज के समाज में जहां एक ओर प्रेम विवाह का चलन बढ़ रहा है, वहीं दूसरी ओर इसकी जटिलताएँ भी सामने आ रही हैं। ममता कालिया ने अपनी कहानियों में प्रेम विवाह के परिणामों को रेखांकित किया है। उदाहरण के तौर पर, "बोलने वाली औरत" में शिखा और कपिल का प्रेम विवाह है, जो पहले तो बहुत रोमांटिक और आधुनिक विचारों से प्रभावित था। शिखा एक स्वतंत्र और आधुनिक विचारों वाली महिला थी, जिसकी बातों ने कपिल को आकर्षित किया था। लेकिन विवाह के बाद कपिल की मानसिकता बदल जाती है, और वह शिखा के विचारों का विरोध करने लगता है। इस बदलाव के कारण शिखा का जीवन नरक जैसा हो जाता है। वह याद करती है कि जब कपिल से प्रेम करती थी, तब उसकी कोई बात बेतुकी नहीं लगती थी, लेकिन अब उसे महसूस होता है कि वह जो व्यक्ति उसने अपने जीवनसाथी के रूप में चुना था, वह कितना सामान्य और औसत था। शिखा को समझ में आता है कि वह एक परंपरागत जीवन जीना चाहता था, जिसमें कोई नया प्रयोग या बदलाव न हो, बल्कि उसे एक ऐसी पत्नी चाहिए थी जो बिना किसी सवाल के उसकी हर बात मान ले, जैसे गांधारी के अंधे होने की तरह।

ममता कालिया ने यह भी दिखाया है कि आजकल पति-पत्नी दोनों के कामकाजी होने के कारण उनके पास एक-दूसरे के लिए समय नहीं होता। "बातचीत बेकार है" कहानी में पति-पत्नी अपने-अपने कामों में इतने व्यस्त हो जाते हैं कि उनके पास एक-दूसरे से बातचीत करने का समय नहीं होता। धीरे-धीरे उनका संबंध भावनात्मक रूप से भी दूर हो

जाता है, और वे एक-दूसरे से बात करना भी अच्छा नहीं समझते। यह स्थिति विवाह और रिश्तों की स्थिरता को और भी कमजोर करती है। "काके दी हट्टी" कहानी में पिकी एक कॉल सेंटर में काम करती है, जहाँ वह दिन के चार बजे से सुबह चार बजे तक शिफ्ट में काम करती है। इसके कारण उसे दिन में सोने का समय मिलता है, जबकि उसकी सास गुस्से में रहती है, क्योंकि पिकी के सोने के कारण घर का काम नहीं हो पाता। इसके बाद पिकी को तंग आकर मायके जाना पड़ता है। इस प्रकार ममता कालिया ने कामकाजी महिलाओं की समस्याओं और पारिवारिक विघटन को बहुत प्रभावशाली तरीके से प्रस्तुत किया है।

ममता कालिया ने अपनी कहानियों में यह भी दिखाया है कि कामकाजी स्त्री-पुरुष और एकल परिवारों के कारण पारिवारिक विघटन हो रहा है, जो बाद में तलाक का कारण बन सकता है। आधुनिक समाज में तलाक एक गंभीर समस्या बन चुका है, जिससे परिवारों में बिखराव हो रहा है और बच्चों और माता-पिता का जीवन प्रभावित हो रहा है। ममता कालिया ने अपनी कहानी "एक पति की मौत" में तलाक के प्रभाव को चित्रित किया है। इस कहानी में सिया का पति उसे तलाक देकर विदेश में दूसरी महिला से विवाह कर लेता है। इसके बाद सिया दिन-रात मानसिक यातना झेलती है। उसकी सास उसे तलाक के बावजूद पत्नी धर्म निभाने को कहती है, जिससे सिया की स्थिति और भी कठिन हो जाती है। ममता कालिया ने "अपत्नी" कहानी में समाज की बदलती मान्यताओं को भी दर्शाया है, जहाँ एक अविवाहित महिला एक विवाहित पुरुष के साथ रहती है। इस कहानी में प्रबोद अपनी पत्नी को तलाक नहीं देता, लेकिन वह लीला के साथ रहता है। यह स्थिति लीला पर भी कोई असर नहीं डालती, और प्रबोद को दूसरी शादी करने की कोई जल्दी नहीं होती। इस कहानी के माध्यम से ममता कालिया ने समाज के बदलते दृष्टिकोण और रिश्तों की जटिलताओं को गहराई से चित्रित किया है। इस प्रकार, ममता कालिया की कहानियाँ आज के समाज में प्रेम, विवाह और पारिवारिक रिश्तों की जटिलताओं को सजीव और यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत करती हैं। वे उन समस्याओं को उजागर करती हैं, जिनका सामना कामकाजी महिलाएं, पुरुष और परिवार करते हैं, और यह दिखाती हैं कि कैसे आधुनिकता, कामकाजी जीवन, और बदलते समाज के प्रभाव से पारिवारिक संरचनाएं और रिश्ते प्रभावित हो रहे हैं।

3.4.3.2 स्त्री की घरेलू भूमिकाओं में परिवर्तन और उनकी सामाजिक भूमिका का विस्तार- स्त्री शिक्षा ने समाज में स्त्री की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार किया है। आजकल, महिलाएं न केवल घर के कामों में, बल्कि कार्यक्षेत्र में भी अपनी दक्षता और क्षमता सिद्ध कर रही हैं। ममता कालिया की कहानियाँ इस बदलाव को गहराई से और प्रभावशाली तरीके से दर्शाती हैं। उनकी कहानियों में स्त्रियों के संघर्ष, उनके अधिकारों के लिए लड़ाई, और समाज में उनकी बदलती भूमिका को प्रमुखता से चित्रित किया गया है। हालांकि समाज में पूर्ण स्वतंत्रता अब तक स्त्रियों को प्राप्त नहीं हो सकी है, फिर भी शिक्षित और जागरूक स्त्री अपने कर्तव्यों के साथ-साथ अपने अधिकारों को जानने लगी है और इन अधिकारों के लिए परिवार और समाज का विरोध करने में भी संकोच नहीं करती।

ममता कालिया की कहानी "बोलने वाली औरत" में शिखा एक ऐसी स्त्री है जो अपने आधुनिक विचारों के बावजूद अपनी बात निडरता से कहती है, भले ही उसकी सास को यह पसंद न आए। शिखा अपने अधिकारों के प्रति सजग है और वह किसी भी पारंपरिक विचारधारा के सामने खुद को कमतर महसूस नहीं करती। ममता कालिया ने अपनी कहानियों में स्त्रियों की स्थिति को लेकर समाज के पारंपरिक दृष्टिकोण और बदलती सामाजिक अपेक्षाओं का सटीक चित्रण किया है। वे दिखाती हैं कि महिलाएँ अब पारंपरिक भूमिकाओं से बाहर निकलकर शिक्षा, रोजगार, और सामाजिक स्वतंत्रता की ओर बढ़ रही हैं।

ममता कालिया की नायिकाएं न केवल अपने घर के कार्यों को संभालती हैं, बल्कि कार्यस्थल पर भी अपनी दक्षता को साबित करती हैं। आज की स्त्री गृह कार्यों, बच्चों और बुजुर्गों की देखभाल के साथ-साथ वित्तीय सहायता के लिए घर से बाहर भी काम करती है। स्त्री का दायरा अब केवल घर तक सीमित नहीं है, बल्कि यह कार्यक्षेत्र तक फैल चुका है। ममता कालिया स्वयं इस प्रकार की स्त्री रही हैं, जो अपने विभिन्न कर्तव्यों के बीच सामंजस्य बनाए रखती हैं। उनके पति रविंद्र कालिया ने भी ममता के बारे में कहा है कि उनकी परिश्रम की क्षमता अद्भुत है। वे एक साथ कई मोर्चों पर जिम्मेदारी संभाल सकती हैं—एक ओर जहां कॉलेज की जिम्मेदारियाँ होती हैं, वहीं दूसरी ओर लेखन का दबाव, घर की जिम्मेदारियाँ और गोष्ठियों में भागीदारी। उनके पति के अनुसार, ममता ने हमेशा उन परिस्थितियों में भी लेखन कार्य किया, जहां समय और स्थिति ने कठिनाइयाँ उत्पन्न कीं।

ममता कालिया की कहानियाँ पारिवारिक संरचना में हो रहे बदलावों का भी चित्रण करती हैं। संयुक्त परिवार की परंपरा और नई पीढ़ी की व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बीच टकराव को वे बखूबी दिखाती हैं। वे यह बताती हैं कि किस प्रकार बदलती सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ पारिवारिक रिश्तों और भूमिकाओं को पुनर्परिभाषित कर रही हैं। ममता कालिया यह भी दिखाती हैं कि पारंपरिक पारिवारिक मूल्य अब धीरे-धीरे बदल रहे हैं और नई सोच, नई धारणा का प्रवेश हो रहा है। यह एक महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन के रूप में उभरता है, जो न केवल स्त्री के जीवन को प्रभावित करता है, बल्कि सम्पूर्ण समाज को प्रभावित करता है। ममता कालिया की कहानियाँ समाज के बदलते सांस्कृतिक मान्यताओं को प्रस्तुत करती हैं। इन रचनाओं में समाज में स्त्री की बदलती स्थिति, परिवारों और रिश्तों की बदलती मान्यताओं का चित्रण विस्तार से किया गया है। उनका लेखन यह स्पष्ट करता है कि स्त्री अब अपनी पहचान और स्वतंत्रता के लिए लड़ाई लड़ रही है। उनकी कहानियाँ समाज में हो रहे परिवर्तन, स्त्री की सशक्तीकरण की प्रक्रिया, और पारंपरिक सामाजिक ढांचे को चुनौती देने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। कुल मिलाकर, ममता कालिया की कहानियाँ समाज में हो रहे सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का जीवंत दस्तावेज हैं। उनकी रचनाएँ यह प्रश्न उठाती हैं कि समाज के बदलाव की दिशा कैसी होनी चाहिए और इसमें हर व्यक्ति की भूमिका क्या हो सकती है। उनकी कहानियाँ न केवल महिलाओं के संघर्ष को, बल्कि एक समग्र सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता को भी उजागर करती हैं।

3.5 सांस्कृतिक महत्ता

भारतीय संस्कृति को हमेशा विश्व की महान संस्कृतियों में एक प्रमुख स्थान प्राप्त रहा है। यह संस्कृति जीवन के हर पहलू को समाहित करती है, चाहे वह जीवन जीने की कला हो, विज्ञान, दर्शन, कला, या राजनीति का क्षेत्र। भारतीय संस्कृति ने न केवल समय के साथ खुद को कायम रखा है, बल्कि यह अन्य संस्कृतियों के बीच एक समन्वय का प्रतीक भी बन गई है। इसके अद्वितीय तत्वों के कारण, भारतीय संस्कृति न केवल विश्व की संस्कृतियों में जननी मानी जाती है, बल्कि इसने पूरी दुनिया पर अपनी छाप भी छोड़ी है।

भारतीय संस्कृति में विविधता और एकता का अद्भुत मेल देखा जाता है। यह संस्कृति न केवल विभिन्न धर्मों, जातियों और भाषाओं के समन्वय पर आधारित है, बल्कि यह कई विचारधाराओं और परंपराओं का संगम भी है। भारतीय समाज का मूल सिद्धांत "अनेकता में एकता" है, जो विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों, धर्मों और मान्यताओं के बावजूद एकजुटता को बढ़ावा देता है। भारतीय संस्कृति ने न केवल पारंपरिक मान्यताओं को संरक्षित किया है, बल्कि नए विचारों और दृष्टिकोणों का भी स्वागत किया है। यह खुले विचारों और विकासात्मक दृष्टिकोण का प्रतीक है, जो किसी भी नकारात्मकता और रूढ़िवादिता से मुक्त होकर शांति और सामंजस्य की ओर अग्रसर है। भारत में विभिन्न धर्मों के अनुयायी रहते हैं, जैसे हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन आदि, और सभी का जीवन जीने का तरीका, आस्थाएँ और मान्यताएँ अलग-अलग हैं। लेकिन फिर भी, सभी धर्मों के लोग भारतीय समाज के एक अभिन्न हिस्सा बने हुए हैं। यहां त्यौहारों का आयोजन, पूजा-पद्धतियाँ, खान-पान की आदतें, रीति-रिवाज और पहनावे में एक विशेष विविधता है। यह विविधताएँ भारतीय संस्कृति को अद्वितीय बनाती हैं। भारतीय संस्कृति में हर धर्म, समुदाय, और जाति को सम्मान दिया जाता है, और यही कारण है कि यह संस्कृति समय के साथ अपनी जड़ों को मजबूत करती रही है।

भारत की भौगोलिक विविधता भी भारतीय संस्कृति के महत्व को और अधिक बढ़ाती है। भारत का भूगोल इतना विस्तृत और विविध है कि यह भारतीय संस्कृति को प्राकृतिक रूप से एक विशेष पहचान देता है। उत्तर में हिमालय की बर्फीली चोटियाँ, दक्षिण में कन्याकुमारी का समुद्र, पूर्व में अरुणाचल प्रदेश की हरियाली और पश्चिम में राजस्थान के रेगिस्तान की विशालता, यह सभी भौगोलिक विशेषताएँ भारतीय समाज और संस्कृति को एक समृद्ध विविधता प्रदान करती हैं। प्रत्येक क्षेत्र की जलवायु, भौगोलिक संरचना और पर्यावरणीय परिस्थितियाँ वहां की संस्कृति, परंपराएँ, कला, और जीवनशैली को प्रभावित करती हैं।

भारत में प्राचीन काल से ही विभिन्न संस्कृतियों, प्रजातीय समूहों और भाषाओं के लोगों का आपसी संपर्क और आदान-प्रदान होता रहा है। यहां व्यापारिक, सांस्कृतिक और धार्मिक यात्राएँ होती रही हैं, जिनसे भारतीय संस्कृति में नई-नई विचारधाराएँ और संस्कृतियाँ जुड़ी हैं। मौर्य और गुप्त साम्राज्य से लेकर मुगल साम्राज्य और ब्रिटिश शासन तक, भारत

में बाहरी प्रभावों ने भारतीय संस्कृति को न केवल समृद्ध किया, बल्कि इसे और भी अधिक लचीला और समावेशी बनाया। इस सांस्कृतिक समन्वय का सबसे बेहतरीन उदाहरण भारतीय त्योहार हैं। चाहे वह दीवाली हो, ईद, होली हो, या क्रिसमस, हर समुदाय अपने तरीके से इन त्योहारों को मनाता है, लेकिन इन त्योहारों के माध्यम से सभी भारतीय एक साथ आते हैं और एकता का संदेश देते हैं। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति आज भी अपनी समृद्ध परंपराओं के साथ जीवित है और समय के साथ बदलते हुए आधुनिकता के अनुरूप खुद को ढालने में सक्षम है। संक्षेप में, भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता इसकी विविधता में एकता है। यह न केवल एक स्थिर संस्कृति है, बल्कि एक गतिशील और समन्वयवादी संस्कृति है जो समय के साथ नई सोच, विचारों और परंपराओं को आत्मसात करती है। भारतीय संस्कृति ने सदा ही दुनिया को यह सिखाया है कि विभिन्नताओं के बावजूद एकता संभव है, और यही कारण है कि यह संस्कृति सदियों से जीवित और प्रासंगिक बनी हुई है।

3.5.1 सांस्कृतिक महत्ता का स्वरूप-

भारतीय समाज सदियों से विविधता से भरा हुआ रहा है, और यही विविधता भारतीय संस्कृति की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। भारतीय समाज में विभिन्न प्रजातियों, जातियों, धर्मों, भाषाओं और सांस्कृतिक प्रथाओं का संगम हुआ है, और इसने भारत को एक अद्वितीय समाज बना दिया है, जहां विभिन्नता में एकता का सिद्धांत विद्यमान है। भारतीय समाज के इतिहास में आर्य, अनार्य, द्रविड़, शक, हूण, पुर्तगाली, फ्रांसीसी, मंगोल, पारसी आदि विभिन्न जातियों और समुदायों का आगमन हुआ और सभी ने यहां की संस्कृति को अपनाया तथा इसे समृद्ध किया। इन विभिन्न प्रजातियों और संस्कृतियों का समन्वय एक नई, समृद्ध और विविधतापूर्ण भारतीय संस्कृति के रूप में हुआ।

आर्य, अनार्य, द्रविड़, शक और हूण जैसी प्राचीन जातियाँ समय-समय पर भारतीय उपमहाद्वीप में आईं और उन्होंने यहां के समाज और संस्कृति में गहरी छाप छोड़ी। इन सभी के योगदान से भारतीय संस्कृति का स्वरूप विकसित हुआ और यह एक समृद्ध मिश्रित संस्कृति के रूप में उभरी। इसके बाद, पुर्तगाली, फ्रांसीसी, मंगोल और पारसी जैसे विदेशी आक्रमणकारी और व्यापारी भी भारतीय समाज का हिस्सा बने और उन्होंने भारतीय जीवन

शैली, रीति-रिवाज, कला और धर्म में भी अपनी छाप छोड़ी। इन सबका भारतीय समाज पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह का प्रभाव पड़ा, लेकिन परिणामस्वरूप भारतीय समाज एक विकसित और समावेशी रूप में उभर कर सामने आया।

भारत की संस्कृति का एक प्रमुख पहलू है यहां की भाषाई और सांस्कृतिक विविधता। देश के विभिन्न हिस्सों में विभिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं, जिनमें हिंदी, बंगाली, तमिल, तेलुगु, पंजाबी, उर्दू, गुजराती, मराठी, कन्नड़, मलयालम, ओड़िया, असमिया आदि प्रमुख भाषाएँ हैं। इन भाषाओं के साथ-साथ, भारतीय समाज में सांस्कृतिक विविधताएँ भी हैं, जो हर क्षेत्र के समाज की पहचान बनाती हैं। प्रत्येक क्षेत्र की अपनी मान्यताएँ, रीति-रिवाज, त्यौहार और पूजा पद्धतियाँ हैं, लेकिन इन सभी विविधताओं के बावजूद, भारत का हर नागरिक एक साझी पहचान साझा करता है, जो उसे भारतीयता से जोड़ती है।

भारत की एकता की सबसे बड़ी विशेषता उसकी जाति व्यवस्था और संयुक्त परिवार व्यवस्था है। भारतीय समाज में जाति व्यवस्था ने भले ही समय-समय पर विवाद उत्पन्न किया हो, लेकिन यह समाज के विभिन्न वर्गों को आपस में जोड़े रखने का एक तरीका बन गई। इसके साथ ही, भारतीय समाज में संयुक्त परिवार की प्रथा भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यहां परंपराओं के अनुसार परिवार के सभी सदस्य एक साथ रहते हैं और एक-दूसरे की देखभाल करते हैं, जो समाज में एकता और सामूहिकता की भावना को प्रबल करता है। यह व्यवस्था भारतीय समाज की सामाजिक संरचना को सुदृढ़ करती है और उसे एक मजबूत आधार प्रदान करती है।

धर्म और आध्यात्मिकता भारतीय संस्कृति के प्राण माने जाते हैं। भारतीय समाज में धर्म का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है, और हर व्यक्ति अपने जीवन के किसी न किसी पहलू में धर्म से जुड़ा होता है। यहां के ऋषि-मुनियों और विद्वानों ने जीवन के प्रत्येक कार्य को धर्म से जोड़ा है। धर्म का पालन करना न केवल व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन के लिए, बल्कि समाज की समृद्धि और शांति के लिए भी आवश्यक माना जाता है। भारतीय संस्कृति में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के सिद्धांत को एक साथ जोड़कर जीवन जीने की कला सिखाई जाती है। भारतीय समाज में मोक्ष के बाद धर्म का सर्वोच्च स्थान है, और यह जीवन के सभी कार्यों का मूल उद्देश्य है।

आस्तिकता भारतीय समाज की एक और महत्वपूर्ण विशेषता है। भारतीय संस्कृति में जीवन के हर पहलू में ईश्वर के प्रति आस्था और भक्ति का समावेश है। भारतीय समाज का हर वर्ग ईश्वर को अपने जीवन का केंद्र मानता है और हर कार्य को पुण्य और धर्म से जोड़ने की कोशिश करता है। यह आस्तिकता समाज को एकसूत्र में बांधने का कार्य करती है और सामाजिक-संस्कृतिक एकता का निर्माण करती है। भारतीय समाज में प्रत्येक व्यक्ति का जीवन धर्म के सिद्धांतों पर आधारित होता है, जो उसे न केवल व्यक्तिगत जीवन में, बल्कि समाज में भी एक सकारात्मक भूमिका निभाने के लिए प्रेरित करता है। संक्षेप में, भारतीय समाज की विविधता और एकता का संयोजन ही इसकी शक्ति है। इस समाज ने विभिन्न संस्कृतियों और प्रजातियों को अपनाया और उन्हें एक नया आकार दिया। भारतीय संस्कृति न केवल विविधता में एकता को बढ़ावा देती है, बल्कि धर्म और आस्था के माध्यम से सामाजिक समरसता और शांति की ओर अग्रसर होती है। यही कारण है कि भारतीय समाज समय के साथ मजबूत हुआ है और आज भी अपनी परंपराओं और संस्कृति के साथ जीवित है।

3.5.2 पारंपरिक मूल्यों का चित्रण-

भारतीय संस्कृति में बड़ों के प्रति आदरभाव की प्रेरणा दी जाती है। भारतीय संस्कृति में समन्वय की भावना है। यहां परोपकार और वासुदेवकुटुंबकम की नीति को स्वीकार किया जाता है। भारतीय संस्कृति की इन सभी मौलिक विशेषताओं के कारण ही भारतीय समाज और संस्कृति में सदैव एकता बनी रहती है, जो यहां की समाज और संस्कृति के लिए महत्वपूर्ण है। ममता कालिया ने अपनी रचनाओं में भारतीय संस्कृति की महत्त्वता का उल्लेख किया है। इनकी कहानियों में संयुक्त परिवार, धर्म और आध्यात्म का वर्णन मिलता है। बोलने वाली औरत, नई दुनिया, कवि मोहन, कामयाब, मां, बाथरूम, रायवाली, दो जरूरी चेहरे, चरिकुमारी आदि कहानियों में संयुक्त परिवार का वर्णन किया गया है। वहीं, देवदास, लड़के, मेला, निर्मोही आदि कहानियां धर्म को आधार बनाकर लिखी गई हैं।

समाज में कुछ ऐसे रीति-रिवाज या मान्यताएँ होती हैं, जिन्हें मानना उस समाज के सदस्यों के लिए अनिवार्य होता है, और यह लगभग सभी के हित में भी होता है। इनकी कहानी 'दो जरूरी चेहरे' में पारिवारिक मूल्यों को दर्शाया गया है, जिसमें यह दिखाया गया

है कि एक स्त्री के लिए अपने पति के साथ-साथ भाई भी जीवन में उतनी ही अहमियत रखता है। नायिका को भी दोनों से उतना ही प्यार और स्नेह मिलता है। “भाई शाम को आते। खूब से फूल लेकर। जब तक डॉक्टर एक बार नहीं आ लेता, भाई नहीं जाते। श्याम से दफ्तर के बारे में बात करते रहते। फिर वे लोग साथ ही उठ जाते।” (कालिया 121) ममता कालिया की अधिकतर कहानियाँ पारिवारिक संबंधों को दर्शाने वाली हैं। भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार की परंपरा रही है।

इनकी कहानियों में आपसी प्यार और प्रेम भी दिखाया गया है। 'खाली होता हुआ घर' में पिता-पुत्र के प्रेम का चित्रण किया गया है, तो 'एक पत्नी के नोट्स' में दिखाया गया है कि किस प्रकार एक लड़की दो परिवारों की चिंता करती है और मायका तथा ससुराल दोनों परिवारों को जोड़ कर रखती है। 'आपकी छोटी लड़की' और 'बिटिया' भी इनकी पारिवारिक व्यवस्था को दर्शाने वाली कहानियाँ हैं। 'अट्टावनवाँ साल' कहानी में दिन-रात दफ्तर में व्यस्त रहने वाले अवकाश प्राप्त गैर सरकारी अफसर और उसके जीवन को खुशहाल बनाने वाली पत्नी की कहानी है। यह प्यार और संस्कार भारतीय मानवीय मूल्यों का प्रतीक है। 'बोलने वाली औरत' कहानी संग्रह की सभी कहानियाँ पारिवारिक व्यवस्था को दर्शाने वाली हैं। 'परदेश' कहानी में ममता कालिया ने पाश्चात्य और भारतीय सभ्यता का तुलनात्मक चित्रण किया है। इस कहानी में कनाडा से आए परदेसी रिचर्ड ने कहा, “तुम्हारे भाई को उसका एहसास है। आपके घर में अभी डिनर के समय तीन पीढ़ियाँ एक साथ खाना खा रही हैं। अरे! दुर्लभ सुख है। यह ऐसा दृश्य देखे मुझे बरसों हो गए कि बच्चों के मां-बाप अपने मां-बाप के सामने आज्ञाकारी बच्चे बन जाएं। तीन पीढ़ियाँ एक छत के नीचे एक कमरे में प्रेम से बैठी हैं। कहीं कोई तनाव नहीं, आपके बच्चे को एक नॉर्मल लड़कपन मिल रहा है। बहुत बड़ी बात है यह! इसे कभी कम करके मत देखिएगा।” (कालिया, 76)

इन्होंने अपनी कहानियों में खान-पान की विविधताओं को भी प्रदर्शित किया है। 'बड़े दिन की पूर्व' सांझ का यह दृश्य देखिए, “वह दुखी हो गया था, ‘मैं ज्यादा नहीं पी सकता। हमारे मेस में सिर्फ ड्रिंक्स की पार्टियाँ होती हैं तो बड़ी असुविधा होती है।’ मैंने कहा, तुमने घर पर कभी नहीं पी होगी। उसने घमंड से बताया कि उसके घर में अंडा भी नहीं खाया जाता। जब से वह एयर फोर्स में आया तभी से उसने पहली बार यह सब देखा। घर पर

उसने घरवालों को सिर्फ दूध, चाय या पानी पीते देखा था।”(कालिया, 11) भारतीय संस्कृति में खानपान की शुद्धता का विशेष उल्लेख या मान्यता है। यहां खाने से लेकर पीने तक के हर पहलू का महत्व है, जैसे क्या खाना है, कैसे खाना है, कब खाना है। ममता कालिया की कहानियों में इसका वर्णन भी विभिन्न स्थानों पर मिलता है।

3.5.3 रिश्तों की महत्ता-

ममता कालिया की कहानियाँ भारतीय समाज और पारिवारिक रिश्तों की जटिलताओं को बहुत ही सटीकता और संवेदनशीलता से चित्रित करती हैं। उनकी कहानियाँ जैसे ‘ऐसा ही था वह’, ‘वह मिली थी बस में’, ‘रिश्तों की बुनियाद’, ‘बिटिया’, ‘खाली होता हुआ घर’, ‘बीमारी’, ‘गुस्सा’, ‘आजादी’ आदि, पारिवारिक रिश्तों, उनके उतार-चढ़ाव, और बदलते समाज के प्रभाव को गहराई से प्रस्तुत करती हैं। इन कहानियों में जहाँ एक ओर पारिवारिक संबंधों की अंतरंगता और प्रेम दिखाया गया है, वहीं दूसरी ओर रिश्तों में आ रही दरारों और संवेदनहीनता को भी उजागर किया गया है। ‘बीमारी’ कहानी में लेखक ने एक ऐसे भाई का चित्रण किया है, जो अपने कर्तव्यों के प्रति सजग और जिम्मेदार है, लेकिन इसके बावजूद रिश्तों की बुनियाद में हल्की सी दरार दिखाई देती है। “भाई ऐसे कामों में खूब मुस्तैद था। उसने तीन घंटा बेतहाशा दौड़-धूप की और शाम को पसीना पोछते हुए सफल आदमी की तरह घर लौटा। उसकी पत्नी उसकी कामयाबी से प्रसन्न होकर फौरन चाय बनाने रसोई में चली गयी। मैंने आलमारी से कुछ कपड़े और जरूरी चीजें निकालीं और भाई की पत्नी से कहा कि वह उन्हें अटैची में रख दे। भाई मेरे सारे डॉक्टरी कागज बटोर रहा था।” (कालिया,36) इस वाक्य में भाई की कड़ी मेहनत और कामयाबी का वर्णन है, लेकिन लेखक ने इस बात को भी उजागर किया है कि भाई और उसकी पत्नी के बीच की दिनचर्या में एक औपचारिकता आ गई है, जो रिश्तों में कहीं न कहीं एक भावनात्मक दूरी की ओर संकेत करती है। यह कहानी रिश्तों में व्यावसायिकता और भावनाओं की कमी को प्रकट करती है।

ममता कालिया की कहानियों में मेहमानों के प्रति भारतीय संस्कृति का आदरभाव भी प्रकट होता है। भारतीय संस्कृति में मेहमानों को विशेष सम्मान दिया जाता है, और ममता कालिया की रचनाओं में इसका चित्रण काफी स्पष्ट है। ‘आपकी छोटी लड़की’, ‘लैला

मजनू', और 'मेला' जैसी कहानियों में मेहमानों का स्वागत और उनके सम्मान को प्रमुखता से दर्शाया गया है। 'आपकी छोटी लड़की' कहानी में एक वृद्ध दंपत्ति का रात को किसी व्यक्ति के घर आना और घरवाले का उनका आदरपूर्वक स्वागत करना दिखाया गया है। "ऐसे ही एक वृद्ध दम्पति के आधी रात में आने पर वह आँखें मलती हुई उठ बैठी थी। पंकज ने जाकर दरवाजा खोला। अवधायक बचपन के मोहल्ले में रहने वालों में से थे। रिश्तेदार नहीं, पर रिश्तेदारों से ज्यादा अज़ीज़। मोहल्ले में उनकी पुश्तैनी बेकरी थी, जिसे अब उनके लड़के कुशलतापूर्वक चला रहे थे।" इस वाक्य में घर के सदस्यों द्वारा वृद्ध दंपत्ति के आगमन पर दिखाए गए आदर और सम्मान को दर्शाया गया है। शोभा, जो बमुश्किल आँखें खोल पाई थी, फिर भी वह आदर्श भारतीय मेज़बान की तरह अपने मेहमानों को स्वागत करने के लिए तैयार होती है। "कपड़े पहने, ढीली-ढाली एक अदद मैक्सी नहीं, वरन साड़ी-ब्लाउज ताकि बाकायदा आँचल सिर पर डालकर पैर छूने की रस्म अदा की जा सके।" यह वाक्य भारतीय संस्कृति में मेहमानों के प्रति सम्मान और परंपरा को सजीव रूप में प्रस्तुत करता है। यहाँ पर लेखक ने यह भी दिखाया है कि भले ही शोभा को यह समझ में नहीं आता कि ये लोग मथुरा जैसे तीर्थ स्थल को छोड़कर यहाँ क्या करने आए हैं, फिर भी वह भारतीय संस्कृति के अनुसार उनसे जुड़ी सभी परंपराओं का पालन करती है। इसके बाद यह दृश्य भी सामने आता है कि कैसे ये मेहमान अपने साथ तरह-तरह के बिस्कुट लेकर आते हैं और शोभा को रात भर उनके साथ घूम-फिरने के बावजूद उनका सम्मान करने का मौका मिलता है। "फिर वह देर रात तक ठंड में दौड़ती रही थी, आँगन से कमरे और कमरे से आँगन तक। वे लोग टीन के कनस्तर में तरह-तरह के बिस्कुट लाए थे।" इस वाक्य में लेखक ने यह बताया है कि भारतीय संस्कृति में मेहमान का स्वागत कैसे किया जाता है, और यह कि शोभा ने भले ही परिजनों से इतर रात भर उनके साथ बिताया हो, फिर भी उसने सम्मान देने की कोई कसर नहीं छोड़ी। इस प्रकार, ममता कालिया की कहानियाँ भारतीय समाज के रिश्तों की बारीकियाँ और उन रिश्तों में बदलती भावनाओं को समझने का एक अद्भुत साधन बनती हैं। वे रिश्तों की जटिलताओं, समाज की संवेदनहीनता, और भारतीय संस्कृति के आदर्शों को व्याख्यायित करते हुए, हमें पारिवारिक मूल्यों के महत्व का एहसास कराती हैं।

3.5.4 धर्म और रीति-रिवाज-

भारतीय समाज विविध धर्मों, भाषाओं और परंपराओं का संगम है। यहाँ विभिन्न धर्मों के अनुयायी आपसी सौहार्द और गहरे संबंधों के साथ रहते हैं। किंतु समय के साथ सामाजिक रीतियों में कुछ कुरीतियाँ भी जन्म लेती हैं, जिनका प्रभाव समाज की संरचना और संबंधों पर पड़ता है। ममता कालिया की कहानी 'मेला' इसी सामाजिक यथार्थ को उजागर करती है। 'मेला' कहानी इलाहाबाद में लगने वाले कुंभ मेले के संदर्भ में लेखिका के निजी अनुभवों पर आधारित है। इसमें नायिका चारु के माध्यम से लेखिका ने धार्मिक आस्था, आडंबर और मानसिक द्वंद्व का सूक्ष्म चित्रण किया है। जब चारु की पति की मासी जालंधर से मकर संक्रांति पर कुंभ स्नान हेतु इलाहाबाद आती हैं, तो चारु उनके साथ मेले जाती है। वहाँ का दृश्य देखकर वह अचंभित रह जाती है- "सबसे ज्यादा ग्लानि अपने ऊपर हो रही थी चारु को। उसी के नगर में इतना जनसमुद्र उमड़ पड़ा है और वह इन सबसे अनभिज्ञ रही है। मासी न आई होती तो वह यहाँ झाँकती भी नहीं। शायद उसके अंदर पाप और पुण्य के प्रश्न अभी वैसी तीव्रता से नहीं उठते। उसे हैरानी थी कि जीवन के सबसे सूक्ष्म प्रश्नों का इतना सरल और सार्थक समाधान यहाँ कैसे चलाया जा रहा था। अच्छा से अच्छा सेनेटरी एक्सपर्ट भी इस स्नान अभियान के आगे निरस्त्र हो जाता। संगम में एक डुबकी न केवल इस जन्म के, बल्कि जन्म-जन्मांतर के पापों का प्रक्षालन करती है। मानो एक बार नहा लिया जाए तो प्रतिदिन अपने आप पाप 'फ्लश आउट' होते रहेंगे- पापों का 'सुलभ इंटरनेशनल' इत्यादि।" (कालिया, 52)

इसी प्रकार की धार्मिक अनुभूति ममता कालिया की कहानी 'आपकी छोटी लड़की' में भी देखने को मिलती है। एक पात्र कहता है- "क्या हमारे देश में कभी ईश्वर में विश्वास समाप्त हो सकता है? अभी मैं चौराहे के बीचोंबीच एक बौड़म-सा पत्थर रख दूँ, उसे सिंदूर में रंग कर दो फूल चढ़ा आऊँ - फिर देखना, अपने लोगों की श्रद्धा कैसी है। दस में से नौ लोग वहाँ रुकेंगे, माथा टेकेंगे, फूल-फल चढ़ाएँगे।" इसी तरह 'निर्मोही' लोककथा में लेखिका ने धार्मिक परंपराओं और आस्थाओं को व्यंग्यात्मक शैली में चित्रित किया है। राजकुमारी लाब्बावती को एक स्वप्न आता है, जिसमें उसके भाई द्वारा पीपल वृक्ष को उखाड़ने के कारण राजमहल पर आपत्ति आती है, जिसे दूर करने के लिए सौंताल तालाब के किनारे पुनः पीपल लगाकर पूजा की जाती है- "एक दिन लाब्बावती को सपना आया- तेरे भैया ने

पीपर समूल उखाड़ दिया, इसी कारण महल-अटारी सूनी पड़ गई हैं। एकास्सी के दिन सौंताल के किनारे फिर से तेरी भाभी पीपर लगाए, रोज ताल में नहाएँ, पीपर पूजने के बाद अन्न-जल लें - तब जाकर यह कलंक मिटेगा। फिर तू नौ महीने में दो भतीजे खिलाएगी। लाब्बावती ने सुबह सबको सपना सुनाया। अगले ही दिन एकास्सी थी। सात सुहागनें पूजा की थाल सजाकर, सोलह शृंगार कर, सोने का कूजा डाबरनैनी फूलमती के सिर पर रखकर पीपल लगाने निकल पड़ीं।” (कालिया, 139) धार्मिक विश्वासों के साथ-साथ ममता कालिया ने अंधविश्वास का भी गहन चित्रण किया है।

उनके उपन्यास ‘दुःखम-सुखम’ में दादी के माध्यम से नजर उतारने की परंपरा को दर्शाया गया है। यह व्यंग्यात्मक शैली में भारतीय संस्कृति में व्याप्त धार्मिक मान्यताओं की महत्ता और उनकी आलोचना को प्रकट करता है। लेखिका की कहानियों में धर्म, परंपरा, परिवार, और सामाजिक संरचना के बदलते स्वरूपों को व्यापकता के साथ प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने धार्मिक आडंबरों, पारिवारिक विघटन, एकल परिवार की वृद्धि, प्रेम विवाह और पितृसत्ता के बीच संघर्ष को बारीकी से चित्रित किया है।

ममता कालिया यह भी दिखाती हैं कि कैसे आधुनिकता, भौतिकता और असीमित इच्छाओं ने परिवार, संबंधों और जीवन मूल्यों को प्रभावित किया है। उनके कथा-साहित्य में यह बात स्पष्ट होती है कि आधुनिक समाज अधिक पाने की लालसा में असंतोष और अकेलेपन का शिकार होता जा रहा है। उनकी कहानियों में स्त्री पात्रों की आकांक्षाएँ, आत्मनिर्भरता की चाह, तथा पितृसत्तात्मक सामाजिक ढांचे से मुक्ति के प्रयास विशेष रूप से उभरकर सामने आते हैं। महिलाएँ अब पारंपरिक भूमिकाओं से आगे बढ़कर शिक्षा, रोजगार और सामाजिक स्वतंत्रता की दिशा में बढ़ रही हैं। यह परिवर्तन उनके निर्णयों, सोच, और समाज में भूमिका को भी प्रभावित करता है। अंततः, ममता कालिया का कहानी-साहित्य सामाजिक यथार्थ का दर्पण है, जिसमें वे पारंपरिक और आधुनिक मूल्यों के टकराव को अत्यंत संवेदनशीलता और व्यंग्यात्मकता के साथ प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियाँ पाठकों को समाज के गहरे अंतर्विरोधों से साक्षात्कार कराती हैं और भारतीय संस्कृति के भीतर छिपी सामाजिक जटिलताओं को उजागर करती हैं।

संदर्भ सूची

- कालिया, ममता .काके दी हट्टी. नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2017, पृ. सं. 103, 99, 96, 36.
- कालिया, ममता .छुटकारा. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, पृ. सं. 82, 36, 58, 11.
- कालिया, ममता .तीन लघु उपन्यास. किताबघर प्रकाशन, शाहदरा दिल्ली 2023, पृ. सं. 21, 33.
- कालिया, ममता .दुःखम-सुखम. लोकभारती प्रकाशन, 2013, पृ. सं. 83.
- कालिया, ममता .निर्मोही. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. सं. 52, 78, 129.
- कालिया, ममता .परदेस. साहित्य के खज़ाने से, 2023.
- कालिया, ममता .प्रतिनिधि कहानियाँ. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2023, पृ. सं. 138, 126, 87, 83, 117, 142, 77, 139, 85, 21.
- कालिया, ममता .मुखौटा. वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2018, पृ. सं. 30.
- कालिया, ममता .मेरी प्रिय कहानियाँ. राजपाल प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, पृ. सं. 88, 102, 69, 97, 113, 114, 12, 80, 101.

चतुर्थ अध्याय

ममता कालिया के कहानी-साहित्य में राजनीतिक संदर्भ और यथार्थबोध

ममता कालिया समकालीन हिंदी साहित्य की एक प्रमुख कहानीकार हैं, जिनकी कहानियाँ नारी-संवेदना, सामाजिक विसंगतियों और मध्यवर्गीय जीवन के यथार्थ को अत्यंत तीव्रता और प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत करती हैं। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से नारी-जीवन के उन पहलुओं को उजागर किया है, जिन्हें पारंपरिक साहित्य में अक्सर उपेक्षित या गौण रूप में प्रस्तुत किया गया था। उनकी कहानियों में स्त्री केवल करुणा की प्रतीक नहीं है, बल्कि वह एक विचारशील, जिज्ञासु, विद्रोही और आत्मनिर्भर व्यक्तित्व के रूप में सामने आती है।

ममता कालिया ने समाज में व्याप्त दोहरे मानदंडों, लैंगिक भेदभाव, और पारिवारिक-सामाजिक संरचनाओं में नारी की स्थिति पर सूक्ष्म और पैनी दृष्टि डाली है। उनके साहित्य में राजनीतिक संदर्भ न केवल परोक्ष रूप में, बल्कि कई बार प्रत्यक्ष आलोचना के रूप में भी प्रकट होते हैं। वे सत्ता-व्यवस्था, समाज में वर्चस्व की राजनीति, नौकरशाही की जड़ता, और स्त्री-पुरुष संबंधों में निहित सत्ता-संबंधों की गहराई से पड़ताल करती हैं। उनकी कहानियों में यह राजनीति केवल संसद और शासन-तंत्र तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह घर, दफ्तर, समाज और विवाह जैसे संस्थानों में व्याप्त है। ममता कालिया की लेखनी उन सूक्ष्म राजनीतिक तानों-बानों को उजागर करती है, जिनमें एक आम स्त्री का जीवन उलझा रहता है। 'चाभी', 'एक अदद औरत', 'मनहूसाबी' जैसी कहानियाँ सामाजिक और पारिवारिक ढाँचे में नारी के शोषण और दमन को तीव्रता से सामने लाती हैं, जो कि अंततः एक राजनीतिक प्रक्रिया ही है।

ममता कालिया का यथार्थबोध, विशेषतः स्त्री-जीवन और सामाजिक ढाँचों के अंतर्विरोधों से गहराई से जुड़ा हुआ है। ममता कालिया की कहानियाँ किसी आदर्शवादी कल्पना की दुनिया में नहीं रहती, बल्कि जीवन की कठोर सच्चाइयों से साक्षात्कार कराती हैं। वे मध्यवर्गीय जीवन की तंग गलियों, घरेलू कलह, आर्थिक संघर्षों, भावनात्मक टूटनों

और आत्मनिर्णय की आकांक्षाओं को अत्यंत वास्तविकता के साथ चित्रित करती हैं। उनका यथार्थबोध न केवल घटनाओं का बयान है, बल्कि सामाजिक संरचना में दबे हुए स्वरों की पहचान और उन्हें आवाज़ देने का प्रयास भी है। वे यह दिखाने में सफल रहती हैं कि किस प्रकार एक स्त्री समाज की वर्जनाओं, पारंपरिक मान्यताओं और पितृसत्तात्मक सोच से जूझते हुए अपने अस्तित्व की तलाश करती है। इस प्रकार ममता कालिया की कहानियाँ केवल नारी-संवेदना की अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि समाज के अंदर गहरे पैठे राजनीतिक और सामाजिक ढाँचों की पड़ताल भी हैं। उनका साहित्य एक संवेदनशील और सजग लेखिका की दृष्टि से लिखा गया दस्तावेज़ है, जो न केवल साहित्यिक सौंदर्य प्रदान करता है, बल्कि पाठक को सोचने, प्रश्न करने और व्यवस्था के खिलाफ खड़ा होने की प्रेरणा भी देता है।

4.1 राजनीतिक संरचना-

राजनीतिक संरचना केवल शासन, सत्ता और प्रशासन से संबंधित किसी औपचारिक ढाँचे तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक और पारिवारिक जीवन में व्याप्त सत्ता-संबंधों, नियंत्रण, और प्रभुत्व की पूरी व्यवस्था को इंगित करता है। यह संरचना व्यक्ति के जीवन के हर पहलू को प्रभावित करती है— उसके सोचने के तरीके से लेकर उसकी भूमिका, उसकी स्वतंत्रता और अधिकारों तक। सत्ता केवल शीर्ष पदों या राजनीतिक संस्थानों में नहीं होती; वह घर के भीतर, रिश्तों में, भाषा में, और संस्कृति के रचाव में भी मौजूद रहती है। विशेषकर महिलाओं के जीवन में यह सत्ता कई स्तरों पर कार्य करती है— परंपरा, नैतिकता, धर्म, शिक्षा, विवाह और मातृत्व के नाम पर। ममता कालिया की कहानियों में यह राजनीतिक संरचना बहुत ही सूक्ष्म किंतु तीव्र रूप में प्रकट होती है। वे अपने पात्रों की रोज़मर्रा की ज़िंदगी में घटित छोटे-छोटे अनुभवों, संवादों और चुप्पियों के माध्यम से यह स्पष्ट करती हैं कि कैसे सत्ता काम करती है— बिना शोर किए, बिना आदेश दिए, केवल अपेक्षाओं, परंपराओं और सामाजिक नियमों के माध्यम से। उदाहरण के लिए, जब एक स्त्री यह मानकर चलती है कि उसे घर का पूरा काम करना है और पति ऑफिस से आकर केवल आराम करेगा— यह सत्ता-संबंधों की वह स्वीकार्यता है, जो सामाजिक संरचना के भीतर ही अंतर्निहित है। यह स्पष्ट आदेश नहीं है, फिर भी यह एक निर्विवाद परंपरा के रूप में कार्य करता है— और यहीं पर सत्ता सबसे प्रभावशाली बनती

है। वे यह स्पष्ट करती हैं कि राजनीति केवल संसद या सत्ता के गलियारों में नहीं, बल्कि रोज़मर्रा के जीवन में, स्त्री-पुरुष संबंधों, पारिवारिक भूमिकाओं, कार्यालयी वातावरण, तथा समाज की सामूहिक सोच में भी मौजूद रहती है। एक उदाहरण देखिए-

“अपर्णा पत्र लेकर धड़धड़ाती हुई खन्ना के केबिन में पहुँची- ‘सर, मैंने तो फोन पर आपको पहले ही सूचित कर दिया था कि...’

शाखा प्रबंधक ने चश्मे में से उसे घूरकर कहा- ‘मुझे आपका कोई फोन नहीं मिला। आपको जो भी कहना है, लिखित में कहें।’” (कालिया, 30)

ममता कालिया इस बात को अत्यंत सहज और प्रभावशाली ढंग से दर्शाती हैं कि घरेलू और कार्यस्थल की संरचनाएँ कैसे स्त्रियों को एक विशिष्ट ढाँचे में सीमित कर देती हैं। उनके पात्र अक्सर अपने ही घरों में निर्णयों से वंचित, मानसिक और भावनात्मक दबावों से घिरे हुए, और सामाजिक मान्यताओं से बंधे हुए दिखाई देते हैं। ऑफिस में प्रमोशन की प्रक्रिया हो या विवाह में दहेज की बातचीत— हर जगह सत्ता की परतें हैं जो किसी न किसी रूप में स्त्री के आत्मसम्मान और निर्णयों को प्रभावित करती हैं। ममता कालिया की लेखनी इस राजनीति को केवल उजागर ही नहीं करती, बल्कि उसकी आलोचना भी करती है। वे अपनी कहानियों में यह भी दिखाती हैं कि किस प्रकार स्त्रियाँ इस संरचना को चुनौती देती हैं— कभी चुपचाप, कभी मुखर होकर। उनका यथार्थबोध न केवल शोषण की पहचान करता है, बल्कि प्रतिरोध की संभावनाओं की ओर भी संकेत करता है।

4.1.1 शासन प्रणाली

ममता कालिया की कहानियाँ पारंपरिक राजनीतिक विमर्श की सीमाओं को लांगते हुए शासन प्रणाली को सामाजिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक स्तरों पर विश्लेषित करती हैं। उनके कथा-संसार में शासन सत्ता केवल दिल्ली के सिंहासनों, विधायिका या नौकरशाही तक सीमित नहीं है, बल्कि वह एक ऐसी सर्वव्यापी सत्ता बन जाती है जो व्यक्ति की चेतना, संबंधों, इच्छाओं, और उसके रोज़मर्रा के निर्णयों तक को नियंत्रित करती है। ममता कालिया की कहानियों में घर एक सत्ता-केंद्र के रूप में उभरता है, जहाँ पितृसत्ता एक लघु प्रशासनिक ढाँचे की तरह कार्य करती है। ‘एक अदद औरत’ कहानी में यह स्पष्ट रूप से दिखता है कि किस तरह पुरुष घर के नियम तय करते हैं और स्त्रियों को उनके

अनुसार ढलने के लिए विवश किया जाता है। यहाँ सत्ता का रूप औपचारिक नहीं है, परंतु उसका प्रभाव इतना गहरा है कि स्त्री का समूचा अस्तित्व 'कर्तव्य' के नाम पर समर्पित होता जाता है। 'परली पार' कहानी में स्त्री पात्र की चुप्पी स्वयं में एक विरोध है— वह बोलती नहीं, पर उसकी चुप्पी उस सत्ता-व्यवस्था पर एक मौन प्रश्नचिह्न बन जाती है। पितृसत्तात्मक शासन-प्रणाली द्वारा तय की गई भूमिकाओं में स्त्री का श्रम, उसका भावनात्मक निवेश, और उसकी आकांक्षाएँ हाशिए पर डाल दी जाती हैं। यह अदृश्य शोषण एक गहरे और जटिल सत्ता ढाँचे की ओर संकेत करता है।

ममता कालिया की अनेक कहानियाँ कार्यस्थल को एक औपचारिक शासन प्रणाली के रूप में चित्रित करती हैं। 'दफ़्तर' कहानी में स्त्री पात्र को न केवल अपने काम के मूल्य के लिए लड़ना पड़ता है, बल्कि सत्ता के उन लिंग-आधारित विभाजनों का सामना भी करना पड़ता है जो निर्णयों और अवसरों को पुरुषों के पक्ष में झुका देते हैं। 'अनुभव' कहानी में स्त्री पात्र को अपने विचार व्यक्त करने से रोका जाता है, क्योंकि वह संस्थानिक सत्ता की सदस्य नहीं, केवल एक 'स्त्री प्रतिनिधि' मानी जाती है। एक उदाहरण देखिए— “ना बाबा, मैं इस लफड़े में नहीं पड़ना चाहती। कितनी फजीहत होगी। मेरे अब्बा तो मुझे जान से मार देंगे।” (कालिया, 35)। यहाँ सत्ता केवल पद या अधिकार का ही विषय नहीं है, बल्कि वह सांस्कृतिक और मानसिक ढाँचा भी बन जाती है जो स्त्री की आवाज़ को 'सजावट' या 'सांकेतिक उपस्थिति' बना देता है।

ममता कालिया यह भी दिखाती हैं कि शासन प्रणाली केवल दफ़्तर या घर तक ही सीमित नहीं, बल्कि संस्कृति और परंपरा के माध्यम से भी सत्ता का कार्य करती है। 'वह लड़की जो' इसका एक सशक्त उदाहरण है, जहाँ समाज एक लड़की की जीवनशैली, कपड़ों, बोलने के ढंग और स्वतंत्र निर्णयों को नियंत्रित करता है। अगर वह सामाजिक परंपराओं के अनुरूप नहीं चलती, तो उसे 'चरित्रहीन', 'असभ्य', या 'बागी' कहा जाता है। यहाँ शासन प्रणाली कोई अधिनियम या आदेश नहीं देती, परंतु सांस्कृतिक नैतिकताओं के माध्यम से एक अदृश्य दण्ड और सम्मान की संरचना बनाती है— जिससे स्त्रियों के लिए स्वायत्तता का स्थान संकुचित होता जाता है। हालाँकि ममता कालिया की कहानियों में सरकार या राजनेता प्रत्यक्ष रूप से नहीं आते, परंतु उनके प्रभाव की छाया सर्वत्र व्याप्त है। कहानियों में बेरोज़गारी, महिला आरक्षण, सरकारी उदासीनता, और मध्यमवर्ग की उपेक्षा शासन

प्रणाली की विफलताओं की ओर संकेत करती है। यह विशेष रूप से उस युवा पीढ़ी और मध्यमवर्ग के संघर्ष में दिखता है, जो नौकरी, पहचान, और आत्मसम्मान के लिए संघर्षरत है। 'सड़क पर एक औरत' कहानी में यह स्पष्ट होता है कि कैसे एक स्त्री जब घर, समाज और कानून से बेदखल हो जाती है, तो उसकी नागरिकता भी संदिग्ध हो जाती है— वह सत्ता की संरचनाओं से बाहर कर दी जाती है।

स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियाँ शासन प्रणाली को केवल विधायी या कार्यकारी ढाँचे के रूप में नहीं, बल्कि एक सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना के रूप में देखती हैं, जो स्त्री जीवन की हर परत में व्याप्त है। यह शासन प्रणाली सत्ताओं की परतों से बनी है— घर की सत्ता, दफ़्तर की सत्ता, परंपरा की सत्ता, और अंततः समाज की सामूहिक चेतना की सत्ता। वे इस बहुपरत सत्ता के विरोधाभासों को उजागर करती हैं और उनके भीतर स्त्रियों की प्रतिरोध की सूक्ष्म रणनीतियों को रेखांकित करती हैं। इस प्रकार, ममता कालिया का कथा-संसार एक नवीन राजनीतिक आलोचना बनकर उभरता है— जहाँ सत्ता केवल कुर्सियों में नहीं, बल्कि मनुष्यता की सोच में छिपी हुई सत्ता है।

4.1.2 संविधान

ममता कालिया की कहानियों में संविधान में निहित- न्याय, स्वतंत्रता, समानता और सम्मानपूर्वक जीवन जैसे मूल्य केवल सिद्धांत नहीं रहते, बल्कि उनके पात्र इन मूल्यों की कमी या अपूर्णता के प्रति चेतन होते हैं। 'एक अदद औरत' कहानी में नायिका अपने परिवार और पति की अपेक्षाओं के बीच संघर्ष करती है। उसे स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने की स्वतंत्रता तो संविधान देता है, पर सामाजिक व्यवस्था उसकी मौलिक पहचान को 'अस्वीकृति' से जोड़ देती है। यहाँ संविधान का 'स्वतंत्रता का अधिकार' कहीं पीछे छूट जाता है। 'नयी दुनिया' कहानी कार्यस्थल पर स्त्री के अनुभवों को प्रस्तुत करती है। महिला पात्र कानूनी रूप से तो समान वेतन और अवसर की अधिकारिणी है, लेकिन प्रमोशन, मान्यता और पद में भेदभाव से गुजरती है। यह संविधान के 'समानता के अधिकार' के व्यावहारिक विफलता का चित्रण है।

ममता कालिया की कहानियों की नायिकाएँ उस वर्ग से आती हैं जहाँ शिक्षा, नौकरी और शहर में रहने का अवसर तो है, परंतु समाज की मान्यताएँ उन्हें पूर्ण व्यक्तित्व नहीं

बनने देतीं। 'पच्चीस साल की लड़की' कहानी में मुख्य पात्र जब विवाह से इंकार करती है और अकेले रहने का विकल्प चुनती है, तब समाज उसे 'विद्रोही', 'चरित्रहीन' या 'असामान्य' ठहराता है। जबकि भारतीय संविधान उसे ऐसा करने की पूरी स्वतंत्रता देता है। यह कहानी प्रश्न उठाती है— क्या भारतीय समाज संविधान को केवल कागज़ी दस्तावेज़ मानता है?

ममता कालिया की स्त्रियाँ भाषण या आंदोलनों से नहीं लड़तीं। वे घर के भीतर रहकर, चुपचाप नौकरी जारी रखकर, बच्चों को अपने ढंग से पालकर, या तलाक के बाद अकेले जीवन चुनकर उस व्यवस्था को चुनौती देती हैं जिसने उन्हें अधिकारहीन मान लिया है। 'बोलने वाली औरत' कहानी की नायिका जब अपने विचार रखने का प्रयास करती है, तो पुरुष-वर्चस्व वाला कार्यस्थल उसे चुप करा देता है। यहाँ उसका मौन और सहनशीलता सामाजिक ढाँचे पर एक मौन संवैधानिक प्रतिवाद है। 'आपकी छोटी लड़की' कहानी से एक उदाहरण देखिए—

“कितनी बार कहा है टुन्नो, ममी को गुस्सा न करने दिया करो, इनका ब्लडप्रेसर बढ़ जाता है।”

“तुम्हें जरा ख्याल नहीं ममी का, टूनिया। चलो, इन्हें पानी में ग्लूकोज पिलाओ।”
(कालिया, 83)

ममता कालिया का साहित्य यह भी दिखाता है कि कैसे सांस्कृतिक परंपराएँ एक समानान्तर संविधान की तरह स्त्री जीवन को नियंत्रित करती हैं। विवाह, मातृत्व, यौन शुचिता आदि को नैतिकता की कसौटी बनाकर सामाजिक व्यवस्था स्त्रियों को सीमित कर देती है। 'नया त्रिकोण' कहानी में स्त्री-पात्र सामाजिक मान्यताओं से घिरी हुई है, जो उसे एक 'उचित स्त्री' की परिभाषा में बाँधना चाहती है। लेकिन वह इस परिभाषा से बाहर जाने का प्रयास करती है— यही उसकी संवैधानिक चेतना का प्रकटीकरण है।

ममता कालिया की कहानियों की पृष्ठभूमि में अक्सर बेरोज़गारी, महिला आरक्षण की विफलता, या सरकारी नीतियों की निष्क्रियता दिखाई देती है। ये संकेत करते हैं कि संविधान की संरचना और उसका लाभ-प्रवाह तंत्र आम नागरिक, विशेषतः स्त्रियों तक पूरी तरह नहीं पहुँच पाया है। 'मान लो कि' कहानी में एक स्त्री बार-बार अपनी पहचान बदलती है, केवल इसलिए कि व्यवस्था उसे बार-बार नकारती है। यह बदलती पहचानें उस व्यवस्था की विफलता हैं जो एक समान अवसर की गारंटी देती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियाँ संविधान को केवल कानूनी दस्तावेज़ के रूप में नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक, सामाजिक और वैयक्तिक विमर्श के रूप में प्रस्तुत करती हैं। वे यह संकेत देती हैं कि— संविधान के मूल्य जब तक सामाजिक व्यवहार में नहीं उतरते, तब तक वे अधूरे हैं। स्त्रियों का संघर्ष केवल लैंगिक नहीं, संवैधानिक और मानवीय अधिकारों की पुनर्स्थापना का संघर्ष है। मौन प्रतिरोध भी एक गूढ़ राजनीतिक भाषा हो सकती है। इस तरह ममता कालिया का कहानी-साहित्य संविधान की आत्मा को जनजीवन के गहरे अनुभवों में ढाल देता है, और पाठक को सोचने पर मजबूर करता है— क्या हमारा संविधान, वास्तव में, हर किसी का संविधान है?

4.1.3 न्यायिक प्रणाली

हिंदी साहित्य में ममता कालिया का नाम एक ऐसी लेखिका के रूप में स्थापित है, जिनकी कहानियाँ नारी-जीवन की जटिलताओं, विरोधाभासों और संघर्षों को गहरी संवेदनशीलता और विश्लेषणात्मक दृष्टि के साथ प्रस्तुत करती हैं। वे केवल सामाजिक जीवन के सतही अनुभवों तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि उन अदृश्य तंतुओं को भी उजागर करती हैं जो सत्ता, नैतिकता और न्याय के विमर्श से गहरे रूप से जुड़े हुए हैं। ममता कालिया की कहानियों में न्यायिक प्रणाली का चित्रण पारंपरिक रूप से न्यायालयों, विधिक प्रक्रियाओं या पुलिस व्यवस्था तक सीमित नहीं है, बल्कि वह स्त्री जीवन, सामाजिक संरचना, पारिवारिक संबंधों और मानसिक स्वतंत्रता के माध्यम से एक वैकल्पिक न्याय दृष्टिकोण की स्थापना करती हैं।

ममता कालिया की कहानियाँ यह प्रश्न उठाती हैं कि क्या न्याय केवल अदालतों और संविधान की किताबों तक सीमित है? उनके कथा-संसार में यह स्पष्ट होता है कि न्यायिक प्रणाली एक जीवंत सामाजिक संस्था के रूप में कार्य करती है, जहाँ सामाजिक दृष्टिकोण, परंपराएँ, और लैंगिक पूर्वग्रह भी अपने-अपने निर्णय सुनाते हैं। 'एक अदद औरत' कहानी में स्त्री के व्यक्तिगत निर्णयों को परिवार और समाज जिस तरह से आंकता है— जैसे उसे 'स्वार्थी', 'निर्लज्ज', या 'चरित्रहीन' घोषित कर दिया जाता है— वह सामाजिक न्यायालय की कार्यप्रणाली को उजागर करता है। यह एक अनौपचारिक परंतु अत्यंत प्रभावशाली न्याय प्रणाली है, जो स्त्री की स्वतंत्रता को अपराध की तरह देखती है।

ममता कालिया की कहानियों की स्त्रियाँ न्याय पाने के लिए अदालतों का दरवाज़ा नहीं खटखटातीं, क्योंकि वे जानती हैं कि वहाँ से न्याय नहीं, केवल प्रक्रिया प्राप्त होगी। उनकी स्त्रियाँ एक वैकल्पिक मार्ग अपनाती हैं— आत्मन्याय का। 'जाँच अभी जारी है' कहानी में महिला पात्र को कार्यस्थल पर मानसिक उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। न तो वह किसी अधिकारी से शिकायत करती है, न ही कोई औपचारिक रिपोर्ट लिखती है। उसका प्रतिरोध मौन और आत्मसम्मान के माध्यम से होता है। यही मौन उसके लिए प्रतिरोध का सबसे प्रभावी रूप बन जाता है— एक ऐसा प्रतिरोध जो किसी निर्णय पत्र से अधिक ताकतवर है। इसी तरह 'जोरदार तालियाँ' कहानी की नायिका न्याय को अपने जीवन की स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता में खोजती है। वह सामाजिक या विधिक संरचना से कोई समर्थन नहीं माँगती, बल्कि अपनी चेतना में ही न्याय की स्थापना करती है। 'प्रतिप्रश्न' कहानी के नायक आशु ने महिमा से कहा कि दोस्ती धूप-छाँह एकसाथ झेलने में होती है। महिमा ने उसकी बात जानबूझकर अनसुनी कर दी और उसे छोड़कर चल पड़ी। इस पर महिमा ने आशु से कहा, "देखो, तुम्हारे पास न नौकरी न चाकरी, यानी अभी अपनी जिंदगी का इन्तजाम नहीं और मेरी जिंदगी सेंट में माँग रहे हो। मुझे निरुपायता से नफरत है, मैं एक कामयाब जिंदगी चाहती हूँ।" (कालिया, 41)। उसके अनुसार जीवन में कामयाबी के लिए रिश्तों से ज्यादा अर्थ महत्वपूर्ण है।

ममता कालिया अपने कहानी-साहित्य में बार-बार यह दिखाती हैं कि भारत की न्याय प्रणाली विशेष रूप से हाशिए पर जीने वालों के लिए कितनी असंवेदनशील और जटिल है। 'एक रिश्ता तो था' जैसी कहानियों में न्यायिक प्रणाली की संवेदनहीनता और दूरी उजागर होती है। पात्र जीवन की पीड़ा और विसंगति से जूझते हैं, लेकिन कोई औपचारिक न्याय नहीं मिलता। वहाँ न्याय केवल एक सपना है— और उसे पाना, एक संघर्ष से अधिक, एक मानसिक प्रक्रिया बन जाता है। इन कहानियों में न्यायिक प्रणाली की आलोचना केवल उसके बाहरी स्वरूप तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह इसकी वैचारिक संरचना, जिसमें स्त्री को बार-बार 'उप-व्यक्ति' के रूप में देखा जाता है, की भी पड़ताल करती है।

एक महत्वपूर्ण अंतर जिसे ममता कालिया अपनी कहानियों में उजागर करती हैं, वह है— संवैधानिक न्याय और सामाजिक न्याय के अनुभवों के बीच की खाई। संविधान

समानता का वादा करता है, लेकिन सामाजिक संरचना स्त्रियों को बार-बार असमानता के अनुभवों से गुज़रने पर विवश करती है। उनकी कहानियों की स्त्रियाँ जब अपने निर्णय खुद लेने लगती हैं— विवाह तोड़ती हैं, अकेले जीवन जीने का फैसला करती हैं, या करियर की प्राथमिकता देती हैं— तब समाज उन्हें नैतिक रूप से दोषी ठहराता है। यह एक गैर-आधिकारिक परंतु प्रभावशाली न्यायिक ढाँचा है, जो किसी भी कानूनी संस्थान से अधिक भयावह हो सकता है। ममता कालिया की रचनाओं में सबसे महत्वपूर्ण विमर्श यह है कि न्याय केवल कानूनी निर्णय नहीं है— वह चेतना का निर्णय है। न्याय वहाँ है जहाँ स्त्री अपने निर्णय स्वयं लेने में सक्षम हो जाती है, वह अपने आत्मसम्मान को बचा लेती है, और वह उस सामाजिक ढाँचे को खारिज करने का साहस करती है जिसने उसे सीमित किया है। यह न्यायिक चेतना कई बार किसी कानून से अधिक क्रांतिकारी और परिवर्तनकारी साबित होती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियों में न्यायिक प्रणाली एक विधिक संरचना नहीं, बल्कि एक वैचारिक संघर्ष का प्रतीक है। वहाँ न्याय की तलाश कोर्ट में नहीं, चेतना में होती है; वहाँ प्रतिरोध गवाही से नहीं, मौन और स्वायत्तता से होता है; वहाँ नायिका किसी कानून के सहारे नहीं, अपने अस्तित्व की लड़ाई से न्याय प्राप्त करती है। इसलिए ममता कालिया की कहानियाँ न्यायिक विमर्श को एक नई दिशा देती हैं— जो स्त्री के अनुभव, सामाजिक ढाँचे, और चेतना के मेल से बनती है। उनके साहित्य में न्यायिक प्रणाली का विमर्श केवल कानून की बहस नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक और सामाजिक पुनर्जागरण की प्रक्रिया है।

4.2 स्त्री-स्वतंत्रता और राजनीति

स्त्री-स्वतंत्रता केवल इतना नहीं कि वह अपने घर से बाहर निकल सके, पढ़-लिख सके, या अपने लिए जीवनसाथी चुन सके। ये अधिकार आवश्यक हैं, परंतु यह स्वतंत्रता तब पूर्ण मानी जाती है जब स्त्री अपने विचारों, संवेदनाओं, और निर्णयों को स्वतंत्र रूप से व्यक्त कर सके— और इन अभिव्यक्तियों को समाज, कानून और व्यवस्था में मान्यता और स्थान मिले। जब कोई स्त्री यह अधिकार स्वयं अर्जित करती है, या उसके लिए संघर्ष करती है, तो यह स्वतः ही एक राजनीतिक कार्य बन जाता है, चाहे वह सीधे किसी दल या मंच से

जुड़ी हो या नहीं। राजनीति पारंपरिक रूप से सत्ता और शासन तक सीमित समझी जाती है, किंतु वस्तुतः वह जीवन के हर उस पक्ष से जुड़ी है जहाँ निर्णय, अधिकार और प्रतिनिधित्व का सवाल आता है। स्त्री-स्वतंत्रता का संघर्ष भी इसी राजनीति का हिस्सा है— यह उस सत्ता-संरचना को चुनौती देता है जो सदियों से स्त्रियों को सीमित, नियंत्रित और मौन बनाए रखने की कोशिश करता आया है।

जब कोई स्त्री यह कहती है कि वह क्या पहनना चाहती है, किससे विवाह करेगी या नहीं करेगी, वह माँ बनेगी या नहीं— तो यह केवल व्यक्तिगत निर्णय नहीं हैं, बल्कि सामाजिक ढाँचों को पुनर्परिभाषित करने वाले राजनीतिक वक्तव्य हैं। ये निर्णय पितृसत्ता, धर्म, परंपरा और सत्ता के उन सभी रूपों के खिलाफ एक मौन विद्रोह होते हैं, जो स्त्री को उसकी 'सीमा' में रहने का आदेश देते हैं। सार्वजनिक स्थानों पर स्त्री की उपस्थिति, जैसे राजनीति में भागीदारी, आंदोलन में नेतृत्व, या मीडिया में मुखरता, यह सब उस प्रक्रिया का हिस्सा हैं जो प्रतिनिधित्व और समानता की माँग करती हैं। जब स्त्रियाँ पंचायत से संसद तक अपनी बात रखती हैं, जब वे कानून बदलवाने के लिए संगठित होती हैं, जब वे ट्रोलिंग और धमकियों के बावजूद मुखर बनी रहती हैं— तो वे इस व्यवस्था को चुनौती दे रही होती हैं। यह भी ध्यान देने योग्य है कि स्त्रियों की स्वतंत्रता के विरुद्ध सबसे अधिक विरोध उन्हीं संस्थागत संरचनाओं से आता है जो परंपरा, संस्कृति या धर्म के नाम पर उन्हें नियंत्रित करते हैं। और यही इसे एक गहन राजनीतिक संघर्ष बनाता है— क्योंकि यह केवल एक व्यक्ति की नहीं, पूरे सामाजिक ढाँचे की पुनर्रचना की माँग करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि स्त्री-स्वतंत्रता केवल सामाजिक या व्यक्तिगत प्रश्न नहीं है, यह एक सतत, जीवंत और बहुपरतीय राजनीतिक प्रक्रिया है— जहाँ एक स्त्री जब अपनी पहचान, अधिकार और अस्तित्व के साथ खड़ी होती है, तो वह न केवल खुद को, बल्कि पूरे समाज को बदलने की दिशा में कदम बढ़ा रही होती है।

4.2.1 स्त्री-स्वतंत्रता का इतिहास

स्त्री-स्वतंत्रता का इतिहास केवल स्त्रियों की व्यक्तिगत मुक्ति का इतिहास नहीं है, बल्कि यह सामाजिक संरचनाओं, परंपराओं और सत्ता के केंद्रों को चुनौती देने की एक सतत प्रक्रिया रही है। यह इतिहास अनकहे संघर्षों, साहसिक आवाज़ों, और चुपचाप चली आई

लंबी लड़ाइयों का ऐसा दस्तावेज़ है, जो यह दर्शाता है कि स्वतंत्रता केवल कानून में दर्ज अधिकार नहीं होती, बल्कि मानसिक, सामाजिक और सांस्कृतिक बंधनों से मुक्ति भी होती है। प्राचीन भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति तुलनात्मक रूप से सम्मानजनक मानी जाती थी। ऋग्वैदिक काल में उन्हें शिक्षा, धार्मिक अनुष्ठानों और दार्शनिक संवादों में भाग लेने की स्वतंत्रता प्राप्त थी। गार्गी, मैत्रेयी, लोपामुद्रा जैसी विदुषियों ने उस युग में ज्ञान और विचार की दुनिया में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई। परंतु कालांतर में जब समाज में वर्ण और जाति व्यवस्था कठोर होती गई, तब स्त्री की भूमिका भी सीमित होती गई। उत्तरवैदिक काल में उनकी स्थिति में गिरावट आने लगी। उनका स्थान धीरे-धीरे 'गृहिणी' तक सिमट गया और उन्हें शिक्षा व स्वतंत्र निर्णय से वंचित किया जाने लगा।

मध्यकालीन भारत में स्त्री-जीवन और अधिक जटिल हो गया। पर्दा प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा जैसी अमानवीय कुरीतियाँ व्यापक रूप से प्रचलित हो गईं। मुस्लिम शासनकाल के दौरान सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभावों ने स्त्रियों को और अधिक संकोच और सीमाओं में कैद किया। इस दौर में स्त्री-स्वतंत्रता की आवाज़ें न के बराबर थीं, परंतु भक्ति आंदोलन ने कुछ ऐसी स्त्रियों को जन्म दिया जिन्होंने अपने समय की मर्यादाओं को लांघते हुए आध्यात्मिक और सामाजिक स्वतंत्रता की मिसाल पेश की। मीराबाई और अक्का महादेवी जैसी कवयित्रियाँ इसका उदाहरण हैं।

19वीं शताब्दी में जब भारत ब्रिटिश उपनिवेश बना, तब आधुनिक शिक्षा और सुधारवादी आंदोलनों के माध्यम से स्त्री-स्वतंत्रता की पहली संगठित और वैचारिक आवाज़ें उभरने लगीं। राजा राममोहन राय ने सती प्रथा का विरोध किया, ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने विधवा पुनर्विवाह के पक्ष में संघर्ष किया। सावित्रीबाई फुले भारत की पहली महिला शिक्षिका बनीं और दलित महिलाओं को पढ़ाने का बीड़ा उठाया। पंडिता रमाबाई ने विधवाओं के लिए आश्रय और शिक्षा की व्यवस्था की। यह वह समय था जब स्त्री पहली बार अपनी मुक्ति की लड़ाई खुद लड़ने लगी थी।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन ने स्त्रियों को एक व्यापक मंच प्रदान किया। इस युग में नारी-स्वतंत्रता और राष्ट्र-स्वतंत्रता के विचार एक-दूसरे से जुड़ गए। सरोजिनी नायडू, कस्तूरबा गांधी, एनी बेसेन्ट, अरुणा आसफ़ अली, विजयलक्ष्मी पंडित और उषा मेहता जैसी महिलाओं ने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेकर यह सिद्ध किया कि राजनीतिक स्वतंत्रता का

सपना बिना स्त्री की सहभागिता अधूरा है। इन महिलाओं ने न केवल आंदोलनों का नेतृत्व किया, बल्कि जेल गईं, लाठी-गोली खाईं, और नारी की शक्ति का नया विमर्श गढ़ा। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय संविधान ने स्त्रियों को समान अधिकार दिए— जैसे कि समान वेतन, शिक्षा, रोजगार, मतदान और संपत्ति के अधिकार। पंचायती राज व्यवस्था में 33% आरक्षण ने उन्हें लोकतांत्रिक भागीदारी में अवसर दिया। हालाँकि, कानून बनाने भर से स्वतंत्रता पूरी नहीं होती। समाज में आज भी स्त्रियों को लैंगिक भेदभाव, घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न, और रूढ़िवादिता का सामना करना पड़ता है। इसके बावजूद आज की स्त्री पहले से कहीं अधिक सजग, शिक्षित और स्वाभिमानिनी है। वह अपने लिए, और अपने जैसे अन्य लोगों के लिए आवाज़ उठा रही है।

21वीं सदी में स्त्री-स्वतंत्रता का संघर्ष एक नए आयाम पर पहुंचा है। अब यह केवल शारीरिक या आर्थिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है, बल्कि आत्मनिर्णय, लैंगिक समानता और मनोवैज्ञानिक गरिमा के लिए भी है। ‘#मी टू’ आंदोलन, कार्यस्थलों पर अधिकारों की मांग, एलजीबीटीक्यू+ समुदाय में स्त्रियों की भागीदारी— ये सब इस बात के संकेत हैं कि स्त्री अब अपनी पहचान दूसरों द्वारा परिभाषित नहीं होने देना चाहती। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि स्त्री-स्वतंत्रता का इतिहास केवल एक संघर्ष का इतिहास नहीं, वह संवेदना, विवेक और विकास की यात्रा भी है। यह यात्रा अभी पूरी नहीं हुई है— आज भी कई स्त्रियाँ बुनियादी अधिकारों से वंचित हैं। परंतु आशा की किरण यह है कि आज की स्त्री मौन नहीं है, वह प्रश्न कर रही है, उत्तर माँग रही है और स्वयं बदलाव की सूत्रधार बन रही है। स्त्री-स्वतंत्रता का इतिहास अतीत की थाती नहीं, वर्तमान की चुनौती और भविष्य की संभावनाओं से भरा हुआ पथ है— जिसे हर नई पीढ़ी की स्त्रियाँ अपनी चेतना से प्रकाशित करती रहेंगी।

ममता कालिया समकालीन हिंदी साहित्य में ऐसी सशक्त कथाकार हैं, जिन्होंने स्त्री-जीवन की विडंबनाओं, संघर्षों और आकांक्षाओं को न केवल सामाजिक दृष्टिकोण से देखा, बल्कि उसे राजनीतिक संदर्भों से भी जोड़ा है। उनके कथा-संसार में स्त्री-स्वतंत्रता केवल व्यक्तिगत या पारिवारिक मुक्ति की बात नहीं है, बल्कि यह एक राजनीतिक क्रिया है— सत्ता-ढाँचे से टकराने, विरोध करने और स्वयं के निर्णय को मान्यता देने की प्रक्रिया। ममता कालिया की स्त्रियाँ जब अपने जीवन में निर्णय लेती हैं— जैसे विवाह न करने,

तलाक लेने, नौकरी करने या आत्मनिर्भर होने का— तो वह केवल व्यक्तिगत निर्णय नहीं होता, बल्कि वह समाज के स्थापित नियमों, पारिवारिक संरचनाओं और पुरुषसत्तात्मक सोच के विरुद्ध एक राजनीतिक प्रतिरोध होता है। 'ज़िंदगी- सात घंटे बाद की' जैसी कहानियों में स्त्री अपने संबंधों की असमंजसता से जूझती है, और अंततः निर्णय लेती है कि वह आत्मसम्मान को प्राथमिकता देगी— यह उसकी निजी आज़ादी के साथ-साथ एक सामाजिक ढाँचे को नकारने का कार्य भी है। ममता कालिया यह दिखाती हैं कि परिवार एक राजनीतिक संस्था है, जहाँ स्त्री को उसकी भूमिका दी जाती है— पत्नी, माँ, बहू— और उससे आज्ञाकारी होने की अपेक्षा की जाती है। जब कोई स्त्री इन परिभाषाओं से बाहर जाने का प्रयास करती है, तो उसे विद्रोही, असामाजिक, या चरित्रहीन घोषित कर दिया जाता है। 'एक अदद औरत' कहानी की नायिका पारंपरिक भूमिका को अस्वीकार करती है और स्वतंत्र जीवन की ओर बढ़ती है— यह स्त्री की राजनीतिक मुक्ति की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है। उनकी कहानियों में दफ्तर, विद्यालय, या अन्य कार्यस्थल केवल काम की जगह नहीं हैं, बल्कि वे सत्ता के केंद्र हैं जहाँ लिंग आधारित भेदभाव, शोषण और नियंत्रण की राजनीतिक प्रक्रिया चलती है। 'दूसरी आजादी' कहानी में स्त्री के साथ व्यवहार यह दर्शाता है कि उसकी योग्यता से ज़्यादा उसका 'व्यवहार', 'लचक', और 'नरमी' को महत्त्व दिया जाता है— यह सत्ता और राजनीति के लिंग आधारित दृष्टिकोण को उजागर करता है। 'श्यामा' कहानी का नायक एक सरकारी सेवा से अवकाश प्राप्त अधिकारी है। जीवनभर अपनी पत्नी श्यामा पर जुल्म करता है। उसको घर में बंद करके रखता है और वही उसकी मृत्यु का कारण भी था। लेखिका स्वयं श्यामा का सारा दुःख जानने के बाद पुलिस स्टेशन जाकर श्यामा को बचाने के लिए रिपोर्ट लिखवाने गई तो प्रभारी अधिकारी ने कहा- "जिसके साथ ज्यादाती हो रही है, वह खुद आये आप कौन होती है?" (कालिया, 33)। श्यामा के लिए कुछ न कर सकने का दुःख खुद लेखिका को बेहद परेशान कर रहा था। चार साल बाद उसका पति लेखिका को उसकी पत्नी श्यामा की मृत्यु का कारण कैंसर की बीमारी बताता है, लेकिन लेखिका उस पर कोई आक्षेप नहीं लगा पाती ।

ममता कालिया की स्त्रियाँ न केवल जीवन के निर्णयों में स्वतंत्र होती हैं, बल्कि वे अपनी भाषा, अभिव्यक्ति और दृष्टिकोण में भी स्वतंत्रता की खोज करती हैं। वे अपनी बात खुलकर कहती हैं, विरोध करती हैं, व्यंग्य करती हैं और कभी-कभी मौन भी एक

राजनीतिक हथियार की तरह प्रयोग करती हैं। उनकी भाषा में व्यंग्य, तीखापन और सत्य की सहज स्वीकृति, स्त्री-अभिव्यक्ति को एक राजनीतिक आयाम प्रदान करती है। ममता कालिया यह स्थापित करती हैं कि स्त्री की स्वतंत्रता की राह में सबसे बड़ा रोड़ा समाज की सामूहिक सोच है, जो उसे लगातार नियंत्रित, सीमित और परिभाषित करने की कोशिश करती है। वह हर स्वतंत्र स्त्री को शक की नज़रों से देखता है, और उसकी मुक्ति को 'अनुशासनहीनता' मानता है। 'सीढ़ियाँ' जैसी कहानियाँ इस विडंबना को उजागर करती हैं, जहाँ स्त्री धीरे-धीरे आत्मनिर्भरता की सीढ़ियाँ चढ़ती है, लेकिन समाज हर कदम पर उसके निर्णय को अस्वीकार करने का प्रयास करता है। निष्कर्षतः ममता कालिया की कहानियों में स्त्री-स्वतंत्रता और राजनीति एक-दूसरे से गहराई से जुड़ी हुई हैं। उनकी स्त्रियाँ समाज, परिवार और कार्यस्थल की राजनीतिक संरचना को चुनौती देती हैं, उसे पुनर्परिभाषित करती हैं, और अपने जीवन की दिशा स्वयं निर्धारित करती हैं। उनके कहानी-साहित्य में स्त्री का 'स्वतंत्र होना' ही सबसे बड़ा राजनीतिक वक्तव्य है— एक ऐसी क्रांति, जो बाहरी शोर से नहीं, बल्कि भीतरी आत्मबोध और विद्रोह से जन्म लेती है।

4.2.2 समाज में बदलाव

समाज में बदलाव कोई अचानक घटित होने वाली घटना नहीं, बल्कि यह एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, जो समय, विचार, संघर्ष और चेतना के समवेत प्रयासों से आकार लेती है। यह बदलाव कभी सांस्कृतिक होता है, कभी राजनीतिक, कभी आर्थिक और कभी नैतिक-मूल्यों से जुड़ा। ममता कालिया की कहानियाँ इसी परिवर्तनशील समाज की पड़ताल करती हैं— विशेषकर उस कोण से, जहाँ स्त्री का जीवन, उसकी चेतना और उसकी स्वतंत्र सत्ता केंद्र में होती है। बदलाव समाज का स्वाभाविक गुण है। जैसे नदी का जल बहता है, समय के साथ उसकी धारा दिशा भी बदलती है— ठीक उसी प्रकार समाज की धारणाएँ, मूल्य, आचरण और सोच भी परिवर्तित होती रहती हैं।

ममता कालिया की कहानी 'वह मिली थी बस में' इस द्वंद्व को बेहतरीन ढंग से प्रस्तुत करती है, जहाँ स्त्री पात्र एक ऐसे सामाजिक परिवेश में जी रही है जो आधुनिकता की झलकियाँ तो दिखाता है, पर उसके मूल में गहरी रूढ़ियाँ बसी हुई हैं। यह कहानी स्त्री की उस आकांक्षा को उजागर करती है जो आधुनिकता की ओर बढ़ना चाहती है, पर परंपरा

की जकड़नें उसे बार-बार पीछे खींचती हैं। यह एक व्यक्तिगत संघर्ष नहीं, बल्कि समाज में व्याप्त उस संरचनात्मक राजनीति की ओर संकेत करता है जो स्त्री की स्वायत्तता को सीमित करता है।

ममता कालिया के कथा-संसार में स्त्री केवल पीड़िता नहीं है, वह संघर्ष करती है, सवाल उठाती है, और अपनी पहचान के लिए लड़ती है। उनकी चर्चित कहानी 'पिछले दिनों का अँधेरा' इसका सशक्त उदाहरण है, जहाँ स्त्री अपने जीवन के चुनाव— विवाह, प्रेम, दांपत्य और मातृत्व— को आत्मसमीक्षा की कसौटी पर कसती है। यह कहानी दिखाती है कि कैसे समाज स्त्री से नैतिकता, त्याग और 'सम्मानजनक' आचरण की अपेक्षा करता है, और जब वह इन अपेक्षाओं से हटकर निर्णय लेती है, तो यह महज़ निजी नहीं, सामाजिक और राजनीतिक प्रतिरोध बन जाता है। स्त्री की व्यक्तिगत स्वतंत्रता यहाँ एक व्यापक राजनीतिक वक्तव्य बनकर उभरती है— जो विवाह संस्था, नैतिकता की रूढ़ व्याख्या और सामाजिक मूल्यों की कठोरता पर प्रश्न उठाती है। शॉल' कहानी में स्कूल में चाय बनाने के लिए नौकरानी के रूप में रखी ननकी को ठंड की वजह से सभी के सहयोग से एक शॉल खरीदकर दी । सहयोग देनेवाली अध्यापिकाएँ दूसरे दिन ननकी को हर बात पर ताने देती हैं एक गरीब नौकरानी के प्रति मानवता और करुणा के बदले उन पर रोप जमाते हैं उससे त्रस्त होकर ननकी कहती है, "नहीं बहन जी, आपके हाथ जोड़ित हैं, हम शॉल न लेब । सुबह से मार फबती सुन सुन हमार छाती फट गयी।" (कालिया, 76)। शिक्षित लोग भी गरीबों को मदद के बदले उस पर उपकार कर उन्हें इतना सुनाते हैं कि उनके स्वाभिमान को ठेस पहुंचाने में भी पीछे नहीं हटते ।

समाज में बदलाव की प्रक्रिया केवल विचारों या व्यवहार में ही नहीं, भाषा में भी परिलक्षित होती है। ममता कालिया की भाषा सहज, तिक्त, और सामाजिक यथार्थ से गहराई से जुड़ी होती है। उनकी कहानियों में स्त्रियाँ पहली बार मुखर होकर बोलती हैं— वे अपने शरीर, इच्छाओं और असहमति को शब्द देती हैं। उनकी एक अन्य कहानी 'रसोईघर', केवल एक स्त्री की रसोई से संबंधित नहीं, बल्कि उस सामाजिक संरचना की आलोचना है जो स्त्री को सीमित करता है। यह रसोई केवल भोजन बनाने की जगह नहीं, बल्कि स्त्री की आकांक्षाओं के दमन का प्रतीक है— और जब वह इस सीमित स्थान को तोड़ने का प्रयास करती है, तो वह सीधे-सीधे सत्ता-संरचना को चुनौती देती है। यह परिवर्तन कभी

धीरे-धीरे होता है, कभी क्रांति की तरह आता है। ममता कालिया की कहानियाँ क्रांति के उद्घोष नहीं करतीं, परंतु उनमें स्त्री की आंतरिक चेतना की क्रांति गहराई से दिखती है। वह क्रांति नारेबाज़ी से नहीं, बल्कि सोचने, समझने और विकल्प चुनने के अधिकार से जन्मती है।

‘एक अदद औरत’ जैसी कहानी में स्त्री पात्र एक ऐसे समाज से टकराती है जो पुरुष की उपस्थिति को उसकी सुरक्षा और सम्मान की गारंटी मानता है। पर जब वह बिना उसके भी स्वयं को पूर्ण मानने लगती है, तो यह एक राजनीतिक घोषणा होती है— जो स्त्री की आत्मनिर्भरता को वैधता देती है। यह बदलाव तभी सार्थक होता है जब वह समावेशी हो, जब उसमें सबकी आवाज़ शामिल हो, और जब वह मानवीय मूल्यों को और अधिक सशक्त करे। ममता कालिया की कहानियाँ इस समावेशी दृष्टिकोण की ओर संकेत करती हैं— जहाँ स्त्री का संघर्ष न केवल उसके लिए, बल्कि पूरे समाज के पुनर्निर्माण के लिए होता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि जो समाज बदलने की क्षमता नहीं रखता, वह समय की धारा में पीछे छूट जाता है। और जो साहित्य इस बदलाव की चेतना को स्वर देता है— जैसे ममता कालिया का कहानी-साहित्य— वह साहित्य केवल कला नहीं, एक सामाजिक-राजनीतिक हस्तक्षेप है।

4.2.3 आधुनिक चुनौतियाँ

ममता कालिया समकालीन हिंदी साहित्य की उन मुखर कथाकारों में से हैं, जिनकी कहानियाँ सामाजिक यथार्थ को गहराई और संवेदनशीलता के साथ उजागर करती हैं। उनके लेखन में समाज के भीतर घट रहे परिवर्तनों की स्पष्ट झलक मिलती है— विशेषतः स्त्री-जीवन, पारिवारिक संरचना, मध्यवर्गीय संकट और आधुनिकता के द्वंद्वों के संदर्भ में। वे सामाजिक बदलाव को केवल घटनाओं या परिस्थितियों की दृष्टि से नहीं देखतीं, बल्कि उन बदलावों के भीतर छिपी आंतरिक टूटन, मानसिक संघर्ष और असंतुलन को उजागर करती हैं। ममता कालिया की कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि स्त्री की स्वतंत्रता की जो अवधारणा आधुनिक समाज में स्थापित हो रही है, वह कई बार आभासी या अधूरी है। उनकी कहानी ‘एक दिन अचानक’ में एक स्त्री भले ही आत्मनिर्भर हो चुकी हो, परन्तु वह अपने अंदर के अपराधबोध, संबंधों की टूटन और सामाजिक दृष्टिकोण की जटिलता से मुक्त नहीं हो पाती। यह बताता

है कि आधुनिक स्त्री का संघर्ष अब केवल बाहरी नहीं रहा, वह भीतर तक चला गया है— यह बदलाव की वह चुनौती है, जो 'स्वतंत्रता' की नई परिभाषा माँगता है। ममता कालिया के कथासंसार में पारंपरिक परिवार एक बिखरते हुए ढाँचे की तरह उभरता है। उनकी कहानी 'एक अदद औरत' में यह दिखाया गया है कि विवाह, प्रेम, और दांपत्य जैसे संबंध अब सामाजिक औपचारिकताओं के बीच अपने अर्थ खोते जा रहे हैं। आज की पीढ़ी आत्मनिर्भर तो है, लेकिन भावनात्मक संबंधों में गहराई और स्थायित्व की कमी एक नवीन सामाजिक संकट को जन्म दे रही है।

ममता कालिया मध्यवर्गीय जीवन की सांस्कृतिक और मानसिक विडंबनाओं को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से चित्रित करती हैं। आधुनिकता की ओर भागता यह वर्ग उपभोक्तावादी संस्कृति से आकर्षित तो है, परंतु अपने नैतिक मूल्यों, पारिवारिक परंपराओं और सामाजिक जिम्मेदारियों के द्वंद्व में फंसा रहता है। उनकी कहानियाँ जैसे 'हलवा' या 'छूटना' इस बात का संकेत देती हैं कि सामाजिक बदलाव के दौर में मूल्य-बोध और आचरण के बीच दूरी बढ़ती जा रही है। ममता कालिया स्वयं एक कार्यरत लेखिका रही हैं, इसीलिए उनकी कहानियों में महिला कर्मचारी की समस्याएँ— कार्यालयी राजनीति, लैंगिक भेदभाव, मातृत्व बनाम कैरियर की जटिलता— बड़ी सहजता से प्रकट होती हैं। कहानी 'बेघर' में नायिका की नौकरी, उसका आवास संकट और समाज की प्रतिक्रिया यह दर्शाते हैं कि स्त्री की आज़ादी को समाज अब भी संदेह की दृष्टि से देखता है।

ममता कालिया की भाषा व्यंग्यात्मक, सरल और संवादात्मक है। वह अपने पात्रों के ज़रिए यह बताती हैं कि अभिव्यक्ति की आज़ादी, विशेषकर स्त्रियों की, आज भी अनेक सामाजिक रोड़ों और नैतिकता के पहरेदारों से घिरी हुई है। उनकी भाषा ही सामाजिक बदलाव की चुप कहानियों को मुखर करती है। इनकी कहानियाँ सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया को बाहरी घटनाओं की बजाय आंतरिक प्रतिक्रियाओं, मानसिक तनावों और संबंधों के टूटने-बनने की प्रक्रिया के माध्यम से प्रस्तुत करती हैं। उनके कहानी-साहित्य में यह स्पष्ट होता है कि आधुनिक समाज में बदलाव केवल विकास या स्वतंत्रता का प्रतीक नहीं, बल्कि नवीन जटिलताओं और चुनौतियों का प्रवेशद्वार भी है। ममता कालिया के साहित्य में सामाजिक बदलाव एक संघर्षशील चेतना है, जो परंपरा और आधुनिकता के बीच पुल बनाती है— लेकिन वह पुल अभी भी हिचकोले खा रहा है।

4.3 भ्रष्टाचार और सत्ता-लोलुपता

भ्रष्टाचार और सत्ता-लोलुपता समकालीन राजनीति और प्रशासनिक व्यवस्था की दो जटिल और परस्पर संबद्ध समस्याएँ हैं। ये दोनों अवधारणाएँ न केवल लोकतांत्रिक मूल्यों को बाधित करती हैं, बल्कि सामाजिक न्याय, पारदर्शिता और संस्थागत अखंडता को भी गंभीर रूप से प्रभावित करती हैं। अकादमिक दृष्टिकोण से इनका विश्लेषण सामाजिक विज्ञान, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र और नैतिक दर्शन के अंतर्गत अत्यंत प्रासंगिक है।

भ्रष्टाचार को सामान्यतः उस प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें सार्वजनिक या निजी पद का दुरुपयोग व्यक्तिगत लाभ हेतु किया जाता है। ट्रांसपरेसी इंटरनेशनल के अनुसार, "भ्रष्टाचार सत्ता के दुरुपयोग की वह अवस्था है जहाँ निजी हित सार्वजनिक उत्तरदायित्व पर हावी हो जाते हैं।" सत्ता-लोलुपता वह मानसिक प्रवृत्ति है जिसमें व्यक्ति सत्ता प्राप्ति हेतु नैतिक मूल्यों, संवैधानिक मर्यादाओं और सामाजिक उत्तरदायित्वों की अवहेलना करता है। यह प्रवृत्ति प्रायः सत्ता के केंद्रीकरण, अभिजात्य वर्ग की अभिलाषा तथा लोकतांत्रिक संस्थाओं की कमजोरी से पोषित होती है। भ्रष्टाचार और सत्ता-लोलुपता एक-दूसरे के पूरक और पोषक तत्व हैं। सत्ता की भूख जब संवैधानिक मूल्यों को तिलांजलि देती है, तब भ्रष्टाचार का मार्ग स्वतः प्रशस्त हो जाता है। सत्ता में बने रहने हेतु धन और प्रभाव का दुरुपयोग होता है, और भ्रष्ट साधनों से अर्जित संपत्ति सत्ता के संरक्षण का माध्यम बन जाती है। भ्रष्टाचार और सत्ता-लोलुपता केवल नीतिगत या प्रशासनिक मुद्दे नहीं हैं, ये मूलतः नैतिक और सामाजिक प्रश्न भी हैं। जब तक नेतृत्व में नैतिकता और नागरिकों में सजगता का संतुलन स्थापित नहीं होता, तब तक इन समस्याओं का पूर्ण समाधान संभव नहीं। एक समावेशी, पारदर्शी और जवाबदेह शासन व्यवस्था ही इन विकृतियों से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त कर सकती है।

ममता कालिया समकालीन हिंदी कहानी-साहित्य की उन लेखिकाओं में अग्रणी हैं, जिन्होंने समाज के विविध पक्षों— विशेषकर मध्यवर्गीय जीवन, स्त्री-संघर्ष और सामाजिक विडंबनाओं— को बड़ी गहराई और स्पष्टता से प्रस्तुत किया है। उनके कथा-संसार में राजनीति केवल सत्ता और शासन तक सीमित नहीं, बल्कि वह घर, कार्यस्थल और रिश्तों तक फैली हुई एक व्यापक सत्ता-संरचना बन जाती है। इस सत्ता-संरचना में भ्रष्टाचार और

लोलुपता की विकृत छवियाँ भी उभरकर आती हैं। ममता कालिया की कहानियों में सत्ता-लोलुपता का स्वर अक्सर परोक्ष रूप से आता है— वह कोई मंत्री या नेता नहीं, बल्कि साधारण-सा स्कूल प्रिंसिपल, कार्यालय का बॉस या पारिवारिक संरचना का 'पुरुष प्रमुख' होता है, जो अपनी सत्ता बनाए रखने के लिए अन्याय, नियंत्रण और दमन के औज़ार इस्तेमाल करता है। यह दर्शाता है कि सत्ता-लोलुपता का रोग सिर्फ संसद या सत्ता-केन्द्रों में नहीं, बल्कि रोज़मर्रा की ज़िंदगी में भी व्याप्त है। उनकी कहानी 'जाँच अभी जारी है' में यह दिखता है कि कैसे एक महिला अधिकारी को पुरुष सहकर्मी और उच्चाधिकारी मानसिक रूप से तोड़ने का प्रयास करते हैं ताकि वह या तो झुक जाए या बाहर हो जाए। यहाँ सत्ता एक संरचना बन जाती है— जो स्त्री को हाशिये पर रखने के लिए तत्पर है।

ममता कालिया की कहानियों में भ्रष्टाचार केवल घूस या आर्थिक अनियमितता तक सीमित नहीं है, बल्कि वह नैतिक पतन, संबंधों में छल, और सामाजिक पाखंड के रूप में सामने आता है। उनकी कहानी 'रिशतों की बुनियाद' में एक अधिकारी की दोहरी ज़िंदगी का चित्रण मिलता है— जो एक ओर समाज में आदर्श प्रस्तुत करता है और दूसरी ओर निजी जीवन में एक स्वार्थी, चालाक और अवसरवादी पुरुष बन जाता है। इस प्रकार भ्रष्टाचार को वे केवल आर्थिक विषय नहीं, बल्कि चरित्रगत विकृति के रूप में प्रस्तुत करती हैं। कई कहानियों में सत्ता का संघर्ष स्त्री के आत्मसम्मान और उसकी पहचान को लेकर होता है। कहानी 'एक दिन अचानक' या 'ऐसा ही था वह' में स्त्री पात्रों को अपने निर्णय स्वयं लेने की आज़ादी नहीं है— उनके जीवन पर सामाजिक, पारिवारिक और संस्थागत नियंत्रण का दबाव है। यह दिखाता है कि सत्ता-लोलुपता केवल किसी राजनीतिक पद की आकांक्षा नहीं, बल्कि किसी दूसरे के जीवन को नियंत्रित करने की मानसिक प्रवृत्ति भी है। ममता कालिया की लेखन शैली में व्यंग्य एक सशक्त औज़ार की तरह काम करता है। वे सत्ता के पाखंड, बौद्धिक भ्रष्टाचार और संस्थागत दिखावे को तीखे व्यंग्य से बेनकाब करती हैं। उनके पात्र अपने संवादों में उन सत्ताओं की पोल खोलते हैं जो बाहर से आदर्श दिखती हैं पर भीतर से खोखली होती हैं। ममता कालिया की कहानियाँ यह दिखाती हैं कि भ्रष्टाचार और सत्ता-लोलुपता केवल राजनीतिक गलियारों की समस्या नहीं है, बल्कि यह हमारे समाज के संवेदनहीन होते जाते ताने-बाने, संबंधों में छिपी चालाकियों, और संस्थाओं में जड़ जमाए हुए पाखंड का प्रतिबिंब है। इस तरह ममता कालिया सत्ता की परतों को इस तरह उघाड़ती

हैं कि पाठक यह महसूस करता है कि सबसे बड़ा राजनीतिक क्षेत्र शायद हमारा अपना घर है।

4.3.1 भ्रष्टाचार

ममता कालिया का कथा साहित्य न केवल स्त्री जीवन की जटिलताओं, सामाजिक दबावों और पारिवारिक संबंधों का सशक्त चित्रण करता है, बल्कि उसमें समकालीन भारतीय समाज की राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक विघटन की प्रक्रिया भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। विशेषतः भ्रष्टाचार और सत्ता की लोलुपता जैसे विषय उनके लेखन में केवल पृष्ठभूमि नहीं रहते, बल्कि कथा के केंद्रीय सूत्र बनकर उभरते हैं। ममता कालिया की कहानियाँ भारतीय समाज की गहरी सामाजिक, मानसिक और मानवीय जटिलताओं को उजागर करती हैं। उनका लेखन उन पहलुओं को विस्तार से चित्रित करता है जो आमतौर पर समाज की सतह पर नहीं दिखाई देते। वे सत्ता, व्यवस्था और विचारधारा के बीच पिसते आम नागरिक के अंतर्मन में उठते प्रश्नों और द्वंद्वों को अत्यंत सजीवता से उकेरती हैं। ममता कालिया की कहानियों में भ्रष्टाचार को केवल एक प्रशासनिक समस्या के रूप में नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक और मानसिक प्रवृत्ति के रूप में देखा गया है। 'नयी दुनिया', 'काली साड़ी', और 'झूठ' जैसी कहानियाँ सत्ता और व्यवस्था के भीतर पनपती कुटिलताओं को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती हैं। विशेष रूप से 'नयी दुनिया' में सत्ता की दलाली और निजी स्वार्थ के लिए संस्थानों के दोहन की जो तस्वीर उभरती है, वह आज की राजनीतिक हकीकत को पूरी तरह उजागर करती है। पात्र सरकारी फाइलों में अटकी उम्मीदों के प्रतीक बन जाते हैं, और उनके संवाद इस बात का प्रमाण हैं कि भ्रष्टाचार किस प्रकार आमजन की ज़िंदगी का हिस्सा बन गया है। इन कहानियों में ममता कालिया की यह समझ स्पष्ट दिखती है कि भ्रष्टाचार एक ऐसी प्रणाली है, जो केवल ऊपरी तंत्र तक सीमित नहीं, बल्कि व्यक्ति की चेतना तक में घर कर गया है। उनके पात्र अपनी ज़िंदगी को सामान्य बनाए रखने के प्रयास में उस भ्रष्ट व्यवस्था का हिस्सा बन जाते हैं, जिससे वे स्वयं नफरत करते हैं। एक और उदाहरण 'वर्दी' है, जिसमें सरकारी नौकरी पाने के लिए पात्र को रिश्वत देनी पड़ती है। यहाँ सत्ता की निकटता पाने की आकांक्षा केवल आर्थिक सुरक्षा नहीं, बल्कि सामाजिक स्वीकृति और अस्तित्व की रक्षा से जुड़ जाती है।

पात्रों के मन में जो द्वंद्व चलता है, वह महज़ एक नौकरी या पद प्राप्त करने का संघर्ष नहीं है, बल्कि अपनी नैतिकता और व्यवस्था से सामंजस्य बिठाने की यातना है।

'इक्कीसवीं सदी' कहानी में पुलिस के भ्रष्टाचार का चित्रण हुआ है। कहानी का नायक विनोद और उसकी पत्नी रेखा एक होटल में चाय पीने जाते हैं। वहाँ रेखा टायलेट से गायब हो जाती है। विनोद रिपोर्ट लिखवाने थानेदार के पास जाता है तो थानेदार रिपोर्ट लिखने से इन्कार कर देता है। वह कहता है रिपोर्ट लिखने वाला मुंशी नहीं है, बाद में आना। फिर रेखा के मात-पिता के आने के बाद रात में वह रिपोर्ट लिखकर होटल में जाकर छानबीन करता है। होटल का मैनेजर दारोगा को अपने कमरे में बुलाकर रिश्वत देता है और बाद में वह रेखा के घरवालों को थाने में बुलाता है। इस प्रकार पुलिस की बेदरकारी से रेखा की जान चली जाती है।

ममता कालिया की कहानियाँ यह भी रेखांकित करती हैं कि भ्रष्टाचार एक मानसिकता बन चुका है— एक ऐसी मानसिक स्थिति, जिसमें व्यक्ति यह मान बैठता है कि ईमानदारी से न तो कोई कार्य पूर्ण हो सकता है, और न ही समाज में कोई सम्मान प्राप्त किया जा सकता है। यह निष्कर्ष न केवल व्यवस्था की विफलता को उजागर करता है, बल्कि यह बताता है कि कैसे व्यक्ति अंततः सत्ता के यंत्रवत् शोषण तंत्र का हिस्सा बन जाता है। उनके पात्र—विशेषतः मध्यवर्गीय स्त्रियाँ और संवेदनशील पुरुष—भ्रष्टाचार के खिलाफ आंतरिक विद्रोह करते हैं, किंतु व्यावहारिक जीवन की आवश्यकताओं और सामाजिक दबावों के बीच यह विद्रोह या तो दमन हो जाता है या निरर्थक सिद्ध होता है। ऐसे में कहानियाँ नैतिकता बनाम अस्तित्व के संघर्ष को बहुत तीव्रता से प्रस्तुत करती हैं। ममता कालिया का लेखन इस बात को भी इंगित करता है कि भ्रष्टाचार से जूझने की प्रक्रिया केवल बाह्य संघर्ष नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति को भीतर से तोड़ देने वाला मानसिक और भावनात्मक यातना-चक्र है। उनकी कहानियों के पात्र जब भ्रष्टाचार से टकराते हैं, तो वह टकराव केवल बाहरी व्यवस्था से नहीं होता, बल्कि वह उनके आत्मबोध, उनके स्वाभिमान, और उनकी नैतिक चेतना से होता है।

इस प्रकार ममता कालिया की कहानियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि भ्रष्टाचार केवल राजनीतिक या प्रशासनिक संकट नहीं है, बल्कि यह एक गहरा मानवीय, मानसिक और सामाजिक संकट है, जिसने व्यक्ति की सोच, संवेदना और संबंधों को प्रभावित किया है।

उनके पात्रों के माध्यम से यह दिखाया जाता है कि जब समाज का हर क्षेत्र—राजनीति, शिक्षा, व्यापार और परिवार—भ्रष्टाचार से संक्रमित हो जाए, तब एक सजग नागरिक की चेतना किस प्रकार टुकड़ों में बंट जाती है। वे यह संदेश देती हैं कि इससे उबरने के लिए केवल व्यवस्था परिवर्तन पर्याप्त नहीं, बल्कि चेतना के स्तर पर एक क्रांतिकारी बदलाव आवश्यक है। ममता कालिया का कथा साहित्य इस परिवर्तन की आवश्यकता को साहित्यिक और वैचारिक गहराई के साथ प्रस्तुत करता है।

4.3.2 सत्ता-लोलुपता

ममता कालिया की कहानियाँ भारतीय समाज की सामाजिक, राजनीतिक और मानसिक जटिलताओं की परतें खोलती हैं। विशेष रूप से सत्ता-लोलुपता—यानी सत्ता प्राप्त करने की तीव्र इच्छा—उनकी कहानियों का एक केंद्रीय विषय बनकर उभरता है। यह ललक मात्र राजनीतिक गलियारों की बात नहीं रहती, बल्कि आम व्यक्ति के जीवन, उसके निर्णयों और उसके संबंधों को गहराई से प्रभावित करती है। ममता कालिया के लेखन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे सत्ता की इस भूख को केवल सत्ता के शीर्ष पर बैठे लोगों तक सीमित नहीं रखतीं, बल्कि इसे एक सर्वव्यापी सामाजिक मानसिकता के रूप में प्रस्तुत करती हैं, जो कि हर वर्ग और हर संस्था में जड़ें जमा चुकी है।

ममता कालिया की चर्चित कहानी 'एक अदद औरत' में यह स्पष्ट देखा जा सकता है कि कैसे एक महिला पात्र को, जो अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाना चाहती है, पुरुष वर्चस्व और सत्ता-संचालित समाज का सामना करना पड़ता है। वहां सत्ता-लोलुपता का स्वरूप सिर्फ राजनैतिक नहीं, बल्कि पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना में निहित सत्ता की लालसा है, जो स्त्रियों को दबाने का कार्य करती है। यह कहानी यह दर्शाती है कि सत्ता केवल संसदों या सचिवालयों तक सीमित नहीं, बल्कि रसोईघर से लेकर दफ्तर की सीढ़ियों तक फैली हुई है। इसी तरह 'इरादा' जैसी कहानियों में सत्ता-लोलुपता की अभिव्यक्ति इस बात में देखी जा सकती है कि कैसे स्त्री की देह, उसकी पहचान और उसकी चुप्पी को एक सत्ता का उपकरण बना लिया जाता है। वहाँ सत्ता के प्रतीक पुरुष नहीं केवल सत्ता के धारक हैं, बल्कि वे समाज द्वारा वैध ठहराए गए उस अधिकार के वाहक भी हैं, जिसे चुनौती देना खुद को हाशिए पर धकेलने जैसा है।

‘रोशनी कि मार’ कहानी में ममता कालिया ने पारिवारिक सत्ता के संघर्ष को बारीकी से चित्रित किया है। इस कहानी में सत्ता का मुद्दा केवल सामाजिक या राजनीतिक पदों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक व्यक्तिगत और मानसिक स्तर पर भी व्यक्त होता है। यहाँ पर पात्र की सत्ता की चाहत पारिवारिक और व्यक्तिगत रिश्तों में असंतुलन पैदा कर देती है। पति-पत्नी के रिश्ते में सत्ता की यह ललक एक भयावह रूप धारण कर लेती है, जिससे पारिवारिक संरचना में असमंजस और विघटन की स्थिति उत्पन्न होती है। पत्नी का यह संघर्ष अपने आत्मसम्मान और सत्ता के अधिकार के लिए है, और इस संघर्ष में उसके व्यक्तित्व की पूरी परतें उभरकर सामने आती हैं। ‘खिड़की’ कहानी में भी सत्ता के लिए प्रतिस्पर्धा को देखा जा सकता है, जहाँ एक लड़की को अपने आसपास के पाँच लड़कों के बीच अपनी पहचान बनाने के लिए संघर्ष करना पड़ता है। यहाँ सत्ता का अर्थ केवल सामाजिक या राजनैतिक नहीं, बल्कि यह रिश्तों की शक्ति, प्रेम और स्थान की तलाश बन जाता है। यह कहानी यह दिखाती है कि किस प्रकार एक साधारण व्यक्ति, जो केवल अपनी पहचान और अधिकार की तलाश करता है, सत्ता की ललक में उलझकर खुद को खो बैठता है।

सत्ता की मानसिकता और संघर्ष पर ममता कालिया का लेखन गहरी समझ और संवेदनशीलता से भरा हुआ है। उनके पात्रों की मानसिकता सत्ता की प्राप्ति के लिए एक ऐसी आंतरिक आकांक्षा को दर्शाती है, जो किसी भी सीमा तक जा सकती है। सत्ता की चाहत में वे नैतिकता और मानवीय संवेदनाओं से समझौता करने से भी पीछे नहीं हटते। यह पात्र न केवल अपने व्यक्तिगत रिश्तों में संघर्ष करते हैं, बल्कि समाज और पारिवारिक ढांचे में बदलाव के लिए भी कई बार जटिल और विरोधाभासी कदम उठाते हैं। ममता कालिया के लेखन में सत्ता का यह भूख केवल व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह समाज की व्यवस्था, राजनीतिक तंत्र और पारिवारिक संरचनाओं के भीतर भी समाहित होती है। सत्ता के संघर्ष का परिणाम ममता कालिया की कहानियों में अक्सर एक गहरी त्रासदी के रूप में सामने आता है। उनके पात्र सत्ता की प्राप्ति के बाद यह महसूस करते हैं कि उन्होंने जो खोया, वह कहीं अधिक मूल्यवान था। ‘शहर-शहर कि बात’ कहानी में यह दिखाया गया है कि सत्ता हासिल करने के बाद भी पात्र को एक खोखली दुनिया का सामना करना पड़ता है, जहाँ उसका संघर्ष केवल बाहरी दुनिया तक ही सीमित

नहीं रहता, बल्कि वह अपनी पहचान, अपने रिश्तों और अपनी आत्मीयता को खो बैठता है।

इस प्रकार, ममता कालिया की कहानियाँ सत्ता-लोलुपता को केवल एक सामाजिक-राजनीतिक विषय के रूप में नहीं, बल्कि एक गहन मानवीय और मानसिक संकट के रूप में प्रस्तुत करती हैं। वे यह दर्शाती हैं कि सत्ता की ललक जब विवेक, संवेदना और नैतिकता पर हावी हो जाती है, तो व्यक्ति केवल समाज से ही नहीं, बल्कि अपने आप से भी दूर हो जाता है। ममता कालिया का यह लेखन न केवल समकालीन भारतीय समाज की सच्चाईयों को उद्घाटित करता है, बल्कि वह हमें सचेत भी करता है कि सत्ता की ललक में यदि संतुलन और विवेक न हो, तो वह समाज और व्यक्ति दोनों को विघटित कर सकती है।

4.3.3 राजनीतिक सुधार और समाधान

ममता कालिया की कहानियाँ भारतीय समाज के विभिन्न पहलुओं को गहरी और सूक्ष्मता से प्रस्तुत करती हैं, और इनमें राजनीतिक सुधार और समाधान की आवश्यकता पर बल दिया जाता है। वे अपनी रचनाओं के माध्यम से न केवल समाज की गंभीर समस्याओं को उजागर करती हैं, बल्कि उन समस्याओं के राजनीतिक समाधान की दिशा में एक गहरी समझ भी प्रस्तुत करती हैं। ममता कालिया का लेखन सीधे तौर पर नाटकीय रूप में राजनीतिक सुधार की वकालत नहीं करता, बल्कि वह पात्रों के माध्यम से इन मुद्दों को एक गहरे, सोच-समझ कर किए गए चित्रण के रूप में दर्शाता है। उनकी कहानियाँ भारतीय राजनीति की विडंबनाओं और खामियों को सामने लाती हैं, और इसके माध्यम से यह संदेश देती हैं कि अगर राजनीतिक तंत्र में सुधार नहीं किया गया, तो समाज और भी असमान और टूट-फूट का शिकार होगा। ममता कालिया की कहानी 'शहर-शहर की बात' में एक पात्र, जो अपने परिवार और व्यक्तिगत संघर्षों से जूझ रहा होता है, राजनीतिक भ्रष्टाचार के तंत्र से निपटने के लिए संघर्ष करता है। वह देखता है कि सत्ता का दुरुपयोग और समाज में असमानता एक गहरे जाल की तरह फैली हुई है। इस संदर्भ में, उनका लेखन यह दर्शाता है कि जब तक राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार को समूल नष्ट नहीं किया जाएगा, तब तक समाज में वास्तविक परिवर्तन संभव नहीं है।

ममता कालिया की कहानियाँ भ्रष्टाचार और सत्ता के दुरुपयोग को एक बड़े तंत्र के रूप में चित्रित करती हैं, जो व्यक्तिगत स्तर पर भी प्रभाव डालता है। 'चाभी' में उन्होंने एक छोटे से राजनीतिक निर्णय और उसकी परिणतियों के जरिए यह दिखाया है कि कैसे सत्ता की ताकत समाज के विभिन्न तबकों को प्रभावित करती है। इस कहानी में, एक पात्र सत्ता और अधिकार प्राप्त करने के लिए अपने निजी रिश्तों और नैतिकता से समझौता करता है, और अंत में उसे एहसास होता है कि यह सत्ता उसकी मानसिक शांति और व्यक्तिगत संबंधों को तोड़ने की ओर ले जाती है। ममता कालिया इस संघर्ष को केवल एक व्यक्तिगत समस्या के रूप में नहीं दिखातीं, बल्कि इसे समाज में व्याप्त राजनीतिक असमानता और भ्रष्टाचार के रूप में प्रस्तुत करती हैं।

ममता कालिया की कहानियों में अक्सर पात्र व्यक्तिगत रूप से राजनीतिक सुधार की आवश्यकता को महसूस करते हैं, लेकिन वे इसके लिए ठोस कदम उठाने में सक्षम नहीं होते। वे सत्ता की संरचनाओं में जकड़े होते हैं, और उनका संघर्ष एक कठिन और निरंतर चलने वाली प्रक्रिया बन जाता है। उदाहरण के रूप में 'एक अकेली तस्वीर' कहानी ली जा सकती है, जिसमें एक महिला अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करती है, लेकिन वह देखती है कि उसके व्यक्तिगत संघर्ष को केवल सामूहिक जागरूकता और प्रयास ही हल कर सकते हैं। ममता कालिया इस तथ्य को स्पष्ट करती हैं कि व्यक्तिगत प्रयासों का महत्व है, लेकिन राजनीतिक और सामाजिक बदलाव तब ही संभव हो सकता है जब ये व्यक्तिगत संघर्ष एक सामूहिक चेतना और जागरूकता से जुड़ते हैं।

ममता कालिया अपने पात्रों के माध्यम से यह भी दिखाती हैं कि राजनीतिक सुधार के लिए केवल व्यक्तियों की इच्छाशक्ति ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि समाज की व्यापक समझ और सहयोग भी आवश्यक है। 'थोड़ा-सा प्रगतिशील' की कहानी में, जहाँ सत्ता की ललक एक पत्नी और पति के रिश्ते को प्रभावित करती है, वहां यह साफ तौर पर देखा जाता है कि राजनीतिक और सामाजिक सुधार की प्रक्रिया केवल एक व्यक्ति के प्रयासों से नहीं बल्कि एक सामूहिक चेतना और सक्रिय भागीदारी से संभव है। इस संदर्भ में, ममता कालिया ने राजनीतिक समाधान को व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत किया है, जिसमें समाज के विभिन्न तबकों की सहयोगात्मक भागीदारी की आवश्यकता है।

ममता कालिया की कहानियाँ यह भी दिखाती हैं कि राजनीति और समाज अलग-अलग नहीं हो सकते। उनके पात्र यह महसूस करते हैं कि जब तक समाज में सकारात्मक बदलाव नहीं आता, तब तक राजनीतिक सुधार असंभव हैं। 'नायक' की कहानी में, एक नेता जो अपने व्यक्तिगत हितों के लिए राजनीति करता है, को अंत में यह एहसास होता है कि समाज का सही मार्गदर्शन तभी संभव है जब समाज अपनी स्थिति को समझे और सशक्त रूप से अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक हो। ममता कालिया यह संदेश देती हैं कि राजनीति केवल सत्ता के खेल का नाम नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा तंत्र है, जो समाज की भलाई और उसके नागरिकों के विकास के लिए जिम्मेदार है। 'चोटिन' कहानी में सुखिया के चोरी करने पर दुकानदार उसे पकड़ लेता है तब वहाँ भीड़ जमा हो गई। उसे देखकर एक सिपाही आकर लड़की को देखता है। उसकी उम्र, सुखी चमड़ी और दिखावा देखकर उर लड़की बेकार लगती है अभी तो बलात्कार के लायक भी नहीं। तब सिपाही की दिलचस्पी दुकानदार में जगी और जिसका माल गया उसी को दबोचकर मारता है- "जवाब-तलब की खातिर सिपाही दुकानदार को चौकी तक ले गया और एक तरफ हटकर उसे डराने लगा। फिर एक जेबकतरे की सफाई से उसने दुकानदार की जेब से उसकी कमाई निकाल ली चौंतीस रुपये और पचास पैसे। बाद में उसे बाहर धकेलकर सिपाही ने कहा कि भाग जा सीधे से नहीं तो दफा पच्चीस लगाकर अभी अंदर कर दूंगा समझे।" (कालिया, 28)। इस प्रकार सिपाही के भ्रष्टाचार से दुकानदार की अकेली खुली दुकान से और भी ज्यादा चोरी हो जाती है।

ममता कालिया की कहानियों में राजनीतिक सुधार के संदर्भ में एक गहरी चेतावनी दी जाती है। वे यह दिखाती हैं कि भ्रष्टाचार, सत्ता का दुरुपयोग और सामाजिक असमानताएँ केवल एक व्यक्ति या समूह से नहीं जुड़ी होतीं, बल्कि ये एक व्यापक तंत्र का हिस्सा होती हैं। 'फरवरी की एक शाम' कहानी में उन्होंने यह दिखाया है कि समाज में एक बड़ी जटिलता और समस्याएँ हैं, जिनका समाधान तब ही संभव है जब लोग अपनी स्थिति को समझे और सत्ता के दुरुपयोग के खिलाफ खड़े हों। ममता कालिया का लेखन यही सिखाता है कि राजनीति में सुधार केवल तब संभव है जब समाज में एक सामूहिक जागरूकता उत्पन्न हो और लोग अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जिम्मेदार बनें।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियाँ भारतीय समाज में राजनीतिक सुधार की दिशा में एक गहरी चेतावनी देती हैं। वे यह दिखाती हैं कि एक स्वस्थ और समृद्ध समाज तभी बन सकता है जब समाज में भ्रष्टाचार, सत्ता के दुरुपयोग और सामाजिक असमानताओं के खिलाफ एक सामूहिक जागरूकता पैदा हो। उनके लेखन में यह स्पष्ट रूप से दिखाया गया है कि जब तक समाज में बदलाव नहीं आएगा, तब तक राजनीतिक सुधार असंभव रहेगा। वे यह मानती हैं कि समाज और राजनीति अलग-अलग नहीं हो सकते और राजनीति को केवल सत्ता प्राप्ति का एक माध्यम नहीं बनाना चाहिए, बल्कि यह समाज की भलाई और नागरिकों के विकास के लिए जिम्मेदार तंत्र होना चाहिए।

4.4 राजनीति और यथार्थबोध के मध्य संतुलन

राजनीति और यथार्थबोध, दोनों एक-दूसरे से गहरे रूप में जुड़े हुए हैं, और उनके बीच संतुलन बनाए रखना समाज और राष्ट्र के समुचित विकास के लिए आवश्यक है। राजनीति एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें सत्ता, शक्ति और नीति निर्धारण का महत्वपूर्ण कार्य होता है, जबकि यथार्थबोध, यानी वास्तविकता का बोध, किसी भी समाज या व्यक्ति की सोच, निर्णय और व्यवहार को प्रभावित करता है। इन दोनों के बीच संतुलन बनाए रखना चुनौतीपूर्ण होता है, क्योंकि राजनीति कभी-कभी यथार्थ से परे हो सकती है, और यथार्थबोध को लेकर सटीक दृष्टिकोण अपनाना कठिन हो सकता है। राजनीति में अक्सर आदर्शों, सिद्धांतों और चुनावी लाभ के कारण यथार्थ से भटकाव हो सकता है। राजनीतिज्ञों का ध्यान सत्ता की प्राप्ति या उसके संरक्षण पर होता है, जिससे कभी-कभी वास्तविक समस्याओं का समाधान केवल कागजों तक ही सीमित रह जाता है। उदाहरण के लिए, चुनावी वादे अक्सर दूरगामी प्रभावों के बजाय तात्कालिक लाभ को ध्यान में रखकर किए जाते हैं, जो समाज की वास्तविक आवश्यकताओं से मेल नहीं खाते। इस प्रकार, राजनीति का यथार्थ से भटकाव समाज के विकास और कल्याण में बाधक हो सकता है। दूसरी ओर, यथार्थबोध का राजनीति पर प्रभाव यह सुनिश्चित करता है कि राजनीतिक निर्णय समाज की मौजूदा स्थिति और उसकी वास्तविक जरूरतों के आधार पर लिए जाएं। यथार्थबोध के बिना, समाज के विभिन्न वर्गों की वास्तविक समस्याओं और मुद्दों को नजरअंदाज किया जा सकता है।

यथार्थबोध यह समझने में मदद करता है कि समाज के विभिन्न हिस्सों के बीच असमानताएँ और संघर्ष किस प्रकार सामने आते हैं और उनसे निपटने के लिए क्या कदम उठाए जाने चाहिए।

राजनीति और यथार्थबोध के बीच संतुलन तभी संभव है जब राजनेता और समाज दोनों ही इस बात को समझें कि राजनीति केवल सत्ता की प्राप्ति का खेल नहीं है, बल्कि यह समाज के व्यापक हित में निर्णय लेने की प्रक्रिया है। इस संतुलन को बनाए रखने के लिए जरूरी है कि राजनीति के निर्णय यथार्थ पर आधारित हों, यानी वे समाज की वास्तविक जरूरतों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए लिए जाएं। यही संतुलन राजनीति को नैतिक रूप से मजबूत बनाता है और समाज में स्थिरता और समृद्धि की ओर मार्गदर्शन करता है। अंततः, राजनीति और यथार्थबोध के बीच संतुलन का उद्देश्य केवल सत्ता के संघर्ष को समाप्त करना नहीं, बल्कि एक समृद्ध, न्यायपूर्ण और समावेशी समाज का निर्माण करना है। यह संतुलन राजनीति को केवल शक्ति के खेल से उठाकर समाज के भले के लिए एक जिम्मेदार और संवेदनशील कार्यपालिका बना सकता है। यथार्थबोध यह सुनिश्चित करता है कि राजनीति आदर्शवादी नहीं, बल्कि वास्तविक, ठोस और परिणाम देने में समर्थ हो। इस संतुलन को बनाए रखना समाज की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रगति के लिए अत्यंत आवश्यक है।

4.4.1 राजनीतिक दृष्टिकोण

ममता कालिया की कहानियाँ समकालीन भारतीय समाज के विविध पहलुओं पर गहरी नजर डालती हैं और राजनीति को केवल एक बाहरी घटनाक्रम के रूप में नहीं, बल्कि उसे जीवन के अनिवार्य हिस्से के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनके लेखन में राजनीति और सत्ता के असल प्रभाव को उजागर किया जाता है, जिनका असर केवल संसद या चुनावी प्रक्रियाओं तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह हर व्यक्ति के दैनिक जीवन और व्यक्तिगत निर्णयों में गहरे तौर पर समाहित होता है। उनका उद्देश्य यह है कि समाज की राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संरचनाएँ केवल सामान्य नागरिक के जीवन के आसपास न घूमकर उन्हें प्रभावित करती हैं और इन संरचनाओं का प्रतिरोध करना कोई आसान काम नहीं है।

ममता कालिया की कहानियों में राजनीति के विषय में जो गहरी और सूक्ष्म आलोचना की जाती है, वह किसी विचारधारा या आदर्श के आधार पर नहीं, बल्कि यथार्थ और मानवीय अनुभूतियों से प्रेरित होती है। वे अक्सर अपने पात्रों के माध्यम से यह दिखाती हैं कि कैसे समाज में व्याप्त असमानताएँ, भ्रष्टाचार और सत्ता का दुरुपयोग रोज़मर्रा के जीवन में नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। उनकी कहानी 'जाँच अभी जारी है' में, पात्र सरकारी तंत्र के अराजकता और नागरिकों की बेबसी को दर्शाते हैं, जबकि 'यह जरूरी नहीं' और 'अनुभव' कहानियों में सत्ता की संरचनाओं को उन पात्रों के व्यक्तिगत संघर्षों के संदर्भ में पेश किया गया है। यह संघर्ष केवल सत्ता से नहीं, बल्कि उन मानसिकता से भी है, जो सत्ता के भीतर निहित होती है।

ममता कालिया की स्त्री पात्रों में यह स्पष्ट दृष्टिकोण देखा जा सकता है कि वे अपनी स्वतंत्रता और अधिकार के लिए केवल व्यक्तिगत संघर्ष नहीं करतीं, बल्कि यह संघर्ष एक व्यापक सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रिया का हिस्सा होता है। जैसे कहानी 'ब्लाउज' में, वे उस व्यवस्था की आलोचना करती हैं जो स्त्रियों की अस्मिता को वस्तु में बदल देती है, और उन्हें स्वतंत्रता और सम्मान के लिए लगातार जूझना पड़ता है। ममता कालिया के पात्र अपनी आंतरिक संघर्षों के जरिए यह दिखाते हैं कि उनका प्रतिरोध केवल समाज के सामान्य नियमों से नहीं है, बल्कि यह उस व्यवस्था से है जो उनके अधिकारों को नकारती है और उन्हें केवल एक वस्तु के रूप में देखने की मानसिकता को बढ़ावा देती है।

ममता कालिया की लेखनी में सबसे दिलचस्प बात यह है कि वे राजनीति की आलोचना बिना किसी स्पष्ट नारेबाजी या आरोप के करती हैं। वे व्यंग्य, प्रतीक और पात्रों के संवादों के माध्यम से समाज की विडंबनाओं और निहित विरोधाभासों को उजागर करती हैं। उदाहरण के तौर पर, सरकारी तंत्र की निष्क्रियता, नीति निर्माण में आम नागरिक की अनुपस्थिति, और लोकतंत्र की संकीर्ण होती परिभाषाएँ उनकी कहानियों में अक्सर उभरती हैं। ममता कालिया की राजनीति को समझने का तरीका बिल्कुल व्यापक और मानवकेंद्रित है। वे राजनीति को केवल सत्ता के खेल तक सीमित नहीं रखतीं, बल्कि इसे एक ऐसी प्रक्रिया मानती हैं जो व्यक्ति की पहचान, गरिमा और स्वतंत्रता से जुड़ी होती है। उनके पात्र समाज की असमानताओं, बेरोज़गारी, महँगाई, और प्रशासनिक भ्रष्टाचार से प्रभावित

होते हैं, और इस माध्यम से वे राजनीति के जीवन से जुड़ी वास्तविकताओं को दर्शाती हैं। उनका राजनीतिक दृष्टिकोण कभी भी केवल किसी एक विचारधारा तक सीमित नहीं होता, बल्कि यह विचारशीलता और अनुभवजन्य यथार्थबोध पर आधारित होता है।

ममता कालिया की कहानियाँ यह भी स्पष्ट करती हैं कि राजनीति अब केवल एक बाहरी तंत्र का हिस्सा नहीं रही, बल्कि यह व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन के गहरे हिस्से में समाहित हो चुकी है। ममता कालिया के पात्र अपनी समस्याओं को एक व्यक्तिगत संघर्ष के रूप में नहीं देखते, बल्कि वे समाज के व्यापक राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में अपना स्थान तलाशते हैं। यह उनके पात्रों के संघर्षों का गहरा और जटिल रूप है, जो समाज में बदलाव की आवश्यकता को गहराई से महसूस करते हैं। इन सब से यह स्पष्ट होता है कि ममता कालिया की कहानियाँ राजनीति को केवल नीति-निर्माण की प्रक्रिया से नहीं जोड़तीं, बल्कि यह दिखाती हैं कि जब तक समाज के भीतर एक सामूहिक जागरूकता और समझ नहीं होगी, तब तक वास्तविक राजनीतिक बदलाव संभव नहीं है। उनके पात्र अपने अस्तित्व की शर्तें स्वयं निर्धारित करने के लिए संघर्ष करते हैं, और यही संघर्ष राजनीति की वास्तविकता को समझने और उसमें सक्रिय रूप से भाग लेने की आवश्यकता को दर्शाता है।

4.4.2 यथार्थबोध का दृष्टिकोण

ममता कालिया की कहानियाँ समकालीन हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखती हैं, जहाँ राजनीति का यथार्थ केवल सत्ता और दलगत विमर्श तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह समाज के भीतर व्याप्त गहरे सत्ता-संबंधों, नीतिगत विफलताओं और पितृसत्तात्मक संरचनाओं का भी सूक्ष्म विश्लेषण करती हैं। ममता कालिया की राजनीतिक दृष्टि समाज के भीतर हलचल मचाने वाली घटनाओं से कहीं अधिक गहरी और चिंतनशील है। उनकी कहानियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि राजनीति केवल सरकार, प्रशासन और चुनाव तक ही सीमित नहीं होती, बल्कि यह व्यक्ति के जीवन के हर पहलू में समाहित होती है—चाहे वह पारिवारिक निर्णय हों, रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएँ, या सामाजिक असमानताएँ।

ममता कालिया का यथार्थबोध उनकी स्त्री पात्रों के अनुभवों के माध्यम से राजनीति के उन छिपे हुए पहलुओं को उजागर करता है, जो किसी ने कभी आमतौर पर नहीं देखे।

जैसे उनकी कहानी 'जाँच अभी जारी है' में, एक स्त्री अपने कामकाजी जीवन में आ रही बाधाओं और दफ्तर के माहौल में महिलाओं के साथ हो रहे भेदभाव का सामना करती है। यह सिर्फ एक कामकाजी महिला की समस्या नहीं है, बल्कि यह उस राजनीति का हिस्सा है जो न केवल सत्ता के शीर्ष तक, बल्कि रोज़मर्रा के जीवन में भी व्याप्त है। 'चाभी' कहानी में भी यह देखा जाता है कि कैसे स्त्री को केवल एक वस्तु के रूप में देखा जाता है, और यह विचारधारा उस पितृसत्तात्मक व्यवस्था से उत्पन्न होती है, जो हर स्तर पर महिलाओं के अधिकारों और उनकी अस्मिता को सीमित करती है। ममता कालिया इन तमाम व्यवस्थाओं की आलोचना करती हैं, लेकिन वे इसे व्यंग्य और प्रतीकों के माध्यम से करती हैं, जिससे पाठक को सोचने का अवसर मिलता है कि यह केवल एक महिला का व्यक्तिगत संघर्ष नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और राजनीतिक सच्चाइयों का प्रतिरोध है।

ममता कालिया की कहानियों में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे राजनीति को केवल सत्ता के गलियारों तक सीमित नहीं रखतीं। उनकी कहानियाँ इस बात को रेखांकित करती हैं कि राजनीति हर व्यक्ति के जीवन में गहरे असर डालती है, और उसका प्रभाव पारिवारिक, सामाजिक और व्यक्तिगत स्तर पर भी महसूस किया जाता है। एक महिला की नौकरी में रुकावट, एक बेरोज़गार युवक की चिंताएँ, या शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त असमानताएँ— यह सब केवल व्यक्तिगत दुख नहीं होते, बल्कि ये गहरी राजनीतिक असमानताएँ और नीतिगत विफलताओं की अभिव्यक्तियाँ हैं। ममता कालिया की कहानियाँ राजनीति के इन व्यक्तिगत अनुभवों को जीवंत और प्रभावशाली तरीके से पेश करती हैं।

ममता कालिया की लेखनी का सबसे बड़ा गुण यह है कि वे किसी एक विचारधारा या राजनीतिक ध्रुव की पक्षधर नहीं हैं। उनके यथार्थबोध में कोई भी वैचारिक आग्रह नहीं होता, बल्कि यह संवेदनशील, मानवीय और अनुभवपरक दृष्टिकोण से भरपूर होता है। वे समाज में व्याप्त असमानता, वर्गभेद, लिंगभेद, और संस्थागत अन्याय पर सूक्ष्म आलोचना करती हैं। उदाहरण के तौर पर, 'पटकनी' कहानी में, एक स्त्री अपने आत्मनिर्णय के अधिकार के लिए संघर्ष करती है, लेकिन वह संघर्ष केवल सामाजिक नहीं, बल्कि राजनीतिक भी है। यह कहानी यह दिखाती है कि कैसे पितृसत्ता की संरचनाएँ न केवल एक स्त्री के जीवन में बाधाएँ डालती हैं, बल्कि उसे राजनीति में अपनी हिस्सेदारी से भी वंचित करती हैं।

ममता कालिया की कहानियाँ इस बात को भी स्पष्ट करती हैं कि राजनीति किसी एक सिद्धांत या विचारधारा से नहीं, बल्कि उन मानवीय अनुभवों से जुड़ी होती है जो प्रतिदिन हमारे जीवन के फैसलों को प्रभावित करते हैं। उनका लेखन यह दर्शाता है कि राजनीति केवल बाहरी शक्ति नहीं, बल्कि वह एक आंतरिक शक्ति भी है, जो हर व्यक्ति के फैसलों और उसकी जीवन स्थितियों को आकार देती है। यह दृष्टिकोण समाज की गहरी समझ और नागरिक अधिकारों के प्रति एक जागरूकता को बढ़ावा देता है। ममता कालिया का यह राजनीतिक यथार्थबोध हिंदी कहानी-साहित्य में एक नए आयाम को स्थापित करता है, जो न केवल व्यक्तिगत और सामाजिक संघर्षों को दिखाता है, बल्कि उन संघर्षों को राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भों में भी अर्थपूर्ण बनाता है। उनकी कहानियाँ पाठक को यह समझने के लिए बाध्य करती हैं कि राजनीति केवल सत्ता के खेल नहीं, बल्कि यह हमारे व्यक्तिगत, सामाजिक और सामूहिक निर्णयों का हिस्सा है। राजनीति के इस व्यापक और जटिल रूप को ममता कालिया अपनी लेखनी के माध्यम से अत्यंत प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करती हैं।

4.4.3 चुनौतियाँ और समाधान

ममता कालिया समकालीन हिंदी कहानी-साहित्य की उन सशक्त और सजग लेखिकाओं में अग्रणी हैं, जिन्होंने राजनीति को केवल चुनावी प्रक्रिया या शासकीय नीति के दायरे में सीमित नहीं किया, बल्कि उसे आम नागरिक, विशेषकर स्त्रियों और मध्यमवर्गीय समाज के जीवंत अनुभवों के माध्यम से विश्लेषित किया है। उनकी कहानियों में राजनीतिक यथार्थबोध न तो प्रत्यक्ष उपदेशात्मक शैली में आता है, न ही वह किसी विशेष विचारधारा की जकड़न में है; बल्कि वह अनुभवजन्य, संवेदनशील और सांस्कृतिक-सामाजिक रूप से गहरे अर्थवान है। उनकी कहानियों में राजनीति सत्ता की गलियों की गूंज नहीं, बल्कि गलियों की सत्ता का रूप है— जो रोज़गार, शिक्षा, पारिवारिक निर्णयों और स्त्री-अस्तित्व तक को नियंत्रित करती है। उदाहरण स्वरूप, उनकी कहानी 'दफ़्तर' इस बात का सशक्त प्रमाण है कि किस प्रकार एक महिला, अपने कार्यकुशलता और समर्पण के बावजूद, केवल लैंगिक पूर्वाग्रह के चलते पदोन्नति से वंचित कर दी जाती है। यह केवल एक प्रशासनिक अन्याय नहीं, बल्कि सत्ता और पितृसत्ता की मिली-जुली राजनीति का परिणाम है, जहाँ

स्त्री की योग्यता नहीं, उसकी 'स्त्री' होने की पहचान निर्णायक बनती है। यह कहानी स्पष्ट करती है कि कार्यस्थल भी एक राजनीतिक क्षेत्र है, जहाँ शक्ति-संबंध, अवसर और प्रतिनिधित्व का प्रश्न स्त्री-अस्तित्व को प्रभावित करता है।

‘अनुभव’ कहानी में यह राजनीतिक अंतर्विरोध और गहराई से उभरता है, जब नायिका पारिवारिक सत्ता- जिसमें निर्णय, नैतिकता और भविष्य की दिशा पुरुषों के हाथ में निहित है- से टकराती है। यह टकराव किसी वैयक्तिक विद्रोह का परिणाम नहीं, बल्कि उस राजनीतिक संरचना के प्रति असहमति है, जो स्त्री की आकांक्षाओं और निर्णयों को अपूर्ण मानती है। यह कहानी नारी स्वायत्तता को महज़ सामाजिक मुक्ति नहीं, एक राजनीतिक अधिकार के रूप में प्रस्तुत करती है। इसी क्रम में ‘चाभी’ कहानी उल्लेखनीय है, जो स्त्री की यौनिकता, आत्मसम्मान और विकल्प चुनने के अधिकार को एक प्रतीकात्मक परंतु गहन राजनीतिक विमर्श में बदल देती है। इस कहानी में चाभी कोई वस्तु मात्र नहीं, बल्कि स्त्री और समाज के मध्य सत्ता-संबंधों का चिह्न बन जाता है। इसमें ममता कालिया जिस संवेदना से स्त्री के आत्मसम्मान की रक्षा करती हैं, वह एक राजनीतिक हस्तक्षेप है- जो समाज की गुप्त सत्ता-व्यवस्था पर सवाल उठाता है।

ममता कालिया की कहानियों में राजनीति का एक और आयाम है ‘विकास’ और ‘नीति’ के नाम पर हो रहे उन फैसलों की आलोचना, जो समाज के उन तबकों पर भारी पड़ते हैं जिनकी आवाज़ शासन-तंत्र में नहीं गूँजती। उनकी कहानियों में शिक्षा व्यवस्था की गिरती स्थिति, बेरोजगारी, आरक्षण बनाम योग्यता की बहस, और युवा वर्ग की मानसिक थकावट जैसे मुद्दे केवल आर्थिक या सामाजिक नहीं, गहरे राजनीतिक हैं। वे यह दर्शाती हैं कि किस प्रकार नीतियों में दूरदृष्टि की कमी, प्रशासनिक अनास्था और अफसरशाही का वर्चस्व आमजन के लिए निराशा का कारण बनता है। उनकी कहानियों में निराश पात्र होते हैं, किंतु निष्क्रिय नहीं। वे सवाल करते हैं, तर्क करते हैं, प्रतिरोध करते हैं—यह सब एक मौन लेकिन प्रभावी राजनीतिक संवाद का हिस्सा है।

ममता कालिया का व्यंग्य, विशेषकर उनकी कहानी ‘ज़िंदगी- सात घंटे बाद की’ में, राजनीतिक विडंबनाओं पर तीखा कटाक्ष करता है। वहाँ नौकरशाही की असंवेदनशीलता, नेताओं के खोखले वादे, और भ्रष्टाचार का मज़ाक किसी हास्य के लिए नहीं, बल्कि गंभीर आत्मचिंतन हेतु किया गया है। यह व्यंग्य उनकी लेखनी को केवल कलात्मक ही नहीं,

सामाजिक चेतना का वाहक भी बनाता है। एक महत्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि ममता कालिया किसी विचारधारा की अंधभक्ति में नहीं बंधतीं। उनकी कहानियाँ न तो वामपंथी घोषणापत्र जैसी लगती हैं और न ही दक्षिणपंथी राष्ट्रवाद की परछाइयों में ढली होती हैं। उनका दृष्टिकोण मानवीय है, जो व्यक्ति की गरिमा, आत्मनिर्णय और सामाजिक न्याय की माँग करता है। वे पाठक को यह सोचने पर विवश करती हैं कि राजनीति से विमुख रहना स्वयं को निर्णयों से बाहर रखना है- और यह विमुखता भी अपने आप में एक राजनीतिक स्थिति है। वे समाधान की राह किसी जनांदोलन या सशस्त्र संघर्ष में नहीं, बल्कि चेतना, संवाद, और नैतिक पुनर्पाठ में देखती हैं। उनकी स्त्रियाँ जैसे-जैसे आत्मनिर्णय लेती हैं, अपना आर्थिक और मानसिक अस्तित्व स्थापित करती हैं, वे राजनीति में भागीदारी करती हैं- यह भागीदारी सत्ता में नहीं, सत्ता को समझने और उससे टकराने की प्रक्रिया में होती है।

इस प्रकार ममता कालिया की कहानियाँ राजनीतिक यथार्थ का केवल चित्रण नहीं, बल्कि उसके अंतर्विरोधों की पहचान, उसकी जड़ों की पड़ताल और उसके समाधान की दिशा में एक वैचारिक यात्रा हैं। वे सत्ता-संबंधों की गूढ़ताओं को उजागर करते हुए पाठक को इस समझ की ओर ले जाती हैं कि राजनीति हमारे जीवन का बाहरी नहीं, भीतरी अनुभव है। यह अनुभव कभी नौकरी की प्रतीक्षा में बैठी लड़की की निगाहों में झलकता है, कभी घर के भीतर चुपचाप फैसलों से बाहर कर दी गई स्त्री की खामोशी में, तो कभी व्यवस्था से जूझते युवक की टूटती आशाओं में। ममता कालिया का साहित्य इस चेतावनी के साथ आता है कि यदि हम राजनीति को केवल संसद और समाचारों तक सीमित मानते हैं, तो हम अपने अस्तित्व की एक गहरी परत को खो देते हैं। उनके लेखन में राजनीति एक सतत संवाद है- स्वयं से, समाज से, और उस व्यवस्था से जो हमारे वर्तमान और भविष्य को आकार देती है।

संदर्भ सूची

- कालिया, ममता. एक अदद औरत. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली (2004). पृ.सं. 28
- कालिया, ममता. एक आदत औरत. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली (2004). पृ.सं. 35
- कालिया, ममता. थियेटर रोड के कॉवे. पेंगुइन बुक्स, दिल्ली (2006). पृ.सं. 41
- कालिया, ममता, छुटकारा. लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली (2008). पृ.सं. 30
- कालिया, ममता. जांच अभी जारी है. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली (2004). पृ.सं. 76
- कालिया, ममता. पच्चीस साल की लड़की. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली (2011). पृ.सं. 33
- कालिया, ममता .मेरी प्रिय कहानियाँ. राजपाल प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, पृ. सं. 83

पंचम अध्याय

ममता कालिया के कहानी-साहित्य में आर्थिक संदर्भ और यथार्थबोध

ममता कालिया का कहानी-साहित्य स्त्री जीवन की विविध वास्तविकताओं का संवेदनशील और प्रामाणिक चित्र प्रस्तुत करता है। उनके साहित्य में सामाजिक, मानसिक, पारिवारिक और आर्थिक संदर्भों का गहन चित्रण मिलता है, जिनमें विशेष रूप से आर्थिक संदर्भ और उससे जुड़ा यथार्थबोध प्रमुख भूमिका निभाते हैं। ममता कालिया हिन्दी कहानी-साहित्य की एक सशक्त हस्ताक्षर हैं, जिनकी कहानियाँ मध्यवर्गीय स्त्री जीवन की विडंबनाओं, संघर्षों और आकांक्षाओं को अत्यंत सजीव ढंग से उकेरती हैं। उनकी कहानियों में आर्थिक असमानता, संसाधनों की कमी, और भविष्य की अनिश्चितता जैसे पहलू एक मार्मिक यथार्थबोध के साथ उभरते हैं।

ममता कालिया की कहानियों में आर्थिक संदर्भ केवल सामाजिक पृष्ठभूमि भर नहीं हैं, बल्कि स्त्री अस्तित्व की संघर्ष-भूमि हैं। वे दिखाती हैं कि एक स्त्री के लिए आत्मनिर्भर होना केवल आर्थिक स्वतंत्रता नहीं, बल्कि स्वाभिमान और पहचान की लड़ाई भी है। 'बोलने वाली औरत' में नौकरीपेशा स्त्री का संघर्ष केवल अपनी राय रखने तक सीमित नहीं, बल्कि आर्थिक आत्मनिर्भरता की चाह भी उसमें निहित है। 'प्यार के बाद' या 'जितना तुम्हारा हूँ' जैसी कहानियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि आर्थिक संसाधनों की असमानता कैसे रिश्तों की संरचना और मनोविज्ञान को प्रभावित करती है।

ममता कालिया के लेखन के केंद्र निम्नमध्यवर्गीय और मध्यवर्गीय परिवारों पर है, जहाँ आर्थिक सीमाएँ जीवन के हर निर्णय को प्रभावित करती हैं— विवाह, शिक्षा, नौकरी, सामाजिक संबंध सब कुछ। उनकी कहानियों में यह यथार्थ उभर कर आता है कि कैसे एक कामकाजी महिला अपने परिवार, ऑफिस और समाज के बीच जूझती रहती है, और आर्थिक

रूप से सक्षम होते हुए भी निर्णयात्मक स्वतंत्रता से वंचित रह जाती है। ममता कालिया की शैली में यथार्थ का चित्रण अत्यंत प्रत्यक्ष और प्रामाणिक है। वे किसी आदर्शवादी या स्वप्निल दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि जीवन की ठोस परिस्थितियों के धरातल से कहानी रचती हैं। उनकी भाषा, संवाद, पात्र— सभी कुछ वास्तविक जीवन से इस कदर जुड़ा होता है कि पाठक उस आर्थिक और भावनात्मक तंगी को आत्मसात कर लेता है। ममता कालिया की दृष्टि में आर्थिक संकट स्त्री को तोड़ने के बजाय उसे स्वावलंबन की ओर प्रेरित करता है। उनकी स्त्रियाँ उदासी और पीड़ा के बावजूद हार नहीं मानतीं। वे प्रतिरोध करती हैं, आत्ममंथन करती हैं, और धीरे-धीरे अपने निर्णय स्वयं लेने लगती हैं। ममता कालिया का कहानी-साहित्य भारतीय समाज, विशेषतः स्त्री-जीवन के आर्थिक यथार्थ को गहनता से उजागर करता है। उनकी कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि आर्थिक संदर्भ केवल सांख्यिकीय नहीं, बल्कि भावनात्मक, मानसिक और सामाजिक संरचनाओं को गहराई से प्रभावित करने वाले तत्व हैं। उनकी कहानियों का यथार्थबोध पाठकों को न केवल आत्ममंथन के लिए प्रेरित करता है, बल्कि समाज की व्यावसायिक और नैतिक संरचनाओं पर भी प्रश्नचिह्न खड़ा करता है।

5.1 आर्थिक संदर्भ

आर्थिक संदर्भ किसी राष्ट्र, समाज, या व्यक्ति की आर्थिक स्थिति, संसाधनों की उपलब्धता, आय के स्रोत, उत्पादन और उपभोग के ढांचे को दर्शाता है। यह किसी भी सामाजिक, राजनीतिक अथवा शैक्षणिक विषय के विश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आर्थिक संदर्भ यह स्पष्ट करता है कि किसी विशेष समय में किन आर्थिक परिस्थितियों ने किसी घटना, नीति या व्यवहार को प्रभावित किया। आज के वैश्विक परिप्रेक्ष्य में आर्थिक संदर्भ केवल स्थानीय सीमाओं तक सीमित नहीं रहा, बल्कि अंतरराष्ट्रीय व्यापार, वैश्वीकरण, तकनीकी विकास, और वित्तीय नीतियों से गहराई से जुड़ गया है। किसी भी देश की आर्थिक नीतियाँ— जैसे कि बजट, कर प्रणाली, औद्योगिक विकास, या कृषि सुधार— उसके आर्थिक संदर्भ को निर्मित करती हैं। उदाहरण के लिए, यदि हम भारत के स्वतंत्रता पश्चात् काल को देखें, तो उस समय का आर्थिक संदर्भ— गरीबी, बेरोजगारी, विदेशी ऋण, और औद्योगिक पिछड़ापन - नीतियों को समाजवादी दिशा में ले गया। वहीं उदारीकरण के बाद का आर्थिक

संदर्भ- वैश्विक प्रतिस्पर्धा, विदेशी निवेश और निजीकरण- ने आर्थिक संरचना को नई दिशा दी। इस प्रकार, किसी भी विषय या घटना को समझने के लिए आर्थिक संदर्भ का विश्लेषण करना आवश्यक होता है, क्योंकि आर्थिक कारक ही अनेक बार सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों का मूल कारण बनते हैं।

ममता कालिया के कहानी-साहित्य में आर्थिक संदर्भ एक अत्यंत महत्वपूर्ण तत्व के रूप में उभरता है। उनके पात्र अक्सर निम्न या मध्यवर्गीय पृष्ठभूमि से आते हैं, जहाँ रोजमर्रा की जरूरतें, सीमित संसाधन, और आर्थिक असुरक्षा जीवन के प्रत्येक निर्णय को प्रभावित करते हैं। उनकी कहानियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि एक स्त्री के लिए आर्थिक स्वतंत्रता केवल उपार्जन का साधन नहीं, बल्कि स्वत्व की पहचान, स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता, और सामाजिक सम्मान प्राप्त करने का माध्यम भी है। इनकी लेखनी में आर्थिक संदर्भ कोई अलग-थलग पृष्ठभूमि नहीं है, बल्कि वह कहानी के संघर्ष की धुरी बन जाता है। चाहे वह नौकरी की अनिश्चितता हो, विवाह में दहेज की समस्या, या एक कामकाजी महिला की दोहरी जिम्मेदारी— इन सभी पहलुओं को लेखिका ने तीव्र संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया है। उनकी स्त्रियाँ अपने आर्थिक परिवेश से जूझते हुए न्याय, आत्मसम्मान और आत्मनिर्भरता की तलाश में सक्रिय रहती हैं। इस प्रकार, ममता कालिया की कहानियाँ न केवल आर्थिक यथार्थ का चित्रण करती हैं, बल्कि एक सामाजिक चेतना को भी जाग्रत करती हैं, जहाँ स्त्री अपने अस्तित्व को पुनर्परिभाषित करती हैं।

5.1.1. आर्थिक विषमता

ममता कालिया के कथा-संसार में आर्थिक विषमता एक ऐसा यथार्थ है, जो न केवल सामाजिक संरचना को प्रभावित करता है, बल्कि स्त्री के जीवन, सोच और संघर्षों की दिशा भी तय करता है। वे अपनी कहानियों में विशेष रूप से यह दर्शाती हैं कि कैसे एक असमान आर्थिक व्यवस्था स्त्री को दोहरी त्रासदी देती है— एक ओर संसाधनों की कमी, और दूसरी ओर पुरुषसत्तात्मक मानसिकता से उपजा दमन। ममता कालिया की नायिकाएँ अक्सर उस वर्ग से आती हैं जो न तो संपन्न हैं और न ही पूरी तरह से अभावग्रस्त, किंतु जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए लगातार संघर्षरत हैं। वे यह दिखाती हैं कि जब पुरुष कमाता है, तो स्त्री पर निर्भरता अनिवार्य बन जाती है, और जब स्त्री स्वयं कमाने

लगती है, तब भी उसे 'कमाऊ होते हुए भी निर्णय न लेने देने' वाली विडंबना से जूझना पड़ता है। 'बोलने वाली औरत' जैसी कहानियों में यह विषमता घरेलू और व्यावसायिक दुनिया दोनों में उभरती है, जहाँ कामकाजी औरत भी पारिवारिक फैसलों में केवल 'सहायिका' बनकर रह जाती है। 'जितना तुम्हारा हूँ' कहानी में आर्थिक गैर-बराबरी के कारण स्त्री का मनोबल और रिश्तों में उसकी भूमिका द्वितीयक हो जाती है।

ममता कालिया आर्थिक विषमता को केवल धन की अनुपलब्धता तक सीमित नहीं रखती, बल्कि इसे सांस्कृतिक, मानसिक और भावनात्मक विषमता से जोड़कर प्रस्तुत करती हैं। वे यह दिखाती हैं कि कैसे समाज में एक निर्धन या मध्यमवर्गीय स्त्री को दोहरी लड़ाई लड़नी पड़ती है— पहली आर्थिक संसाधनों के लिए, और दूसरी अपनी गरिमा और सम्मान के लिए। इनकी कहानियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि आर्थिक विषमता केवल एक व्यक्ति या परिवार का संकट नहीं है, बल्कि यह समाज में भेदभाव, हीनता, संबंधों में असमानता, और स्त्री की आत्मनिर्भरता में बाधा उत्पन्न करती है। इससे स्त्री का आत्मविश्वास डगमगाता है और उसकी रचनात्मकता भी दबने लगती है। ममता कालिया के कहानी-साहित्य में आर्थिक विषमता केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि कथा का केंद्र है, जो स्त्री के अस्तित्व, संघर्ष और आत्मनिर्भरता की जटिल यात्रा को गहराई से उकेरता है। वे एक ओर आर्थिक असमानता की कठोरता को दर्शाती हैं, तो दूसरी ओर स्त्री की जिजीविषा और आत्मसम्मान को भी उजागर करती हैं।

ममता कालिया की कहानियाँ नारी जीवन के यथार्थ को उसकी समग्रता में प्रस्तुत करती हैं। उनके कथा-संसार में आर्थिक विषमता एक केंद्रीय तत्व के रूप में उभरता है, जो स्त्री के आत्मसम्मान, पारिवारिक संबंधों और सामाजिक हैसियत को गहरे रूप से प्रभावित करता है। उनका लेखन केवल आर्थिक संकट का दस्तावेज़ नहीं है, बल्कि वह यह भी दर्शाता है कि यह विषमता स्त्री की चेतना और संघर्ष को किस प्रकार आकार देती है। ममता कालिया यह स्पष्ट करती हैं कि आर्थिक रूप से असमान समाज में स्त्री को द्वितीय श्रेणी का नागरिक मान लिया जाता है, भले ही वह कितनी ही शिक्षित या सक्षम क्यों न हो। 'बोलने वाली औरत' कहानी का उद्धरण देखिये- "घर में सबसे पहले दूध बच्चे के लिए आता है, फिर पति के लिए। मेरे हिस्से में बर्तन धोने के बाद उबला पानी ही बचता है।"

(कालिया, 72) यह उद्धरण स्त्री के पारिवारिक श्रम की उपेक्षा और आर्थिक संसाधनों की प्राथमिकता को उजागर करता है, जो एक प्रकार की अदृश्य आर्थिक हिंसा है।

ममता कालिया की कहानियों में वह स्त्री भी उपेक्षित है जो आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर है। पुरुष वर्चस्ववादी सोच उसके निर्णय लेने के अधिकार को नकार देती है। 'जितना तुम्हारा हूँ' कहानी की नायिका श्वेता का कथन दृष्टव्य है- "मेरे पास भी तनखाह है, लेकिन घर चलाने के फैसले अब भी वही करता है। मैं सिर्फ कमाकर लाती हूँ, खर्च कहाँ हो, यह वह तय करता है।" (कालिया, 38) यहाँ आर्थिक स्वतंत्रता के बावजूद स्त्री की अधीनता को उजागर किया गया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि केवल आय होना ही स्वतंत्रता का सूचक नहीं होता, जब तक निर्णय की समानता न हो।

ममता कालिया विवाह-संस्था को भी आर्थिक असमानता के चश्मे से देखती हैं। दहेज, रोज़गार, और भरण-पोषण की असमानताएँ स्त्री को 'सामाजिक सौदेबाज़ी' की वस्तु में बदल देती हैं। 'प्यार के बाद' कहानी का उदाहरण देखिए- "लड़का इंजीनियर है, और लड़की बी.ए. पास। लड़के के घर वाले कह रहे हैं- हम लड़के को विदेश भेज देंगे, लड़की रोटियाँ ही तो बनाएगी।" (कालिया, 103)। यह पंक्ति विवाह को एक व्यापारिक सौदे के रूप में दिखाती है, जहाँ लड़की की भूमिका केवल पारिवारिक सेविका तक सीमित कर दी जाती है- शिक्षा और योग्यता गौण हो जाती है। ममता कालिया सामाजिक हैसियत और आत्मगौरव की टकराहट को भी दर्शाती हैं कि आर्थिक संसाधनों की असमानता स्त्री के आत्मगौरव को कुचलने का एक माध्यम बन जाती है। इस संदर्भ में 'अनावश्यक' कहानी का उदाहरण देखा जा सकता है- "मैंने साल भर की नौकरी में जोड़ा था कुछ पैसा, सोचा था मां के लिए साड़ी लाऊंगी। पर मां ने उल्टे ताने दिए- 'ये कमाई का रंग है, अब तू मुझे पहनाएगी?'" (कालिया, 46)। यहाँ आर्थिक स्वतंत्रता के पीछे छुपी भावनात्मक पीड़ा और सामाजिक अपेक्षाओं के द्वंद्व को बहुत सशक्त ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

ममता कालिया की कहानियाँ जहाँ एक ओर आर्थिक विषमता की क्रूरता को उजागर करती हैं, वहीं दूसरी ओर वे यह भी संदेश देती हैं कि आर्थिक चेतना ही स्त्री-मुक्ति का पहला पड़ाव है। इस परिप्रेक्ष्य में वर्जीनिया वुल्फ की भावना से प्रेरित इनकी प्रसिद्ध कहानी 'फरवरी की एक शाम' का उद्धरण देखा जा सकता है- "मुझे अब किसी की ज़रूरत नहीं। मैंने अपनी तनखाह से किराए का कमरा ले लिया है। खिड़की से बाहर आकाश दिखता है- और वह मेरा अपना है।" (कालिया, 29)। यह पंक्ति स्त्री की आत्मनिर्भरता की घोषणा

है, जहाँ आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर वह निर्णय और सम्मान दोनों प्राप्त करती है। कुल मिलाकर ममता कालिया का कहानी-साहित्य केवल आर्थिक विषमता का चित्रण नहीं करता, बल्कि उसके सामाजिक, मानसिक और भावनात्मक प्रभावों का बहुपरतीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है। वे स्त्री के संघर्ष को केवल आँसुओं और त्याग की दृष्टि से नहीं, बल्कि स्वावलंबन और प्रतिरोध की चेतना से जोड़ती हैं। उनके पात्र आर्थिक विषमता के विरुद्ध एक सशक्त आवाज़ बनते हैं— जो झुकते नहीं, बल्कि टूटकर भी संघर्ष का रास्ता नहीं छोड़ते।

5.1.2 निम्न और मध्यम वर्गीय जीवन की आर्थिक समस्याएँ

ममता कालिया का कहानी-साहित्य भारतीय समाज के मध्य और निम्न वर्गीय जीवन की ठोस, वास्तविक और कटु सच्चाइयों का प्रतिबिंब है। उनकी कहानियाँ आर्थिक संकट, सामाजिक विडंबनाओं और पारिवारिक दायित्वों की जटिलताओं को अत्यंत संवेदनशील और यथार्थपरक दृष्टि से चित्रित करती हैं। विशेषतः निम्न और मध्यम वर्गीय जीवन की आर्थिक समस्याएँ उनकी कहानियों में केवल पृष्ठभूमि भर नहीं, बल्कि संघर्ष, अस्मिता और आत्मनिर्भरता की केन्द्रीय धुरी बनकर उभरती हैं। मध्यम और निम्न वर्गीय परिवारों में रोजमर्रा की ज़रूरतें भी चुनौतियों भरी होती हैं। राशन, बच्चों की पढ़ाई, किराया, बीमारियाँ, दफ्तर की राजनीति, ये सब जीवन को तनावग्रस्त बना देते हैं। 'एक रिश्ता तो था' जैसी कहानियों में पुरुष बेरोज़गार है, और स्त्री अपने सीमित वेतन में पूरे घर की जिम्मेदारी उठाती है। यह स्थिति पारिवारिक संबंधों को भी तनावपूर्ण बना देती है। ममता कालिया की कई कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि मध्यम वर्गीय स्त्रियाँ चाहे पढ़ी-लिखी हों, पर उन्हें स्थिर और सम्मानजनक नौकरी पाने के लिए कड़ी मशक्कत करनी पड़ती है। इस संदर्भ में 'सुरक्षा का आतंक' का उद्धरण दृष्टव्य है— "मैंने बी.ए., एम.ए. किया है, फिर भी बाबूजी कहते हैं— 'अब घर बसाओ, नौकरी से क्या होगा?'" (कालिया, 111)। यहाँ न केवल नौकरी की कठिनाई है, बल्कि परिवार की मानसिकता भी एक आर्थिक असंतुलन को जन्म देती है।

कामकाजी महिलाओं को घर और बाहर दोनों जगह अपनी भूमिका निभानी पड़ती है। घर की आर्थिक जिम्मेदारियाँ तो वे उठाती ही हैं, लेकिन उन्हें पारिवारिक मान-सम्मान और निर्णयों में समान अधिकार नहीं मिलता। 'बोलने वाली औरत' में नायिका एक स्कूल में पढ़ाती है, लेकिन उसे अपने ही परिवार में नौकरानी की तरह देखा जाता है— न उसका श्रम मूल्यवान है, न उसका आत्मसम्मान। मध्यम वर्ग के लिए सबसे बड़ी आर्थिक चुनौतियों में बच्चों की शिक्षा और विवाह शामिल हैं। इन दोनों ही अवस्थाओं में परिवार कर्ज़ में डूब

जाता है। 'एक दिन अचानक' कहानी का एक उदाहरण देखिये- "बेटी की शादी में सब बेच दिया- फिक्स डिपॉज़िट, गहने, मां की यादों तक को।" (कालिया, 44)। यह पंक्ति एक साधारण मध्यमवर्गीय पिता की आर्थिक विवशता को मार्मिक ढंग से उकेरती है।

ममता कालिया यह भी दिखाती हैं कि मध्यम वर्ग के पास सपने तो बड़े होते हैं, लेकिन संसाधन छोटे। यह विरोधाभास मानसिक कुंठा, पारिवारिक झगड़े और अवसाद को जन्म देता है। 'पिछले दिनों का अंधेरा' जैसी कहानियाँ शहरी मध्यमवर्गीय युवाओं के भीतर पलती असुरक्षा, आकांक्षा और संघर्ष की त्रासदी को बहुत व्यंग्यात्मक किंतु संवेदनशील ढंग से चित्रित करती हैं। जब एक मध्यमवर्गीय स्त्री अपने दम पर आर्थिक रूप से खड़ी होती है, तो समाज और परिवार उसे सहजता से स्वीकार नहीं करता। यह भी एक प्रकार की अदृश्य आर्थिक हिंसा है। 'रोशनी की मार' कहानी का उद्धरण दृष्टव्य है- "तू कमाने लगी है, पर यह मत भूल- तेरा ठिकाना अब भी हमारे घर में है।" (कालिया, 47)। यह संवाद दर्शाता है कि आर्थिक स्वतंत्रता भी सामाजिक स्वीकृति से रहित हो, तो स्त्री फिर भी निर्बल ही रह जाती है।

इस तरह ममता कालिया की कहानियाँ केवल स्त्री विमर्श नहीं हैं, वे सामाजिक आर्थिक संरचना की आलोचना भी हैं। उनका कथा-संसार यह दिखाता है कि निम्न और मध्यम वर्गीय जीवन में आर्थिक समस्याएँ सिर्फ अभाव या गरीबी नहीं होतीं, बल्कि वे जीवन-दर्शन, संबंधों की गतिशीलता और स्त्री की आत्म-छवि को भी गहराई से प्रभावित करती हैं। इन कहानियों में नायिका संघर्ष करती है- लेकिन हारती नहीं। आर्थिक विषमता के विरुद्ध उसका साहस और चुपचाप लड़ा गया प्रतिरोध ही कालिया के साहित्य की अंतर्निहित शक्ति है।

5.1.3 बाज़ारवाद, पूँजीवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रभाव

ममता कालिया की कहानियाँ समकालीन समाज के राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक यथार्थ को बेहद सशक्त ढंग से उजागर करती हैं। विशेषतः बाज़ारवाद, पूँजीवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रभाव उनके कहानी-साहित्य में गहरे रूप में रेखांकित होता है। उनके पात्र न केवल बाज़ार की चकाचौंध से प्रभावित होते हैं, बल्कि कई बार उसमें अपनी अस्मिता, आत्मविश्वास और संबंधों को भी खो बैठते हैं। बाज़ारवाद ने स्त्री को एक उपभोक्ता वस्तु की तरह प्रस्तुत करना शुरू किया है- सौंदर्य प्रसाधन, फैशन, तन की बनावट और शरीर की भाषा को उत्पाद की तरह प्रचारित किया जा रहा है। ममता कालिया इस प्रवृत्ति की तीखी आलोचना करती हैं। इस संदर्भ में 'नयी दुनिया' कहानी का उदाहरण

दृष्टव्य है— “अब सुंदरता सर्टिफिकेट से मिलती है, और हर महीने नए मापदंड बदल जाते हैं— कभी गोरा रंग, कभी जीरो फिगर।” (कालिया, 88)। यह कथन बाजार की बदलती ‘स्त्री की परिभाषा’ को उजागर करता है, जहाँ स्वाभाविक सौंदर्य और व्यक्तित्व अप्रासंगिक हो जाते हैं।

ममता कालिया यह स्पष्ट करती हैं कि उपभोक्तावादी संस्कृति ने संतोष और रिश्तों की गरिमा को तोड़ दिया है। अब संबंधों का मूल्य इस आधार पर आँका जाने लगा है कि कौन कितना कमा रहा है, कौन कितनी चीजें खरीद पा रहा है। ‘मान लो कि’ कहानी का यह उद्धरण देखिए— “शादी के गिफ्ट में मिले किचन-सेट और टीवी ने उन्हें एक हफ्ते तक जोड़े रखा, फिर वही अकेलापन दीवार पर चढ़ आया।” (कालिया, 23)। यहाँ उपभोक्तावाद की क्षणिक सुख-साधनात्मक प्रकृति का चित्रण है— जो आंतरिक रिक्तता को भर नहीं पाता। नौकरी अब केवल जीविका नहीं रही, बल्कि एक प्रतिस्पर्धी प्रदर्शन का मंच बन गई है, जहाँ स्त्री को अपनी दक्षता से अधिक ब्रांडेड पहनावे, भाषा और व्यवहार से जज किया जाता है। कहानी ‘तस्की को हम न रोयें’ में इसे बहुत सहजता के साथ लेखिका ने अभिव्यक्त किया है— “मेरे ऑफिस में प्रमोशन उन्हीं को मिलता है जो बॉस के साथ लंच पर जाते हैं और शुक्रवार को वेस्टर्न पहनते हैं।” (कालिया, 65)। यह पूँजीवादी कार्यालय व्यवस्था में स्त्री के वस्तुकरण और कार्य-संस्कृति के विकृतिकरण का प्रतिनिधि प्रसंग है।

ममता कालिया उपभोक्तावाद की उस रणनीति को उजागर करती हैं जहाँ वास्तविक ज़रूरतों के बजाय कृत्रिम इच्छाओं को जन्म दिया जाता है। मीडिया, विज्ञापन और फिल्में यह भ्रम पैदा करती हैं कि खुशी खरीदने से मिलती है। ‘शिष्या’ कहानी इसका सशक्त उदाहरण है, देखिए— “उसने नए मोबाइल का विज्ञापन देखा और खुद को पिछड़ा हुआ समझने लगी— अब फोन नहीं पहचान था।” (कालिया, 108)। यहाँ बाज़ार द्वारा व्यक्तिगत पहचान को उत्पादों से जोड़ने की प्रवृत्ति की आलोचना की गई है। ममता कालिया विशेष रूप से नए शहरी मध्यमवर्ग की युवाओं की मानसिकता में उपभोक्तावाद की गहराई को उजागर करती हैं। अब ब्रांडेड चीजें स्टेटस सिंबल बन गई हैं। ‘वह लड़का जिसे गर्मी लगती थी’ कहानी का उदाहरण देखिए— “जैसे जितनी फटी थी, उतनी ही महंगी थी, और उतनी ही ‘कूल’ भी। माँ की सिली हुई सलवार अब शर्म की बात थी।” (कालिया, 97)। यह व्यंग्यात्मक कथन दर्शाता है कि कैसे उपभोक्तावादी संस्कृति संस्कार और आत्मसम्मान से टकरा रही है।

ममता कालिया के पात्रों की भाषा में भी बाज़ारवाद की छाया दिखती है— ‘सेल लगी है’, ‘ब्रांडेड है’, ‘ईएमआई पर लिया है’, जैसे वाक्य आम हो गए हैं। ये शब्द आर्थिक असमानता और सांस्कृतिक संक्रमण दोनों के प्रतीक हैं। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि

ममता कालिया की कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि बाजारवादी संस्कृति ने भारतीय समाज की सोच, संबंधों और स्त्री की छवि को गहरे स्तर पर प्रभावित किया है। यह प्रभाव केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और नैतिक स्तर पर भी देखा जा सकता है। उनकी नायिकाएँ कई बार इस संस्कृति से जूझती हैं, तो कई बार उसमें फँसकर खो जाती हैं। उनके साहित्य में उपभोक्तावाद के इस संकट का गंभीर और प्रबुद्ध विश्लेषण मिलता है, जो पाठक को आत्ममंथन की ओर प्रेरित करता है।

5.1.4 बेरोजगारी, श्रम और आर्थिक असमानता का चित्रण

ममता कालिया का कहानी-साहित्य भारतीय समाज के वास्तविक और जटिल पक्षों को बड़ी तीव्रता से उजागर करता है। उन्होंने खासतौर पर निम्न और मध्यवर्गीय जीवन, उसमें मौजूद आर्थिक विषमता, बेरोजगारी और श्रम के शोषण को जिस यथार्थवाद से उकेरा है, वह उनके लेखन को विशिष्ट बनाता है। ममता कालिया की कई कहानियाँ इस सच को सामने लाती हैं कि शिक्षित युवाओं के पास डिग्रियाँ तो हैं, पर नौकरी नहीं। यह मध्यवर्गीय आकांक्षाओं और व्यवस्था की विफलता के बीच की गहरी खाई को उजागर करता है। इनकी प्रसिद्ध कहानी 'वह लड़का जिसे गर्मी लगती थी' का यह वाक्य देखिए- "पिता ने सोचा था कि बी.ए., एम.ए. करने के बाद लड़का नौकरी कर लेगा, लेकिन वह तो कोचिंग और इंटरव्यू के चक्कर में उम्र बढ़ाता जा रहा है।" (कालिया, 96)। यह उद्धरण भारतीय परिवारों की वह मानसिकता दर्शाता है, जिसमें शिक्षा के बाद नौकरी आत्मसम्मान और अस्तित्व का प्रश्न बन जाती है।

ममता कालिया का साहित्य इस बात को रेखांकित करता है कि मेहनत करने वालों को समाज में सम्मान नहीं, बल्कि उपेक्षा मिलती है। श्रमिक वर्ग, घरेलू कामगार, रिक्शाचालक या छोटे व्यापारी- ये सब आर्थिक मशीनरी के महत्वपूर्ण अंग होते हुए भी सामाजिक हीनता का अनुभव करते हैं, यथा- "अंजू सुबह कॉलेज जाती है, दोपहर को ट्यूशन पढ़ाती है और शाम को बच्चों के कपड़े सिलती है – फिर भी उसे लगता है कि वह अपने भाई से कमतर है, जो बेरोज़गार होते हुए भी 'लड़का' है।" (कालिया, 38)। 'पीली लड़की' कहानी का यह कथन लैंगिक और श्रम आधारित असमानता दोनों की ओर संकेत करता है। इनकी कहानियों में आर्थिक असमानता का मार्मिक चित्रण दिखाई देता है। इनकी कहानियों में समाज के उस विभाजन का गहरा चित्रण मिलता है, जहाँ एक वर्ग ए.सी. और

ओला-ऊबर की दुनिया में जी रहा है, जबकि दूसरा वर्ग रिकशा चलाता है, भट्टी में ईंटें पकाता है, या घरेलू नौकर बन कर ज़िंदा रहता है, यथा- “नीरा को लगा कि उसकी नौकरानी का बेटा उससे ज्यादा बड़ा आदमी है – क्योंकि वह गली के अमीर बच्चों को ड्रग्स सप्लाई करता है और बाइक पर घूमता है।” (कालिया, 81)। 'आलमारी' कहानी में उद्धृत यह विडंबना दर्शाती है कि सही या नैतिक रास्ता अपनाने वालों को आर्थिक असफलता और अपराध की ओर जाने वालों को सामाजिक प्रतिष्ठा मिलने लगी है।

ममता कालिया वर्ग संघर्ष को घोषणात्मक ढंग से नहीं, बल्कि अपने पात्रों की आंतरिक पीड़ा, संघर्ष और विकल्पहीनता के माध्यम से दिखाती हैं। यह यथार्थ समाज की उस परत को खोलता है, जहाँ सपनों और संसाधनों के बीच की खाई चौड़ी होती जाती है। एक उदाहरण देखिए- “हर बार वह सोचती थी कि अगली तनख्वाह से बच्चों के लिए गर्म कपड़े लाएगी, लेकिन गैस सिलिंडर और स्कूल फीस पहले खड़ी हो जाती थी।” (कालिया, 19)। 'परदेशी' कहानी का यह वाक्य एक मध्यमवर्गीय स्त्री की आर्थिक विवशता का जीवंत चित्र है, जहाँ सपने हर महीने तनख्वाह से पहले हार जाते हैं। ममता कालिया अपनी कहानियों के माध्यम से यह भी दिखाती हैं कि स्त्री का श्रम— घर के भीतर या बाहर— सामाजिक दृष्टि में 'काम' नहीं माना जाता, यथा- “वह सुबह से रात तक खटती थी, पर जब कोई पूछता कि घर में कमाने वाला कौन है, तो जवाब आता— बस वही अकेला लड़का।” 'फिर भी प्यार' कहानी के माध्यम से यहाँ स्त्री श्रम की अदृश्यता और मूल्यहीनता का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है।

पूँजी धीरे-धीरे समाज के एक संकुचित वर्ग में केंद्रित होती जा रही है, जबकि शेष समाज बेरोजगारी, न्यूनतम वेतन, और अस्थिर नौकरियों से जूझ रहा है। इस संदर्भ में 'थोड़ा-सा प्रगतिशील' कहानी का उदाहरण देखा जा सकता है- “विनीत को हर महीने यह डर सताता था कि उसकी दुकान के आगे फिर कोई मॉल न खुल जाए।” यहाँ बाजार की आक्रामकता के चलते परंपरागत श्रम-आधारित जीविका के संकट को दर्शाया गया है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया का कहानी-साहित्य बेरोजगारी, श्रम की अवमानना और आर्थिक असमानता जैसे गंभीर विषयों को बड़ी सहजता से, पर गहराई के साथ प्रस्तुत करता है। उनका यथार्थ आंदोलनों या नारेबाज़ी से नहीं, बल्कि जीवन के अनुभव और सूक्ष्म निरीक्षण से उपजा हुआ है। वे अपने पात्रों के माध्यम से समाज को

एक दर्पण दिखाती हैं, जिसमें आज के भारत की आर्थिक विडंबनाएँ, वर्गीय अंतर्विरोध, और श्रम की अनदेखी स्पष्ट झलकती है।

5.2 आर्थिक संदर्भ और यथार्थबोध

ममता कालिया हिंदी कहानी-साहित्य की एक सशक्त, सजग और यथार्थवादी कथाकार हैं, जिनकी कहानियाँ समाज के आर्थिक, सामाजिक और स्त्री-जीवन के अंतर्विरोधों को बेहद मार्मिक और तीव्र ढंग से उकेरती हैं। उन्होंने मध्यवर्गीय जीवन के सामाजिक द्वंद्व, आर्थिक जटिलताओं, बेरोजगारी, स्त्री-श्रम की उपेक्षा, और उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रभाव को जिस संवेदनशीलता से रेखांकित किया है, वह उनके यथार्थबोध की विशेषता है। ममता कालिया की कहानियाँ आर्थिक सच्चाइयों से आँख मिलाती हैं। वे यह दिखाती हैं कि आर्थिक स्थिति न केवल व्यक्ति के जीवन की दिशा तय करती है, बल्कि संबंधों की प्रकृति, सामाजिक पहचान और मानसिक स्थिरता को भी प्रभावित करती है, यथा- "मुन्नी का सपना था कि उसका खुद का एक छोटा-सा बुटीक हो... लेकिन हर महीने पगार का बड़ा हिस्सा किराए, स्कूल फीस और राशन में ही चला जाता था।" (कालिया, 10)। 'मुन्नी' कहानी के इस कथन से मध्यवर्गीय स्त्रियों की आर्थिक आकांक्षाओं और सीमाओं के संघर्ष का यथार्थ स्पष्ट होता है।

ममता कालिया का यथार्थबोध केवल सामाजिक संरचना तक सीमित नहीं है, बल्कि वह आर्थिक परिस्थितियों के सूक्ष्म प्रभावों को भी गहराई से समझता है। उनके पात्र नायक या महापुरुष नहीं, बल्कि ऐसे आम लोग हैं, जो रोज़मर्रा की चिंताओं, खींचतान और अनिश्चितताओं के बीच जी रहे हैं, यथा- "पति की सरकारी नौकरी खत्म होते ही घर का स्वरूप बदल गया – अब हर चीज़ में कटौती थी, यहाँ तक कि बच्चों की हँसी भी धीरे-धीरे फीकी हो गई।" (कालिया, 143)। 'एक पति की मौत' कहानी का यह वाक्य आर्थिक असुरक्षा के मनोवैज्ञानिक और पारिवारिक प्रभावों को सूक्ष्मता से दर्शाता है। ममता कालिया ने यह बड़ी स्पष्टता से दिखाया है कि स्त्री की आर्थिक स्वतंत्रता उसके आत्मसम्मान और सामाजिक अस्तित्व से जुड़ी हुई है। उनकी कई कहानियों में स्त्रियाँ या तो सक्षम होने की चाह में संघर्ष करती हैं, या घर और समाज के आर्थिक शोषण का शिकार होती हैं। एक

उदाहरण देखिए- "हम पढ़-लिख कर नौकरी कर रही थीं, पर जब शादी की बात आई तो लड़के वालों को हमारी तनख्वाह से ज़्यादा हमारी रसोई बनाने की योग्यता चाहिए थी।" (कालिया, 71)। 'पच्चीस साल की लड़की' कहानी का यह वाक्य आर्थिक यथार्थ और पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण के टकराव को उभारता है।

ममता कालिया का कथा-संसार उपभोक्तावाद की चकाचौंध के बीच आम आदमी की उलझनों को सामने लाता है। उनका दृष्टिकोण यह बताता है कि कैसे बाज़ार ने आवश्यकताओं को इच्छाओं में और इच्छाओं को मजबूरी में बदल दिया है। 'सुरक्षा का आतंक' कहानी का एक वाक्य देखिए- "बेटी को नई ड्रेस चाहिए थी, माँ ने पुरानी साड़ी को काटकर बना दी- बेटी ने कहा, 'तुम मेरी इज्जत को सस्ती कर रही हो।'" (कालिया, 98)। यह वाक्य सामाजिक यथार्थ की उस त्रासदी को दिखाता है, जहाँ मूल्य और आत्म-सम्मान की परिभाषा बाज़ार तय करने लगा है। इस तरह ममता कालिया के कहानी-साहित्य में आर्थिक यथार्थ केवल पृष्ठभूमि नहीं है, बल्कि वह कथानक का एक केन्द्रीय सूत्र है, जो पात्रों के निर्णय, संबंधों की संरचना और जीवन के संघर्षों को दिशा देता है। उनके यथार्थबोध में करुणा, व्यंग्य, विडंबना और प्रतिरोध का ऐसा समावेश है, जो पाठक को झकझोरता है। वे हमें यह बताती हैं कि आज का भारतीय समाज नैतिकता और मर्यादा के संकट के पीछे जिस आर्थिक असमानता और संघर्ष से जूझ रहा है, उसकी उपेक्षा करके साहित्य अधूरा रहेगा।

5.2.1 सामाजिक और आर्थिक संघर्ष का यथार्थपरक चित्रण

हिंदी साहित्य में ममता कालिया एक ऐसी कथाकार के रूप में स्थापित हैं, जिन्होंने सामाजिक-आर्थिक यथार्थ को स्त्री-दृष्टि से विश्लेषित करते हुए मध्यमवर्गीय जीवन की दुविधाओं, संघर्षों और टूटती आकांक्षाओं को अपनी कहानियों में सजीव रूप दिया है। उनका लेखन नाटकीयता से नहीं, बल्कि सघन अनुभूति और विश्लेषणात्मक दृष्टि से यथार्थ के धरातल पर खड़ा दिखाई देता है। ममता कालिया की कहानियाँ मध्यवर्गीय समाज के उन संघर्षों को उजागर करती हैं, जहाँ एक ओर तो पितृसत्ता, नैतिकता और सामाजिक मर्यादाओं की जकड़न है, और दूसरी ओर आधुनिकता, शिक्षा और आत्मनिर्भरता की आकांक्षाएँ हैं। स्त्रियाँ इस दौराहे पर खड़ी अपनी पहचान और स्वीकृति के लिए जूझती हैं, यथा- "रमा को यह तो समझ आ गया था कि यह समाज उसे नौकरी करने की इजाजत तो देगा, लेकिन

उसके फैसले खुद लेने की नहीं।" (कालिया, 50)। 'परली पार' कहानी का यह वाक्य स्त्री की सामाजिक परतंत्रता और मानसिक संघर्ष का परिचायक है।

ममता कालिया के पात्र आमतौर पर नौकरीपेशा, सीमित आय वाले, असुरक्षित भविष्य से भयभीत और आर्थिक मजबूरियों से जूझते हुए दिखते हैं। वे बाज़ारवाद की चकाचौंध में अपनी छोटी-छोटी ज़रूरतों के लिए संघर्ष करते हैं, जहाँ सपने भी बजट के अनुसार तोले जाते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में 'बीतते हुए' कहानी में दिया विवरण दृष्टव्य है- "पति का वेतन सीमित था और बच्चों की ज़रूरतें असीमित... घर में कभी टीवी आया, तो फ्रिज के लिए इंतज़ार करना पड़ा।" (कालिया, 149)। यह विवरण दर्शाता है कि कैसे मध्यमवर्ग की आर्थिक सीमाएँ परिवार की प्राथमिकताओं को नियंत्रित करती हैं। इनकी कई कहानियों में बेरोजगारी और श्रम की अवमानना ममता कालिया ने तीव्र व्यंग्य और करुणा के साथ चित्रित की है। पुरुष बेरोजगार हैं, स्त्रियाँ नौकरी कर रही हैं- लेकिन फिर भी निर्णय लेने का अधिकार स्त्रियों के पास नहीं। 'लड़कियों' कहानी से एक उदाहरण देखिए- "रूपा हर महीने तनख्वाह लाकर देती, मगर घर में पिता और भाई तय करते कि पैसा कहाँ खर्च होगा।" (कालिया, 66)। यहाँ स्त्री-श्रम की अवमानना और आर्थिक स्वतंत्रता के बावजूद सामाजिक दासता का द्वंद्व स्पष्ट है।

ममता कालिया ने यह बखूबी दर्शाया है कि बाज़ार ने मूल्य-बोध को किस तरह विकृत किया है। अब मानवीय संबंधों की जगह वस्तुओं ने ले ली है। इस संबंध में उपभोक्तावादी संस्कृति के सामाजिक संबंधों पर पड़ते प्रभाव को उजागर करता 'अकेली खुकेलियाँ' कहानी का यह वाक्य देखा जा सकता है- "बेटी की निगाह में माँ की इज्जत उसकी मोबाइल कंपनी और कपड़ों की ब्रांड से तय होती थी।" (कालिया, 21)

ममता कालिया की कहानियों में स्त्रियाँ केवल सामाजिक नहीं, बल्कि आर्थिक शोषण से भी लड़ती हैं। वे यह बताती हैं कि स्त्री की मुक्ति केवल वैचारिक नहीं, आर्थिक रूप से सशक्त होने पर ही संभव है, यथा- "उसने पहली बार देखा कि पति के मरने के बाद उसके हिस्से क्या बचा— चार साड़ियाँ, अधूरी एफडी और उधार में दिया गया जीवन।" (कालिया, 39)। 'एक रिश्ता तो था' कहानी से उद्धृत उपर्युक्त वाक्य स्त्री की आर्थिक असहायता और पराश्रित जीवन की विडंबना को दर्शाता है। निष्कर्षतः ममता कालिया का कहानी-साहित्य केवल स्त्री-विमर्श तक सीमित नहीं है, बल्कि वह आर्थिक-सामाजिक संघर्षों के विविध स्तरों

का सूक्ष्म चित्रण करता है। उनके पात्रों का यथार्थ बाजार, समाज और पारिवारिक संरचना से टकराता है, और यही टकराहट उनके साहित्य को जीवंत और प्रासंगिक बनाती है। उनकी कहानियों में आर्थिक संघर्ष एक सामाजिक विमर्श बनकर उभरता है, जहाँ व्यक्ति की आकांक्षाओं, संबंधों और आत्म-सम्मान की लड़ाई को मार्मिकता और गहराई से प्रस्तुत किया गया है।

5.2.2 स्त्री की आर्थिक स्वतंत्रता और संघर्ष की कहानियाँ

ममता कालिया हिंदी कहानी-साहित्य की उन विशिष्ट लेखिकाओं में से हैं, जिन्होंने स्त्री की आर्थिक स्थिति, आत्मनिर्भरता और संघर्ष को अपनी कहानियों के केंद्र में स्थापित किया है। उनके साहित्य में स्त्री केवल भावनात्मक या पारिवारिक भूमिका में नहीं, बल्कि एक आर्थिक इकाई के रूप में भी उपस्थित है— जो रोज़गार, वेतन, खर्च, बचत और आत्मनिर्भरता से जुड़े निर्णयों में भागीदारी चाहती है। ममता कालिया की कहानियों की स्त्रियाँ अक्सर आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने की चाह रखती हैं, परंतु यह स्वतंत्रता उनके लिए अंततः द्वंद्व, अस्वीकार और संघर्ष का कारण बनती है। उन्हें समाज, परिवार और पितृसत्तात्मक सोच के विरुद्ध जाकर अपना स्थान बनाना होता है। इस संदर्भ में 'अनावश्यक' कहानी का एक कथन देखिए- "उसके पास तन ढकने के लिए कपड़े नहीं थे, पर दफ्तर में बॉस की फाइलें समय पर तैयार रहती थीं। वह जानती थी— उसकी तनख्वाह सिर्फ तनख्वाह नहीं, उसकी गरिमा है।" (कालिया, 101)। यहाँ कामकाजी स्त्री के आर्थिक आत्मसम्मान और आत्मनिर्भरता की भावना का गहरा चित्रण है।

ममता कालिया की स्त्रियाँ शिक्षित हैं, रोज़गार में हैं, लेकिन निर्णय लेने की आज़ादी नहीं है। वे कमाती हैं, पर खर्च की योजना घर के पुरुष तय करते हैं। 'वह मिली थी बस में' कहानी का एक उदाहरण दृष्टव्य है- "रूपा की तनख्वाह से पूरा घर चलता था, लेकिन कोई नहीं चाहता था कि वह अपने बालों की क्रीम खुद खरीद ले।" (कालिया, 57)। यह वाक्य स्त्री की आर्थिक पराश्रिता के अंतर्विरोध को उजागर करता है, जहाँ आमदनी के बावजूद निर्णय लेने की स्वतंत्रता नहीं है। इनकी कई कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि आर्थिक स्वतंत्रता स्त्री के लिए सामाजिक आलोचना, संदेह और अकेलेपन की कीमत पर आती है। उसकी कामयाबी पुरुष-संस्कृति के लिए चुनौती बन जाती है, यथा- "वह कमाती थी, मगर

उसके ऊपर सवाल था— औरत होकर इतनी देर तक बाहर क्यों रहती है?" (कालिया, 19)। 'बोलने वाली औरत' कहानी का यह संवाद स्त्री की कामकाजी भूमिका पर समाज के पूर्वग्रहों को दर्शाता है।

ममता कालिया के पात्रों के माध्यम से यह स्थापित होता है कि स्त्री के श्रम को महत्व नहीं दिया जाता, बल्कि वह 'ज़रूरत की मजदूरी' समझी जाती है। 'पिछले दिनों का अँधेरा' कहानी से एक उदाहरण देखिए— "कुंती ने एक दिन चुपचाप पूछ लिया— क्या मैं दफ़्तर इसलिए जाती हूँ कि घर का किराया भर सकूँ, या इसलिए कि मैं इंसान हूँ?" (कालिया, 11)। यह प्रश्न स्त्री की सामाजिक पहचान और श्रम के मानवीय मूल्य को गहराई से स्पर्श करता है। ममता कालिया उन स्त्रियों को भी केंद्र में लाती हैं जो पति के अभाव में या सामाजिक बहिष्कार के बाद आर्थिक रूप से खड़ी होती हैं। उनके पास विकल्प कम हैं, पर इच्छाशक्ति प्रबल है। एक उदाहरण देखिए— "पति की मृत्यु के बाद शारदा को पहली बार समझ आया कि उसने बैंक में हस्ताक्षर करना क्यों नहीं सीखा था।" (कालिया, 28)। कहानी 'एक पति की मौत' के माध्यम से ममता कालिया स्त्री की आर्थिक अज्ञानता और उसकी परिणामी बेबसी की मार्मिक प्रस्तुति प्रकट करती है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया के कहानी-साहित्य में आर्थिक स्वतंत्रता एक लक्ष्य ही नहीं, एक संघर्ष-यात्रा भी है। यह संघर्ष केवल पैसे कमाने का नहीं, स्वीकृति, निर्णय, सम्मान और पहचान का संघर्ष है। उनकी कहानियों की स्त्रियाँ आर्थिक रूप से सशक्त होकर भी सामाजिक दृष्टि से उपेक्षित हैं, और यही विरोधाभास उनकी रचनाओं को प्रासंगिक, यथार्थपरक और संवेदनशील बनाता है।

5.2.3 आर्थिक असमानता के कारण उत्पन्न सामाजिक विद्रूपताएँ

ममता कालिया का कहानी-साहित्य हिंदी समाज की आर्थिक असमानताओं के बीच उपजे सामाजिक विद्रूपताओं का प्रामाणिक दस्तावेज है। उन्होंने समाज के उस यथार्थ को उजागर किया है जहाँ धन, संसाधन और सामाजिक प्रतिष्ठा का असंतुलन मनुष्यता को छिन्न-भिन्न कर देता है। उनकी कहानियों में यह असमानता केवल आर्थिक दूरी नहीं, बल्कि एक मूल्यहीन समाज की ओर संकेत है— जहाँ आत्म-सम्मान, रिश्ते, प्रेम और स्त्री की गरिमा तक बिकाऊ हो जाती है। ममता कालिया के कथानक मुख्यतः निम्न और मध्यवर्गीय

परिवेश से आते हैं, जो आर्थिक असुरक्षा और संसाधनों की कमी से जूझ रहे हैं। दूसरी ओर, समाज का एक हिस्सा बाज़ारवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति से पोषित होता जा रहा है, जिससे यह अंतर और तीव्र हो जाता है। इस संदर्भ में एक उदाहरण दृष्टव्य है- "उसके घर में रोटियाँ गिनी जाती थीं और पड़ोसी के कुत्ते के लिए भी ब्रेड और चिकन आता था।" (कालिया, 42)। 'ऐसा ही था वह' कहानी का यह वाक्य वर्गभेद की अमानवीय तस्वीर को रेखांकित करता है, जहाँ मनुष्य की भूख और पशु के ऐश्वर्य में अंतर मिट गया है— लेकिन विपरीत दिशा में।

ममता कालिया यह दर्शाती हैं कि आर्थिक संसाधनों की असमानता केवल समाज में ही नहीं, बल्कि रिश्तों के भीतर भी दरार पैदा करती है। संबंधों का आधार अब भावना नहीं, आर्थिक उपयोगिता होता जा रहा है, यथा- "जब तक वह कमाती रही, ससुराल में देवी थी। जब नौकरी गई, तो वह नौकरानी से भी नीचे आ गई।" (कालिया, 36)। कहानी 'रिश्तों की बुनियाद' का यह कथन स्त्री के लिए रिश्तों की आर्थिक शर्तों को उजागर करता है, जहाँ सामाजिक प्रतिष्ठा आर्थिक स्थायित्व पर टिकी होती है।

ममता कालिया के पात्र अक्सर अशिक्षा, बेरोजगारी और अवसरहीनता के कुचक्र में फंसे हुए दिखते हैं, जो उन्हें सामाजिक विकास से काट देता है और हीनता की भावना से भर देता है। इस परिप्रेक्ष्य में 'उड़ान' कहानी का संवाद देखा जा सकता है- "साकी के लिए कॉलेज जाना सपना था, लेकिन सपना भी पेट भरने के बाद आता है।" (कालिया, 70)। यह संवाद बताता है कि कैसे आर्थिक स्थिति व्यक्ति के सपनों की दिशा और ऊँचाई तय करती है, और साथ ही शिक्षा का अवसर भी एक वर्ग विशेष का विशेषाधिकार बन जाता है। आर्थिक असमानता के कारण निम्न और मध्यवर्ग बाज़ार के प्रलोभनों में उलझ कर दिखावे की दौड़ में शामिल होता है, जिससे उनके जीवन में तनाव, झूठ और ऋण जैसे सामाजिक विकार प्रवेश कर जाते हैं, यथा- "उसने बच्चों की फीस की रकम से साड़ी खरीदी, क्योंकि क्लब की पार्टी में पिछड़ना नहीं चाहती थी।" (कालिया, 117)। कहानी 'जोरदार तालियाँ' से उद्धृत यह वाक्य एक झूठी सामाजिक प्रतिष्ठा की खातिर अपने बच्चों की शिक्षा को दाँव पर लगा देती है— यह बाज़ारवादी प्रभाव का खतरनाक रूप है। इनकी कहानियों के पात्र प्रायः स्वाभिमान और आत्म-सम्मान को गिरवी रखकर समाज में अपनी जगह बनाए रखने का प्रयास करते हैं। यह विद्रूपता समाज के नैतिक ढाँचे पर चोट करती

है, यथा- "उसने अपने बेटे को नौकरी दिलवाने के लिए पुराने कर्जदार के सामने घुटनों के बल बैठना मंजूर किया, पर अपनी गरीबी नहीं दिखाना चाहता था।" (कालिया, 33)। कहानी 'परली पार' का यह संवाद मूल्यबोध की दरकती संरचना को दर्शाता है। कुल मिलाकर ममता कालिया के कहानी-साहित्य में आर्थिक असमानता केवल आंकड़ों या तर्कों का विषय नहीं, बल्कि मनुष्य के अंतःकरण तक फैली विद्रूपता है। वे दर्शाती हैं कि जब समाज असमानता की खाई में बँट जाता है, तो रिश्ते, नैतिकता, आत्मगौरव और स्त्री की गरिमा सबसे पहले उसकी बलि चढ़ती है। उनकी कहानियाँ हमें समय के साथ बदलती सामाजिक संरचनाओं के प्रति संवेदनशील बनाती हैं, और यह एहसास कराती हैं कि आर्थिक न्याय के बिना कोई भी सामाजिक विकास अधूरा है।

5.2.4 बदलती आर्थिक परिस्थितियों में नैतिकता और मूल्यों का हास

हिंदी कहानी-साहित्य में ममता कालिया का नाम स्त्री अनुभवों, मध्यवर्गीय जीवन की जटिलताओं, और सामाजिक-सांस्कृतिक संक्रमण की सशक्त लेखिका के रूप में लिया जाता है। उनकी कहानियाँ केवल घटनाओं का विवरण नहीं, बल्कि समय की मानसिकता, सामाजिक संरचनाओं और मूल्यों के क्षरण का जीवंत दस्तावेज़ हैं। विशेष रूप से बदलती आर्थिक परिस्थितियाँ, जैसे- भूमंडलीकरण, उपभोक्तावाद, और मध्यवर्ग की आकांक्षाएँ, उनके कथा-संसार में नैतिक मूल्यों की नई कसौटियाँ गढ़ती हैं।

1990 के पश्चात भारत में आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया ने समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रभावित किया। आर्थिक स्वतंत्रता के साथ-साथ उपभोक्तावादी संस्कृति, प्रतिस्पर्धा, और व्यक्तिवादी दृष्टिकोण ने पारंपरिक जीवन-मूल्यों को चुनौती दी। ममता कालिया की कहानियाँ ठीक इसी संक्रमणकाल की साक्षी बनती हैं— जहाँ नायक-नायिकाएँ अपनी पहचान, स्वार्थ, और अस्तित्व की लड़ाई में पारंपरिक नैतिकताओं से टकराते हुए दिखते हैं। 'तोहमत' कहानी में नायिका एक साधारण से हलवाई के साथ रहते हुए भी अपनी आकांक्षाओं को लेकर सजग है। पर जब जीवन में सुविधाएँ बढ़ने लगती हैं, तो संबंधों की आत्मीयता पीछे छूट जाती है। यह कहानी संकेत करती है कि आर्थिक उन्नयन के साथ-साथ व्यक्ति की प्राथमिकताएँ बदलती हैं, और नैतिक प्रतिबद्धताएँ ढीली पड़ने लगती हैं। 'काली साड़ी' जैसी

कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि स्त्री पुरुष संबंधों में अब प्रेम, त्याग और धैर्य की जगह उपयोगितावादी सोच हावी हो रही है। प्रेम भी अब 'अवसर' बन गया है, और जब कोई संबंध आर्थिक या सामाजिक रूप से लाभकारी न लगे, तो वह त्याग दिया जाता है।

ममता कालिया की कहानियों में बाजार केवल एक भौगोलिक या आर्थिक शब्द नहीं, बल्कि एक मानसिकता बनकर उभरता है। अब मानवीय संबंधों का मूल्य भी लाभ-हानि के तराजू पर तौला जाने लगा है। कहानी 'प्रेम का केंद्र बिंदु' में प्रेम एक भावना नहीं, बल्कि 'समाज में बेहतर स्थिति पाने का जरिया' बन गया है। ममता कालिया की स्त्रियाँ आधुनिक हैं— आत्मनिर्भर, महत्वाकांक्षी और आत्मचेतस। किंतु यह आधुनिकता कभी-कभी उन्हें आत्मकेंद्रित भी बना देती है, जहाँ सामूहिकता, पारिवारिक प्रतिबद्धता, और संवेदनशीलता के मूल्यों का हास होता है। उनकी कहानियाँ जैसे चेतावनी देती हैं कि स्वतंत्रता और स्वार्थ के बीच संतुलन न बना सका तो मूल्य-हास अपरिहार्य होगा। 'अपत्नी' इस कहानी में ममता कालिया ने दिखाया है कि किस प्रकार एक शिक्षित, आधुनिक महिला आर्थिक रूप से तो आत्मनिर्भर है, लेकिन रिश्तों के स्तर पर गहरी आत्महीनता और उलझाव से घिरी है। इस कहानी में नायिका अपनी सास को वृद्धाश्रम में छोड़ आती है, यह कहते हुए कि "अब ये जिम्मेदारियाँ मैं नहीं उठा सकती"। यहाँ आर्थिक स्वावलंबन के बावजूद पारिवारिक दायित्वों से मुक्ति की प्रवृत्ति साफ़ देखी जा सकती है। यह मूल्यों के हास का संकेत है, जहाँ 'सुविधा' को 'कर्तव्य' से ऊपर रखा जा रहा है।

इसी तरह 'दांपत्य' कहानी एक स्त्री और पुरुष के संबंधों की कहानी है, जिसमें प्रेम की भावना तो है, परंतु वह भावना अब पूरी तरह 'सुविधा' और 'समय' की कैद में है। कहानी की नायिका अपने प्रेमी को तब तक प्रेम करती है जब तक वह उसे मानसिक सहारा देता है, लेकिन जैसे ही वह बीमार पड़ता है और उसका करियर डगमगाने लगता है, वह उसे छोड़कर किसी और से विवाह कर लेती है। यह उस सामाजिक सोच का प्रतिनिधित्व करता है जहाँ प्रेम, करुणा और साथ निभाने जैसे मूल्य अब आर्थिक स्थिरता और सामाजिक स्थिति की तुलना में गौण हो गए हैं। 'अपने शहर की बत्तियाँ' कहानी उस मानसिक द्वंद्व की कहानी है, जहाँ एक महिला अपनी शादीशुदा जिंदगी और प्रेम के बीच झूलती है। कहानी की नायिका अपने पति से इसलिए दूरी बना लेती है क्योंकि वह पर्याप्त पैसे नहीं कमा पाता। उसकी आकांक्षाएँ, जो पहले भावनाओं से जुड़ी थीं, अब ब्रांडेड चीज़ों, आधुनिक

जीवनशैली और 'स्टेटस' से जुड़ जाती हैं। इसमें ममता कालिया उपभोक्तावाद के प्रभाव को दर्शाती हैं, जो पारिवारिक मूल्य और नैतिक दायित्वों को दरकिनार कर रहा है।

‘बातचीत बेकार है’ कहानी एक शिक्षिका की है, जो स्वयं को आधुनिक और मुक्त सोच वाली समझती है, परंतु जब वह अपने घरेलू सहायकों या पति के प्रति असंवेदनशील व्यवहार करती है, तब यह स्पष्ट होता है कि स्वतंत्रता के नाम पर कहीं न कहीं स्वार्थ ने घर बना लिया है। वह कहती है – “मेरे पास समय नहीं है इन सब झंझटों के लिए। मेरा समय सिर्फ मेरे लिए है।” (कालिया, 19)। यह कथन दर्शाता है कि कैसे आधुनिकता और आर्थिक आत्मनिर्भरता कभी-कभी स्त्रियों को नैतिक जिम्मेदारियों से विमुख कर देती है। ‘एक अदद औरत’ कहानी एक ऐसी स्त्री की है जो जीवन में एक ‘योग्य’ पुरुष की तलाश कर रही है— जो अच्छा कमाता हो, दिखने में स्मार्ट हो, और सामाजिक तौर पर प्रतिष्ठित भी। वह बार-बार संभावित वरों की ‘सैलरी’ और ‘पैकेज’ पर ध्यान देती है। प्रेम या भावनात्मक सामंजस्य उसके लिए गौण हो जाते हैं। यह कहानी दर्शाती है कि विवाह अब आत्मीय संबंध नहीं, बल्कि ‘सौदा’ बनता जा रहा है— जहाँ आर्थिक स्थिति सबसे बड़ी कसौटी बन चुकी है। ममता कालिया की भाषा सधी हुई, व्यंग्यात्मक और अत्यंत सहज है। वे पात्रों के मनोविज्ञान को तीव्रता से पकड़ती हैं और पाठक को उनके भीतर की नैतिक जटिलताओं से परिचित कराती हैं। वे उपदेश नहीं देतीं, बल्कि यथार्थ का दर्पण दिखाकर पाठक को स्वयं मूल्यांकन की स्थिति में ला खड़ा करती हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया का कहानी-साहित्य एक सामाजिक विमर्श है, जिसमें आर्थिक बदलावों के साथ नैतिकता और मूल्यों के हास की प्रक्रिया गहराई से चित्रित होती है। वे यह दिखाती हैं कि समाज जब केवल ‘सुविधा’ की भाषा बोलने लगे, तो संवेदनशीलता, संबंध और आस्था जैसे मूल्य धीरे-धीरे अप्रासंगिक हो जाते हैं। उनके साहित्य में यह चेतावनी भी निहित है कि यदि यह प्रक्रिया अनियंत्रित रही, तो सामाजिक ताना-बाना ही विघटित हो जाएगा। ममता कालिया की कहानियाँ इस बात को अत्यंत संवेदनशीलता से उकेरती हैं कि आर्थिक परिवर्तन समाज के नैतिक ढाँचे को किस तरह प्रभावित कर रहे हैं। वे यह नहीं कहतीं कि आर्थिक उन्नति गलत है, परंतु इस उन्नति के साथ यदि संबंधों की गरिमा, दायित्वबोध और नैतिक सोच न जुड़े रहे, तो यह विकास एकतरफा बन जाएगा। उनकी कहानियों के स्त्री पात्र जब आर्थिक स्वतंत्रता पाते हैं, तब

उनसे जुड़े मूल्य भी परिवर्तित होते हैं— कई बार सकारात्मक रूप में, लेकिन कई बार संवेदनहीनता की ओर। यही द्वंद्व उनके साहित्य की शक्ति है।

प्रमुख कहानियों का विश्लेषण:

5.3.1 परदेशी - आर्थिक अस्थिरता और मध्यम वर्ग की त्रासदी

ममता कालिया की कहानी 'परदेशी' केवल एक प्रवासी की कथा नहीं है, बल्कि यह एक संपूर्ण मानसिक, भावनात्मक और सांस्कृतिक संघर्ष की दस्तावेज़ी अभिव्यक्ति है। यह कहानी एक ओर जहाँ पाश्चात्य और भारतीय संस्कृति की सूक्ष्म तुलना करती है, वहीं दूसरी ओर 'घर' की अवधारणा को केवल भौतिक सीमाओं से ऊपर उठाकर आत्मिक सुरक्षा, पहचान और संबंधों की स्थायी संरचना के रूप में प्रस्तुत करती है। कहानी की शुरुआत एक ऐसे भावनात्मक प्रसंग से होती है, जहाँ तीन भाई-बहन तीन अलग-अलग देशों में बस चुके हैं। इस बिखराव की पृष्ठभूमि में कनाडा से आया एक विदेशी रिचर्ड, भारत के इलाहाबाद शहर में रहने वाले नीरद के यहाँ अतिथि बनकर आता है। नीरद और उसके परिवार की आत्मीय मेहमाननवाज़ी से प्रभावित होकर रिचर्ड कह उठता है कि नीरद ने परदेश न जाकर सही निर्णय लिया। यह टिप्पणी अपने-आप में गहरी सांस्कृतिक अनुभूति का संकेत है— जहाँ पाश्चात्य समाज की एकाकी, यांत्रिक और भावशून्य जीवनशैली भारतीय समाज की आत्मीयता, संबंधों और पारिवारिक ऊष्मा के सामने फीकी पड़ जाती है।

नीरद का भाई, जो स्वयं कनाडा में रह रहा है, उस प्रवासी जीवन की विडंबनाओं से जूझता दिखाई देता है। वह भी परिवार के साथ तीन पीढ़ियों के बीच बैठकर एक साथ भोजन करने की लालसा में जी रहा है। वहाँ उसे भले ही भौतिक सुख-सुविधाएँ उपलब्ध हों, पर 'घर' की वह गंध, वह चहल-पहल, वह अपनापन नहीं है जो नीरद के बच्चों को एक सामान्य भारतीय लड़कपन में सहजता से मिल रहा है। इस अंतर को रेखांकित करते हुए ममता कालिया 'स्वदेश' की महत्ता को बहुत ही सरल, परंतु प्रभावशाली ढंग से उकेरती हैं।

कहानी की दूसरी परत और अधिक गहराई लिए हुए है। यह एक मध्यमवर्गीय स्त्री की दृष्टि से कही गई कथा है, जिसकी ज़िंदगी आर्थिक अनिश्चितताओं, पारिवारिक जिम्मेदारियों और भावनात्मक खिंचावों के बीच झूलती रहती है। पति की नौकरी अस्थिर

है—कभी छूट जाती है, कभी ट्रांसफर हो जाता है, और कभी महीनों वेतन नहीं मिलता। इस अस्थिरता का सीधा प्रभाव पूरे परिवार की जीवनशैली पर पड़ता है, विशेषकर उस स्त्री पर जो पूरे परिवार को भावनात्मक रूप से जोड़कर रखने की कोशिश करती है। यह स्त्री अपने परिवार के साथ बार-बार एक किराए के मकान से दूसरे मकान में स्थानांतरित होती है। मकान बदलते हैं, लेकिन उसका 'घर' कभी नहीं बनता। वह महसूस करती है कि "हम किसी घर में नहीं रहते थे, हम बस किरायेदार थे— उधार के कमरे, उधार की ज़िंदगी जीते हुए।" यह वाक्य केवल आर्थिक मजबूरी नहीं, बल्कि मानसिक विस्थापन और जड़ता के अभाव का सूक्ष्म चित्रण है। कहानी में घर का किराया बच्चों की पढ़ाई की मजबूरी के कारण बढ़ जाना— "नए मकान का किराया पिछली तनख्वाह के अनुपात में बहुत ज़्यादा था... पर अब क्या करें, बच्चों के स्कूल के पास यही था।"— जैसी पंक्तियाँ आर्थिक विवशता और भावनात्मक मजबूरी के उस द्वंद्व को दर्शाती हैं जिसमें मध्यम वर्ग की स्त्रियाँ जीती हैं। वे कभी शिकायत नहीं करतीं, क्योंकि उनके पास शिकायत करने का समय नहीं है। उन्हें परिवार को बचाए रखना है, बिखरने से रोकना है। स्त्री की यह स्थिति एक गहरे अस्तित्वगत संकट को जन्म देती है— वह न अपने को 'घरवाली' मान पाती है, न उस मकान को अपना 'घर'। उसकी स्थिति ऐसी हो जाती है कि "मेरे नाम कोई दरवाज़ा नहीं था, कोई खिड़की नहीं थी जो मेरी हो... सबकुछ बस अस्थायी था।" यह अस्थायित्व, यह बेगानापन, यह निरंतर विस्थापन, कहानी को केवल एक पारिवारिक वृत्तांत नहीं रहने देता, बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक टिप्पणी में परिवर्तित कर देता है।

इस कहानी में ममता कालिया ने बड़ी सूक्ष्मता से दिखाया है कि मध्यम वर्ग सबसे अधिक दबाव में जीता है— वह न तो पूरी तरह निर्धन होता है कि सरकारी सहायता का पात्र बने, और न ही इतना संपन्न कि विलासिता भोग सके। उसके पास बस एक संघर्ष है— संतुलन बनाए रखने का। बच्चों की पढ़ाई, मकान का किराया, नौकरी की अनिश्चितता, सामाजिक दिखावे और अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं की बलि— यही उसका जीवन है। अंततः 'परदेशी' एक ऐसी कहानी है जो 'घर' को केवल ईंट-पत्थर का ढांचा नहीं, बल्कि आत्मिक स्थायित्व, पहचान और सम्मान का प्रतीक मानती है। यह कहानी मध्यमवर्ग की उस मौन त्रासदी को उजागर करती है जहाँ एक स्थायी 'घर' पाने की चाह, जीवन की सबसे बड़ी

चुनौती बन जाती है। साथ ही, यह भी दर्शाती है कि आर्थिक अस्थिरता केवल जेब को नहीं, बल्कि आत्मा और रिश्तों को भी गहराई से झकझोर देती है।

ममता कालिया की 'परदेशी' कहानी, अपने बहुस्तरीय दृष्टिकोण के माध्यम से न केवल भारतीय मध्यमवर्गीय जीवन की जटिलताओं को उजागर करती है, बल्कि प्रवासी जीवन और स्वदेशी जीवन की सांस्कृतिक तुलना को भी अत्यंत संवेदनशीलता से प्रस्तुत करती है। यह कहानी पाठक को यह सोचने पर विवश करती है कि 'घर' का अर्थ केवल चार दीवारों का निर्माण नहीं, बल्कि उसमें बसने वाले संबंधों, स्मृतियों और आत्मीयता का समग्र अनुभव है। स्त्री-पात्र के माध्यम से ममता कालिया यह स्पष्ट करती हैं कि आर्थिक अस्थिरता और सामाजिक अपेक्षाओं के बीच मध्यम वर्ग सबसे अधिक पिसता है। प्रवासी जीवन में भले ही भौतिक समृद्धि मिल जाए, परंतु आत्मीयता, अपनापन और भावनात्मक स्थायित्व वहीं मिलता है जहाँ 'घर' वास्तव में 'घर' होता है— न कि केवल एक किराये का पता। इस कहानी की सबसे बड़ी विशेषता इसकी भावनात्मक प्रामाणिकता है, जिससे पाठक सहज ही जुड़ जाता है। 'परदेशी' केवल एक कहानी नहीं, बल्कि एक संवेदना है— उस वर्ग की, जो हर दिन अपने अस्तित्व को बचाए रखने की चुपचाप लड़ाई लड़ता है। इस प्रकार, 'परदेशी' हमें यह अहसास कराती है कि जीवन की सबसे बड़ी पूंजी स्थायित्व, संबंधों की ऊष्मा और 'अपना-सा' महसूस होता एक घर होता है— चाहे वह छोटे कमरे में हो या बड़े शहर में, लेकिन उसमें प्रेम और अपनापन होना चाहिए।

5.3.2 दर्पण : स्त्री की आर्थिक पराधीनता और आत्म-विलोपन

ममता कालिया की कहानी 'दर्पण' विवाहोपरांत स्त्री की दमित इच्छाओं, आत्म-सत्ता के क्षरण और पुरुष-प्रधान पारिवारिक संरचना में उसकी दोयम स्थिति का मार्मिक चित्र प्रस्तुत करती है। यह कहानी केवल एक स्त्री की व्यथा नहीं, बल्कि उस मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक यंत्रणा का आख्यान है, जिससे एक पूरी पीढ़ी की महिलाएँ गुजरती रही हैं। कहानी की नायिका 'बानी' बचपन से ही दर्पण की आकांक्षी रही है— यह प्रतीकात्मक 'दर्पण' महज़ एक भौतिक वस्तु नहीं, बल्कि आत्म-प्रतीति, स्वयं को पहचानने और स्वीकारने की एक जिजीविषा है। परंतु विवाह के बाद उसका पति न केवल उसे दर्पण जैसी साधारण

वस्तु से वंचित करता है, बल्कि उससे नौकरी भी छीन लेता है। इस प्रक्रिया में वह बानी की स्वतंत्रता, आत्म-सत्ता और पहचान को क्रमशः समाप्त करता है।

यह उल्लेखनीय है कि *पति का दर्पण न लाना* एक मामूली घटना प्रतीत हो सकती है, लेकिन यह उस मानसिकता का संकेत है, जिसमें स्त्री की 'इच्छाओं की स्वतंत्र सत्ता' को मान्यता नहीं दी जाती। *बानी की नौकरी छुड़वाना* केवल आर्थिक निर्भरता का निर्माण नहीं करता, बल्कि उसे मानसिक, सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से निर्बल बनाने की प्रक्रिया का हिस्सा बन जाता है। कहानी में जब *बानी का सौंदर्य ढल जाता है*, तब पति पदोन्नति प्राप्त कर एक बड़ा फ्लैट लेता है और उसे उपहार स्वरूप एक ड्रेसिंग टेबल— अर्थात् दर्पण— देता है। यह दृश्य स्त्री की वस्तुकरण प्रवृत्ति को उजागर करता है, जिसमें उसका सौंदर्य उपभोग की वस्तु बन जाता है और जब वह उपयोगिता की दृष्टि से अनुपयोगी हो जाती है, तब उसे वह वस्तु प्रदान की जाती है जिसकी उसने वर्षों पहले आकांक्षा की थी। यह *दर्पण* अब केवल एक निष्क्रिय वस्तु रह जाता है— क्योंकि बानी के लिए अब उसमें देखने के लिए कुछ भी शेष नहीं रहा। इस प्रसंग में ममता कालिया अत्यंत सूक्ष्मता से यह कहती प्रतीत होती हैं कि अगर इच्छाओं की पूर्ति समय पर न हो, तो वे इच्छाएँ अपना मूल्य खो देती हैं और मनुष्य उनमें विरक्ति अनुभव करने लगता है। कहानी का केंद्रीय संदेश यह है कि विवाह संस्था के भीतर स्त्री को अक्सर केवल एक *भूमिका* दी जाती है— माँ, पत्नी, बहू— परंतु एक स्वतंत्र, इच्छाओं से युक्त *व्यक्तित्व* के रूप में उसे स्वीकृति नहीं दी जाती। बानी का दर्पण के प्रति आकर्षण, उसके अपने सौंदर्य और अस्तित्व को देखने-समझने की आकांक्षा का प्रतीक है, लेकिन यह आकांक्षा *पति की सत्ता* के आगे दब जाती है। जब अंततः उसे वह दर्पण मिलता है, तब तक वह न केवल अपनी आकांक्षा से, बल्कि स्वयं अपने सौंदर्य और आत्म-स्वीकृति की आवश्यकता से भी विरक्त हो चुकी होती है। यह विरक्ति स्त्री के उस गहरे आंतरिक शून्य को प्रकट करती है, जो वर्षों की उपेक्षा और दमन के कारण उत्पन्न होता है।

'दर्पण' कहानी, ममता कालिया की अन्य रचनाओं की तरह, स्त्री की भावनात्मक और सामाजिक स्थिति का अत्यंत प्रामाणिक दस्तावेज है। यह कहानी भारतीय सामाजिक संरचना में स्त्री की भूमिका, उसकी इच्छाओं की अनदेखी, और समय के साथ उसकी आंतरिक टूटन को अत्यंत प्रभावी ढंग से उजागर करती है। इस कहानी के माध्यम से

ममता कालिया यह स्पष्ट संदेश देती हैं कि स्त्री की इच्छाएँ महत्त्वहीन नहीं हैं, और उन्हें समय पर स्वीकृति न मिले तो वे केवल व्यक्तिगत पीड़ा नहीं, बल्कि एक पीढ़ीगत दमन का प्रतीक बन जाती हैं। दर्पण यहाँ न केवल एक प्रतीक है, बल्कि *स्त्री की अस्मिता, आत्मबोध और अधिकार की चेतना* का भी गहरा बिम्ब है, जिसे ममता कालिया अपनी सशक्त लेखनी से पाठक के सामने रखती हैं।

ममता कालिया की कहानी 'दर्पण' को यदि आर्थिक दृष्टि से देखा जाए, तो यह केवल एक पारिवारिक कथा नहीं रह जाती, बल्कि स्त्री की आर्थिक पराधीनता, संसाधनों पर पुरुष के एकाधिकार, और घरेलू सत्ता संरचना में आर्थिक नियंत्रण के माध्यम से स्त्री को वंचित बनाए रखने की एक गहन सामाजिक आलोचना बन जाती है। कहानी की नायिका बानी आरंभ में एक आत्मनिर्भर महिला है, जो नौकरी करती है और अपने भविष्य के स्वप्न देखती है। लेकिन विवाह के पश्चात् उसका पति सबसे पहला कदम यही उठाता है कि उसे नौकरी छोड़ने के लिए बाध्य करता है। यह निर्णय बानी की सहमति से नहीं, बल्कि पुरुषसत्तात्मक अधिकारबोध से प्रेरित होता है। इस प्रकार आर्थिक स्वतंत्रता के छिन जाने के साथ ही बानी की आत्म-निर्भरता, निर्णय लेने की क्षमता और सामाजिक सम्मान का भी क्षरण आरंभ हो जाता है। यह यथार्थ भारत के उन असंख्य मध्यमवर्गीय परिवारों का प्रतिनिधित्व करता है, जहाँ विवाह के बाद स्त्री को 'घर की जिम्मेदारी' के नाम पर आर्थिक परिधि से बाहर कर दिया जाता है, और उसे घरेलू श्रम में झोंक दिया जाता है— जो न तो आय सृजित करता है, न ही किसी आर्थिक मूल्य से आंका जाता है। कहानी के उत्तरार्द्ध में, जब बानी वृद्ध होती है और उसका सौंदर्य मुरझा चुका होता है, तब उसका पति पदोन्नति पाकर चार कमरों का फ्लैट खरीदता है और बानी को 'ट्रेसिंग टेबल' भेंट करता है। यह क्रिया सतही रूप से एक प्रेमपूर्ण उपहार प्रतीत हो सकती है, किंतु आर्थिक दृष्टि से देखा जाए तो यह स्त्री के प्रति एक "देरी से किया गया निवेश" है, जिसका अब कोई प्रतिफल नहीं मिल सकता। यह दर्पण वह वस्तु है जिसकी आकांक्षा बानी ने वर्षों पहले की थी, जब उसका आत्मविश्वास, सौंदर्य और ऊर्जा अपने उत्कर्ष पर थे। लेकिन उस समय संसाधनों पर उसका कोई अधिकार नहीं था। यह 'विलंबित उपभोक्तावाद' की एक त्रासदी है, जहाँ उपहारों की समय-संवेदनशीलता को अनदेखा कर स्त्री को केवल दिखावे और सांत्वना हेतु वस्तुएँ दी जाती हैं— बिना किसी आत्मीय मूल्य के।

कहानी में यह स्पष्ट नहीं कहा गया, पर यह स्पष्ट संकेतित है कि बानी संपूर्ण जीवन घर-परिवार, बच्चों, पति की सेवा में अर्पित कर देती है, लेकिन उस श्रम की कोई आर्थिक मान्यता नहीं दी जाती। आर्थिक दृष्टि से यह स्थिति 'अवैतनिक घरेलू श्रम' की है, जहाँ स्त्री का कार्य जीडीपी में नहीं जुड़ता, परंतु परिवार और समाज की रीढ़ वही बनती है। यह आर्थिक अदृश्यता स्त्री को आत्म-संदेह, असुरक्षा और पराश्रितता की स्थिति में धकेलती है। बानी की चुप्पी दरअसल उस व्यवस्था पर मौन आक्रोश है जो स्त्री को केवल सेवा और सौंदर्य की वस्तु मानती है, परंतु उसे आर्थिक निर्णयों से बाहर रखती है। पूरी कहानी में संसाधनों— जैसे घर, फ्लैट, दर्पण— पर स्वामित्व और नियंत्रण पति का है। बानी एक 'उपयोगकर्ता' मात्र है, जिसे जीवन की मूलभूत इच्छाएँ भी तभी दी जाती हैं जब पति के पास देने की आर्थिक क्षमता उत्पन्न होती है। लेकिन तब तक, इच्छा मर चुकी होती है। यह अर्थशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में 'विलंबित उपयोगिता पूर्ति' की वह त्रासदी है, जहाँ मांग और पूर्ति के बीच समय का इतना अंतराल होता है कि मांग अप्रासंगिक हो जाती है। 'दर्पण' कहानी यह स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि आर्थिक पराधीनता केवल भौतिक संसाधनों की अनुपलब्धता नहीं है, बल्कि वह स्त्री के आत्मबोध, निर्णयक्षमता और सामाजिक स्थिति को भी नष्ट कर देती है। ममता कालिया के कथा संसार में यह कहानी स्त्री-विमर्श को एक आर्थिक विमर्श में रूपांतरित करती है, जिसमें स्त्री की मुक्ति का मार्ग उसकी आर्थिक स्वतंत्रता से होकर ही संभव है। जब तक स्त्री स्वयं संसाधनों की स्वामिनी नहीं बनती, तब तक दर्पण केवल एक 'दिखावा' रहेगा— जिसमें वह स्वयं को नहीं, केवल अपने खोए हुए सपनों को देख पाएगी।

5.3.3 आलमारी : वस्तु-चक्र में आर्थिक पुनरावृत्ति की संभावना

ममता कालिया की कहानी 'आलमारी' में निम्नमध्यवर्गीय परिवारों के जीवन की सूक्ष्म अनुभूतियों, स्मृतियों, और वस्तुओं से जुड़ी आत्मीयता का सजीव चित्रण किया गया है। यह कहानी केवल एक पुरानी आलमारी के दान की कथा नहीं है, बल्कि वस्तुतः उन भावनात्मक संबंधों की अभिव्यक्ति है, जो अक्सर निर्जीव वस्तुओं से जुड़ जाते हैं— विशेषकर तब, जब वे वस्तुएँ परिवार के सामाजिक, आर्थिक और भावनात्मक इतिहास की साक्षी बन चुकी होती हैं।

आधुनिक शहरी जीवन की एक प्रमुख समस्या है सीमित आवासीय स्थान। विशेषकर निम्नमध्यवर्गीय परिवारों के लिए हर वस्तु की उपयोगिता और अनावश्यकता का मूल्यांकन एक जटिल सामाजिक-आर्थिक निर्णय बन जाता है। कहानी की नायिका भी इसी द्वंद्व से गुजरती है, जब वह घर में स्थान की कमी के कारण अपने पुराने घर की पुरानी आलमारी को स्कूल के चपरासी की बेटी की शादी में निःशुल्क दे देती है। यह निर्णय सतही रूप से एक सामाजिक सहयोग या दान प्रतीत हो सकता है, परंतु इसमें नायिका के मन में वर्षों से जमी हुई स्मृतियों, आदतों और आत्मीय भावनाओं का विस्थापन अंतर्निहित है। कहानी का केंद्रीय पात्र 'आलमारी' वस्तुतः केवल एक निर्जीव वस्तु नहीं है, बल्कि घर की एक 'बुजुर्ग सदस्य' के रूप में चित्रित की गई है। वर्षों से वह आलमारी घर के हर सदस्य की आवश्यकताओं की गवाह रही है— उसमें बच्चों की किताबें रखी गईं, बहनों के दुपट्टे, भाइयों के प्रमाणपत्र, त्योहारों की विशेष साड़ियाँ, और पुराने फोटो ऐल्बम भी। वह एक मूक गवाह थी परिवार की वृद्धि, परिवर्तन और संघर्ष की। इस आलमारी के माध्यम से लेखिका ने यह संकेत किया है कि निर्जीव वस्तुएँ भी जब जीवन का अभिन्न हिस्सा बन जाती हैं, तब वे आत्मीयता का स्रोत बन जाती हैं।

आलमारी के चले जाने के बाद नायिका को यह अहसास होता है कि उसने केवल एक पुरानी वस्तु नहीं दी, बल्कि अपने अतीत के साथ एक जीवंत रिश्ता भी तोड़ दिया। यह आत्मबोध कहानी में अत्यंत मार्मिक रूप से व्यक्त किया गया है— “वह आलमारी जैसे हमारे घर की बुजुर्ग थी, अब घर सूना-सूना लगता है।” (कालिया, 65)। यह सूनापन केवल भौतिक खालीपन नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक शून्यता है, जो आत्मीय वस्तुओं के वियोग से उत्पन्न होती है। इसका संबंध 'ऑब्जेक्ट-ओरिएंटेड ऑन्टोलॉजी' जैसे दार्शनिक विचारों से भी जोड़ा जा सकता है, जिसमें कहा गया है कि वस्तुएँ केवल उपयोग की नहीं, बल्कि अस्तित्वगत रिश्तों की वाहक भी होती हैं।

ममता कालिया की विशेषता यह है कि वे अत्यंत सामान्य घटनाओं के माध्यम से गहन सामाजिक यथार्थ प्रस्तुत करती हैं। इस कहानी में भी, एक पुरानी आलमारी की विदाई जैसे सामान्य प्रसंग को वे आर्थिक विवशता, सामाजिक अपेक्षाओं और भावनात्मक जुड़ाव के त्रिकोणीय संघर्ष में परिवर्तित कर देती हैं। नायिका के अंतर्मन में उठती आत्मग्लानि और खालीपन की अनुभूति निम्नमध्यवर्गीय मानसिकता की उस विशेषता को

दर्शाती है, जहाँ हर वस्तु की एक कहानी होती है— उसका स्थान केवल उपयोगिता से नहीं, बल्कि स्मृति और भावना से तय होता है।

‘आलमारी’ कहानी उस सामाजिक मनोविज्ञान की अभिव्यक्ति है, जिसमें निर्जीव वस्तुएँ भी समय के साथ जीवन का हिस्सा बन जाती हैं, और उनके खोने से उत्पन्न होता है एक गहरा भावनात्मक शून्य। यह कहानी यह स्पष्ट करती है कि भावनात्मक स्मृतियाँ केवल मनुष्य के साथ नहीं जुड़तीं, वे वस्तुओं में भी बस जाती हैं, और जब वे वस्तुएँ हमारे जीवन से चली जाती हैं, तो केवल स्थान नहीं, स्मृतियाँ भी रिक्त हो जाती हैं। ममता कालिया की लेखनी हमें यह समझने पर विवश करती है कि निम्नमध्यवर्गीय जीवन के संकुचित संसाधनों के बीच भी आत्मीयता, सौंदर्य और स्मृति का एक समृद्ध संसार पलता है, जो खो जाने पर आत्मग्लानि और अकेलेपन का अनुभव कराता है। कहानी की नायिका जिस प्रकार जगह की कमी और आवश्यकताओं की प्राथमिकता को ध्यान में रखकर पुरानी आलमारी दान कर देती है, वह निर्णय निम्नमध्यवर्गीय जीवन की एक आम आर्थिक मजबूरी को दर्शाता है। छोटे मकानों, सीमित भंडारण और उपयोगितावादी सोच के कारण वे वस्तुएँ जो भावनात्मक रूप से मूल्यवान होती हैं, अक्सर ‘अनावश्यक’ वस्तुओं की श्रेणी में डाल दी जाती हैं। यह निर्णय आर्थिक विवशता का ही एक रूप है, जहाँ भावनात्मकता की जगह व्यावहारिकता ले लेती है।

आलमारी को निःशुल्क देना इस तथ्य को इंगित करता है कि पुरानी वस्तुओं का आर्थिक मूल्य नगण्य माना जाता है। लेकिन कहानी यह दिखाती है कि उपभोक्तावादी दृष्टिकोण में जिस वस्तु को मूल्यहीन समझा गया, वही वस्तु नायिका के लिए भावनात्मक और सांस्कृतिक पूंजी का केंद्र थी। यहाँ एक महत्वपूर्ण अंतर्विरोध उभरता है— आर्थिक निर्णय और भावनात्मक संपत्ति में सामंजस्य का अभाव। नायिका जिस आलमारी को चपरासी की बेटी की शादी में देती है, वह आर्थिक दृष्टि से पुनः उपयोग में लायी जाती है। यह निम्नवर्गीय जीवन की एक विशेषता है कि उच्च वर्ग या निम्नमध्यवर्ग की त्यागी हुई वस्तुएँ अगले वर्ग के लिए नई संपत्ति बन जाती हैं। इस प्रक्रिया में वस्तु की आर्थिक पुनर्चक्रण होती है, जिससे सामाजिक-आर्थिक असमानताओं का एक मौन लेकिन व्यावहारिक सेतु बनता है।

मध्यमवर्गीय परिवारों के लिए विरासत केवल जमीन-जायदाद या आभूषण नहीं होती, बल्कि एक पुरानी आलमारी, रेडियो, सिलाई मशीन या फ़ोटो फ्रेम भी पीढ़ियों की स्मृति को ढोने वाली 'धरोहर' बन जाती हैं। आर्थिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो ये वस्तुएँ पूँजीगत संपत्ति नहीं हैं, परंतु सामाजिक-सांस्कृतिक रूप में उनका मूल्य अत्यधिक होता है। इनकी विदाई आर्थिक रूप से तर्कसंगत हो सकती है, लेकिन सामाजिक-भावनात्मक हानि का कारण बनती है। पूँजीवादी समाज में वस्तुओं का मूल्य उनकी कार्यक्षमता और नवीनता से आँका जाता है, जबकि पारंपरिक निम्नमध्यवर्गीय समाज में भावनात्मक जुड़ाव और वर्षों के साथ वस्तुओं का संबंध बनता है। इस द्वंद्व का आर्थिक परिणाम यह होता है कि व्यक्ति भावनात्मक क्षति के बावजूद आर्थिक निर्णय लेने को विवश होता है, जैसा कि नायिका करती है। ममता कालिया की 'आलमारी' कहानी एक आर्थिक विवशता और भावनात्मक संपत्ति के संघर्ष की प्रतीक बन जाती है। यह कहानी निम्नमध्यवर्ग की उस छिपी हुई अर्थव्यवस्था को दर्शाती है, जहाँ वस्तुओं का मूल्य केवल उपयोग से नहीं, बल्कि समय, स्मृति और आत्मीयता से तय होता है। वह आलमारी केवल स्थान घेरे एक पुरानी वस्तु नहीं थी, बल्कि एक ऐसी अदृश्य पूँजी थी जिसे त्यागने के बाद मानसिक रिक्तता और आत्मग्लानि उत्पन्न होती है। अतः कहानी में आर्थिक दृष्टिकोण केवल उपभोग और दान का ही नहीं, बल्कि भावनात्मक निवेश की क्षति का भी सूक्ष्म विमर्श प्रस्तुत करता है।

5.3.4 अन्य कहानियाँ- आर्थिक यथार्थ का सशक्त चित्रण

हिंदी कथा-साहित्य में ममता कालिया एक ऐसी सशक्त रचनाकार के रूप में उभरती हैं, जिन्होंने मध्यवर्गीय समाज की गहराइयों, विशेषतः स्त्रियों की स्थिति, पारिवारिक संबंधों और सामाजिक विडंबनाओं को अत्यंत सूक्ष्मता और यथार्थपरक दृष्टिकोण से उजागर किया है। उनकी कहानियाँ केवल भावनात्मक या मनोवैज्ञानिक स्तर पर नहीं रुकतीं, बल्कि उनमें छुपा हुआ आर्थिक यथार्थ भी समान रूप से प्रखरता से उभरता है। ममता कालिया की कहानियों में स्त्रियों की आर्थिक पराधीनता, उपभोक्तावाद के बढ़ते प्रभाव, मध्यवर्गीय असुरक्षा, बेरोज़गारी, श्रम की उपेक्षा, और सामाजिक संबंधों के आर्थिक पक्षों को बारीकी से चित्रित किया गया है। इनकी 'यह ज़रूरी नहीं', 'एक अदद औरत', और 'खिड़की' जैसी

कहानियों में स्त्री की आर्थिक निर्भरता को केंद्र में रखते हुए यह दर्शाया गया है कि आर्थिक आत्मनिर्भरता के बिना स्त्री का आत्मसम्मान, निर्णय-स्वातंत्र्य और सामाजिक स्थान हमेशा दांव पर होता है। ममता कालिया इन कहानियों के माध्यम से यह प्रतिपादित करती हैं कि नौकरीपेशा स्त्रियाँ भी पूर्ण स्वतंत्र नहीं होतीं, क्योंकि घर और बाहर दोनों में उन्हें आर्थिक रूप से शोषित या नियंत्रित किया जाता है।

ममता कालिया की 'खाली होता हुआ घर', 'शॉल', 'आलमारी' और 'नयी दुनिया' जैसी कहानियाँ एक ओर पारिवारिक स्मृतियों से जुड़ी वस्तुओं के प्रति भावनात्मक लगाव को दर्शाती हैं, वहीं दूसरी ओर यह भी संकेत करती हैं कि सीमित संसाधनों और जगह की कमी के चलते मध्यवर्ग को अपनी परंपरागत सांस्कृतिक और भावनात्मक पूंजी को त्यागना पड़ता है। उदाहरण के लिए 'आलमारी' कहानी में नायिका उस अलमारी को दान कर देती है जो घर की बुजुर्ग सदस्य जैसी थी, लेकिन बाद में उसे उसका मूल्य समझ आता है। यह वस्तु नहीं, बल्कि भावनात्मक-आर्थिक पूंजी का क्षरण है। 'कवि मोहन' और 'मैं क्यों लिखती हूँ?' जैसी आत्मपरक और रचनाकार-केन्द्रित कहानियाँ इस तथ्य को उजागर करती हैं कि साहित्य, कविता और रचनात्मकता जैसी उच्च सांस्कृतिक गतिविधियाँ भी बाज़ार की दृष्टि से अप्रासंगिक मानी जाती हैं। इन कहानियों में यह स्पष्ट होता है कि रचनात्मक लोग अक्सर आर्थिक रूप से हाशिए पर होते हैं, और समाज उन्हें केवल एक शोभा की वस्तु समझता है, न कि जीवित मानव जिसकी आर्थिक ज़रूरतें भी होती हैं। 'इक्कीसवीं सदी', 'प्यार के बाद' और 'नयी दुनिया' जैसी कहानियाँ भूमंडलीकरण के पश्चात् उभरे उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रभावों को रेखांकित करती हैं। इनमें मनुष्यों के संबंध वस्तुओं की तरह मूल्यांकित होते हैं। प्रेम, मित्रता और आत्मीयता के स्थान पर सुविधा, स्वार्थ और सामाजिक दिखावा हावी हो जाता है। ममता कालिया की दृष्टि यहाँ भी आर्थिक है - पर यह केवल गरीबी या अमीरी तक सीमित नहीं, बल्कि सांस्कृतिक मूल्य और आर्थिक दृष्टिकोण के अंतर्संबंधों को रेखांकित करती है।

ममता कालिया कृत- 'सवारी और सवारी' तथा 'दल्ली' जैसी कहानियाँ श्रमशील स्त्रियों के जीवन पर केंद्रित हैं। इन कहानियों में निम्नवर्गीय स्त्रियों की आकांक्षाओं, संघर्षों

और आर्थिक बाधाओं का यथार्थ चित्रण मिलता है। विशेषतः 'दल्ली' कहानी में छोटे कस्बों की आर्थिक संरचना, सीमित अवसर और स्त्री की आकांक्षा के बीच का संघर्ष प्रमुखता से उभरता है। इनकी 'उनका जाना' जैसी कहानियाँ मृत्यु के बाद बची वस्तुओं के माध्यम से यह दर्शाती हैं कि किसी के जाने के बाद उसकी प्रिय वस्तुएँ कैसे अर्थहीन हो जाती हैं। यह केवल भावनात्मक ही नहीं, बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है- क्योंकि वह वस्तु अब किसी काम की नहीं रही, इसलिए उसका मूल्य घट जाता है। यह सांस्कृतिक और आर्थिक मूल्यबोध के बीच के द्वंद्व को उजागर करती है।

इस तरह ममता कालिया की कहानियाँ समकालीन हिंदी कहानी साहित्य में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं, विशेषतः इसलिए क्योंकि वे स्त्री और मध्यवर्गीय जीवन के बहुआयामी पक्षों को न केवल सामाजिक या भावनात्मक, बल्कि आर्थिक दृष्टिकोण से भी प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियों में आर्थिक यथार्थ कोई पृथक या स्पष्ट रूप से चिह्नित विषय नहीं होता, बल्कि वह पूरे कथानक में सूक्ष्म रूप से अन्तर्निहित रहता है और पाठक को यह महसूस होता है कि हर भाव, हर निर्णय और हर संबंध के पीछे कोई आर्थिक तंतु भी कार्यरत है। यही विशेषता ममता कालिया की कहानियों को केवल साहित्यिक नहीं, बल्कि सामाजिक-आर्थिक दस्तावेज़ भी बनाती है।

5.4 भाषा और शैली:

भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि लेखक की संवेदनशीलता, सोच और सामाजिक चेतना का प्रतिबिंब होती है। भाषा स्पष्ट, सटीक और आशयपूर्ण होनी चाहिए। दोहरे अर्थ, अनिश्चित शब्द या अव्यवस्थित वाक्य पाठक को भ्रमित कर सकते हैं। साहित्य की भाषा का चुनाव रचना के उद्देश्य के अनुसार होता है— उदाहरण के लिए, प्रेम-कहानी में भावुक भाषा, निबंध में तर्कपूर्ण, और व्यंग्य में चुटीली भाषा का प्रयोग। भाषा समय, स्थान और समाज के अनुसार बदलती है। इसलिए साहित्यिक भाषा में लोक-प्रयोग, मुहावरे, कहावतें और क्षेत्रीय बोलियाँ शामिल हो सकती हैं। अच्छी भाषा में प्राकृतिक प्रवाह और लय होती है। यह पाठक को बाँधे रखती है।

शैली लेखक की पहचान होती है— ठीक उसी तरह जैसे किसी व्यक्ति की बोलने की शैली उसे अलग करती है। हर लेखक की अपनी अलग लेखन-शैली होती है— जैसे प्रेमचंद की सरलता, अज्ञेय की गूढ़ता, या मंटो की कटाक्ष-भरी शैली। शैली को विषय के अनुसार ढलना चाहिए। गंभीर विषय में गंभीर शैली, हास्य में हल्की-फुल्की शैली। यही रचना की प्रामाणिकता बढ़ाता है। शैली में चित्रात्मकता, भावनात्मकता, और संवेदना होनी चाहिए— जिससे पाठक अनुभव में डूब जाए। जहाँ उचित हो वहाँ उपमा, रूपक, अनुप्रास, यमक जैसे अलंकार शैली को सौंदर्यपूर्ण और प्रभावी बनाते हैं।

5.4.1 आम बोलचाल की भाषा में आर्थिक यथार्थ का चित्रण

हिंदी साहित्य में ममता कालिया एक ऐसा नाम है जिन्होंने महिला विमर्श, मध्यवर्गीय जीवन और आर्थिक यथार्थ को बेहद सशक्त रूप में प्रस्तुत किया है। उनका लेखन न केवल कथ्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि भाषा और शैली की दृष्टि से भी विशिष्ट स्थान रखता है। ममता कालिया की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने आम बोलचाल की भाषा के माध्यम से गंभीर सामाजिक-आर्थिक मुद्दों को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। उन्होंने सिद्ध किया कि भाषा केवल सौंदर्य का उपकरण नहीं, बल्कि यथार्थ को उभारने का शक्तिशाली माध्यम भी हो सकती है।

ममता कालिया की कहानियों का मुख्य फलक मध्यमवर्गीय समाज की आर्थिक और सामाजिक विडंबनाएँ हैं। उनके पात्र कोई विशेष या असाधारण नहीं होते— वे हमारे आसपास रहने वाले लोग हैं। उनके संवाद, उनकी सोच, उनके क्रिया-कलाप सभी आम जीवन से लिए गए प्रतीत होते हैं। यह सब उनकी भाषा की सादगी, सहजता और व्यावहारिकता के कारण संभव हो पाता है। उनकी कहानियों में प्रयुक्त भाषा न तो अत्यधिक साहित्यिक है, न ही अत्यधिक ग्रामीण या बोली-आधारित। यह एक प्रकार की शहरी मध्यमवर्गीय हिंदी है, जिसमें समय-समय पर अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी स्वाभाविक रूप से होता है। यह भाषा न केवल पात्रों की सच्चाई को उजागर करती है, बल्कि पाठक को उनके साथ जोड़ने में भी सहायक होती है।

ममता कालिया के पात्र आमतौर पर नौकरीपेशा लोग होते हैं— शिक्षक, क्लर्क, पत्रकार, या गृहिणियाँ। ये लोग रोजमर्रा की आर्थिक समस्याओं से जूझते हैं— बच्चों की फीस, किराया, राशन, बिजली का बिल, और भविष्य की चिंता। इन पात्रों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे इन संघर्षों को सहते हुए भी हँसने, व्यंग्य करने और जीवन को जीने की जिद नहीं छोड़ते। उदाहरण के तौर पर उनकी प्रसिद्ध कहानी 'जी' को देखा जा सकता है। इसमें किराए के मकान में रहने वाले एक दंपती की कहानी है, जो अपने सपनों का घर बनाने की कोशिश में लगे हैं। कहानी में मकान मालिक, पड़ोसी, ब्रोकर और बिल्डर जैसे पात्रों के माध्यम से महानगरीय जीवन की आर्थिक जटिलताओं को अत्यंत प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया गया है। इस कहानी की भाषा इतनी सहज है कि पाठक स्वयं को उसमें स्थित महसूस करता है।

ममता कालिया की भाषा की एक विशेषता उनका व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण है। वे अपने पात्रों के संघर्षों को करुणा के बजाय व्यंग्य के माध्यम से प्रस्तुत करती हैं। यह व्यंग्य भाषा में ही नहीं, बल्कि कथानक और पात्रों की सोच में भी झलकता है। यह दृष्टिकोण उनकी कहानियों को केवल गंभीर नहीं रहने देता, बल्कि उन्हें पठनीय और आत्मीय भी बनाता है। कहानी 'बोलने वाली औरत' में जब नायिका अपने पति की बेरोजगारी पर व्यंग्य करती है— "तुम्हारा हौसला देख के लगता है घर का किराया भी तुम मुस्कान से चुका दोगे!" (कालिया, 148)। तो यह एक साथ हँसी भी लाता है और जीवन की सच्चाई भी सामने रखता है। ममता कालिया के यहाँ आर्थिक यथार्थ केवल आँकड़ों या आंकाक्षाओं की भाषा में नहीं आता, बल्कि अनुभवों, प्रतीकों और विवरणों के माध्यम से सामने आता है। उनका यथार्थ जीवित, संवेदनशील और बहुआयामी होता है। उनकी कहानियों में छोटा-सा बिजली का बिल, पुराना फ्रीज, उधार का राशन या बच्चों की फीस रसीद— ये सभी प्रतीक बन जाते हैं उस संघर्ष के, जिसे मध्यमवर्गीय परिवार रोज जीता है।

‘एक अदद औरत’ कहानी में नायिका की दिनचर्या और आर्थिक चिंताएँ इस प्रकार प्रस्तुत होती हैं कि पाठक उसकी विवशता को महसूस करता है। भाषा में कोई विशेष चमत्कार नहीं, लेकिन उसका सहज प्रवाह और यथार्थ वर्णन ही पाठक को कहानी में डुबो देता है। निष्कर्षतः ममता कालिया की कहानियाँ सिद्ध करती हैं कि साहित्य का उद्देश्य केवल सौंदर्य या मनोरंजन नहीं, बल्कि समाज के यथार्थ को अभिव्यक्त करना भी है।

उनकी आम बोलचाल की भाषा, व्यंग्यात्मक शैली और आर्थिक यथार्थ का संयोजन हिंदी कहानी-साहित्य को एक नई दिशा देता है। आज जब साहित्य में भाषिक बनावटीपन और कथ्य की कृत्रिमता बढ़ रही है, ममता कालिया का लेखन हमें यह सिखाता है कि सच्चाई और सादगी ही किसी रचना को कालजयी बना सकती है। उनके पात्र, उनकी भाषा, और उनका यथार्थ – सब मिलकर एक ऐसा साहित्य रचते हैं जो न केवल पठनीय है, बल्कि जीवन के करीब भी है।

5.4.2 प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से आर्थिक संघर्ष की अभिव्यक्ति

ममता कालिया का साहित्य मध्यवर्गीय संघर्ष, सामाजिक यथार्थ और व्यक्तिगत संवेदनाओं का एक अनूठा संगम प्रस्तुत करता है। उनकी कहानियाँ समाज में आर्थिक विषमताओं और समाज के दबावों का खुलासा करती हैं, खासकर महिलाओं के संघर्ष और परिवारों के भीतर टूटते रिश्तों को लेकर। उन्होंने प्रतीकों और बिंबों का गहरे तरीके से प्रयोग किया है, ताकि उन मानसिक और भावनात्मक संघर्षों को उजागर किया जा सके, जो आर्थिक तंगी, असुरक्षा और सामाजिक जकड़न से उत्पन्न होते हैं। उनके पात्र अक्सर अपनी आंतरिक इच्छाओं और सामाजिक दबावों के बीच संघर्ष करते हैं, और ममता कालिया इस संघर्ष को प्रतीकात्मक रूप में दर्शाती हैं।

प्रतीक एक साहित्यिक उपकरण है जिसका उपयोग किसी वस्तु, व्यक्ति, घटना या स्थान को किसी अन्य गहरे अर्थ के रूप में किया जाता है। ममता कालिया की कहानियों में प्रतीकों का प्रयोग अर्थव्यवस्था और मानव जीवन के जटिल पहलुओं को व्यक्त करने के लिए किया गया है। उनके प्रतीक केवल बाहरी दुनिया की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को ही नहीं, बल्कि पात्रों के आत्मसंघर्ष और मनोवैज्ञानिक स्थिति को भी उजागर करते हैं। ममता कालिया की कहानी 'खुशियों का लौटना' में घर का प्रतीक विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। घर सिर्फ एक शारीरिक संरचना नहीं, बल्कि यह सुरक्षा, आध्यात्मिक शांति, और आर्थिक संघर्ष से मुक्ति का प्रतीक बनकर उभरता है। पात्रों के लिए घर के दीवारों और उनके भीतर के सामानों में संघर्ष, आकांक्षाएं, और असुरक्षाएँ समाहित होती हैं, यथा- "घर की दीवारें अब भी हिल रही थीं, लेकिन भीतर कुछ और था, जो टूटकर नहीं गिरा था।" (कालिया,

91)। यह वाक्य घर की मजबूती, आत्मनिर्भरता और परिवार की इकाई को दर्शाता है, जो आर्थिक तंगी और मानसिक दबाव के बावजूद भी अपने अस्तित्व को बनाए रखने की कोशिश कर रहा है। दीवारों की हिलने की स्थिति बताती है कि परिवार के भीतर आर्थिक संकट तो था, लेकिन फिर भी यह आध्यात्मिक और मानसिक सुरक्षा के प्रतीक के रूप में खड़ा था। घर अब केवल एक भौतिक स्थान नहीं था, बल्कि वह एक संघर्ष का प्रतीक बन चुका था, जिसमें जीने की उम्मीद और असुरक्षा का मिश्रण था।

ममता कालिया की कहानी 'उत्तर अनुराग' में शहर एक प्रतीक के रूप में उपस्थित होता है, जो एक तरफ सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन की प्रतीक है, वहीं दूसरी ओर आर्थिक परिवर्तन और सामाजिक संरचनाओं के विघटन को दर्शाता है। इस शहर के अंदर भिन्न-भिन्न वर्गों के लोग आर्थिक प्रतिस्पर्धा और सामाजिक भेदभाव से जूझ रहे हैं। कहानी में एक पात्र कहता है- "शहर बदल गया है, अब यहाँ पहले जैसी हवा नहीं चलती।" (कालिया, 44)। यह वाक्य शहर की आर्थिक नीतियों और मध्यवर्गीय जीवन में आए बदलावों का प्रतीक है। यहाँ, शहर केवल भौतिक स्थान नहीं है, बल्कि वर्तमान सामाजिक और आर्थिक स्थिति का प्रतीक है, जिसमें बदलाव और उथल-पुथल लगातार चल रही है।

बिंबों का साहित्यिक प्रयोग दृश्यात्मक, ध्वन्यात्मक और मानसिक चित्र उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। ये बिंब केवल घटनाओं का वर्णन नहीं करते, बल्कि पात्रों के मानसिक द्वंद्व, आर्थिक कठिनाईयों, और समाज के प्रभाव को गहराई से दर्शाते हैं। ममता कालिया ने अपनी कहानियों में बिंबों के माध्यम से मनुष्यता और आर्थिक संघर्ष के रूप में गहरी व्याख्याएँ दी हैं। 'संस्कृति' कहानी में सूखा कुआँ एक शक्तिशाली बिंब के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो पात्र के आध्यात्मिक और मानसिक संकट को प्रकट करता है। यह बिंब केवल सूखा कुआँ ही नहीं है, बल्कि यह मानव आत्मा की नीरवता, संघर्ष और निराशा के संकेत के रूप में भी कार्य करता है, देखिए- "सूखा कुआँ अब किसी की प्यास नहीं बुझा सकता, क्योंकि उसे भरने के लिए कोई है ही नहीं।" (कालिया, 125)। यह बिंब पात्र की आत्मिक विफलता और सामाजिक स्थिति में आए अस्थिरता को दर्शाता है। कुआँ का सूखना आध्यात्मिक और आर्थिक संकट दोनों का प्रतीक है, जो व्यक्ति के जीवन में निरंतर संघर्षों को जनम देता है। इसी तरह 'फिर भी प्यार' कहानी में एक पत्थर का बिंब आर्थिक संघर्ष की कड़ी वास्तविकता को प्रतीकित करता है। यह पत्थर, पात्र के जीवन में

विपरीत परिस्थितियाँ, आर्थिक दबाव और सपनों के टूटने के प्रतीक के रूप में उभरता है। कहानी में एक पात्र कहता है- "मैंने हर पत्थर को तोड़ा, लेकिन रास्ता अब भी लंबा था।" यह बिंब कठिनाइयों और संघर्षों को व्यक्त करता है, जो कभी समाप्त नहीं होते, बल्कि एक निरंतर प्रतिक्रिया की तरह बढ़ते रहते हैं। पत्थर को तोड़ना अपने आप में एक संघर्ष की शुरुआत है, जो जीवन में हमेशा चलता रहता है। कुल मिलाकर ममता कालिया ने अपनी कहानियों में प्रतीकों और बिंबों का प्रयोग एक अत्यंत प्रभावशाली तरीके से किया है, जिससे वे आर्थिक संघर्ष और समाज की असमानताओं को न केवल दिखाती हैं, बल्कि उन्हें एक मनोवैज्ञानिक और सामाजिक अनुभव के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनके पात्र आर्थिक स्थिति और सामाजिक दबाव के बीच सामंजस्य बिठाने के लिए संघर्ष करते हैं, और इन संघर्षों को वे प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से अत्यंत प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करती हैं। ममता कालिया के लेखन में प्रतीक और बिंब केवल बाहरी घटनाओं का नहीं, बल्कि आंतरिक संघर्षों और समाज के यथार्थ का भी पर्दाफाश करते हैं। उनके पात्रों का संघर्ष, उनके सपने और उनके मनोविज्ञान को समझने के लिए हम इन प्रतीकों और बिंबों का गहराई से अध्ययन कर सकते हैं, जो उनके लेखन को जीवन्त और प्रभावशाली बनाते हैं।

5.4.3 संवादों के माध्यम से आर्थिक समस्याओं को उजागर करना

ममता कालिया का साहित्य भारतीय समाज की आर्थिक स्थिति और मध्यवर्गीय संघर्ष पर गहरी नजर डालता है। उनकी कहानियाँ केवल मानवीय भावनाओं और रिश्तों के बारे में नहीं हैं, बल्कि समाज में व्याप्त आर्थिक समस्याओं और वर्ग संघर्षों को भी बेहद प्रभावशाली तरीके से चित्रित करती हैं। ममता कालिया ने संवादों का अत्यंत प्रभावशाली उपयोग किया है ताकि आर्थिक संकट और सामाजिक असमानताओं की वास्तविकताओं को स्पष्ट रूप से उजागर किया जा सके। उनके संवाद न केवल घटनाओं को परिभाषित करते हैं, बल्कि पात्रों के मनोवैज्ञानिक और सामाजिक द्वंद्व को भी बारीकी से दर्शाते हैं।

ममता कालिया की कहानी 'सिकंदर' में संवादों के माध्यम से आर्थिक संकट और असुरक्षा को प्रभावी तरीके से दिखाया गया है। कहानी का एक प्रमुख कथन है- "अगर घर में पैसे नहीं हैं, तो वह खिला कैसे सकता है?" यह कथन आर्थिक संघर्ष और मध्यवर्गीय

परिवार के वित्तीय संकट को स्पष्ट करता है। परिवार की समस्याएँ केवल बाहर की दुनिया तक सीमित नहीं होतीं, बल्कि ये अंदरूनी रिश्तों और भावनाओं में भी झलकती हैं। इस संवाद में माँ और बेटे के रिश्ते को ध्यान में रखते हुए यह दिखाया गया है कि आर्थिक समस्याएँ रिश्तों में तनाव उत्पन्न करती हैं और उनके भीतर के समर्थन और सुरक्षा की भावना को चुनौती देती हैं। इसी तरह ममता कालिया की 'बाणगंगा' कहानी में मजदूरी करने वाले एक श्रमिक वर्ग के पात्र के संवादों से उसकी आर्थिक असमानता और सामाजिक स्थिति का बोध होता है। एक स्थान पर एक पात्र कहता है- "काम करने से पहले तुम क्या समझते हो, कि यह सड़क मेरे लिए क्या है? यह तो सिर्फ एक रास्ता है, लेकिन एक राह नहीं है।" (कालिया, 33)। यह कथन श्रमिक वर्ग के जीवन में व्याप्त आर्थिक तंगी और संघर्ष को व्यक्त करता है। यहाँ सड़क को एक संघर्षपूर्ण रास्ते के रूप में दिखाया गया है, जिसमें श्रमिक हर दिन अपनी आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के लिए संघर्ष करता है। यह संवाद न केवल संघर्ष की स्थिति को उजागर करता है, बल्कि श्रमिक की असहमति और सामाजिक दबाव को भी साफ तौर पर व्यक्त करता है।

ममता कालिया की कहानी 'वह मिली थी बस में' में एक पात्र अपने जीवन की दयनीय स्थिति पर टिप्पणी करते हुए कहता है- "हमारा तो यह हाल है कि पास के बर्तन धोने वाले को भी हमसे ज्यादा खुशी है, क्योंकि उसके पास कुछ तो है!" यह संवाद मध्यवर्गीय जीवन में छिपी आर्थिक तंगी और संतोष की कमी को प्रदर्शित करता है। पात्र यहाँ अपनी असफलता और समाज में अपनी स्थिति पर व्यंग्य करता है, जहाँ वह महसूस करता है कि गरीब से गरीब आदमी भी अपने जीवन को लेकर खुश हो सकता है, जबकि वह अपने सीमित संसाधनों में भी संतुष्ट नहीं हो पा रहा है। यह संवाद आर्थिक असंतोष और आध्यात्मिक खालीपन को स्पष्ट करता है, जो विशेष रूप से मध्यवर्गीय परिवारों में देखा जाता है। इसी तरह 'उसका जाना' कहानी में ममता कालिया ने परिवार के भीतर आर्थिक तंगी के कारण उत्पन्न होने वाले तनाव को दिखाया है। एक पात्र कहता है- "तुम क्या समझते हो, हर कोई दिन-रात काम करता है ताकि तुम आराम से बैठ सको?" (कालिया, 102)। यह संवाद परिवार के भीतर आर्थिक संघर्ष और रिश्तों में तनाव को स्पष्ट रूप से उजागर करता है। यहाँ पात्र अपने परिवार के अन्य सदस्य को उसकी सुविधाओं और आराम के लिए दोषी ठहराते हुए उसकी असंवेदनशीलता और अपने खुद के कठिन

परिश्रम को व्यक्त करता है। इस संवाद से यह भी दिखता है कि आर्थिक संकट रिश्तों में असहमति और मानसिक दबाव को बढ़ावा देता है।

ममता कालिया की प्रसिद्ध कहानी 'शिष्या' में संवादों के माध्यम से कामकाजी महिलाओं के जीवन के आर्थिक दबाव और आत्मसम्मान के मुद्दे को उठाया गया है। एक स्थान पर, सारिका अपनी स्थिति का वर्णन करते हुए कहती है- "मैंने क्या किया है, जो सबका ध्यान मुझ पर है? सिर्फ इतना कि मैं अपनी मेहनत से जी रही हूँ!" (कालिया, 76), यह संवाद महिलाओं के कार्यस्थल में आर्थिक स्वतंत्रता और आत्मसम्मान के संघर्ष को उजागर करता है। सारिका का यह बयान दर्शाता है कि कैसे महिला कामकाजी जीवन में आर्थिक स्वतंत्रता की खोज करती है, लेकिन वह समाज और परिवार द्वारा अक्सर अवहेलना और अधिकारों की कमी का शिकार हो जाती है। इस संवाद के माध्यम से आत्मसम्मान और आर्थिक स्वतंत्रता की आवश्यकताएँ एक दूसरे से जुड़ी होती हैं, और समाज में महिलाओं के अधिकार पर एक सवाल उठता है।

निष्कर्षतः ममता कालिया की कहानियों में संवादों का उपयोग केवल कथानक को आगे बढ़ाने के लिए नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को उजागर करने के लिए भी किया गया है। उनके संवाद कभी बोधपूर्ण तो कभी व्यंग्यात्मक होते हैं, जो पात्रों के आंतरिक संघर्षों और सामाजिक परिस्थितियों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करते हैं। आर्थिक असमानता, मध्यमवर्गीय संघर्ष, और श्रमिक वर्ग का दुःख ममता कालिया की कहानियों के प्रमुख विषय हैं, जिन्हें उनके पात्रों के संवादों के माध्यम से बहुत प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया गया है। इन संवादों के माध्यम से ममता कालिया ने यह सिद्ध किया है कि संवाद केवल पात्रों के व्यक्तिगत संबंधों को ही नहीं, बल्कि समाज की संरचना और आर्थिक स्थितियों को भी व्यक्त करने का एक सशक्त उपकरण हो सकता है। उनके संवादों में न केवल यथार्थवादी चित्रण मिलता है, बल्कि वे सामाजिक यथार्थ और आर्थिक मुद्दों की जटिलताओं को भी स्पष्ट करते हैं।

5.5 समाज और अर्थव्यवस्था के मध्य संबंध

समाज और अर्थव्यवस्था के बीच गहरा और जटिल संबंध होता है। यह संबंध दोनों के मध्य आपसी प्रभाव और निर्भरता को दर्शाता है। समाज, अपने सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक ढांचे के माध्यम से अर्थव्यवस्था को प्रभावित करता है, जबकि अर्थव्यवस्था समाज की संरचना, मूल्यों और जीवनशैली को प्रभावित करती है। समाज की सांस्कृतिक मान्यताएँ और परंपराएँ, जैसे काम करने के प्रति दृष्टिकोण, शिक्षा की महत्ता, और श्रम के विभिन्न रूपों के प्रति रवैया, अर्थव्यवस्था के विकास को प्रभावित करती हैं। उदाहरण के तौर पर, एक समाज जो उच्च शिक्षा को प्रोत्साहित करता है, वह तकनीकी नवाचारों और कौशल-आधारित उद्योगों की ओर अग्रसर होगा। समाज की संरचना, जैसे वर्ग, जाति, और लिंग का विभाजन, भी अर्थव्यवस्था पर प्रभाव डालता है। उच्च सामाजिक वर्ग के लोग अक्सर बेहतर रोजगार और व्यवसायों तक पहुंच रखते हैं, जबकि निम्न वर्ग के लोग श्रमिक वर्ग में अधिक होते हैं। समाज के नैतिक मानक, जैसे पारदर्शिता, ईमानदारी, और समानता, भी अर्थव्यवस्था के संचालन को प्रभावित करते हैं। जब एक समाज में भ्रष्टाचार या अन्य असामाजिक व्यवहार प्रचलित होते हैं, तो इसका प्रतिकूल असर अर्थव्यवस्था पर पड़ता है।

एक मजबूत और समृद्ध अर्थव्यवस्था लोगों को रोजगार प्रदान करती है, जिससे समाज की समृद्धि और जीवन स्तर में सुधार होता है। आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप लोग अपनी आवश्यकताएँ पूरी करने में सक्षम होते हैं, जिससे समाज में भरण-पोषण की स्थितियाँ बेहतर होती हैं। अर्थव्यवस्था की असमान विकास दर से समाज में आर्थिक और सामाजिक असमानता बढ़ सकती है। जब कुछ वर्गों को आर्थिक अवसरों की कमी होती है, तो यह उनके जीवन स्तर को प्रभावित करता है और समाज में संघर्ष और विभाजन पैदा कर सकता है। आर्थिक विकास और तकनीकी नवाचार समाज के जीवन में बदलाव ला सकते हैं। उदाहरण के रूप में, औद्योगिकीकरण के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवास बढ़ सकता है, जिससे शहरीकरण और समाज की संरचना बदल सकती है।

अर्थव्यवस्था और समाज दोनों के बीच यह संबंध निरंतर विकसित और बदलता रहता है। आर्थिक बदलाव समाज में सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक बदलावों का

कारण बन सकते हैं। इसी प्रकार, समाज में होने वाले बदलाव अर्थव्यवस्था पर प्रभाव डाल सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, जब समाज में महिलाओं की शिक्षा और कार्यक्षेत्र में भागीदारी बढ़ती है, तो यह अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में नई ऊर्जा और नवाचार का कारण बनता है। समाज और अर्थव्यवस्था के बीच संबंध का एक उदाहरण समाजवादी और पूंजीवादी आर्थिक मॉडल है। समाजवादी समाज में सरकार की प्रमुख भूमिका होती है, जबकि पूंजीवादी समाज में बाजार और निजी क्षेत्र का दबदबा होता है। इस प्रकार, समाज और अर्थव्यवस्था के बीच यह संबंध दोनों के मध्य निरंतर और गहरे प्रभाव को दर्शाता है, जो उनके विकास और संरचना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

5.5.1 आर्थिक असमानता से उत्पन्न सामाजिक असंतोष

ममता कालिया भारतीय हिंदी साहित्य की एक प्रमुख लेखिका हैं, जिन्होंने अपने लेखन में समाज के विविध पहलुओं, विशेष रूप से आर्थिक असमानता और उसके प्रभावों पर गहरे विचार किए हैं। उनकी कहानियाँ न केवल भारतीय समाज की सामाजिक संरचना को उजागर करती हैं, बल्कि आर्थिक असमानता के कारण उत्पन्न होने वाले असंतोष, संघर्ष, और दुख को भी व्यक्त करती हैं। ममता कालिया की कहानियाँ समाज की वास्तविकताओं को बहुत ही सूक्ष्मता और संवेदनशीलता से चित्रित करती हैं, जिससे यह साफ़ तौर पर समझ आता है कि आर्थिक विषमताएँ कैसे समाज में असंतोष और विरोध की भावना को जन्म देती हैं।

ममता कालिया की कहानियों में गरीब और अमीर के बीच का अंतर बहुत स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। यह अंतर केवल भौतिक संपत्ति तक सीमित नहीं होता, बल्कि यह सामाजिक, मानसिक और भावनात्मक स्तर पर भी विद्यमान होता है। उनकी कहानियों में हम देख सकते हैं कि आर्थिक असमानता के कारण न केवल व्यक्तिगत स्तर पर, बल्कि सामाजिक स्तर पर भी गहरी खाइयाँ उत्पन्न होती हैं। यह खाइयाँ न केवल भौतिक, बल्कि मानसिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी समाज में विभाजन और संघर्ष पैदा करती हैं। ममता कालिया की कहानियाँ अक्सर ऐसे पात्रों से भरी होती हैं जो अपने आर्थिक स्थिति के कारण सामाजिक असंतोष का सामना कर रहे होते हैं। वे पात्र जो गरीब हैं, उन्हें समाज

में उपेक्षा और असमानता का सामना करना पड़ता है, जबकि अमीर वर्ग का व्यक्ति अपनी स्थिति का लाभ उठाकर समाज में अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखता है। यह आर्थिक असमानता पात्रों के मानसिक तनाव और असंतोष को और बढ़ा देती है। ममता कालिया की कहानियाँ यह भी दिखाती हैं कि आर्थिक असमानता केवल भौतिक वस्तुओं तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह मानव संबंधों पर भी असर डालती है। आर्थिक संकट या आर्थिक असमानता के कारण परिवारों के बीच तनाव बढ़ जाता है, रिश्तों में घुटन और कड़वाहट आ जाती है, और अंततः समाज में व्याप्त असंतोष एक सामाजिक बीमारी की तरह फैल जाता है। उनके पात्र अक्सर ऐसे परिवारों से होते हैं जहाँ आर्थिक संकटों ने मानवता को, प्यार और स्नेह को भी दबा दिया होता है।

ममता कालिया ने अपनी कहानियों में महिलाओं के जीवन को भी बहुत करीब से देखा है। उनके पात्रों में महिलाएँ अक्सर उस सामाजिक और आर्थिक असमानता का सामना करती हैं जो उन्हें न केवल घर में, बल्कि समाज में भी कमतर स्थान देती है। आर्थिक संकट या असमानता के कारण महिलाओं की स्थिति और भी अधिक कठिन हो जाती है। ममता कालिया की कहानियों में महिलाएँ कभी अपनी स्थिति से संघर्ष करती हुई दिखाई देती हैं, तो कभी अपने आत्मसम्मान और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करती हैं। इस तरह से उनकी कहानियाँ यह भी दर्शाती हैं कि आर्थिक असमानता का महिला जीवन पर कितना गहरा असर डालता है। ममता कालिया की 'खाली होता हुआ घर' और 'शाल' जैसी कहानियाँ इस सामाजिक असंतोष को बड़े ही प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती हैं। इन कहानियों में पात्रों के भीतर के मानसिक संघर्ष और समाज द्वारा स्थापित असमानताओं का खुलासा होता है। जहाँ एक ओर आर्थिक असमानता की वजह से पात्रों को मानसिक और सामाजिक तनाव का सामना करना पड़ता है, वहीं दूसरी ओर यह असंतोष उनके जीवन की दिशा और उनके निर्णयों को प्रभावित करता है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि ममता कालिया की कहानियों में आर्थिक असमानता से उत्पन्न सामाजिक असंतोष एक महत्वपूर्ण विषय है, जो समाज की वास्तविकताओं को बिना किसी आडंबर के सामने लाता है। उनकी लेखनी में यह विषय न केवल गरीब और अमीर के बीच की खाई को उजागर करती है, बल्कि यह भी दर्शाती है कि आर्थिक असमानता समाज के भीतर संघर्ष, असंतोष और विभाजन को जन्म देती है।

ममता कालिया की कहानियाँ समाज में इस असंतोष के कारण उत्पन्न होने वाले भावनात्मक, मानसिक और सामाजिक दबाव को बखूबी चित्रित करती हैं, जिससे पाठक समाज की जटिलताओं को समझ पाता है।

5.5.2 मध्यम वर्ग, श्रमिक वर्ग और महिलाओं की आर्थिक स्थिति

ममता कालिया की कहानियों में मध्यम वर्ग, श्रमिक वर्ग और महिलाओं की आर्थिक स्थिति पर गहरा ध्यान दिया गया है। उनकी लेखनी में ये तीनों वर्ग अपनी आर्थिक असुरक्षा, सामाजिक दबाव, और अस्तित्व की लड़ाई के प्रतीक के रूप में दिखाई देते हैं। ममता कालिया ने इन वर्गों की जीवन परिस्थितियों, संघर्षों और उनके आर्थिक स्थितियों के कारण उत्पन्न होने वाले मानसिक और सामाजिक तनावों को बहुत ही प्रभावी रूप से चित्रित किया है। ममता कालिया की कहानियों में मध्यम वर्ग के पात्र अपनी सीमित आय और जीवन की छोटी-छोटी इच्छाओं के बीच संघर्ष करते दिखाई देते हैं। वे आर्थिक रूप से स्थिर होते हुए भी अक्सर अनिश्चितता और आत्मसंतुष्टि की कमी से जूझते हैं। उनका जीवन बड़े खर्चों और महंगाई से प्रभावित रहता है, और वे अपनी आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने के लिए हमेशा संघर्षरत रहते हैं।

ममता कालिया के पात्र मध्यम वर्ग से होते हुए भी सामाजिक प्रतिष्ठा, एक अच्छा जीवन स्तर, और बच्चों की बेहतर शिक्षा की चाहत रखते हैं। वे भले ही आर्थिक रूप से संकोच करने वाली स्थिति में हों, लेकिन अपने सामाजिक दायित्वों और परिवार की अपेक्षाओं को निभाने के लिए मेहनत करते रहते हैं। इसके बावजूद उनकी जीवन शैली में तनाव और असंतोष होता है, क्योंकि वे खुद को अपनी आर्थिक स्थिति से ऊँचा उठाने का प्रयास करते हैं, लेकिन समाज की अपेक्षाओं और समस्याओं के चलते वे संतुष्ट नहीं हो पाते। 'सवारी और सवारी' और 'उनका जाना' जैसी कहानियाँ में हम देख सकते हैं कि मध्यम वर्ग के पात्र अपनी नौकरी, घर और पारिवारिक जिम्मेदारियों के बीच संतुलन बनाने की कोशिश में लगे रहते हैं, लेकिन आर्थिक असुरक्षा उनके जीवन में असंतोष और मानसिक दबाव उत्पन्न करती है।

ममता कालिया ने श्रमिक वर्ग की वास्तविकताओं को भी बहुत सटीक तरीके से अपने लेखन में उकेरा है। उनके पात्र श्रमिक वर्ग से होते हुए अपने जीवन के बुनियादी अधिकारों के लिए संघर्ष करते हैं। वे अपनी मेहनत से जीवन यापन करते हैं, लेकिन उनके पास हमेशा संघर्ष और असुरक्षा होती है। श्रमिक वर्ग के पात्रों को न केवल कम वेतन, असुरक्षित कार्य स्थल, और जीवन की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, बल्कि उन्हें सामाजिक और राजनीतिक असमानताओं का भी सामना करना पड़ता है। ममता कालिया की कहानियों में श्रमिक वर्ग के पात्र अक्सर अपनी मेहनत के बावजूद समाज में अपने अधिकारों और पहचान के लिए संघर्ष करते रहते हैं। वे आर्थिक रूप से दबे हुए होते हैं और उनकी समस्याएँ अधिक व्यक्तिगत होती हैं, जिनमें पारिवारिक संघर्ष, शिक्षा की कमी और स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव प्रमुख होते हैं। 'प्यार के बाद' जैसी कहानियों में श्रमिक वर्ग के पात्रों की आर्थिक स्थिति, उनके जीवन में आने वाली कठिनाइयाँ, और उनके बीच की सामाजिक असमानताएँ स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। यह वर्ग अपनी पूरी ताकत लगाकर अपने परिवार के लिए जीता है, लेकिन फिर भी उसे जीवन में एक स्थिरता और सुख की कमी महसूस होती है।

ममता कालिया की कहानियाँ महिलाओं की आर्थिक स्थिति और उनके जीवन में आने वाली समस्याओं पर भी बहुत संवेदनशील तरीके से ध्यान केंद्रित करती हैं। विशेष रूप से महिलाएँ आर्थिक रूप से अपनी स्थिति के कारण शोषण और असमानता का शिकार होती हैं। वे अक्सर घर और बाहर दोनों जगहों पर संघर्ष करती हैं, क्योंकि उनकी स्थिति को केवल समाज ही नहीं, बल्कि परिवार भी कमतर समझता है। महिलाओं का आत्मनिर्भरता का संघर्ष: ममता कालिया ने अपनी कहानियों में महिलाओं के आत्मनिर्भर बनने की चाहत को और उसके लिए होने वाले संघर्ष को प्रमुखता से दिखाया है। महिलाएँ न केवल अपने घर के कामों और बच्चों की देखभाल में व्यस्त रहती हैं, बल्कि वे आर्थिक रूप से भी स्वतंत्रता की तलाश करती हैं। हालांकि, उनके रास्ते में सामाजिक, पारिवारिक और आर्थिक कठिनाइयाँ आती हैं। वे अक्सर अपनी आर्थिक स्वतंत्रता के लिए परिवार और समाज से विरोध का सामना करती हैं। 'रिश्तों की बुनियाद' और 'नयी दुनिया' जैसी कहानियाँ में महिलाएँ अपने पति या परिवार के आर्थिक नियंत्रण से बाहर निकलने का प्रयास करती हैं, लेकिन उन्हें कई बार अपनी इच्छाओं और समाज की धारणाओं के साथ समझौता करना

पड़ता है। इस संघर्ष के कारण उनका मानसिक तनाव बढ़ता है और वे एक समान आर्थिक स्थिति पाने की कोशिश करती हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियाँ समाज के तीन महत्वपूर्ण वर्गों—मध्यम वर्ग, श्रमिक वर्ग और महिलाओं—की आर्थिक स्थिति और सामाजिक असमानताओं का गहरा चित्रण करती हैं। इन वर्गों के पात्र अपनी आर्थिक असुरक्षा, संघर्ष, और समाज में अपने स्थान को बनाए रखने के लिए लगातार कोशिश करते हैं। ममता कालिया ने अपनी कहानियों में यह स्पष्ट किया है कि समाज में आर्थिक विषमताएँ केवल भौतिक असमानता ही नहीं, बल्कि मानसिक और सामाजिक असंतोष की जड़ भी बन सकती हैं। उनके पात्र अपनी परिस्थितियों से जूझते हुए आत्मनिर्भरता और सम्मान के लिए संघर्ष करते हैं, जो उनके जीवन में न केवल व्यक्तिगत बल्कि सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता की ओर संकेत करता है।

5.5.3 उपभोक्तावाद और बाज़ार की मानसिकता का प्रभाव

ममता कालिया की कहानियों में उपभोक्तावाद और बाज़ार की मानसिकता का प्रभाव एक अत्यंत महत्वपूर्ण सामाजिक और वैचारिक विमर्श के रूप में उभरता है। उन्होंने अपनी कहानियों में यह दिखाया है कि कैसे बदलती आर्थिक नीतियाँ, बाज़ारवाद की बढ़ती पकड़, और उपभोक्तावादी संस्कृति ने भारतीय मध्यवर्गीय जीवन, विशेषकर महिलाओं, युवाओं और पारिवारिक संरचना को प्रभावित किया है। उनकी रचनाएँ बाज़ार की चमक-दमक के पीछे छिपी मानसिक असुरक्षा, संबंधों का खोखलापन और आत्ममूल्य की हानि को बेबाकी से उजागर करती हैं।

ममता कालिया की कहानियाँ इस बात को रेखांकित करती हैं कि किस तरह मध्यमवर्गीय व्यक्ति बाज़ार की चकाचौंध और उपभोक्तावादी लालसाओं के बीच अपनी पहचान, संतोष और स्थायित्व को खो बैठता है। उनके पात्र ब्रांडेड वस्तुओं, आधुनिक जीवनशैली, मोबाइल, फ्रिज, टीवी, और ईएमआई वाली गाड़ियों के पीछे भागते हैं, लेकिन भीतर से खालीपन, तनाव और आत्मसंदेह से ग्रस्त रहते हैं। वे सामाजिक प्रतिष्ठा को उपभोग की क्षमता से जोड़ने लगते हैं, जिससे 'होने' की जगह 'दिखने' की प्रवृत्ति हावी हो

जाती है। उदाहरणार्थ उनकी कहानी 'इक्कीसवीं सदी' में पति-पत्नी बाजारवाद से प्रभावित होकर अपने जीवन को अधिक आकर्षक बनाने की होड़ में पड़ जाते हैं, लेकिन धीरे-धीरे यह होड़ उनके रिश्तों की आत्मीयता को नष्ट करने लगती है। यह कहानी एक मध्यमवर्गीय दंपती की है, जो एक नियमित और अपेक्षाकृत संतोषजनक जीवन जी रहे हैं। लेकिन समय के साथ बाज़ार की चमक-दमक, दोस्तों की नई गाड़ियाँ, बच्चों की महंगी चीज़ों की माँग, और सोशल मीडिया पर दिखने वाली झूठी भव्यता— इन सबके चलते उनके भीतर यह भाव पैदा होता है कि “हमें कुछ करना चाहिए।” यही वाक्य कहानी का केंद्रीय तनाव बन जाता है। पहले जहाँ 'सुख' का अर्थ था— सादगी, आत्मीयता और आपसी समझ। अब वह ब्रांडेड वस्तुएँ, बड़े घर, घूमने की जगहें, और दिखावटी ज़िंदगी बन गया है। कहानी के नायक-नायिका सोचते हैं— “हमारे पास कार नहीं है, हम हर छुट्टी घर में ही क्यों रहते हैं, हमें भी मॉल जाना चाहिए, घूमना चाहिए... हमें कुछ करना चाहिए।” यह 'कुछ' असल में बाज़ार द्वारा आरोपित महत्वाकांक्षा है, जिसकी कोई वास्तविक आवश्यकता नहीं थी।

पत्नी जो कभी शांत और सहज जीवन से संतुष्ट थी, अब असंतुष्ट रहने लगी है। उसे लगने लगता है कि उसके पति ने उसकी इच्छाओं की पूर्ति नहीं की— क्योंकि पति बाज़ार की दौड़ में शामिल नहीं था, देखिए— “जब शालू के पति ने उसे एक स्मार्टफोन गिफ्ट किया, तो मुझे बहुत अजीब लगा...” यहाँ भावनाओं की जगह तुलना और भौतिक वस्तु ने ले ली है। पति-पत्नी दोनों ही खुद को नकारा समझने लगते हैं। उनकी बातचीत में अब योजना नहीं, प्रतिस्पर्धा है। वे चाहते हैं कि दूसरे लोग उनकी 'प्रगति' को नोटिस करें। यह मानसिकता रिश्तों में संवाद के स्थान पर चुप्पी और अपेक्षा को जन्म देती है। बाज़ार की मानसिकता से प्रभावित यह दंपती अपनी सीमाओं को भूलकर लोन, ईएमआई, क्रेडिट कार्ड की दौड़ में शामिल हो जाते हैं। परिणामस्वरूप तनाव, झगड़े, आत्मग्लानि और रिश्तों की टूटन सामने आती है। कहानी के अंत में यह वाक्य बहुत मार्मिक रूप से सामने आता है— “हमने बहुत कुछ कर लिया... पर शायद कुछ होना ही भूल गए।”

ममता कालिया ने इस कहानी में बाज़ारवाद की निंदा करने के लिए कोई नारा नहीं लगाया, बल्कि छोटे-छोटे संवादों, इच्छाओं और प्रतिक्रियाओं के माध्यम से यह दिखाया कि किस तरह बाज़ार ने आम जीवन को असंतुलित कर दिया है। स्त्री न तो केवल बाज़ार की शिकार है और न पूरी तरह इसका विरोध करती है— वह स्वयं भी कहीं न कहीं इसका

हिस्सा बन जाती है, जो असल विडंबना है। इस तरह 'इक्कीसवीं सदी' कहानी एक मूल्यवान सामाजिक दर्पण है, जो यह दिखाती है कि बाज़ार ने हमारी सोच, हमारे रिश्ते और हमारी संतुष्टि को कैसे प्रभावित किया है। ममता कालिया उपभोक्तावाद को केवल आर्थिक परिप्रेक्ष्य में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और भावनात्मक विनाश के रूप में प्रस्तुत करती हैं।

ममता कालिया की कहानियों में स्त्री पात्र उपभोक्तावाद के दोहरे प्रभाव को झेलती हैं। एक ओर वे सजग उपभोक्ता के रूप में बाज़ार का हिस्सा बनती हैं, तो दूसरी ओर स्वयं को एक वस्तु के रूप में बाज़ार के दृष्टिकोण से देखे जाने की पीड़ा भी महसूस करती हैं। स्त्रियों के सौंदर्य, पहनावे, और गृह-सजावट में दक्षता को बाज़ार द्वारा 'विक्रीत' मूल्य बनाया जाता है। 'पर्याय नहीं' कहानी में एक स्त्री के लिए जन्मदिन बाज़ार के प्रचार-प्रसार, उपहारों और भोज्य वस्तुओं की सूची बनकर रह जाता है— भावनाओं की जगह व्यवसायिक औपचारिकता ले लेती है। बाज़ार ने लोगों की 'ज़रूरतों' को 'लालच' में बदला है। इस प्रक्रिया में लोग अपनी मानसिक शांति और संबंधों की गहराई को खोते जा रहे हैं।

ममता कालिया अपने पात्रों के भीतर के अवसाद, बेचैनी, असंतोष और खुद को दूसरों से तुलना करने की प्रवृत्ति को उजागर करती हैं। समाज में मूल्य और चरित्र की जगह ब्रांड, पैकेजिंग और शो ऑफ ने ले ली है, जिससे पारिवारिक और सामाजिक जीवन में दिखावे की संस्कृति पनप गई है। ममता कालिया की कहानियों में यह चिंता प्रमुख है कि रिश्ते भी अब बाज़ार की तरह लेन-देन पर आधारित हो गए हैं। पति-पत्नी, माँ-बेटा, प्रेमी-प्रेमिका के संबंधों में आत्मीयता घट रही है और "तुमने मेरे लिए क्या किया?" वाला दृष्टिकोण बढ़ता जा रहा है। इस तरह ममता कालिया की कहानियाँ एक महत्वपूर्ण सामाजिक आलोचना प्रस्तुत करती हैं, जहाँ उपभोक्तावाद और बाज़ार की मानसिकता ने आम व्यक्ति के जीवन को, खासकर मध्यम वर्ग और स्त्रियों को, आंतरिक रूप से खोखला बना दिया है। उनकी दृष्टि केवल आर्थिक यथार्थ तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वे इस आर्थिक प्रवृत्ति के मनोवैज्ञानिक, नैतिक और सामाजिक प्रभावों की गहराई में जाती हैं। उनकी लेखनी हमें यह सोचने पर मजबूर करती है कि क्या हम बाज़ार के मालिक हैं या उसके गुलाम?

इस आधार पर हम कह सकते हैं कि ममता कालिया की कहानियों में समाज और अर्थव्यवस्था के बीच का संबंध एक महत्वपूर्ण विषय है, जो उनके पात्रों के जीवन में गहरे

प्रभाव डालता है। उनके लेखन में आर्थिक संघर्ष, सामाजिक असमानताएँ, और वर्गीय भेदभाव प्रमुख रूप से उभरते हैं। ममता कालिया ने अपनी कहानियों के माध्यम से यह सिद्ध किया है कि समाज और अर्थव्यवस्था का परस्पर संबंध किस प्रकार व्यक्तिगत जीवन पर गहरा असर डालता है। उनके पात्रों का संघर्ष केवल आर्थिक या सामाजिक नहीं होता, बल्कि ये दोनों पहलू एक-दूसरे से जुड़कर जीवन के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित करते हैं। उनके लेखन में यह दिखाया गया है कि समाज की आर्थिक संरचना और सामाजिक दबाव के कारण व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आत्मसम्मान की प्राप्ति में मुश्किलें आती हैं, और यह संघर्ष समाज के हर स्तर पर महसूस किया जाता है।

संदर्भ सूची

- कालिया, ममता. एक अदद औरत. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली (2004), पृ. सं. 10, 18, 143
- कालिया, ममता. उसका यौवन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली (2001), पृ. सं. 19, 98, 102
- कालिया, ममता काके दी हट्टी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली (2010), पृ. सं. 50, 97
- कालिया, ममता. खुशकिस्मत, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (2010), पृ. सं. 103
- कालिया, ममता, छुटकारा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (2008), पृ. सं. 29, 72
- कालिया, ममता. जांच अभी जारी है. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली (2004), पृ. सं. 47, 65, 88
- कालिया, ममता. निर्मोही. वाणी प्रकाशन, दिल्ली (2020), पृ. सं. 91, 101, 117
- कालिया, ममता. थियेटर रोड के काँवे, पेंगुइन बुक्स, दिल्ली (2006), पृ. सं. 21, 145, 148
- कालिया, ममता, थोड़ा-सा प्रगतिशील लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (2010), पृ. सं. 19, 33, 36
- कालिया, ममता. पच्चीस साल की लड़की. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली (2011), पृ. सं. 38, 46, 57
- कालिया, ममता. प्रतिदिन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली (2000), पृ. सं. 19, 39, 149
- कालिया, ममता. बोलने वाली औरत. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली (2001), पृ. सं. 66, 71, 108
- कालिया, ममता. मुखौटा. वाणी प्रकाशन, दिल्ली (2018), पृ. सं. 44, 65, 70
- कालिया, ममता. सीट नंबर छः राजकमल प्रकाशन, दिल्ली (2001), पृ. सं. 11, 23, 44
- सागी, पीटर स्त्री एवं सामाजिक प्रसंग: ममता का कथा-साहित्य. वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2018, पृ. सं. 42, 111

षष्ठ अध्याय

ममता कालिया के कहानी-साहित्य में भाषा-शैली

भाषा वह माध्यम है जिसके द्वारा हम अपने विचार, भावनाएँ और अनुभूतियाँ दूसरों तक पहुँचाते हैं। यह बोली, लिखावट, संकेत आदि के रूप में हो सकती है। साहित्य में भाषा का प्रयोग विशेष उद्देश्य से किया जाता है— जैसे प्रभाव उत्पन्न करना, संवेदना जगाना, या यथार्थ प्रस्तुत करना। शैली लेखन या अभिव्यक्ति का वह ढंग है, जो लेखक की विशिष्टता को दर्शाता है। यह उस 'कैसे लिखा गया है' से जुड़ी होती है। शैली लेखक के चयनित शब्दों, वाक्य-विन्यास, अलंकारों, और भावों से निर्मित होती है। भाषा-शैली पाठ में संप्रेषण की प्रभावशीलता बढ़ाने के साथ पाठक के साथ भावनात्मक या बौद्धिक संबंध स्थापित करती है, और लेखक की विशिष्ट पहचान बनती है। ममता कालिया के कहानी-साहित्य की भाषा-शैली उनकी रचनात्मक दृष्टि और यथार्थवादी दृष्टिकोण की सशक्त परिचायक है। वे सहज, प्रवाहपूर्ण और संवादात्मक भाषा का प्रयोग करती हैं, जो पाठक को सीधे जीवन से जोड़ती है। उनकी शैली में विडंबना, व्यंग्य और हास्य का सूक्ष्म संयोजन मिलता है, जिससे समाज की सच्चाइयाँ अधिक प्रभावी ढंग से उजागर होती हैं। वे आम बोलचाल की हिंदी में लेखन करती हैं, जिसमें अंग्रेज़ी शब्दों का स्वाभाविक समावेश भी देखने को मिलता है— यह उनकी शहरी, मध्यवर्गीय महिला पात्रों के यथार्थ को प्रामाणिकता प्रदान करता है। उनकी भाषा में न तो बनावटीपन है, न ही शाब्दिक बोझिलता; बल्कि उसमें स्त्री-अस्मिता, पारिवारिक जटिलताएँ और सामाजिक विडंबनाएँ सहज रूप से व्यक्त होती हैं। ममता कालिया की भाषा-शैली नारी अनुभवों की विश्वसनीय व्याख्या करती है और समकालीन हिंदी कहानी को एक प्रामाणिक, सशक्त और संवेदनशील स्वर प्रदान करती है।

6.1 भाषा (सहज और प्रवाहपूर्ण)

‘भाषा’ एक ऐसी संप्रेषणीय प्रणाली है, जिसका उपयोग हम अपने विचारों, भावनाओं, और सूचनाओं को व्यक्त करने के लिए करते हैं। यह मानव समाज का एक महत्वपूर्ण और मूलभूत हिस्सा है, जो मनुष्य को आपस में संवाद करने और समझने में

सक्षम बनाता है। भाषा के माध्यम से हम अपने अनुभवों, इच्छाओं, और समस्याओं को दूसरों तक पहुँचाते हैं और एक दूसरे के साथ संबंध स्थापित करते हैं। भाषा के कई रूप होते हैं- मौखिक (बोलचाल) और लिखित (लिखना-पढ़ना)। इसके अलावा, भाषा के विभिन्न प्रकार होते हैं, जैसे कि लिंग, काल, वचन, वाच्य, और वाक्य संरचना। उदाहरणार्थ- हिंदी, अंग्रेजी, फ्रांसीसी, और स्पेनिश जैसी भाषाएँ दुनिया भर में बोली जाती हैं।

मनुष्य के हृदय के भावों एवं विचारों को व्यक्त करने का भाषा एक सशक्त माध्यम है। डॉ. नामवर सिंह के अनुसार, "हल्के-हल्के शब्द और छोटे-छोटे वाक्य एक पर एक जमे हुए सहज प्रवाह में बहते चलते हैं, फिर भी सूक्ष्म भाव अथवा विचार का कोई रेशा छुटने नहीं पाता। तमाम अलंकरण आवरण का कूड़ा-करकट छोड़ती भाषा इतनी स्वच्छ और निर्मल हो उठी है कि विषयवस्तु और पाठक के बीच में भाषा का व्यवधान ही नहीं रह जाता। कहानी का कथ्य पूरी ताकत के साथ मन पर सीधा असर डालता है।" (सिंह, 49)

भाषा संचार का सबसे प्रभावी तरीका है। हम अपनी बातों को दूसरों तक पहुँचाने, विचारों का आदान-प्रदान करने और समाज में आपसी समझ बनाने के लिए भाषा का उपयोग करते हैं। प्रत्येक भाषा अपनी संस्कृति और परंपराओं की पहचान होती है। भाषा के माध्यम से हम अपनी संस्कृति, इतिहास और मान्यताओं को संप्रेषित करते हैं। भाषा का चयन किसी व्यक्ति के सोचने के तरीके, उसके दृष्टिकोण, और उसके सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश को भी दर्शाता है। समय के साथ भाषा बदलती और विकसित होती है। नए शब्द, वाक्यांश, और बोलचाल की शैलियाँ समाज में परिवर्तनों के साथ उत्पन्न होती रहती हैं। भाषा का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यह समाज की सामूहिक पहचान का हिस्सा बनती है। एक समाज की भाषा उसकी विचारधारा, परंपराओं, और मान्यताओं को व्यक्त करती है। एक भाषा समाज के रिश्तों, संघर्षों और सामूहिक एकता को भी आकार देती है। यह केवल संचार का साधन नहीं, बल्कि सोचने, समझने और अस्तित्व में रहने का भी एक तरीका है।

सहज और प्रवाहपूर्ण भाषा का अर्थ है एक ऐसी भाषा, जिसमें शब्दों का चयन सरल, स्वाभाविक और प्रभावी तरीके से किया गया हो। यह भाषा हमें किसी भी

विचार, अनुभव या भावना को बिना किसी जटिलता के समझने में मदद करती है। जब हम सहज भाषा का प्रयोग करते हैं, तो वह पाठक या श्रोता के लिए एक स्पष्ट और निराकार अनुभव पैदा करती है, जिससे वे संवाद में पूरी तरह से सम्मिलित हो पाते हैं। यह भाषा न केवल सरल होती है, बल्कि इसमें एक अद्भुत प्रवाह होता है। विचारों और भावनाओं का आदान-प्रदान इस तरह से किया जाता है कि वे सहज रूप से एक दूसरे से जुड़ते जाते हैं। जैसे किसी नदी का पानी अपने रास्ते में आने वाली हर रुकावट को बिना किसी कठिनाई के पार कर लेता है, वैसे ही सहज भाषा भी अपने पाठक के मन में बिना किसी रुकावट के प्रवाहित होती रहती है। उदाहरण के लिए, जब हम कोई कहानी या अनुभव साझा करते हैं तो सहज भाषा का प्रयोग हमें बहुत अधिक शब्दों या जटिल वाक्यों के बिना अपनी बात स्पष्ट रूप से कहने में मदद करता है। यह भाषा हमारी भावनाओं और विचारों को न केवल सटीक रूप से व्यक्त करती है, बल्कि यह पाठक के दिल को भी छू जाती है।

ममता कालिया की रचनाओं की सबसे बड़ी विशेषता उनकी भाषा की सहजता है। वे कोई विशेष साहित्यिक या जटिल शब्दावली का प्रयोग नहीं करतीं, जिससे उनकी कहानियाँ आम पाठक के लिए भी समझने योग्य बन जाती हैं। उनका उद्देश्य कभी भी भाषा को दिखावा या कलात्मकता के रूप में प्रस्तुत करना नहीं होता, बल्कि वे इसे एक साधन के रूप में उपयोग करती हैं, जो सीधे पाठक के दिल तक पहुँच सके। उदाहरण के तौर पर, उनके पात्रों के संवाद बेहद स्वाभाविक और जमीनी होते हैं, जिनसे यह प्रतीत होता है कि वे वास्तविक जीवन के लोग हैं। वे समाज के विभिन्न वर्गों और विचारधाराओं का चित्रण करने में भी सफल होती हैं, और इसके लिए वे उन वर्गों की भाषा को बड़ी आसानी से अपनाती हैं।

6.1.1 बोलचाल के शब्दों का प्रयोग

ममता कालिया की कहानियों की भाषा उनकी सबसे बड़ी विशेषता है। उनकी भाषा सहज, प्रवाहपूर्ण और संप्रेषणीय है, जो पाठक को कथा से सहज रूप से जोड़ती है। वे बोझिल या आडंबरपूर्ण भाषा के स्थान पर आम जनजीवन में प्रचलित बोलचाल की हिंदी का प्रयोग करती हैं, जिससे उनकी रचनाएँ स्वाभाविक और सजीव प्रतीत होती हैं। उनकी

कहानियों की भाषा में संवादों की स्वाभाविकता है, जो पात्रों को जीवन्त बनाती है। वाक्य विन्यास सरल होता है, जिससे अर्थ का संप्रेषण स्पष्ट रूप में होता है। हास्य और व्यंग्य की सहज उपस्थिति होती है, जो सामाजिक यथार्थ को तीक्ष्ण बनाती है। अंग्रेज़ी शब्दों का यथावश्यक प्रयोग उनकी भाषा को आधुनिक और शहरी मध्यवर्गीय परिवेश के अनुरूप बनाता है। इस तरह ममता कालिया की भाषा लेखकीय सजगता और जीवन के यथार्थ को पकड़ने की उनकी अद्वितीय क्षमता का प्रमाण है। उनकी सहज और प्रवाहपूर्ण भाषा न केवल पाठक को आकर्षित करती है, बल्कि समाज की जटिलताओं को सरल शब्दों में सामने भी लाती है।

ममता कालिया की कहानियों में बोलचाल के शब्दों का प्रयोग उनके लेखन की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। वह अपनी रचनाओं में बहुत सहज और प्राकृतिक भाषा का उपयोग करती हैं, जो पाठक को तुरंत आकर्षित करती हैं। उनके संवादों में आम जीवन के बोलचाल के शब्दों और मुहावरों का भरपूर इस्तेमाल होता है, जिससे कहानी में जीवंतता और प्रासंगिकता आ जाती है। ममता कालिया के पात्र अपने आस-पास की सामाजिक और पारिवारिक स्थितियों के हिसाब से बोलते हैं। उनके संवाद बेहद स्वाभाविक होते हैं, जो जीवन के वास्तविक अनुभवों को व्यक्त करते हैं। ममता कालिया की कहानियों में क्षेत्रीय और लोकभाषा के शब्दों का भी बहुत अच्छा प्रयोग मिलता है। यह शब्द पात्रों को विशिष्ट पहचान देते हैं और कहानी को अधिक प्रामाणिक बनाते हैं। ममता जी को बचपन से ही पिता की नौकरी के तबादलों के कारण देश के अनेक शहरों में रहने का अनुभव प्राप्त हुआ है। इसी कारण उनकी भाषा में जनभाषा का बहुलता से प्रयोग हुआ है। मथुरा में रहने के कारण ममता जी को ब्रजभाषा का ज्ञान भी अद्भुत है। उनकी 'मेला' कहानी में ब्रजभाषा का प्रयोग इस प्रकार हुआ है, देखिए- "नाही जब तक बुलाने नहीं जाएंगे वह नहीं जाएगी, "सात फेरेवर्खाली हैं, हम कोई नचनी पतुरिया नहीं। गंगा मैया हमरा भतार भेजे नाहिं हम एहि मी कूट कर पिरान दे देबै।" (कालिया, 146)

'निर्मोही' कहानी में दादी की भाषा इस प्रकार है, "जेईमार निकर गए दोऊ भईया। न कभी उन्हें दुलराया न पुचकारा। बस दुर दुर करते रहे। जिंदगी भर हर चीज बीट तराजू से तोली में कहूं अजी प्यार का मोल और तोल बताये, एसी तराग काही पाओगे।

पनाय, जे तो छोटे के कागज पत्तर कापी उठा उठा के चूल्हे में झोंके बड़े की किताबे रद्दीवाले को बेच आये। दो दिन रोटी नहीं खाई मेरे लालों ने।" (कालिया, 342)

ममता कालिया अपनी कहानियों में कभी-कभी हलके-फुल्के व्यंग्य का प्रयोग करती हैं, जो बोलचाल की भाषा में निपुणता से आते हैं। इसके द्वारा वह समाज के विभिन्न पहलुओं और मान्यताओं पर टिप्पणियाँ करती हैं। उदाहरण के तौर पर, 'ये तो वही बात हो गई, जैसे अंधे को रास्ता दिखाना!' इस तरह के मुहावरों का इस्तेमाल कहानी को और अधिक प्रभावी और दिलचस्प बना देता है।

ममता कालिया की कहानियों में पात्रों की संवेदनाएँ बहुत सजीव और गहरी होती हैं, जो बोलचाल के शब्दों के जरिए पाठक तक पहुँचती हैं। यह शब्द न केवल पात्रों की भावनाओं को व्यक्त करते हैं, बल्कि पाठक को उस स्थिति से जोड़ते हैं। 'सूनी' कहानी में करुणा का भाव भाषा में माध्यम से इस प्रकार व्यक्त होता है- "सूनी कटो में ही क्यों, जीव-मात्र में मानो विश्व का कोमल रूप देखती थी। पहले के वर्षों की उग्रता अब तक सौम्यता में परमार्जित हो गयी थी। वह अपना हृदय करुणा से भरा महसूस करती। माली जिस तरह एक-एक पौधे को सींचता, पोसता, वह ध्यान से देखती और सोचती, जरूरी नहीं कि मनुष्य सिर्फ अपने बच्चे को पालकर बड़ा करे। पेड़-पौधे, फल-फल किसी को भी पाला-पोसा जा सकता है। उनके बड़े होने पर कम खुशी नहीं होती।" (कालिया, 50) इस तरह ममता कालिया की कहानियों में बोलचाल के शब्दों का प्रयोग उनके लेखन को यथार्थवादी और प्रभावशाली बनाता है। यह शब्द संवादों को जीवंत, स्वाभाविक और दिलचस्प बनाते हैं, जिससे पाठक को कहानी के पात्रों और घटनाओं से जुड़ने में मदद मिलती है। उनका लेखन समाज और जीवन की जटिलताओं को सरल और सटीक तरीके से प्रस्तुत करता है।

6.1.2 संवादों की स्वाभाविकता

ममता कालिया का लेखन हिंदी कहानी साहित्य में एक नया और महत्वपूर्ण मोड़ प्रदान करता है, विशेष रूप से उनकी भाषा-शैली के कारण। वे अपनी कहानियों में ऐसी भाषा का प्रयोग करती हैं, जो न केवल पाठकों से संवाद स्थापित करती है, बल्कि पात्रों के मानसिक और सामाजिक संसार को भी सहज रूप से उजागर करती है। उनकी भाषा सहज, प्रवाहपूर्ण और संप्रेषणीय होती है, जो किसी भी पाठक को कथानक से जोड़ने में सक्षम

होती है। ममता कालिया की भाषा में प्रवाह की विशेषता है, जो कहानी को पढ़ने में एक नये अनुभव की तरह बहने देती है। वाक्य विन्यास इतना सहज होता है कि पाठक को पढ़ने में कोई रुकावट नहीं आती। वह बिना किसी मानसिक अवरोध के कहानी की यात्रा पर आगे बढ़ता जाता है। इसके पीछे उनका उद्देश्य यह है कि पाठक को भावनाओं, विचारों और घटनाओं से जुड़ने में कोई कठिनाई न हो। उदाहरण के तौर पर, जब वे किसी महिला पात्र के संघर्ष, उसकी मानसिक स्थिति या उसके परिवारिक रिश्तों की बात करती हैं, तो ये चीजें पाठक के मन में आसानी से उतर जाती हैं, क्योंकि भाषा इतनी सहज और प्राकृतिक होती है कि उसे समझने में कोई भी कठिनाई नहीं होती।

ममता कालिया की कहानियों में संवादों की स्वाभाविकता उनके लेखन का एक प्रमुख आकर्षण है। उनके संवाद जीवन के वास्तविक रूप को बिना किसी बनावट के प्रस्तुत करते हैं, जो पाठकों को अपने आसपास की दुनिया की याद दिलाते हैं। ममता कालिया का लेखन इस प्रकार से जीवंत और सजीव होता है कि उनके पात्रों के संवाद किसी भी व्यक्ति से सुनने जैसे लगते हैं, जो पूरी तरह से स्वाभाविक और वास्तविक होते हैं। ममता कालिया के पात्र अपनी स्थितियों, संघर्षों और भावनाओं को सहजता से व्यक्त करते हैं। उनके संवाद अक्सर किसी भी पात्र के विचारों, दृष्टिकोण और संवेदनाओं को बिना किसी कृत्रिमता या अतिशयोक्ति के व्यक्त करते हैं। इस प्रकार, जब पात्र बोलते हैं, तो उनका संवाद पाठक को लगता है कि वे वास्तविक जीवन में भी इस प्रकार की बातें कर सकते हैं। एक उदाहरण देखिए- वसन्त सिर्फ एक तारीफ' कहानी की प्राचार्या बनी श्रीमती शान्ता सक्सेना की भाषा इस प्रकार है- "इस्तीफा दे दो, तुम्हारी भी मुश्किल दूर हो जायेगी, हमारी भी, ठीक है न। भई हम तो साफ बात करते हैं। अब मार्च के महीने में लड़कियों की पढ़ाई कैसे हर्ज करायेंगे। यही तो कोर्स खत्म करने के दिन है। फिर इम्तहान का काम सर पर है। तुम्हारे बस का नहीं अब पढ़ाना-बढ़ाना। इस वक्त क्या कोई क्लास ही है ?" (कालिया, 97) यहाँ कॉलेज की प्राचार्या अध्यापिकाओं के प्रति रूआसा बनकर रूखे अंदाज से अपना प्रभाव दिखाती है। उसकी भाषा में पात्रानुरूप अक्कड़ता एवं अहंम् की झलक मिलती है। प्राचार्या अपने प्रशासन के अनुरूप भाषा प्रयुक्त की है।

ममता कालिया अपने पात्रों के संवाद में सामान्य बोलचाल की भाषा का इस्तेमाल करती हैं। उनके पात्र अपने जीवन के अनुभवों और दैनिक समस्याओं को बहुत

सहज और स्वाभाविक तरीके से व्यक्त करते हैं। वह अपनी कहानियों में शब्दों की इतनी सहजता से इस्तेमाल करती हैं कि पाठक को कभी यह नहीं लगता कि वे किसी साहित्यिक रचना को पढ़ रहे हैं। इसके कारण संवाद पाठक के दिल और दिमाग में आसानी से गूँजते हैं। 'दल्ली' कहानी में रिक्शेवाले की भाषा है- "आप चुप रहो जी, आपसे तो नहीं मांगता ना, सही जगह पर पहुँचा दिया, यह क्या कम है।" (कालिया, 377) इसमें रिक्शेवालों की मनचाही किमत वसूलने की वृत्ति दिखाई देती है। यह संवाद कहानी में पात्र के व्यक्तित्व को पूरी तरह से उजागर करता है और उनकी भावनाओं को समझने में मदद करता है।

ममता कालिया के संवादों में पात्रों की भावनाएँ बहुत गहराई से उभरती हैं। उनके संवादों के जरिए पाठक पात्रों की मानसिकता, संघर्ष और उनके भीतर के द्वंद्व को महसूस कर सकते हैं। यह स्वाभाविकता केवल शब्दों में नहीं, बल्कि पात्रों के भावनात्मक उतार-चढ़ाव में भी दिखाई देती है। श्यामा' कहानी में नायिका पुलिस कर्मचारी के पास रिपोर्ट लिखवाने जाती हैं तो उसकी भाषा इस प्रकार है- "जिसके साथ ज्यादाती हो रही है वह खुद आये, आप कौन होती हैं? मियां-बीबी झगड़ा है, आप इसमें क्यों पड़ रही है।" (कालिया, 24)। यह पुलिसकर्मी की अपने फर्ज के प्रति लापरवाही व्यक्त की गई है। यह वाक्य पूरी तरह से स्वाभाविक है, क्योंकि यह उस पल में उस पात्र के दिल की आवाज़ को व्यक्त करता है। किसी व्यक्ति के मन में जो भावनाएँ चल रही हैं, उसी को बिना किसी बनावट के कह देना स्वाभाविक संवाद का एक उदाहरण है।

ममता कालिया के पात्र समाज के विभिन्न वर्गों, मानसिकताओं और संस्कृतियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनके संवादों में समाज के वास्तविक संदर्भ और परिस्थितियाँ झलकती हैं। उदाहरण के लिए, किसी निम्न वर्ग के पात्र का संवाद उच्च वर्ग के पात्र से अलग हो सकता है, और यह अंतर संवाद की स्वाभाविकता में और भी इज़ाफा करता है। यह सामाजिक वास्तविकता को दर्शाता है, जिससे पाठक महसूस कर सकते हैं कि वे वास्तव में उस समाज का हिस्सा हैं। ममता कालिया के संवादों में हर पात्र की अपनी एक आवाज होती है, जो उसकी सामाजिक स्थिति, व्यक्तित्व, और मानसिकता को व्यक्त करती है। वह अलग-अलग प्रकार के पात्रों के माध्यम से विभिन्न प्रकार की बातचीत और संवादों का निर्माण करती हैं, जो कहानी को और अधिक वास्तविक और प्रभावशाली बनाते हैं। 'शॉल' कहानी में स्कूल में काम करनेवाली नौकरानी ननकी की भाषा देखिए-

"अरे बहनजी पूछें न कुछ। वह शॉल हमार भौजाई ले लिहिन। इता बढ़िया शॉल रहा, बदले में अपनी पुरानी रजाई दिये रही भौजाई। आप जाने बहानजी, दिन तो धूप के आसरे, चाय के आसरे कट जाये। पर रात भारी पड़ जात है।" (कालिया, 110)। इसमें ननकी की मजबूरी और दीनता प्रकट हुई है।

ममता कालिया की भाषा में अंग्रेजी और मध्यवर्गीय शब्दावली का समावेश भी देखने को मिलता है, जो उनके लेखन को और अधिक समकालीन और प्रासंगिक बनाता है। यह समावेश उनकी कहानियों को उन शहरी और आधुनिक पात्रों के करीब ले आता है, जिनका जीवन भाषा, शिक्षा और व्यवहार में इन शब्दों को अपनाता है। उनके लेखन में यह भाषा का समावेश पाठक को एक आधुनिक यथार्थ से जुड़ा हुआ महसूस कराता है, जिससे वे उन पात्रों के संघर्ष, उनके असंतोष और जीवन की कठिनाइयों को और अधिक वास्तविकता से समझ सकते हैं। ममता कालिया की कहानियों में विदेशी भाषा के शब्दों का भी प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया गया है। विदेशी भाषा में अंग्रेजी शब्दों का अत्याधिक प्रयोग किया है। ममता जी की कहानियों में अधिकतर पात्र उच्च शिक्षित हैं। इसलिए पात्रानुसार उन्होंने अंग्रेजी भाषा के शब्दों एवं वाक्यों का प्रयोग किया है। अंग्रेजी भाषा का प्रयोग इतना सहज एवं पात्रानुसार हुआ है कि उसकी अभिव्यक्ति अत्यंत साहजिक एवं सार्थक लगती है। अंग्रेजी भाषा का प्रयोग विदेशी सभ्यता एवं शिष्टाचार के प्रभाव के भी सूचक लगते हैं। 'मुन्नी' कहानी में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग इस प्रकार है- "मिस जोसेफ ने कहा, "मात्र माय मीता डिड यू डू इट? मटर ने सिर हिलाया ओ गॉड। इससे पता चलता है कि यह किस परिवार से आयी है। शो मी योर हैंड।" (कालिया, 439)। ममता जी अंग्रेजी विषय की प्राध्यापिका भी रही हैं अतः उनकी अनेक कहानियों में अंग्रेजी भाषा के वाक्यों एवं शब्दों का प्रचुरता से प्रयोग हुआ है। ममता कालिया इसे इतनी सहजता से अपनी कहानी में समाहित करती हैं कि यह न तो अटपटा लगता है, न ही कृत्रिम, बल्कि यथार्थ का हिस्सा बनकर परिस्थिति को स्वाभाविक बना देता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियों की भाषा की स्वाभाविकता उनके लेखन को यथार्थवादी और पाठकों के लिए प्रासंगिक बनाती है। उनकी

कहानियों की भाषा न केवल पात्रों के व्यक्तित्व और भावनाओं को व्यक्त करते हैं, बल्कि वे समाज और जीवन की जटिलताओं को भी बहुत सहज तरीके से सामने लाती है। यह स्वाभाविकता पाठक को पात्रों और उनकी दुनिया के करीब ला देती है, जिससे कहानी में गहरी संवेदनशीलता और वास्तविकता का अनुभव होता है। ममता कालिया की कहानियों में भाषा की स्वाभाविकता उनके लेखन को गहरे मानवीय अनुभवों से जोड़ती है। उनके संवाद इतने सरल और स्पष्ट होते हैं कि पाठक को लगता है कि वह किसी मित्र या परिवार के सदस्य से बात कर रहे हैं।

6.1.3 वास्तविक स्थितियों का चित्रण

ममता कालिया की भाषा की एक और विशेषता है, आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग। वे कथा में ऐसी शब्दावली का चयन करती हैं जो सामान्य जीवन में प्रचलित होती है। यह भाषा न केवल आसानी से समझ में आती है, बल्कि पात्रों के बीच होने वाले संवादों को भी विश्वसनीय बनाती है। उनकी कहानियों में एक नैतिकता और वास्तविकता का संकेत होता है, क्योंकि पात्रों के बीच के संवाद और उनके अनुभवों को सामान्य लोग भी महसूस कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, ममता कालिया का हास्य और व्यंग्य का उपयोग उनकी भाषा को और भी सजीव बना देता है। वे समाज की जटिलताओं और विडंबनाओं को अपनी कहानियों के माध्यम से सहजता से दर्शाती हैं। उनका व्यंग्य तीखा और सरल होता है, जो बिना किसी आक्रोश या तात्कालिक आलोचना के, मात्र सचाई को सामने लाने का काम करता है।

ममता कालिया स्वयं एक शिक्षिका और संपादक रही हैं, इसलिए उनकी कहानियों में नौकरी करने वाली महिलाओं के अनुभव और संघर्ष बहुत सजीव रूप में उभरते हैं। 'कौवे और कोलकता' कहानी की हेमा अपनी बड़ी बहन के घर में जो अजनबीपन महसूस करती है उसे ममता जी की भाषा सूक्ष्मता से इस प्रकार व्यक्त करती है। "हेमा का मन यकायक उखड़ गया। कलकत्ते के इस पते-ठिकाने पर, जहाँ कोई अपनापन नहीं, जहाँ सगे भी सौतेले बने हुए हैं। वह क्या करने आयी हुई है। अगर वह धर्मशाला में ठहरी होती और किसी अनजान अपरिचित से सहायता मांगती तो उसे ज्यादा सहारा मिल जाता। इससे अच्छी तो उसकी दिल्ली है जहाँ खिड़की के रास्ते चोर भले आ जायें, परिन्दें नहीं

आते। उसे लगा बेगाने घर के कौवे कोयल भी बेगाने होते हैं, दुश्मन पंछी।" (कालिया, 34)। अजनबीपन का यह भाव आज मनुष्य जीवन की वास्तविकता बन गया है। आज महानगरीय परिवेश तथा बढ़ती हुई स्वार्थवृत्ति के कारण अपनों के बीच भी अजीब सा अजनबीपन महसूस होता है। ममता जी इस भाव को अपनी कहानियों में चित्रित करने में सफल हुई हैं।

ममता कालिया लेखिका होते के साथ-साथ एक कवयित्री भी रही हैं। इसलिए उनकी कहानियों की भाषा में काव्यात्मकता स्पष्टतः झलक उठती है। उनकी कई कहानियों में काव्यात्मकता देखी जाती है। 'एक जीनियस की प्रेमकथा' कहानी में कविता, टी.वी. देख देखकर पथरायी अपनी आँखों को संदीप पर टिकाकर शिकायत करती है- "देखा आज भी देर कर दी तुमने।"

संदीप कोट हैंगर में लटकाते हुए कहता है-

"मुझसे पहल सी मुहब्बत मेरी महबूब न मांग

लौट जाती है उधर को भी नजर क्या कीजे।

और भी दुख हैं जमाने में मुहब्बत के सिवा

राहते और भी है वस्त की राहत के सिवा

मझसे पहली सी मुहब्बत मेरी महबूब न मांग।"

ममता कालिया के कहानी-साहित्य में भाषा की सहजता, प्रवाह और वास्तविकता उसे विशिष्ट बनाते हैं। उनकी भाषा न तो अत्यधिक सजीव होती है, न ही जटिल या अलंकारिक; बल्कि यह उस जीवन की छाया होती है, जिसमें न तो कोई अतिरिक्त रंग होता है, न ही कोई कृत्रिमता। उनकी सहज और प्रवाहपूर्ण भाषा उन्हें अपनी कहानियों में समाज की सच्चाई को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करने का एक सशक्त माध्यम प्रदान करती है। उनके पात्रों के संवाद, उनके विचार, और उनके अनुभव, सभी कुछ इस सहज भाषा के माध्यम से पाठक तक पहुँचते हैं, जिससे उनकी कहानियाँ न केवल संवेदनशील होती हैं, बल्कि एक गहरी सामाजिक टिप्पणी भी प्रदान करती हैं। ममता कालिया की भाषा शैली समकालीन हिंदी साहित्य के लिए एक अमूल्य धरोहर है, जो न

केवल साहित्यिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों को भी जीवंत करती है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियों में वास्तविकता का चित्रण केवल घटनाओं के माध्यम से नहीं, बल्कि पात्रों के व्यवहार, संवाद, दृष्टिकोण और प्रतिक्रियाओं में गहराई से परिलक्षित होता है। उनकी कहानियाँ पाठक को यह एहसास दिलाती हैं कि साहित्य केवल कल्पना नहीं, बल्कि समाज का आईना भी होता है— और यह आईना वह पूरी ईमानदारी से दिखाती हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियाँ आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं जितनी अपने लेखन-काल में थीं।

6.2 शैली

साहित्य केवल शब्दों का विन्यास नहीं, बल्कि भावनाओं, विचारों और कल्पनाओं की समृद्ध अभिव्यक्ति है। किसी भी साहित्यिक कृति की आत्मा उसकी शैली होती है। शैली वह माध्यम है, जिसके सहारे लेखक अपने भावों को इस प्रकार ढालता है कि पाठक न केवल समझ सके, बल्कि महसूस भी कर सके। हिंदी साहित्य में लेखन की अनेक शैलियाँ प्रचलित हैं, जिनका चयन लेखक अपने उद्देश्य, विषयवस्तु और संवेदना के अनुरूप करता है। वर्णनात्मक शैली में लेखक किसी दृश्य, पात्र, स्थान या घटना का इस प्रकार चित्रण करता है कि पाठक के मन में वह दृश्य सजीव हो उठे। यह शैली विशेषकर उपन्यासों और कहानियों में प्रयुक्त होती है। इसमें भाषा चित्रात्मक, बिंबात्मक और भावनात्मक होती है, जैसे- प्रेमचंद की कहानियों में ग्राम्य जीवन का यथार्थ चित्रण। भावात्मक या संवेदनात्मक शैली में लेखक अपने अंतःकरण की भावनाओं को प्रमुखता देता है। इसमें आत्मा की पुकार, हृदय की व्यथा और मूक संवेदनाएँ शब्दों का आकार लेती हैं। यह शैली पाठक को आत्मिक स्तर पर छूती है, उदाहरणस्वरूप महादेवी वर्मा की निबंध शैली में यह भावप्रवणता स्पष्ट दिखती है। आलोचनात्मक शैली में लेखक किसी साहित्यिक कृति, विचारधारा, सामाजिक प्रवृत्ति या ऐतिहासिक तथ्य का विश्लेषण करता है। तर्क, प्रमाण और निष्कर्ष इस शैली की विशेषता हैं। उदाहरण के रूप में आचार्य रामचंद्र शुक्ल की आलोचना-पद्धति को देख सकते हैं। प्रवचनात्मक शैली में लेखक किसी विषय पर गहराई से विचार करता है, उदाहरण प्रस्तुत करता है और निष्कर्ष पर पहुँचता है। यह शैली विशेषतः निबंधों में प्रयुक्त होती है, यथा- हज़ारी प्रसाद द्विवेदी की गद्य-शैली। संवादात्मक शैली तब अपनाई जाती है जब लेखक पात्रों के संवादों के माध्यम से कथा का विकास करता है। नाटक, उपन्यास और

संवादात्मक निबंधों में यह शैली प्रभावी होती है, उदाहरणार्थ- मोहन राकेश के नाटकों में संवाद-प्रधान शैली। आत्मकथात्मक शैली शैली में लेखक अपने जीवन के अनुभवों, संघर्षों और स्मृतियों को साझा करता है। इसमें आत्मस्वीकृति, आत्ममंथन और आत्मबोध का समावेश होता है, उदाहरण के लिए हरिवंश राय बच्चन की आत्मकथा 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' को देख सकते हैं। प्रतीकात्मक शैली प्रतीकात्मक शैली में लेखक प्रत्यक्ष की अपेक्षा अप्रत्यक्ष माध्यमों- प्रतीकों, संकेतों और बिंबों- के द्वारा अपने विचारों की गहराई को प्रकट करता है। यह शैली जटिल किंतु कलात्मक होती है। अज्ञेय की कहानियाँ और कविताएँ इस शैली का उदाहरण हैं। हास्य-व्यंग्यात्मक शैली में लेखक समाज की विडंबनाओं, राजनीतिक विषमताओं अथवा मानवीय कमजोरियों पर हास्य एवं व्यंग्य के माध्यम से कटाक्ष करता है। यह शैली पाठक को हँसाने के साथ सोचने को भी विवश करती है। हरिशंकर परसाई और शरद जोशी की व्यंग्यात्मक रचनाएँ इस शैली के सटीक उदाहरण हैं। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि साहित्य लेखन की शैली किसी लेखक की विशिष्ट पहचान होती है। यह उसकी अभिव्यक्ति की संवेदनशीलता, विचारों की गहराई और भाषा की सृजनशीलता का दर्पण है। शैली का चयन लेखक की दृष्टि, उद्देश्य और पाठक के संवेदनशील मनोविज्ञान के अनुरूप होता है। हिंदी साहित्य की विविध शैलियाँ उसकी समृद्धि, गहराई और सार्वकालिकता का प्रमाण हैं। किसी भी लेखक या कवि की शब्द-योजना, वाक्यांशों का प्रयोग वाक्यों की बनावट आदि के संयुक्त भाषा रूप एवं भाषा पद्धति को शैली कहा जाता है। डॉ. धनराज मानधाने के अनुसार- "शैली अनुभूत विषयवस्तु को सजाने के उन तरीकों का नाम है, जो उस विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को प्रभावपूर्ण बनाते हैं।" (मानधाने, 95)

हिंदी साहित्य में ममता कालिया एक ऐसी विशिष्ट कथाकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं, जिनकी कहानियाँ समकालीन स्त्री जीवन की जटिलताओं, मनोविज्ञान, संघर्ष और सामाजिक यथार्थ को अत्यंत सजीवता, सहजता और तीखेपन के साथ प्रस्तुत करती हैं। उनकी शैली आधुनिक हिंदी गद्य लेखन में एक साहसी, स्पष्टवादी और गहराई से आलोचनात्मक दृष्टिकोण का उदाहरण है। ममता कालिया की कहानियाँ प्रायः संवादों के माध्यम से आगे बढ़ती हैं। उनकी संवाद-शैली अत्यंत यथार्थपरक, तीखी और कटाक्षपूर्ण होती है। पात्रों के बीच के संवादों में समाज की रुढ़ियों और दंभ पर करारा प्रहार देखने को

मिलता है, यथा- 'तोहमत' कहानी में सामाजिक कुरिवाज को दिखाने के लिए दहेज की समस्या को प्रस्तुत करने के लिए इस प्रकार व्यंग्य हुआ है-

"तुम तो ऐसे कह रही हो जैसे तुम्हारा तरफ यह सब नहीं होता।"

"होता क्यों नहीं, पर इस प्रकार नहीं जैसे तुम्हारी तरफ। तुम्हारे पंजाब में तो बहुओं को एक ही बार में जलाकर खाख कर डालते हैं, हमारे उत्तर प्रदेश की बनिया बिरादरी में तो बहुओं को बाकायदा धीरे-धीरे तिल-तिल कर जलाया जाता है। सारी उमर सुलगो, न बुझो न भभको।" (कालिया, 212)

ममता कालिया की लेखन शैली में स्त्री विमर्श स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। वे स्त्री के सामाजिक, मानसिक, और भावनात्मक संघर्षों को बिना किसी लाग-लपेट के प्रस्तुत करती हैं। यह शैली न तो दया माँगती है, न क्रांति का नारा देती है, बल्कि यथार्थ का आईना दिखाती है। उदाहरणार्थ- 'बेघर' और 'लौटना' जैसी कहानियों में स्त्रियाँ किसी निष्क्रिय पीड़िता के रूप में नहीं, बल्कि आत्मसम्मान और विकल्प की तलाश करती नज़र आती हैं। ममता कालिया की लेखनी में हास्य-व्यंग्य की एक महीन लेकिन धारदार लहर रहती है, जो सामाजिक पाखंड, दांपत्य संबंधों की खोखलाहट और मध्यवर्गीय जीवन की विडंबनाओं को उजागर करती है। यह व्यंग्य उनकी शैली की खास पहचान है।

ममता कालिया की भाषा शैली सहज, बोलचाल की और आम पाठक के लिए अत्यंत सुलभ होती है। वे कठिन शब्दावली या आलंकारिक भाषा से परहेज़ करते हुए अपनी बात सीधे कहती हैं। यही सादगी उनके कथ्य को प्रभावशाली बनाती है। उनकी शैली में स्त्री के मनोविज्ञान, भावनात्मक उलझनों, निर्णयों की कशमकश और रिश्तों की पेचीदगियों का अत्यंत सूक्ष्म चित्रण होता है। यह शैली पाठक को पात्र के भीतर झाँकने की प्रेरणा देती है।

उदाहरण: 'पीठ पर चिपका हुआ आदमी' जैसी कहानियाँ मन की जटिलता को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से दर्शाती हैं। ममता कालिया की शैली समय-सापेक्ष है। वे वर्तमान समाज की विसंगतियों, स्त्री की स्थिति, शिक्षा, नौकरी, विवाह-संस्था, और पारिवारिक ढाँचों पर न केवल सवाल उठाती हैं, बल्कि उनके भीतर की असहजता को भी उजागर करती हैं। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि ममता कालिया की कहानी शैली समकालीन हिंदी

कथा-साहित्य में नारी जीवन के यथार्थ, मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मता, सामाजिक विडंबनाओं और व्यंग्यात्मक तीखापन का सशक्त संगम है। उनकी कहानियाँ न केवल एक स्त्री की आवाज़ हैं, बल्कि वे समाज के समूचे मध्यवर्गीय ढाँचे की पड़ताल करती हैं— वह भी एक बेहद तीखी, तटस्थ, और मार्मिक शैली में।

6.2.1 संवादों की स्वाभाविकता

हिंदी कथा साहित्य की समकालीन लेखिकाओं में ममता कालिया का नाम उस सूची में प्रमुखता से आता है, जिन्होंने स्त्री जीवन की जटिलताओं, सामाजिक विसंगतियों और मध्यवर्गीय मानसिकता को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियों की सबसे विशिष्ट विशेषताओं में से एक है— संवादों की स्वाभाविकता। उनके संवाद मात्र बोलचाल नहीं हैं, बल्कि वे कथ्य का मेरुदंड बनते हैं, पात्रों के अंतर्द्वंद्व और सामाजिक यथार्थ का प्रतिबिंब बनकर पाठक को गहराई तक प्रभावित करते हैं। ममता कालिया की संवाद-शैली में कृत्रिमता या भाषिक सजावट का कोई आग्रह नहीं दिखाई देता। वे बोलचाल की भाषा में गंभीर से गंभीर बात कहने की अद्भुत कला रखती हैं। उनकी भाषा आम पाठक के लिए न केवल सुलभ होती है, बल्कि अपने आसपास की दुनिया से गहराई से जुड़ी होती है। संवादों में वर्तमान समाज, परिवार और स्त्री की भूमिका को उजागर करने वाली सहजता पाई जाती है।

ममता कालिया के संवादों में स्त्री चेतना की स्पष्टता और आत्मसम्मान की आहट सुनाई देती है। उनकी नायिकाएँ दया या करुणा की पात्र नहीं होतीं, बल्कि आत्माभिमान से भरी होती हैं। वे संवादों के माध्यम से अपने जीवन की जटिलताओं, आकांक्षाओं और संघर्षों को मुखर करती हैं, बिना किसी बनावटी क्रांति के। जैसे कि उनकी प्रसिद्ध कहानी 'लौटना' में जब पति पत्नी से पूछता है— "तुम्हें नौकरी से इतना प्यार है तो मुझसे शादी क्यों की थी?" पत्नी का उत्तर होता है— "शादी की थी, गुलामी नहीं।" यह छोटा-सा संवाद स्त्री की स्वतंत्र चेतना, आत्मनिर्भरता और सामाजिक दृष्टिकोण का गहरा संदेश देता है। ममता कालिया के संवादों में व्यंग्य की महीन धार होती है। उनके पात्र अकसर ऐसी बात कह देते हैं, जो सामाजिक मूल्यों और पाखंडों पर सीधा प्रहार करती है।

यह व्यंग्य उनके संवादों को विशेष बनाता है। 'पीठ पर चिपका हुआ आदमी' कहानी में पत्नी का पति से यह कहना- "तुम मेरे पीछे-पीछे ऐसे चलते हो जैसे मैं परीक्षा देने जा रही हूँ और तुम नकल करोगे।" न केवल हास्य पैदा करता है, बल्कि दांपत्य संबंधों में असमानता और स्त्री की घुटन को भी उजागर करता है।

ममता कालिया की कहानियों में संवादों का चयन अत्यधिक स्वाभाविक होता है। वे आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग करती हैं, जिससे पात्रों के बीच का संवाद वास्तविक और पाठक से सीधे जुड़ाव महसूस कराता है। इस संदर्भ में 'सीमा' कहानी में पति-पत्नी के संवाद में उनके बीच के तनाव को दृष्टव्य है-

"वह मैं देख रहा हूँ। ये आलमारी में गड़ड़-मड़ड़ पड़े कपड़े, गलत तह लगे, अखबार, यह ठंडी चाय, ये छत पर लगे जाले।"

"हमें एक नौकर चाहिए।"

"वह तो है।"

"हमें एक और नौकर चाहिए।"

"तुम रोज मेरा ब्लड-प्रेसर बढ़ा देती हो, मैं आखिर कितनी गोलियां खा सकता हूँ?"

तुम रोज मेरा ब्लड-प्रेसर इतना गिरा देते हो कि मैं एक भी गोली नहीं खा सकती?
(कालिया, 298)

यह संवाद न केवल प्रवाहपूर्ण है, बल्कि यह समय की यात्रा और उस पर मानव के अवचेतन मन की गहरी टिप्पणी भी करता है। ममता कालिया की भाषा के इस प्रवाह में कोई झंझट या अवरोध नहीं होता, और पाठक उन भावनाओं को सहजता से महसूस कर पाता है। यह प्रवाह उसकी कथा को और भी सजीव बना देता है। ममता कालिया के संवाद केवल बाह्य घटनाओं का वर्णन नहीं करते, बल्कि पात्रों की मनोदशा का भी गहराई से चित्रण करते हैं। वे संवादों के माध्यम से पात्रों के भीतर चल रही उथल-पुथल को पाठक के समक्ष सहजता से रख देती हैं। ये संवाद अभिनय नहीं करते, बल्कि जीवन को अभिव्यक्त करते हैं। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि ममता कालिया की कहानियों में संवाद नाटकीय प्रभाव के लिए नहीं, बल्कि यथार्थ की प्रस्तुति के लिए प्रयुक्त होते हैं। उनके

संवादों में समाज, स्त्री-पुरुष संबंध, वर्ग-संघर्ष और निजी अनुभवों का अद्भुत संगम होता है। यही कारण है कि उनकी कहानियाँ पाठक के हृदय और मस्तिष्क दोनों को स्पर्श करती हैं। संवादों की यह स्वाभाविकता ही ममता कालिया को एक जीवंत, धारदार और समाज-सजग कथाकार के रूप में स्थापित करती है।

6.2.2 क्षेत्रीयता और लोकध्वनि

हिंदी कथा-साहित्य में ममता कालिया की कहानियाँ विशेष रूप से अपनी सजीव भाषा, यथार्थपरक कथानक और स्त्री दृष्टिकोण के कारण चर्चित रही हैं। परंतु उनके लेखन की एक और विशेषता है, जो उनके शिल्प को लोक और समाज से गहराई से जोड़ती है— और वह है क्षेत्रीयता तथा लोकध्वनि का प्रयोग। ममता कालिया की कहानियाँ केवल शहरी मध्यवर्गीय जीवन का चित्रण नहीं करतीं, बल्कि उसमें उस लोक संस्कृति, बोली-बानी और क्षेत्रीय ठाठ की भी झलक मिलती है, जो उनकी रचनाओं को जड़ों से जोड़ती है।

क्षेत्रीयता का तात्पर्य उस विशिष्ट भौगोलिक, सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण से है, जिसमें कोई पात्र रहता है, सोचता है, संवाद करता है और जिससे उसकी पहचान निर्मित होती है। ममता कालिया, जिन्होंने प्रयागराज (इलाहाबाद) जैसे सांस्कृतिक केंद्र में समय बिताया, अपने पात्रों की पृष्ठभूमि में उत्तर भारत के उस जीवन को लेकर आती हैं, जो न सिर्फ भौगोलिक रूप से बल्कि भावनात्मक रूप से भी विशिष्ट है। ममता कालिया की कहानियाँ प्रायः उत्तर भारत के छोटे या मंझोले शहरों के सामाजिक ढांचे, पारिवारिक संबंधों और स्त्री-जीवन की उलझनों से उपजी होती हैं। कहानियों में प्रयुक्त शब्द, मुहावरे और लहजा किसी विशेष क्षेत्रीय समाज की उपस्थिति दर्ज कराते हैं। ‘सीढ़ियाँ’ कहानी में स्त्री पात्र का लहजा, सोच और घरेलू दुनिया की शब्दावली, यूपी-बिहार के घरेलू परिवेश की सजीव तस्वीर खींचती है, देखिए— “अब बिटिया के ब्याह का सोचिए... कब तक बैठाए रखेंगे... जमाना ठीक नहीं है।” यह वाक्य अपने में समाज की चिंता, स्त्री के विवाह को लेकर गहराई से बैठी मानसिकता और क्षेत्रीय सोच को दर्शाता है।

ममता कालिया की भाषा में लोकध्वनि उस ‘घंटी’ की तरह बजती है, जो न तो तेज है और न ही सजावटी— परंतु वह संवादों और कथ्य के भीतर एक गहराई देती है। वे लोक कहावतों, कहानियों, मुहावरों का प्रयोग इतने सहज रूप में करती हैं कि पाठक

को यह साहित्यिक शिल्प नहीं, बल्कि जीवन का हिस्सा लगता है। 'खटोला' इस कहानी में एक वृद्ध स्त्री अपने संघर्षों को इस तरह व्यक्त करती है- "खटोला टूटा, पाटी गई, पर नींद अब भी नहीं आती।" यह वाक्य प्रतीकात्मक होते हुए भी एक पूर्ण लोक भावभूमि को उद्घाटित करता है।

ममता कालिया स्थानीय बोली का उपयोग केवल पात्र की सामाजिक स्थिति दिखाने के लिए नहीं करती, बल्कि उसे सांस्कृतिक पहचान का माध्यम बनाती हैं। उनकी कहानियों में प्रयुक्त भाषिक प्रयोग जैसे- 'घर का भेदी लंका ढाए' , 'बस अब जी घबरा जाता है' , 'जो बोलूँ, वही तुनक जाते हैं' -लोक कहानियों और घरेलू वार्तालाप से उपजे हैं। ममता कालिया की स्त्री पात्रों की भाषा में लोक की उपस्थिति और अधिक घनीभूत हो जाती है। स्त्रियाँ अपने दुःख, तानों, कटाक्ष और विरोध को लोक की भाषा में ही प्रकट करती हैं। यह उन्हें न केवल विश्वसनीय बनाता है, बल्कि उनके अनकहे संघर्षों को भी स्वर देता है।

हिंदी कहानी-साहित्य में ममता कालिया एक ऐसा नाम हैं, जिन्होंने भाषा, विषय-वस्तु और दृष्टिकोण-तीनों स्तरों पर साहित्य को नया आयाम प्रदान किया। वे न केवल एक सजग लेखिका हैं, बल्कि स्त्री मुक्ति की विचारधारा को जनभाषा और लोकध्वनि के माध्यम से अभिव्यक्त करने वाली एक सांस्कृतिक वाहक भी हैं। उनके कथा-साहित्य में लोकभाषा केवल भाषिक सौंदर्य या यथार्थ का माध्यम नहीं, बल्कि स्त्री की आत्म-अभिव्यक्ति और प्रतिरोध की एक सशक्त भाषा बन जाती है। ममता कालिया की कहानियों में प्रयुक्त भाषा कला से अधिक जीवन से जुड़ी हुई है। वे अपने पात्रों को साहित्यिक भाषा के कृत्रिम सौंदर्य में नहीं गूँथती, बल्कि बोलचाल, घरेलू मुहावरों और क्षेत्रीय ठसक को उनकी आत्मा में बसाती हैं। लोकभाषा का यह प्रयोग उनके पात्रों को ज़मीन से जोड़ता है और उनके संघर्षों को अधिक विश्वसनीय बनाता है। 'सीढ़ियाँ' में कहानी सास का बहू से कहना- "तू क्या समझेगी बुढ़ापे की ठंडी छाँव को, अभी तो तेरे मन में जवान धूप दौड़ रही है।" (कालिया, 74)। यह वाक्य जीवन के अनुभव, पीढ़ियों की दूरी और स्त्री मनोविज्ञान को लोकशैली में सशक्त अभिव्यक्ति देता है।

लोकध्वनि सिर्फ एक भाषा शैली नहीं है, वह एक पूरी सभ्यता की ध्वनि है। ममता कालिया ने उस ध्वनि को आधुनिक स्त्री जीवन के संघर्षों से जोड़ दिया है। वे लोकभाषा के माध्यम से स्त्री के भीतर छिपे आक्रोश, विवशता और आत्मसम्मान को सामने लाती हैं। इन कहानियों में स्त्री न तो केवल सजावटी पात्र है और न ही मौन पीड़िता- वह अपने शब्दों से उत्तर देती है, प्रतिवाद करती है और बदलाव की ओर संकेत करती है। 'लौटना' कहानी में पत्नी कहती है- "शादी की थी, साहब... गुलामी की रसीद पर दस्तखत नहीं किए थे।" (कालिया, 97) यह संवाद स्त्री मुक्ति का नारा नहीं, एक अनुभूत सत्य है, जो अपनी जनभाषा में ही गूंजता है।

ममता कालिया की स्त्रियाँ केवल भावुक नहीं होतीं, वे तीखी, व्यंग्यात्मक और व्यावहारिक भी होती हैं। उनके संवादों में लोक जीवन की चतुराई और कहन की चालाकी होती है, जो पितृसत्ता के झूठे आदर्शों को सिरे से नकारती है। जैसे- "हर बात में घर का मान-अपमान जुड़ा रहता है, औरत की खुशी कभी गिनती में नहीं आती!" (कालिया, 209) यह कथन प्रत्यक्ष विरोध न करते हुए भी समाज पर करारा तंज है- स्त्री का व्यंग्य भी लोकध्वनि में ही अधिक प्रभावशाली लगता है। जहां एक ओर स्त्री विमर्श की कहानियाँ उच्चारात्मक और विचारप्रधान बन जाती हैं, वहीं ममता कालिया लोकभाषा के सहज प्रयोग से स्त्री मुक्ति को व्यावहारिक धरातल पर रखती हैं। उनके पात्रों का संघर्ष भाषणों से नहीं, बल्कि जीवन की रोजमर्रा की भाषा में होता है- और यही उन्हें नायिका नहीं, 'आपसी पहचान' बना देता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियाँ न केवल सामाजिक यथार्थ की प्रस्तुति हैं, बल्कि वे लोक की धड़कन और क्षेत्रीयता की गंध से भी सराबोर हैं। उनकी कहानियों में प्रयुक्त क्षेत्रीय शब्दावली, जीवन के छोटे-छोटे बिंब और सांस्कृतिक संकेत पाठक को मात्र कथा नहीं सुनाते, बल्कि एक समाज, एक समय और एक स्त्री दृष्टिकोण से उसका परिचय कराते हैं। ममता कालिया की कहानियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि लोकभाषा कोई सीमित या पिछड़ी भाषा नहीं, बल्कि वह साहित्य की जड़ों से जुड़ी वह शक्ति है जो स्त्री की आवाज़ को विश्वसनीयता, आत्मीयता और प्रभाव देती है। उनकी भाषा में नारे नहीं हैं, लेकिन उसमें हर वाक्य एक घोषणापत्र की तरह गूंजता है- कि स्त्री अब चुप नहीं, और वह अपने लहजे में बोलेगी, अपने अंदाज़ में जिएगी। इस

प्रकार ममता कालिया लोकध्वनि को स्त्री स्वाभिमान की भाषा में बदलने वाली एक प्रभावशाली लेखिका के रूप में स्थापित होती हैं- जिनके लेखन में न तो मंच की ऊँचाई है, न शोर, लेकिन उसमें हृदय की ऊष्मा, जीवन की धूल, और आत्मा की आवाज़ है। उनकी यह शैली हिंदी साहित्य में लोक और आधुनिकता के संतुलन की एक विशिष्ट मिसाल बनाती है।

6.2.3 व्यंग्यात्मक और तंज़ीया लहजा

हिंदी कथा साहित्य में ममता कालिया एक प्रमुख लेखिका के रूप में स्थापित हैं, जिनकी कहानियाँ अपने व्यंग्यात्मक और तंज़ीया लहजे के कारण विशेष पहचान बनाती हैं। उनका लेखन समाज के विभिन्न पहलुओं, विशेषकर पितृसत्ता, पारिवारिक संरचनाएँ, स्त्री जीवन और मध्यवर्गीय नैतिकताओं पर तीखा व्यंग्य करता है। ममता कालिया के लेखन में व्यंग्य केवल एक हास्यात्मक उपक्रम नहीं है, बल्कि यह सामाजिक संरचनाओं और सत्ता के संबंधों पर उनकी आलोचनात्मक दृष्टि का एक सशक्त माध्यम बनता है। उनके व्यंग्यात्मक और तंज़ीया लहजे में न केवल गहरी सामाजिक और सांस्कृतिक समझ है, बल्कि वह स्त्री की स्थिति और उसके आत्मनिर्भर संघर्षों को भी सामने लाता है।

व्यंग्य साहित्यिक शास्त्र में एक सांस्कृतिक आलोचना का रूप माना जाता है, जो जीवन के विडंबनाओं और असंगतताओं को चतुराई से उजागर करता है। ममता कालिया ने अपने लेखन में व्यंग्य को सामाजिक आलोचना के रूप में प्रस्तुत किया है, जिसमें वे किसी विशेष वर्ग या समुदाय की आलोचना नहीं करतीं, बल्कि समाज के तात्कालिक दृष्टिकोण और संरचनाओं पर प्रहार करती हैं। उनके व्यंग्य में सीधे प्रहार की बजाय एक सूक्ष्म और सजीव आलोचना होती है, जो पाठक को विचार करने पर मजबूर कर देती है।

ममता कालिया के लेखन में एक महत्वपूर्ण पहलू स्त्री-पुरुष संबंधों पर उनकी तंज़ीया टिप्पणी है। वे पुरुषों की दया, करुणा और प्रेम के दिखावे को व्यंग्य और चुटकुलों के माध्यम से बयां करती हैं। उनके लेखन में पुरुषों के व्यक्तित्व को अधिकतर आत्मकेन्द्रित और शारीरिक परिभाषाओं में पेश किया जाता है, जबकि महिलाएँ भावनात्मक और मानसिक तृप्ति के लिए संघर्ष करती हैं। उनकी कहानी 'छोटी चीज़' में स्त्री अपने जीवन के प्रतिरोधों को चुटकुले और व्यंग्य के माध्यम से प्रस्तुत करती है। इस प्रकार का व्यंग्य स्त्री

के आत्म-संघर्ष और प्रतिवाद को उजागर करता है, जो अक्सर पारंपरिक पारिवारिक और सामाजिक संरचनाओं के भीतर दबा रहता है- “मैं हर सुबह तुम्हारे मनपसंद पराठे सेंकती हूँ, और तुम हर रात अपने मनपसंद बहस में मुझे सेंक देते हो।” (कालिया, 301) यह वाक्य पारिवारिक जीवन की विडंबना को दर्शाता है, जिसमें स्त्री की भूमिकाएँ केवल घरेलू कामकाजी होती हैं, जबकि पुरुष की भूमिका भावनात्मक दृष्टिकोण से निष्क्रिय होती है। ममता कालिया का यह व्यंग्य सामाजिक धारणाओं और स्त्री के स्थान को चुनौती देता है।

ममता कालिया के लेखन में हास्य और व्यंग्य का अत्यधिक प्रभावशाली उपयोग है। वे अपने पात्रों और उनके संघर्षों को हास्य के साथ जोड़कर जीवन के सख्त पहलुओं को सहज और सरल तरीके से प्रस्तुत करती हैं। हास्य और व्यंग्य के सम्मिलन से उनकी कहानियाँ न केवल पाठक को स्मित हास्य प्रदान करती हैं, बल्कि वे गहरे सामाजिक संदेश भी देती हैं। ममता कालिया अपनी कहानियों में हास्य और व्यंग्य का इस्तेमाल बहुत निपुणता से करती हैं। वे समाज की विडंबनाओं को सरल, व्यंग्यात्मक तरीके से प्रस्तुत करती हैं, जो समाज के वास्तविक रूप को उजागर करता है। ‘हमें अब कोई चाहिए’ कहानी में, जब एक महिला अपने समाज में बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा और जीवन की कठिनाइयों पर टिप्पणी करती है, तो वह कहती है- “आजकल तो हम सब बेजुबान हो गए हैं। टीवी और मोबाइल ने तो हमारी भाषा ही बदल दी है। अब तो बस ‘हां’ और ‘न’ में बात होती है, बाकी तो मुँह पर मुस्कान होती है।” (कालिया, 55) यह वाक्य अपनी सरलता में हास्य और व्यंग्य दोनों का सुंदर मिश्रण है। यहां एक औरत की चुप्पी और समाज की गिरती हुई बातचीत की संस्कृति को ममता कालिया ने व्यंग्य के माध्यम से उजागर किया है। इस शैली में एक गहरी सामाजिक टिप्पणी छुपी हुई है, जो आसानी से पाठक के मन में गूँज उठती है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियों में प्रयुक्त व्यंग्यात्मक और तंजीया लहजा समाज के विभिन्न संरचनात्मक पहलुओं पर सूक्ष्म और प्रभावी टिप्पणी करता है। उनका लेखन मध्यवर्गीय नैतिकता, पितृसत्ता और स्त्री की पहचान पर तीखा प्रहार है, जो न केवल पाठक को हंसी के माध्यम से रचनात्मक आलोचना का आभास कराता है, बल्कि वह समाज में व्याप्त असमानताओं और पूर्वाग्रहों को उजागर करने का भी कार्य करता है। ममता कालिया के व्यंग्यात्मक लहजे में गहरी सांस्कृतिक

और सामाजिक आलोचना की छाया है, जो उन्हें हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण लेखक के रूप में स्थापित करती है। उनकी कहानियों में हास्य और व्यंग्य के सम्मिलन से एक नई दृष्टि उत्पन्न होती है, जो पारंपरिक सांचे से बाहर निकलकर स्त्री के संघर्ष और समाज की वास्तविकताओं को दर्शाती है। उनके व्यंग्यात्मक लहजे को समझने और व्याख्यायित करने से पाठक केवल मनोरंजन नहीं प्राप्त करते, बल्कि समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी और दृष्टिकोण को भी नए सिरे से देख पाते हैं।

6.2.4 मनोविज्ञान की सजीव प्रस्तुति

मनोविज्ञान, मानव व्यवहार और मानसिक प्रक्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है। यह न केवल इस बात की खोज करता है कि मनुष्य क्या करता है, बल्कि इस 'क्यों' को भी समझने का प्रयास करता है। यह अनुशासन प्राचीन भारतीय और यूनानी दर्शनों से प्रारंभ होकर आधुनिक प्रयोगात्मक विज्ञान तक विस्तृत हुआ है। यदि हम प्राचीन भारतीय साहित्य की बात करें तो मनोविज्ञान की सजीव प्रस्तुति हमें पतंजलि का योगसूत्र, भगवद्गीता, बौद्ध त्रिपिटक, तथा आयुर्वेद में मन, आत्मा, और चित्तवृत्तियों का वर्णन मिलता है। इसी तरह यूनानी दार्शनिक- प्लेटो, अरस्तू आदि ने आत्मा, अनुभूति, और चेतना के सिद्धांतों को रूप देकर मनोविज्ञान का मार्ग प्रशस्त किया। आधुनिक संदर्भ में विल्हेम वुंट ने 1879 में वैज्ञानिक मनोविज्ञान की नींव रखी। उनके बाद अनेक विचारधाराओं जैसे संरचनावाद, व्यवहारवाद, मनोविश्लेषण, गेस्टाल्ट, मानववाद, और संज्ञानात्मक मनोविज्ञान ने मनोविज्ञान को बहुआयामी स्वरूप प्रदान किया। मनोविज्ञान की परिभाषा समय के साथ विकसित हुई। प्रारंभ में यह आत्मा का अध्ययन था। फिर यह चेतना, फिर मानसिक प्रक्रियाओं और अंततः व्यवहार तक सीमित नहीं रहा, बल्कि अब यह व्यापक सामाजिक और जैविक संदर्भों में मनुष्य को समझने का प्रयास करता है। कुल मिलाकर मनोविज्ञान एक ऐसा अनुशासन है जो समय के साथ निरंतर विकसित होता रहा है। इसकी परिभाषा में लचीलापन है, जो इसे सामाजिक, जैविक, सांस्कृतिक, और दार्शनिक परिवर्तनों के साथ ढलने की शक्ति प्रदान करता है। इसका ऐतिहासिक विकास इस बात का प्रमाण है कि यह विषय केवल प्रयोगशाला में सीमित नहीं, बल्कि जीवन के प्रत्येक पहलू से गहराई से जुड़ा हुआ है।

मनोविज्ञान केवल प्रयोगशाला की चारदीवारी में सिमटा हुआ कोई शुष्क विज्ञान नहीं है, यह मानव आत्मा की गहराइयों में उतरने वाली वह अदृश्य डोर है, जो भावनाओं, अनुभूतियों, इच्छाओं और चेतना के अद्वितीय संसार से जुड़ी है। साहित्य और मनोविज्ञान का रिश्ता आत्मा और शब्दों के रिश्ते जैसा है- एक भीतर का रहस्य है, तो दूसरा उसकी मुखर व्याख्या। साहित्यकार जब पात्रों के मन में उठती भावनाओं, संघर्षों, भय, प्रेम, अपराध-बोध या आत्मसंघर्ष को चित्रित करता है, तो वह अनजाने में ही मनोविज्ञान के धरातल पर उतर आता है। शेक्सपियर के पात्र हॉ या प्रेमचंद के, दोस्तोवस्की के 'अपराध और दंड' की गहराई हो या मनोहर श्याम जोशी के पात्रों की उलझन- सभी में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की गूंज स्पष्ट सुनाई देती है। मनोविज्ञान साहित्य को गहराई देता है, और साहित्य मनोविज्ञान को मानवीय स्पर्श। जब मन की गांठें शब्दों के माध्यम से खुलती हैं, तो पाठक न केवल पात्रों को समझता है, बल्कि स्वयं को भी देख पाता है। अतः साहित्यिक दृष्टिकोण से मनोविज्ञान वह दर्पण है, जिसमें जीवन की वह तस्वीर उभरती है जिसे हम अक्सर भीतर तो अनुभव करते हैं, पर बाहर कह नहीं पाते।

ममता कालिया की कहानियों के पात्र प्रायः साधारण मध्यवर्गीय परिवेश से आते हैं, किन्तु उनकी मानसिक संरचना जटिल और बहुआयामी होती है। वे पात्र बाहरी घटनाओं की तुलना में अधिक आंतरिक उथल-पुथल के शिकार होते हैं। उदाहरण के लिए, उनकी प्रसिद्ध कहानी 'गिल्ट' (Guilt) में एक स्त्री अपने अतीत की स्मृतियों और वर्तमान की विडंबनाओं के बीच झूलती है। इस कहानी में 'गिल्ट' केवल एक मनोदशा नहीं, बल्कि एक स्थायी मानसिक स्थिति है, जो नायिका के संपूर्ण व्यवहार, निर्णय और दृष्टिकोण को प्रभावित करती है, यथा- "वह जानती थी कि यह दुख स्थायी नहीं है, लेकिन उसकी जड़ें इतनी गहरी थीं कि उखड़ने का नाम ही नहीं लेतीं।" (कालिया, 177)। इस प्रकार की पंक्तियाँ पात्र की आत्मचेतना, अपराधबोध और मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों को उभारने में सहायक होती हैं।

ममता कालिया की कहानियों की एक बड़ी विशेषता यह है कि वे संवादों के माध्यम से पात्रों के मानसिक संसार को अभिव्यक्त करती हैं। उनके संवाद केवल जानकारी नहीं देते, वे पात्रों के अवचेतन मन, असुरक्षाओं और इच्छाओं की परतें खोलते हैं। उदाहरण स्वरूप, 'लड़के' कहानी में लड़के गंगा स्नान करने के बाद कॉलेज में हड़ताल करना चाहते

थे। घाट पर पण्डों को देखकर अर्जुन सिंह उसे दिखाते हुए कहता है- "देख लेना शाम तक यह सौ रुपये कमा लेगा। हमसे तो यही अच्छा है। हो सकता है दो जमात भी पढ़ा न हो। पर अच्छे-अच्छे पढ़े-लिखों का शिकार कर रहा है।"

"सब-के-सब शिकारी है यहाँ, कोई तराजू से शिकार करता है, कोई चंदन से, कोई मीटर से, कोई लीटर से।" ताहिर बोला ।

"सबसे बड़े शिकारी तो ये है।" सुनील ने कड़वाहट से कहा, "जीपों में लद-लदकर आनेवाले अफसरान इन्हीं को भ्रष्टाचार की जाँच-पड़ताल का जिम्मा सौंपा जाता है।"(कालिया, 290)

यह संवाद पात्रों की अवचेतन मनःस्थितियों को अत्यंत सजीव और गहन तरीके से प्रस्तुत करता है।

ममता कालिया की कहानियाँ विशेषकर स्त्री-मन की अंतर्धारा का चित्रण करती हैं। उनकी स्त्रियाँ समाज की बनाई सीमाओं के भीतर जीती हुई भी अपने भीतर एक स्वतंत्र व्यक्तित्व की खोज में रहती हैं। यह खोज उन्हें बार-बार असंतोष, गुस्से, असुरक्षा, प्रेम, अपराधबोध और अकेलेपन की मनोवैज्ञानिक स्थिति में ले जाती है। 'लौटती नहीं हैं लड़कियाँ' कहानी इस संदर्भ में उल्लेखनीय है। इसमें नायिका के भीतर चल रहा मनोवैज्ञानिक द्वंद्व- पारिवारिक अपेक्षाएँ और आत्मनिर्णय के बीच- बेहद प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया गया है, देखिए- "मैं क्या चाहती हूँ, यह पूछने वाला कोई नहीं था। सब जानते थे कि मुझे क्या करना चाहिए।" (कालिया, 50) यह कथन सामाजिक दबावों के बीच आत्मस्वर की तलाश का प्रतीक है- जो ममता कालिया के लेखन की मनोवैज्ञानिक विशेषता है। निष्कर्षतः ममता कालिया की कहानियाँ मनोविज्ञान की सजीव प्रयोगशाला हैं। वे अपने पात्रों की भावनात्मक, मानसिक और सामाजिक जटिलताओं को इस प्रकार प्रस्तुत करती हैं कि पाठक को उनके अनुभव स्वयं के अनुभव जैसे प्रतीत होते हैं। उनके लेखन में यथार्थ की ठोस ज़मीन पर खड़े होकर मानसिक गहराइयों में उतरने की शक्ति है। उनका मनोवैज्ञानिक चित्रण न केवल स्त्री मन की सच्चाइयों को सामने लाता है, बल्कि वह समकालीन समाज के अंदर छिपी हुई संवेदनहीनता, दमन और अस्तित्व की तलाश को भी

प्रकट करता है। इस प्रकार ममता कालिया की कहानियाँ हिंदी साहित्य को एक ऐसा आयाम देती हैं, जहाँ मनोविज्ञान और यथार्थवाद का सफल सम्मिलन देखने को मिलता है।

6.3 भाषा में नारी विमर्श के स्वर

भाषा मात्र संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि विचार, संस्कृति और सत्ता संरचना का संवाहक भी है। जब हम भाषा की परतें खोलते हैं, तो उसमें पुरुषसत्ता की गूँज के साथ-साथ नारी की प्रतिरोधी आवाज़ें भी सुनाई देती हैं। नारी विमर्श- स्त्री की सामाजिक, सांस्कृतिक, यौनिक और मानसिक स्वतंत्रता की चेतना- जब भाषा के धरातल पर उतरता है, तो वह भाषा को केवल माध्यम नहीं, प्रतिकार और पुनर्रचना का उपकरण बना देता है। प्राचीन शास्त्रों से लेकर आधुनिक साहित्य तक, भाषा में नारी की छवि एक 'दूसरे' की रही है- कभी देवी, कभी त्यागमयी, तो कभी पतिता। लेकिन समकालीन नारीवादी लेखन ने इन छवियों को तोड़ते हुए स्त्री की अस्मिता और आत्म-स्वर को भाषा में स्थान दिलाया है। महादेवी वर्मा की कोमल संवेदना, कमला दास की आत्मस्वीकृति, मन्नू भंडारी और मैत्रेयी पुष्पा की विद्रोही स्त्रियाँ- ये सभी भाषा के माध्यम से नारी के अंतःसंघर्ष को सामाजिक विमर्श में बदल देती हैं। भाषा के स्तर पर भी अब स्त्री अपने शब्दों की संरचना स्वयं करती है- "वह जो अब तक 'चुप' थी, अब बोल रही है, लिख रही है, और अर्थ बदल रही है।" भाषा अब केवल वर्णमाला नहीं रही, बल्कि वह स्त्री की मुक्ति का पुल बन गई है। संक्षेप में भाषा में नारी विमर्श के स्वर केवल शब्दों की गूँज नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक प्रतिरोध, सामाजिक पुनराविष्कार और वैचारिक क्रांति का संकेत हैं। अब भाषा स्त्री के हाथों में है- और जब स्त्री बोलती है, तो एक नया व्याकरण जन्म लेता है- समता का, आत्मस्वीकृति का, और भविष्य की नई पहचान का।

6.3.1 स्त्री अनुभवों की बेलौस अभिव्यक्ति

हिंदी साहित्य में स्त्री लेखन का इतिहास अपेक्षाकृत नवीन होते हुए भी अत्यंत प्रभावशाली रहा है। विशेष रूप से ममता कालिया जैसी लेखिकाओं ने 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में स्त्री की सामाजिक, मानसिक, दैहिक और भावनात्मक अनुभूतियों को जिस बेलौस शैली में प्रस्तुत किया, वह स्त्री विमर्श को एक नया आयाम देता है। 'बेलौस'

लेखन का तात्पर्य है- बिना किसी आडंबर, भय या सामाजिक स्वीकृति की चिंता किए अपने अनुभवों, भावनाओं और यथार्थ को अभिव्यक्त करना। ममता कालिया इस दृष्टि से एक अत्यंत प्रामाणिक लेखिका हैं जो स्त्री अनुभवों को सच्चाई और तीखेपन के साथ शब्द देती हैं। ममता कालिया की स्त्रियाँ केवल दुख झेलने वाली निरीह प्राणी नहीं हैं, वे महत्त्वाकांक्षा, पहचान और आत्मसम्मान की भूखी हैं। वे प्रेम करती हैं, गलती करती हैं, पर अपनी शर्तों पर जीने की जिद रखती हैं। 'एक अदद औरत की तस्वीर' कहानी की नायिका का आत्मस्वीकृति भरा यह कथन देखिए- "अब मैं किसी के लिए अच्छी बहू, समझदार पत्नी या त्यागमयी माँ बनने का अभिनय नहीं कर सकती।" (कालिया, 133) यहां स्त्री अस्मिता का वह स्वर है जो सामाजिक भूमिका की घुटन से बाहर आने की घोषणा करता है।

ममता कालिया की कहानियाँ आत्मबोध से भरपूर हैं। उनकी नायिकाएँ आत्मनिर्भरता की आकांक्षी हैं, वे किसी भी तरह की दया या संरक्षण नहीं चाहतीं। 'ब्लाउज' जैसी कहानी में स्त्री की देह को देखने के सामाजिक दृष्टिकोण पर तीखा व्यंग्य मिलता है, वहीं 'एक पत्नी की डायरी' में पत्नी के भीतर चल रहे अंतर्द्वंद्व को तीव्र संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया गया है। ममता कालिया की नायिकाएँ सामाजिक संरचनाओं के प्रति प्रश्न उठाती हैं। वे 'पति-परमेश्वर' वाली मानसिकता को अस्वीकार कर स्त्री-पुरुष संबंधों को बराबरी के धरातल पर देखने की वकालत करती हैं। 'नरक-दर्शन' कहानी में उन्होंने दांपत्य संबंधों में स्त्री की घुटन को अत्यंत प्रभावी तरीके से प्रस्तुत किया है। ममता कालिया का लेखन भावनाओं के जाल में उलझा हुआ नहीं होता, बल्कि यथार्थ के धरातल पर मजबूती से खड़ा होता है। वे कटु यथार्थ को भी अत्यंत सहजता और व्यंग्य के साथ प्रस्तुत करती हैं। यही शैली उनके पात्रों को जीवन्त बनाती है और पाठक को झकझोरती है। ममता कालिया विशेष रूप से शिक्षित, नौकरीपेशा, शहरी स्त्री की समस्याओं और विडंबनाओं को चित्रित करती हैं। वह स्त्री जो आर्थिक रूप से स्वतंत्र है, लेकिन मानसिक और सामाजिक रूप से अब भी बंधनों में जकड़ी हुई है- यह द्वंद्व उनकी कहानियों का केंद्रीय विषय बनता है। उनकी कहानियों में प्रेम और विवाह की पारंपरिक अवधारणाओं को चुनौती दी गई है। उन्होंने स्त्री की आकांक्षाओं, उसकी इच्छाओं और मानसिक संघर्षों को बड़ी प्रामाणिकता से प्रस्तुत किया है। 'कहीं कुछ नहीं' जैसी कहानियाँ स्त्री के अकेलेपन और

संबंधों में रिक्तता को बहुत प्रभावशाली ढंग से उजागर करती हैं। निष्कर्षतः ममता कालिया की कहानियाँ नारी अनुभवों की बेलौस अभिव्यक्ति हैं। वे नारी जीवन की विडंबनाओं, संवेगों और संघर्षों को इस तरह प्रस्तुत करती हैं कि पाठक को न केवल स्त्री की पीड़ा का अहसास होता है, बल्कि सोचने पर भी मजबूर होना पड़ता है। उनकी लेखनी में न कोई बनावटी नारीवाद है, न भावुकता का अतिरेक— बस है तो केवल एक सच्ची, साहसी, और सचेत स्त्री की आवाज़। उनकी कहानियाँ स्त्रियों को एक ऐसे मुकाम पर ले जाती हैं जहाँ वे अपनी पहचान स्वयं गढ़ती हैं। वे प्रश्न करती हैं, उत्तर खोजती हैं, और सबसे बड़ी बात— वे बोलती हैं, खुलकर बोलती हैं। उनका लेखन न केवल साहित्यिक है, बल्कि सामाजिक चेतना और स्त्री मुक्ति का दर्पण भी है। उन्होंने स्त्री अनुभवों को संवेदनशीलता, साहस और सच्चाई के साथ प्रस्तुत कर हिंदी साहित्य को एक वैचारिक परिपक्वता प्रदान की है।

6.3.2 पितृसत्ता के खिलाफ प्रतिरोध की भाषा

हिंदी कथा साहित्य में ममता कालिया का स्थान इसलिए विशिष्ट है क्योंकि उन्होंने नारी अनुभवों को न केवल बेलौस अभिव्यक्ति दी, बल्कि पितृसत्तात्मक समाज की जड़ताओं को चुनौती देने वाली एक प्रतिरोध की भाषा भी गढ़ी। उनका कथा-संसार स्त्री के आत्मसंघर्ष, सामाजिक विडंबनाओं और पितृसत्ता की परतों को उघाड़ने वाला ऐसा दर्पण है जिसमें समाज की असमानता और स्त्री की घुटन साफ दिखाई देती है। ममता कालिया हिंदी की उन कथाकारों में हैं जिन्होंने पितृसत्तात्मक समाज की जकड़नों को स्त्री दृष्टिकोण से उधेड़ने का साहस किया है। ममता कालिया की नायिकाएँ मौन नहीं हैं। वे बोलती हैं, सवाल करती हैं, टकराती हैं। ये स्त्रियाँ अबला नहीं, बल्कि मुखर, विचारशील और आत्मजागृत हैं। वह केवल पीड़िता नहीं, एक प्रतिरोधकर्ता, विचारशील, विवेकी और आत्मचेतस पात्र के रूप में उभरती है। इस प्रतिरोध की भाषा कभी आत्मालोचन में, कभी व्यंग्य में, और कभी आत्मनिर्णयों के माध्यम से आकार लेती है।

'एक पत्नी की डायरी' कहानी में स्त्री का 'डायरी लेखन' एक प्रतीक बन जाता है— आत्माभिव्यक्ति और आंतरिक प्रतिरोध का। वह भीतर से टूटती है, लेकिन समाज और पति की दमनकारी सोच के खिलाफ उसका लेखन एक मौन विद्रोह बनकर उभरता है। इस कहानी में एक शिक्षित स्त्री अपने वैवाहिक जीवन के अनुभवों को डायरी में दर्ज करती

है। उसका पति उसे 'कमज़ोर' , 'अभावों से भरी' और 'असहनीय' स्त्री समझता है। वह उसके विचारों और इच्छाओं की उपेक्षा करता है। लेकिन स्त्री चुप नहीं रहती- वह अपनी 'डायरी' को आत्मा की आवाज़ बनाकर उस व्यवस्था का प्रतिकार करती है जो उसे 'केवल पत्नी' बनाकर सीमित कर देना चाहती है, देखिए- "हर शाम मैं वही बन जाती हूँ जो वह चाहता है - एक चुप, विनम्र, बेमतलब सी औरत। लेकिन मेरी डायरी जानती है कि मैं कौन हूँ।" (कालिया, 71)। यह संवाद दर्शाता है कि स्त्री ने मानसिक स्तर पर प्रतिरोध का एक क्षेत्र बना लिया है- जहाँ वह स्वतंत्र है, सच बोल सकती है, और स्वयं को पहचान सकती है।

ममता कालिया ने विवाह संस्था के भीतर मौजूद पितृसत्ता को बार-बार कटघरे में खड़ा किया है। 'नरक-दर्शन' एक ऐसी स्त्री की कहानी है जो शादीशुदा जीवन की यातनाओं को 'नरक-दर्शन' की तरह अनुभव करती है। इस कहानी में विवाह के भीतर घट रही 'नरक समान' स्थितियों का चित्रण है। पति का वर्चस्व, पत्नी की इच्छाओं की उपेक्षा, और मानसिक उत्पीड़न- ये सब उस दमनकारी ढांचे का हिस्सा हैं जिसे 'संसार' कहा गया है। लेकिन पत्नी इसे सहती नहीं, वह इसे 'नरक दर्शन' कहती है- यह नामकरण ही उसका प्रतिरोध है। उद्धरण देखिए- "उन्होंने मुझे कभी पत्नी नहीं, एक व्यवस्था माना। मैं व्यवस्था से अलग कुछ भी नहीं थी- बस एक आदत, एक जिम्मेदारी।" यह कथन दर्शाता है कि स्त्री विवाह को अब एक पवित्र अनुबंध नहीं, एक दमनकारी सामाजिक रचना मान रही है- और यह उसकी चेतना की पराकाष्ठा है। इस कहानी में पति द्वारा किया गया मानसिक उत्पीड़न, उसके आत्मसम्मान को कुचलना- सब कुछ लेखिका ने तीखे शब्दों में बयान किया है। ममता कालिया के पास प्रतिरोध के लिए केवल क्रांति नहीं, व्यंग्य भी है- एक ऐसी भाषा जो तंज से पितृसत्ता को बेनकाब करती है।

ममता कालिया की कहानियाँ अक्सर घरेलू और सामान्य स्थितियों से शुरू होती हैं, लेकिन इनमें छिपा हुआ प्रतिरोध धीरे-धीरे सामने आता है। उनकी नायिकाएँ अपने साधारण से लगने वाले चुनावों- नौकरी करना, अकेले रहना, तलाक लेना, बच्चों को अकेले पालना- के ज़रिए पितृसत्ता के खिलाफ खड़ी होती हैं। ममता कालिया की कहानियों में स्त्रियाँ अक्सर एक-दूसरे से संवाद करती हैं- ये संवाद भी प्रतिरोध की भाषा का हिस्सा बनते हैं। 'हंसी की फांस' कहानी में स्त्रियाँ मिलती हैं, हँसती हैं, मगर उनके हँसने के पीछे वर्षों का

संघर्ष और साझा पीड़ा छिपी होती है। यह सामूहिकता एक सशक्त प्रतिरोध बन जाती है। इसी तरह 'कहीं कुछ नहीं' कहानी की नायिका तलाक के बाद अकेले रहने का निर्णय लेती है। समाज उसे दोषी, विक्षिप्त और 'अधूरी' मानता है। लेकिन वह न समाज को जवाब देती है, न उससे कोई स्पष्टीकरण माँगती है। वह अपने 'अकेलेपन' को एक नया जीवन मानती है- यह सबसे सशक्त प्रतिरोध है, जिसमें स्त्री को किसी के सहारे की आवश्यकता नहीं। एक उदाहरण देखिए- "शायद मैं अधूरी नहीं हूँ, बस अधूरी कहे जाने की जिद में उन्होंने खुद को मुकम्मल मान लिया है।" (कालिया, 201) यह संवाद सामाजिक धारणाओं को सीधा चुनौती देता है – और यह वही प्रतिरोध है जो ममता कालिया की लेखनी की आत्मा है।

इस तरह ममता कालिया की कहानियाँ पितृसत्ता को केवल नकारती नहीं, बल्कि उसके खिलाफ एक नई, सशक्त भाषा रचती हैं- जिसमें करुणा है, क्रोध है, कटाक्ष है, और सबसे बढ़कर एक सोचने-समझने वाली स्त्री की आत्म-चेतना है। उनकी लेखनी सामाजिक असमानता के विरुद्ध उठता हुआ वह स्वर है, जो न केवल स्त्रियों को आत्मबोध कराता है, बल्कि पाठकों को भी झकझोरता है। ममता कालिया की कहानियाँ पितृसत्ता के विरुद्ध स्त्री के प्रतिरोध की मूल्यवान दास्तानें हैं। उनका लेखन केवल नारीवादी विमर्श नहीं है, बल्कि एक सामाजिक आलोचना है, जो रोज़मर्रा के अनुभवों के ज़रिए हमें यह बताती है कि स्त्री का संघर्ष क्रांतिकारी नारे नहीं, छोटे-छोटे फैसलों, प्रश्नों और असहमतियों से उपजता है।

6.3.3 स्त्री-स्वतंत्रता की सहज माँग

समकालीन हिंदी कथा-साहित्य में ममता कालिया एक प्रमुख स्वर हैं, जिनकी कहानियाँ स्त्री के जीवनानुभवों, मानसिक तनावों और सामाजिक असमानताओं को बेबाकी से अभिव्यक्त करती हैं। उनके कथा-साहित्य में स्त्री स्वतंत्रता की माँग नारेबाज़ी नहीं, बल्कि एक सहज और स्वाभाविक आवश्यकता के रूप में उभरती है। ममता कालिया की दृष्टि न तो पूरी तरह उग्र नारीवादी है, न ही आत्मदया से भरी। वह स्त्री को संवेदनशील, स्वचेतस और आत्मनिर्णयशील इकाई के रूप में चित्रित करती हैं। उनकी स्त्रियाँ रोज़मर्रा की साधारण स्थितियों में भी सामाजिक रूढ़ियों से टकराती हैं, कभी प्रत्यक्ष, कभी परोक्ष।

ममता कालिया की कहानियाँ स्त्री-स्वतंत्रता को एक जीवंत और व्यक्तिगत अनुभव के रूप में प्रस्तुत करती हैं। वे हमें यह समझाती हैं कि स्त्री की मुक्ति न तो केवल पितृसत्ता से है और न ही केवल समाज से- बल्कि वह मुक्ति आत्मबोध और विकल्प के अधिकार में निहित है। उनकी कहानियों में स्वतंत्रता माँगी नहीं जाती, जी जाती है।

ममता कालिया हिंदी की उन कथा-लेखिकाओं में प्रमुख हैं जिनकी कहानियाँ स्त्री की जीवन स्थितियों, मानसिक संघर्षों और सामाजिक दायरों को सहज किन्तु प्रभावशाली ढंग से चित्रित करती हैं। उनकी कहानियों में स्त्री स्वतंत्रता का स्वर नारे या भाषण की तरह नहीं, बल्कि एक सहज मानवीय आवश्यकता की तरह उभरता है- जैसे साँस लेना, सोच पाना, निर्णय ले पाना। ममता कालिया की नायिकाएँ स्वतंत्रता को किसी विशेषाधिकार या अपवाद की तरह नहीं देखतीं, बल्कि वह उन्हें उनका सहज मानवीय हक लगता है। वे यह नहीं कहती कि 'हमें स्वतंत्रता चाहिए' , वे बस जीना चाहती हैं- अपनी शर्तों पर। यही उनके प्रतिरोध की गरिमा है। 'एक पत्नी की डायरी' कहानी की स्त्री पात्र अपने वैवाहिक जीवन की घुटन को केवल सहती नहीं, वह उसे लिखती है, समझती है और भीतर ही भीतर स्वतंत्र सोच के साथ अपने को पुनः परिभाषित करती है- "मैं चाहती हूँ कि मैं जो सोचती हूँ, कह भी सकूँ- बिना यह सोचे कि किसी को बुरा लगेगा।" यह पंक्ति स्त्री की उस सहज आकांक्षा को दर्शाती है जहाँ उसकी स्वतंत्रता का मूल उसकी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में है।

ममता कालिया की स्त्रियाँ स्वयं निर्णय लेने में विश्वास करती हैं- चाहे वह करियर से जुड़ा हो, विवाह से या अकेले जीने से। वे परंपरा को तोड़ने के लिए लड़ाई नहीं लड़तीं, बल्कि विकल्पों को चुनने का साहस रखती हैं। 'कहीं कुछ नहीं' कहानी में नायिका तलाक के बाद अकेले रहने का निर्णय लेती है। समाज भले ही इसे अजीब समझे, लेकिन उसके लिए यह सहज और ज़रूरी फैसला है। एक उदाहरण देखिए- "कभी-कभी अकेले रह जाना, सबसे अच्छे रिश्ते से बेहतर होता है।" (कालिया, 138) यहाँ कोई विद्रोही स्वर नहीं है, लेकिन यह एक शांत, ठोस और स्वतंत्र सोच है। यही ममता कालिया की विशिष्ट शैली है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियों में स्त्री-स्वतंत्रता की माँग न तो उग्र है, न ही आत्मदया से भरी। वह सहज, मानवीय और तर्कपूर्ण है। उनकी

स्त्रियाँ जीवन के हर स्तर पर अपने लिए चयन की स्वतंत्रता चाहती हैं- विचार, कार्य, संबंध और देह सभी क्षेत्रों में। यही उन्हें अन्य लेखिकाओं से अलग और सशक्त बनाता है।

6.3.4 यौनिकता और देह को लेकर स्पष्ट दृष्टिकोण

ममता कालिया की कहानियों में यौनिकता और देह को लेकर स्पष्ट दृष्टिकोण एक समकालीन स्त्री चेतना का प्रतिनिधित्व करता है। वे नारी शरीर और यौनिकता को सामाजिक-सांस्कृतिक दबावों से मुक्त कर एक स्वतंत्र पहचान दिलाने का प्रयास करती हैं। उनके लेखन में स्त्री देह केवल 'पुरुष दृष्टि' के भोग्या रूप में नहीं, बल्कि स्वायत्त अस्तित्व के रूप में सामने आती है। ममता कालिया की स्त्रियाँ अपनी देह को केवल जैविक नहीं, बल्कि सामाजिक, मानसिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी स्वीकार करती हैं। वे अपने शरीर को लेकर झिझकती नहीं हैं, बल्कि उस पर अधिकार जताती हैं। उदाहरण के लिए, कहानी 'बेजुबान' में स्त्री पात्र अपनी यौनिक इच्छाओं और अधिकारों को लेकर मुखर दिखाई देती है। उनकी कहानियों में विवाह संस्था, पारिवारिक व्यवस्था, और पितृसत्तात्मक नैतिकता को लेकर तीखा व्यंग्य मिलता है। यौनिकता को नियंत्रित करने वाले सामाजिक नियमों की वे आलोचना करती हैं।

ममता कालिया की नायिकाएँ मौन और सहनशीलता की परंपरागत छवि से अलग हैं। वे यौनिक संबंधों, प्रेम, विवाहेतर रिश्तों पर खुलकर सोचती हैं और निर्णय लेती हैं। 'सिर्फ एक सवाल' जैसी कहानियों में यह स्पष्ट दृष्टिकोण चर होता है। उनका लेखन न तो अश्लील है, न ही अनावश्यक रूप से आकर्षक बनाने वाला। वह स्त्री देह और यौनिकता के अनुभवों को सच और संजीदगी से लिखती हैं। इससे पाठक को स्त्री की अंतरात्मा के संघर्ष, उलझनों और आकांक्षाओं की गहराई से समझ मिलती है। उनकी कहानियों में आधुनिक नारी, जो पढ़ी-लिखी है, नौकरी करती है और आर्थिक रूप से स्वतंत्र है, वह अपनी यौनिकता को लेकर पारंपरिक मूल्यों से संघर्ष करती दिखाई देती है। यह द्वंद्व उनके कथ्य को और अधिक सशक्त बनाता है।

'सिर्फ एक सवाल' कहानी में नायिका एक शिक्षिका है जो अपने छात्र से प्रेम करने लगती है। यह संबंध पारंपरिक नैतिकता के विरुद्ध है- उम्र, पेशे और सामाजिक

मान्यताओं की सीमाएं लांघता हुआ। नायिका अपनी यौनिक इच्छाओं को लेकर अपराधबोध से ग्रस्त नहीं है, बल्कि उस पर अधिकार जताती है। वह जानती है कि समाज उसके संबंध को अनैतिक कहेगा, फिर भी वह अपने मन और शरीर की पुकार को अस्वीकार नहीं करती। यह कहानी स्त्री की देह और प्रेम को 'निर्णायक रूप से उसकी अपनी वस्तु' के रूप में प्रस्तुत करती है, न कि समाज या परिवार की। यौनिकता का चित्रण यहाँ स्वाभाविक, मानवीय और आत्मनिर्भर है। इसी तरह 'बेजुबान' कहानी एक ऐसी विवाहित स्त्री की है जो अपने दांपत्य जीवन में भावनात्मक और यौनिक असंतोष से गुजर रही है। वह चुप नहीं रहती, बल्कि अपने भीतर की बेजुबान पीड़ा को शब्दों में ढालती है। यह कहानी उन स्त्रियों की प्रतिनिधि है जो विवाह के भीतर होते हुए भी भावनात्मक और शारीरिक संतोष के लिए तरसती हैं। ममता कालिया यहाँ देह के माध्यम से स्त्री अस्मिता की पीड़ा को उजागर करती हैं- बिना लज्जा या वर्जना के। देह की भूख और संबंध की गहराई को वह सिर्फ जैविक क्रिया के रूप में नहीं, बल्कि मन के स्तर पर जुड़ी एक चेतना के रूप में दिखाती हैं। यह कहानी देह और आत्मा के द्वैत को नहीं, बल्कि उनके समन्वय को प्रस्तुत करती है।

'नींद क्यों रात भर नहीं आती' कहानी एक अधेड़ स्त्री की है जो अकेली रहती है और रात्रिकालीन एकाकीपन में अपनी देह की पुकार और यादों के साथ जूझती है। यौनिकता यहाँ कोई उम्र-निर्धारित अवधारणा नहीं, बल्कि एक सतत भावनात्मक अनुभव है। नायिका अपने शरीर की नींदहीन बेचैनी को सिर्फ एक जैविक संकट नहीं मानती, बल्कि उसके पीछे की भावनात्मक रिक्तता को पहचानती है। ममता कालिया स्त्री देह को केवल युवा और आकर्षक न मानकर सम्पूर्ण जीवन-यात्रा का हिस्सा बनाकर देखती हैं। यह कहानी इस बात को पुष्ट करती है कि यौनिकता केवल शारीरिक संबंध नहीं, बल्कि भावनात्मक ज़रूरतों का भी गहरा हिस्सा है।

निष्कर्षतः ममता कालिया ने यौनिकता और देह जैसे विषयों को लेकर एक स्पष्ट, निर्भीक और प्रगतिशील दृष्टिकोण अपनाया है। उनका लेखन स्त्री की देह को केवल पुरुषवादी निगाहों से परिभाषित करने से इंकार करता है और उसे आत्माभिव्यक्ति तथा अस्तित्व के महत्वपूर्ण पक्ष के रूप में प्रस्तुत करता है। ममता कालिया की कहानियाँ स्त्री देह और यौनिकता को- अपनी शर्तों पर जीने की स्वतंत्रता, पितृसत्ता के विरुद्ध

आत्मप्रतिरोध, और प्रेम के प्रति निष्ठा के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियों की स्त्रियाँ 'देह से नहीं डरतीं, बल्कि देह के अनुभवों को जीती हैं। ' वे अपराधबोध में नहीं, बल्कि अपने आत्मसम्मान के साथ खड़ी होती हैं।

6.4 व्यावहारिकता और जीवन-संघर्ष

भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि वह सेतु है जो विचारों, भावनाओं और यथार्थ के अनुभवों को समाज से जोड़ती है। भाषा की शैली जब व्यावहारिकता को अपनाती है, तब वह जीवन की दिशा देने वाली बन जाती है; और जब वह जीवन-संघर्ष को स्वर देती है, तब वह आत्मा की पुकार बन जाती है। हिंदी साहित्य में इन दोनों शैलियों की उपस्थिति न केवल विचारों की विविधता को दर्शाती है, बल्कि मनुष्य की सामाजिक यात्रा को भी प्रतिबिंबित करती है। व्यावहारिकता का तात्पर्य है-संपूर्ण जीवन की वास्तविकताओं को समझते हुए उनके अनुरूप संवाद करना। जब भाषा जीवन के मूलभूत सत्य को सीधी, स्पष्ट और सुलभ शैली में प्रस्तुत करती है, तब वह व्यावहारिक शैली कहलाती है। यह शैली जटिलता से दूर रहकर पाठक या श्रोता को निष्कर्ष की ओर ले जाती है। शैक्षिक पुस्तकों, नीति-वचनों, पत्रकारिता, भाषणों और प्रेरणादायक लेखन में इस शैली की महत्ता अधिक है। यह शैली पाठक के निर्णय-निर्माण को दिशा देती है और उसे सक्रिय बनाती है। जीवन-संघर्ष की शैली में भाषा केवल माध्यम नहीं रहती, वह स्वयं अनुभव बन जाती है। यह शैली दर्द, पीड़ा, आशा और जिजीविषा को अभिव्यक्त करती है। यहाँ भाषा भावात्मक, प्रतीकात्मक, और चित्रात्मक हो जाती है।

साहित्य में जब लेखक जीवन की विषमताओं, अभावों, सामाजिक अन्याय और आंतरिक द्वंद्व को चित्रित करता है, तब वह एक ऐसी शैली में लिखता है, जो पाठक को भीतर से झकझोर देती है। मुंशी प्रेमचंद के 'गोदान' का पात्र होरी, मन्नू भंडारी, रेणु, या महाश्वेता देवी की कहानियाँ-सब जीवन-संघर्ष की शैली के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। इनकी

भाषा में पीड़ा की छवि होती है, परंतु वह किसी निष्क्रियता को जन्म नहीं देती; वह चेतना को उद्वेलित करती है। जहाँ व्यावहारिक शैली समाधान की ओर ले जाती है, वहीं संघर्षात्मक शैली समस्या की गहराई में उतरती है। एक दिशा दिखाती है, तो दूसरी दृष्टि देती है। दोनों में यदि संतुलन स्थापित हो जाए, तो साहित्य न केवल पाठक को प्रेरित करता है, बल्कि उसे अपने समय और समाज का सच समझने की क्षमता भी देता है। इस तरह भाषा की शक्ति उसकी शैली में निहित होती है। व्यावहारिकता हमें जीने की राह दिखाती है, जबकि जीवन-संघर्ष की शैली हमें जीने की वजह देती है। जब कोई लेखक या विचारक इन दोनों शैलियों का सामंजस्य स्थापित करता है, तभी उसकी रचना समाज में परिवर्तन का माध्यम बनती है। हमें भाषा की इस शक्ति को पहचानना होगा—जहाँ शब्द केवल संप्रेषण न होकर, चेतना का स्वरूप बन जाएं।

हिंदी की समकालीन कथाकारों में ममता कालिया का नाम एक सशक्त, नारी-संवेदना और यथार्थपरक दृष्टि से समृद्ध लेखिका के रूप में लिया जाता है। उनकी कहानियाँ जहाँ आधुनिक भारतीय समाज की जटिलताओं को उकेरती हैं, वहीं भाषा-शैली की दृष्टि से वे व्यावहारिकता और जीवन-संघर्ष का अनूठा संगम प्रस्तुत करती हैं। ममता कालिया की भाषा सहज, प्रवाहपूर्ण और संवादधर्मी होती है। वे बोझिल और अलंकारिक शैली से परहेज़ करते हुए आम बोलचाल की भाषा में असाधारण यथार्थ को व्यक्त करती हैं। उनकी कहानियों में छोटे-छोटे वाक्य, व्यंग्यात्मक स्वर, तथा जीवन की सामान्य घटनाओं को तीव्र व्यावहारिक दृष्टि से देखा गया है। यह भाषा पाठक को सीधे संबोधित करती है— वह भाषा, जो जिंदा लोगों की बात करती है। उदाहरण के लिए, 'बोलने वाली औरत' कहानी में स्त्री के आत्मबोध और सामाजिक स्थितियों को जिस सटीक और प्रभावशाली भाषा में व्यक्त किया गया है, वह व्यावहारिक शैली की उत्कृष्ट मिसाल है।

ममता कालिया की कहानियाँ स्त्री के मानसिक, सामाजिक और पारिवारिक संघर्षों को केंद्र में रखती हैं। वे किसी आभासी या काल्पनिक संघर्ष की बात नहीं करतीं, बल्कि नौकरीपेशा महिलाओं, गृहिणियों, शिक्षिकाओं, बेटियों और पत्नियों की भीतरी उथल-पुथल को अत्यंत यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत करती हैं। यह संघर्ष केवल बाहरी नहीं, भीतर का भी है— पहचान, अस्तित्व, आत्मसम्मान और स्वाभिमान का संघर्ष। उनकी कहानी 'हवाई जहाज़' एक सामान्य नौकरीपेशा स्त्री के सपनों, ख्वाहिशों और उनके बिखराव की

सशक्त व्याख्या है। भाषा-शैली में प्रयुक्त व्यंग्य और विडंबना जीवन-संघर्ष की गहराई को और प्रखर बनाते हैं। निष्कर्षतः ममता कालिया की कहानियों में भाषा-शैली न तो भावनात्मकता की चाशनी में डूबी होती है, न ही दार्शनिकता से ओत-प्रोत- वह सीधी, सधी हुई और व्यवहार के धरातल पर टिकी होती है। यह शैली न केवल उनके लेखन की पहचान है, बल्कि आज के पाठक की संवेदना से भी गहराई से जुड़ती है।

6.4.1 व्यावहारिकता की भाषा और दृष्टिकोण

समकालीन हिंदी कथा-साहित्य में ममता कालिया एक ऐसी कथाकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं, जिन्होंने विशेष रूप से स्त्री-जीवन के विविध पक्षों को यथार्थ और व्यावहारिक दृष्टिकोण से अभिव्यक्त किया है। उनकी कहानियों की भाषा-शैली और दृष्टिकोण सामाजिक यथार्थवाद की उस परंपरा को आगे बढ़ाते हैं, जो सृजन को कृत्रिम सौंदर्यान्वेषण से पृथक रखते हुए जीवन के ठोस अनुभवों से जोड़ती है। ममता कालिया की रचनाएँ कथ्य की अपेक्षा भाषा और दृष्टिकोण में कहीं अधिक प्रभावशाली प्रतीत होती हैं, जो उनके लेखन की मौलिकता का प्रमुख आधार है। ममता कालिया की भाषा शैलीगत दृष्टि से न तो क्लिष्ट है और न ही साहित्यिक अलंकरणों से बोझिल। वह आम जीवन की व्यावहारिकता से जुड़ी हुई भाषा है, जिसमें संवाद की स्पष्टता, कथन की तीव्रता और अभिव्यक्ति की निर्भीकता समाहित है। उनकी कहानियों में प्रयुक्त भाषा प्रायः लोकप्रचलित मुहावरों, सामान्य वाक्य-विन्यास तथा नारी जीवन के व्यावसायिक-सामाजिक संदर्भों को सजीव रूप में प्रस्तुत करती है। यह भाषा पात्रों के मानस और उनकी सामाजिक स्थिति को पूरी संप्रेषणीयता के साथ उभारती है। विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि ममता कालिया की भाषा में नाटकीयता का अभाव और स्वाभाविक प्रवाह प्रमुख रूप से दृष्टिगोचर होता है। 'बोलने वाली औरत' , 'एक अदद औरत' जैसी कहानियाँ इसकी सशक्त उदाहरण हैं, जहाँ भाषा नारी अनुभवों की अभिव्यक्ति का माध्यम मात्र नहीं, बल्कि उनके अंतर्द्वंद्वों की संवाहिका बन जाती है।

ममता कालिया का दृष्टिकोण भावुकता या विचारधारात्मक आग्रहों से मुक्त है। वह स्त्री-जीवन के यथार्थ पक्षों को बिना किसी वैचारिक पाखंड या सैद्धांतिक आग्रह के प्रस्तुत करती हैं। उनका दृष्टिकोण प्रयोगशील और अनुभवजन्य है, जो जीवन की जटिलताओं को सहजता से उद्घाटित करता है। वे अपने पात्रों को किसी आदर्श स्थिति में नहीं, बल्कि उनकी सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के भीतर रखकर उनकी मानसिक संरचनाओं और व्यवहारगत प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण करती हैं। उनकी दृष्टि में नारी जीवन की वास्तविकताएँ, जैसे- नौकरी और परिवार के बीच संतुलन, पुरुष वर्चस्व का दबाव, पहचान की तलाश, और आत्मसम्मान की जद्दोजहद- सब कुछ अत्यंत व्यावहारिक स्तर पर आता है। उनकी कहानियाँ किसी क्रांतिकारी उद्घोषणा का मंच नहीं बनतीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ की संवेदनशील व्याख्या प्रस्तुत करती हैं।

ममता कालिया की कहानियों में भाषा और दृष्टिकोण का समन्वय उनके कथा-साहित्य को विशेष बनाता है। जिस सहजता से वे स्त्री-जीवन के सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक पक्षों को उजागर करती हैं, वह उनकी भाषा की व्यावहारिक प्रकृति और दृष्टिकोण की जीवनधर्मिता का प्रमाण है। उनका व्यंग्यात्मक स्वर, संवादों की स्वाभाविकता और कथ्य की स्पष्टता पाठक को सहज ही कथानक से जोड़ लेती है। ममता कालिया की कहानियाँ हिंदी कथा-साहित्य की उस धारा का प्रतिनिधित्व करती हैं, जो भाषा और दृष्टिकोण दोनों में यथार्थवादी, व्यावहारिक और जीवन-संगत स्वर अपनाती हैं। वे नारी जीवन, मध्यवर्गीय मानसिकता, सामाजिक ढाँचों और पारिवारिक विडंबनाओं को जिस सहज-सरल परंतु तीव्र भाषा में प्रस्तुत करती हैं, वह न केवल शैलीगत दृष्टि से व्यावहारिक है, बल्कि वैचारिक स्तर पर भी गहराई लिए होती है।

ममता कालिया की कहानियों की भाषा अनावश्यक अलंकरण से मुक्त, संवादात्मक और बोलचाल की ज़बान में रची गई है। वे सघन बिंबों या प्रतीकों के माध्यम से नहीं, बल्कि सीधी, सरल और तर्कयुक्त भाषा से पाठक को संबोधित करती हैं। यह भाषा जटिल नहीं है, पर उसमें तीखापन है- एक प्रकार की चुपचाप कटाक्ष करती हुई स्पष्टवादिता। उनकी कहानी 'एक अदद औरत' में यह भाषा अत्यंत प्रभावशाली ढंग से सामने आती है, जहाँ स्त्री पात्र की सोच और अनुभव उस भाषा में ढलते हैं, जो आम महिला पाठकों को सीधे संबोधित करती है- 'तुम्हारे जैसे कितने ही मर्दों को झोला है मैंने...'

ममता कालिया का दृष्टिकोण किसी भावुकता या आदर्शवाद की ओर नहीं झुकता। उनका लेखन स्त्री-विमर्श के नाम पर कृत्रिम उत्तेजना पैदा करने की बजाय वास्तविक समस्याओं को केंद्र में रखता है। उनके पात्र किसी दैवी चमत्कार से नहीं बदलते, वे समाज की सीमाओं के भीतर संघर्ष करते हैं, हारते हैं, फिर खड़े होते हैं। इस व्यावहारिक दृष्टिकोण का उदाहरण कहानी 'हल्की धूप' में देखा जा सकता है, जहाँ वृद्धावस्था और उपेक्षा को किसी बड़ी भावुकता के बिना, परंतु गहरी मार्मिकता और यथार्थबोध के साथ दिखाया गया है। लेखक पात्रों को समाज से तो लड़ाते हैं, लेकिन क्रांति के नारों में नहीं, बल्कि उनके दैनिक अनुभवों और विकल्पों में। ममता कालिया की व्यावहारिक भाषा में व्यंग्य और विडंबना का विशेष स्थान है। यह शैली न तो भावुक है, न ही आक्रोशित, परंतु उसमें एक ऐसा ठंडा गुस्सा है जो पाठक को झकझोर देता है। यह व्यंग्य उनकी भाषा को जीवंत और प्रभावशाली बनाता है।

निष्कर्षतः ममता कालिया की कहानियों में व्यावहारिक भाषा और दृष्टिकोण उन्हें समकालीन कथा-साहित्य में एक विशिष्ट स्थान प्रदान करते हैं। उनकी भाषा समाज के आडंबर को छेदती है, और उनका दृष्टिकोण पाठक को नायक नहीं, 'साक्षी' बनने का अवसर देता है— उस संघर्ष का जो हमारे ही घरों, दफ्तरों, और संबंधों में प्रतिदिन घटित हो रहा है। वे हमें यह नहीं कहतीं कि दुनिया बदल दो; वे यह दिखाती हैं कि यह दुनिया कैसी है— बिना लाग-लपेट के, एकदम साफ-साफ। निस्संदेह, ममता कालिया की कहानियाँ भाषा-शैली की दृष्टि से एक ऐसे लेखन की प्रस्तुति हैं, जो जीवन के व्यावहारिक पक्षों से अभिसिंचित हैं। उनकी भाषा न तो साहित्यिक सौंदर्यबोध के कृत्रिम प्रतिमानों की मोहताज है और न ही उनका दृष्टिकोण किसी वैचारिक अतिरेक से संचालित होता है। यही कारण है कि उनका कथा-साहित्य पाठक के निकट आता है, उसे झकझोरता है, और साथ ही एक गहरी सामाजिक चेतना भी उत्पन्न करता है।

6.4.2 जीवन-संघर्ष की ईमानदार प्रस्तुति

ममता कालिया समकालीन हिंदी कथा-साहित्य की उन विशिष्ट कथाकारों में गिनी जाती हैं, जिनकी रचनात्मकता ने मध्यवर्गीय स्त्री जीवन, सामाजिक असमानता तथा

आत्म-प्रतिष्ठा के संघर्षों को अत्यंत ईमानदारी, संवेदनशीलता और व्यावहारिक दृष्टिकोण से अभिव्यक्त किया है। उनकी कहानियों की भाषा-शैली न केवल सहज और प्रवाहमयी है, अपितु वह जीवन-संघर्ष की यथार्थपरक और निर्मम स्थितियों को भी अत्यंत प्रामाणिकता के साथ पाठक के समक्ष प्रस्तुत करती है। ममता कालिया की भाषा प्रांजल, संवादात्मक और व्यावहारिक यथार्थ से संपृक्त है। उनकी भाषा में किसी प्रकार की आडंबरपूर्ण क्लिष्टता नहीं पाई जाती, वरन् उसमें वह स्वाभाविकता है जो जीवन के छोटे-छोटे संघर्षों को सजीव बनाने में समर्थ होती है। यह भाषा उस वर्ग की है, जो बोलचाल की आम ज़बान में अपने अनुभवों को बाँटता है। उदाहरणतः उनकी कहानी 'नरक दर नरक' में नौकरीशुदा स्त्री के मानसिक तनावों और पारिवारिक संघर्ष को जिस आत्मीय शैली में प्रस्तुत किया गया है, वह भाषा की ईमानदारी और अनुभव की गहराई का प्रमाण है।

ममता कालिया की लेखन शैली में भावुकता की अतिशयोक्ति नहीं, अपितु संयमित भावबोध, दैनंदिन अनुभवों की आत्मीयता, और विनम्र प्रतिरोध की चेतना निहित है। उनका लेखन नारेबाज़ स्त्री-विमर्श नहीं, बल्कि स्त्री के भीतर पल रहे मानसिक संघर्षों की सूक्ष्म, परंतु प्रभावी अभिव्यक्ति है। उनकी शैली में प्रायः एक संयमित व्यंग्य भी देखा जा सकता है, जो सामाजिक रूढ़ियों, पितृसत्ता और दंभी मध्यवर्गीय मूल्यों पर सधा हुआ प्रहार करता है। उदाहरणस्वरूप, 'एक अदद औरत' कहानी में नायिका की ज़िन्दगी के संघर्षों को जिस संवेदनशील परंतु तटस्थ भाषा में प्रस्तुत किया गया है, वह नारी मन की अंतःक्रियाओं को गहराई से उद्घाटित करती है। यहाँ भाषा न केवल अभिव्यक्ति का माध्यम है, बल्कि एक मौन सामाजिक प्रतिरोध भी बन जाती है। ममता कालिया की कहानियों की केंद्रीय विशेषता यह है कि वे जीवन को किसी रोमैंटिक कल्पना के रूप में नहीं, बल्कि नितांत यथार्थ के धरातल पर चित्रित करती हैं। स्त्री पात्रों के संघर्षों को वह किसी "मुक्ति" या "क्रांति" के आदर्शवादी विमर्श में नहीं, बल्कि उनके दैनिक जीवन के संघर्षों, अपमानों, अस्वीकारों और छोटी-छोटी जीतों में तलाशती हैं। उनकी कहानियाँ किसी चमत्कार की नहीं, संघर्षरत मानवीय इच्छाओं की सच्ची पड़ताल हैं।

ममता कालिया की कहानियों में भाषा-शैली की दृष्टि से जीवन-संघर्ष की जो ईमानदार प्रस्तुति सामने आती है, वह समकालीन हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। उनकी भाषा सादा होकर भी गहन है, और उनकी शैली में भावनात्मकता होकर

भी संतुलन है। वे अपने पात्रों को बिना महिमामंडन के, उनकी कमजोरियों और सीमाओं के साथ प्रस्तुत करती हैं- यही ईमानदारी पाठक को इन कहानियों से जोड़ती है और उन्हें दीर्घकालिक प्रभाव प्रदान करती है। इस प्रकार, ममता कालिया का कथा-साहित्य भाषा और शैली के स्तर पर न केवल उत्कृष्ट है, अपितु जीवन-संघर्ष की मर्मस्पर्शी और सत्यनिष्ठ प्रस्तुति के कारण हिंदी साहित्य की मूल्यवान निधि बन चुका है।

6.4.3 मध्यमवर्गीय यथार्थ की भाषा

हिंदी कथा-साहित्य के परिदृश्य में ममता कालिया का स्थान एक ऐसी कथाकार के रूप में है, जिन्होंने नारी अनुभवों के साथ-साथ मध्यमवर्गीय जीवन की विडंबनाओं, संघर्षों और आकांक्षाओं को अत्यंत स्वाभाविक भाषा और शैली में प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियाँ यथार्थ की उस परत तक पहुँचती हैं, जहाँ सामाजिक, आर्थिक और मानसिक स्थितियाँ मिलकर व्यक्ति की सोच, आचरण और संबंधों को आकार देती हैं। इस सापेक्ष में ममता कालिया की भाषा-शैली विशिष्ट रूप से मध्यमवर्गीय यथार्थ की भाषा बन जाती है- एक ऐसी भाषा, जो जीवन की सहज धड़कनों को अभिव्यक्त करने में समर्थ है।

ममता कालिया की कहानियों में प्रयुक्त भाषा न तो अलंकरणों से युक्त है और न ही साहित्यिक बौद्धिकता से आच्छादित। वह भाषा है मध्यवर्गीय जीवन की सीधी-सादी परंतु गहरी अनुभूतियों की। उनकी कहानियों के पात्र- विशेषकर स्त्रियाँ- जिस भाषा में सोचती, बोलती और प्रतिक्रिया व्यक्त करती हैं, वह भाषा आर्थिक सीमाओं, सामाजिक अपेक्षाओं और निजी इच्छाओं से उपजी हुई होती है। उदाहरणस्वरूप, 'नरक दर नरक' , 'बोलने वाली औरत' तथा 'एक अदद औरत' जैसी कहानियाँ इस यथार्थ को न केवल चित्रित करती हैं, बल्कि मध्यमवर्गीय स्त्री के आत्मसंघर्ष को उसकी ही भाषा में कहने का माध्यम बन जाती हैं। यह भाषा सामाजिक साँचों से बाहर निकलने की छटपटाहट के साथ-साथ परंपराओं में बंधे रहने की विवशता को भी सजीव बनाती है।

ममता कालिया की कहानियों में संवाद एक प्रमुख शैलीगत विशेषता है। यह संवाद न केवल पात्रों के बीच, बल्कि लेखक और पाठक के बीच भी स्थापित होता है। मध्यमवर्गीय भाषा की स्पष्टता, व्यावहारिकता और गाहे-बगाहे कटाक्ष उस सामाजिक

विडंबना को उजागर करते हैं, जिसे यह वर्ग अक्सर झेलता है लेकिन अभिव्यक्त करने से डरता है। उनकी शैली में एक नरम लेकिन प्रभावशाली व्यंग्य भी देखा जा सकता है, जो पितृसत्तात्मक सोच, सामाजिक दिखावे, और नौकरीशुदा स्त्री के दोहरे संघर्ष पर करारा प्रहार करता है। उनकी भाषा इन विडंबनाओं को बिना भावुकता में बहकर, अत्यंत संयमित और सधी हुई शैली में सामने लाती है। ममता कालिया की भाषा का सबसे प्रभावशाली पक्ष उसकी बोलचाल की प्रकृति है। यह वह भाषा है जो न पाठक को बौद्धिक बनाती है, न ही उसे भाषाई जटिलता में उलझाती है, बल्कि सीधे उसके अनुभवों, स्मृतियों और अपने आसपास के जीवन से जोड़ देती है। भावनाओं का प्रस्तुतीकरण भी अतिनाटकीय न होकर स्वाभाविक और आत्मीय होता है। उनकी भाषा में प्रयुक्त वाक्य विन्यास, मुहावरे, स्त्री-विशेष संदर्भ, और सामाजिक कथन उन्हें एक प्रतिनिधि मध्यमवर्गीय संवेदना का कथाकार सिद्ध करते हैं।

ममता कालिया की कहानियाँ भाषा-शैली की दृष्टि से एक ऐसे साहित्यिक यथार्थ की रचना करती हैं, जो मध्यमवर्गीय जीवन की संवेदनाओं, संघर्षों और अंतर्विरोधों को उसकी अपनी भाषा में व्यक्त करती है। यह भाषा न तो जनसंघर्ष की नारेबाजी करती है और न ही सौंदर्यबोध के कृत्रिम आग्रहों में उलझती है; बल्कि वह सामाजिक यथार्थ की सादगी और जटिलता दोनों को ईमानदारी से चित्रित करती है। इस दृष्टिकोण से ममता कालिया का कथा-साहित्य हिंदी में एक ऐसी प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करता है, जहाँ भाषा माध्यम न होकर आत्मा बन जाती है— उस वर्ग की आत्मा, जो न निचले वर्ग का प्रतिनिधि है, न उच्च वर्ग का संरक्षक, बल्कि अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए प्रतिदिन एक नया युद्ध लड़ता है।

6.4.4 भावुकता से बचाव

हिंदी कथा-साहित्य की समकालीन प्रवृत्तियों में ममता कालिया का लेखन एक विशिष्ट स्थान रखता है। उन्होंने नारी जीवन, मध्यमवर्गीय संघर्ष और सामाजिक विडंबनाओं को जिस सादगीपूर्ण, सहज एवं व्यावहारिक भाषा-शैली में प्रस्तुत किया है, वह विशेष ध्यानाकर्षण का विषय रही है। उनकी सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वे अत्यंत गंभीर

और भावनात्मक मुद्दों को भी अतिनाटकीयता या अनावश्यक भावुकता से बचाते हुए संयमित, वस्तुनिष्ठ और व्यंग्यात्मक शैली में प्रस्तुत करती हैं। उनकी भाषा-शैली का सबसे प्रभावशाली पहलू यह है कि वे गंभीर विषयों के चित्रण में अनावश्यक भावुकता या करुणा का अतिरेक नहीं आने देतीं, बल्कि उसे तटस्थ, प्रखर और यथार्थपरक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती हैं।

ममता कालिया की कहानियों की मूल चेतना यथार्थ की अनुभूति से गहराई से जुड़ी है। वे सामाजिक संरचनाओं और स्त्री जीवन की विडंबनाओं को भावुकता की चाशनी में डुबोकर नहीं, बल्कि तथ्यपरक और व्यावहारिक दृष्टिकोण से चित्रित करती हैं। उनके लिए करुणा, अन्याय और संघर्ष का चित्रण महज़ करुण रस के माध्यम से नहीं, बल्कि चिंतन और आत्मावलोकन की प्रक्रिया के तहत होता है। कहानी 'एक अदद औरत' या 'बोलने वाली औरत' में यह स्पष्ट देखा जा सकता है कि जहाँ अन्य लेखक स्त्री-जीवन की पीड़ा को करुणापूर्वक प्रस्तुत करते हैं, वहीं ममता कालिया अपने पात्रों को संघर्षशील, आत्मचिंतनशील और कभी-कभी व्यंग्यात्मक रूप में प्रस्तुत करती हैं। यह शैली भावुकता से एक सचेत दूरी बनाए रखती है।

ममता कालिया की बहुचर्चित कहानी 'एक अदद औरत' इस संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय है। यह कहानी एक ऐसी स्त्री की जीवन-यात्रा को दर्शाती है, जो अपनी पहचान, स्वतंत्रता और अस्तित्व के लिए निरंतर संघर्ष करती है। कथा की नायिका न तो परंपरागत नारी छवि में सीमित है, न ही वह आत्मदया में डूबी कोई करुण पात्र है। कहानी की भाषा-शैली अत्यंत संयमित, स्पष्ट और अनावश्यक अलंकारों से रहित है। उदाहरणस्वरूप, नायिका के मन में उत्पन्न यह विचार— "औरत को जीने के लिए एक अदद आदमी नहीं, बल्कि एक अदद आत्मबल चाहिए।" —यह पंक्ति न केवल कथ्य का सार है, बल्कि यह भी स्पष्ट करती है कि लेखिका भावुकता से इतर संघर्ष और आत्मस्वीकृति के माध्यम से समाधान की राह दिखाती हैं। यहां स्त्री न पीड़िता है, न आदर्श प्रतीक— वह बस एक संजीव वास्तविकता है। कहानी में कई ऐसे संवाद और वर्णन हैं जो हल्के-फुल्के व्यंग्य के साथ सामाजिक विडंबना को प्रकट करते हैं, जैसे— "पति की पसंद वह थी जो घर बैठे चाय बना सके और ऑफिस जा सके, लेकिन दहेज में कार भी लाए।" (कालिया, 121)। यह संवाद हास्य की शैली में कही गई विडंबना है, लेकिन इसके पीछे छिपा स्त्री की वस्तुकरण की

सच्चाई अत्यंत गंभीर है। इस प्रकार, कहानी भावुकता में बहने की बजाय यथार्थ की कसौटी पर विषय को कसती है। इस तरह 'एक अदद औरत' केवल एक स्त्री की कथा नहीं है, वह हजारों स्त्रियों की उस सोच की अभिव्यक्ति है, जो भावुकता और सहानुभूति से ऊपर उठकर आत्मनिर्णय की आकांक्षा रखती हैं। ममता कालिया की भाषा शैली संवेदनशील होते हुए भी संवेदनाओं की लज्जा में उलझती नहीं, बल्कि उन्हें तर्क और आत्मदृष्टि से जोड़ती है। इस तरह उनकी कहानियाँ न केवल भावुकता से बचती हैं, बल्कि पाठकों को मनन और आत्ममंथन की दिशा में भी प्रेरित करती हैं— यही उनकी भाषा की साहित्यिक और सामाजिक शक्ति है।

ममता कालिया की कहानी 'बोलने वाली औरत' एक ऐसी स्त्री की कथा है जो अपने अस्तित्व, स्वतंत्रता और सोच की अभिव्यक्ति के लिए परंपरागत चुप्पी को तोड़ती है। इस कहानी की भाषा में न कोई भावुक अपील है, न ही करुणाजनक चित्रण— बल्कि एक ऐसी शैली है, जो तीक्ष्ण, विश्लेषणात्मक और यथार्थ के धरातल पर टिकी है। नायिका की 'बोलने' की क्रिया यहाँ सामाजिक विद्रोह का प्रतीक बन जाती है। वह जब यह कहती है— "अगर बोलने की सज़ा मिलती है, तो मैं वह भी भुगत लूंगी, लेकिन चुप नहीं रहूंगी।" (कालिया, 127). तो यह संवाद भावुकता नहीं, आत्मबल की उद्घोषणा है। कहानी की भाषा नाटकीयता से दूर है और संवाद-संरचना अत्यंत सधी हुई है— जिसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं, बल्कि एक साधारण स्त्री की असाधारण स्पष्टता है। 'बोलने वाली औरत' में ममता कालिया यह दर्शाती हैं कि स्त्री विमर्श को भावुकता के सहारे नहीं, बल्कि चेतना, तर्क और आत्मनिष्ठा के साथ प्रस्तुत किया जाना चाहिए। यहाँ भाषा की शैली नरम शब्दों के माध्यम से दिल जीतने वाली नहीं, बल्कि साफ, दो टूक, कभी-कभी असहज कर देने वाली है। यह शैली पाठक को संवेदनशील तो बनाती है, परंतु भावना के बहाव में नहीं बहने देती। ममता कालिया की 'एक अदद औरत' और 'बोलने वाली औरत' जैसी कहानियाँ यह प्रमाणित करती हैं कि लेखिका की भाषा-शैली संवेदनशील है, परंतु भावुक नहीं। उनकी कहानियों की स्त्रियाँ केवल पीड़िता नहीं हैं — वे संघर्षशील, सजग और आत्मनिरीक्षण से परिपूर्ण व्यक्तित्व हैं। ममता कालिया की लेखनी नारीवाद को भावुकता नहीं, चिंतन और व्यंग्य के औज़ारों से सशक्त करती है। इस प्रकार, उनका कथा-साहित्य पाठकों को रुलाता

नहीं, बल्कि जगाता है, सोचने पर विवश करता है, और यही उनकी भाषा-शैली की सबसे बड़ी सफलता है।

ममता कालिया की भाषा-शैली में संवादों की महत्ता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ये संवाद बहुधा अत्यंत तटस्थ, सहज और वास्तविक प्रतीत होते हैं। भावुकता से बचाव की प्रक्रिया में यह संवादात्मक शैली महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पात्रों की आपसी बातचीत में कहीं भी अनावश्यक करुणा या अतिरेक नहीं होता, बल्कि वर्तमान जीवन की विडंबनाओं को स्वीकार कर चलने का साहसिक भाव होता है। उदाहरण के लिए, नौकरीशुदा स्त्री की दोहरी जिम्मेदारियों और पारिवारिक अपेक्षाओं के द्वंद्व को ममता कालिया दैनंदिन भाषा में, हल्के-फुल्के किंतु गहरे कटाक्ष के साथ चित्रित करती हैं- जिससे पाठक को भावनात्मक संवेदना तो मिलती है, किंतु वह सहानुभूति के अतिरेक में नहीं डूबता। ममता कालिया की भाषा में एक अंतर्निहित व्यंग्य की प्रवृत्ति भी पाई जाती है, जो भावुकता की संभावनाओं को नियंत्रित करने में सहायक होती है। यह व्यंग्य न केवल समाज के दोहरे मानदंडों पर कटाक्ष करता है, बल्कि कभी-कभी स्त्रियों की स्वयं की अंतर्विरोधी मानसिकता पर भी तीखा प्रहार करता है। यही आत्मालोचनात्मक प्रवृत्ति उनकी कहानियों को संतुलित बनाती है। भावुकता की जगह तथ्यात्मक निरीक्षण, आंतरिक द्वंद्व, और समाज की कटु सच्चाइयों का ठोस चित्रण उनके लेखन को एक गहन आलोचनात्मक स्वर प्रदान करता है।

ममता कालिया की कहानियाँ भाषा-शैली की दृष्टि से एक ऐसे कथा-संवेदन की प्रतीक हैं, जो भावुकता से बचते हुए गहन सामाजिक यथार्थ को उजागर करती हैं। उनकी भाषा न तो भावनाओं को अस्वीकार करती है, न ही उन्हें अतिनाटकीय बनाती है; अपितु वह एक संयमित, सधी हुई और सशक्त स्त्री चेतना को सामने लाती है, जो समाज की विषमताओं को अपने अनुभव और बुद्धि से समझती और व्यक्त करती है। इस प्रकार, ममता कालिया का कथा-साहित्य नारी के संघर्ष को महज दया का विषय नहीं बनाता, बल्कि उसे संवेदनात्मक बौद्धिकता का विषय बनाकर वास्तविक सामाजिक विमर्श में स्थान प्रदान करता है। यह भावुकता से नहीं, बल्कि सत्यनिष्ठा और व्यावहारिक विवेक से उपजा साहित्य है।

6.5 भावनाओं की अभिव्यक्ति

संवादों के माध्यम से पात्रों के भीतर छिपी हुई भावनाएँ— जैसे प्रेम, घृणा, पीड़ा, क्रोध, असुरक्षा या आशा— सहज रूप में पाठक तक पहुँचती हैं। अच्छी भाषा-शैली वह होती है जो इन भावनाओं को बोझिल बनाये बिना सजीवता के साथ प्रस्तुत करे। उदाहरण के लिए, प्रेमचंद के पात्रों के संवादों में व्यथा और सामाजिक पीड़ा की झलक स्पष्ट दिखाई देती है, जो पाठक के मन को गहराई तक प्रभावित करती है। भाषा-शैली की दृष्टि से प्रभावशाली संवाद वे होते हैं जो संक्षिप्त हों, लेकिन अपने भीतर गहन अर्थ समेटे हुए हों। लंबे और जटिल संवाद, यदि आवश्यकता से अधिक हों, तो रचना की गति को बाधित करते हैं। दूसरी ओर, स्पष्ट और चुटीले संवाद न केवल कथानक को गति देते हैं, बल्कि पाठकों की स्मृति में भी स्थान बना लेते हैं।

संवादों की भाषा में लोक-संस्कृति, मुहावरे, कहावतें, क्षेत्रीय बोलियाँ आदि का प्रयोग रचना को अधिक सजीव और यथार्थवादी बनाता है। इससे न केवल पात्र अधिक वास्तविक लगते हैं, बल्कि पाठक उस विशेष सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य से भी जुड़ पाते हैं। उदाहरणस्वरूप, फणीश्वरनाथ 'रेणु' की रचनाओं में प्रयुक्त बोली भाषा उनके पात्रों को ज़मीन से जोड़ती है और सामाजिक यथार्थ को गहराई से प्रकट करती है। संवाद कई बार केवल कथानक को आगे नहीं बढ़ाते, बल्कि लेखक के दर्शन, विचार और वैचारिक टकरावों को भी व्यक्त करते हैं। विशेषकर नाट्य साहित्य या विचारप्रधान उपन्यासों में संवादों के माध्यम से लेखक सामाजिक, राजनीतिक या दार्शनिक मतों को पाठक के समक्ष प्रस्तुत करता है। मोहन राकेश के नाटकों में इस प्रकार के संवाद प्रचुर मात्रा में मिलते हैं, जहाँ प्रत्येक पात्र अपने अस्तित्व, संबंध और सामाजिक सीमाओं पर प्रश्न उठाता है।

संवादों की प्रभावशीलता तभी परिपूर्ण होती है जब वे कथानक को आगे बढ़ाते हैं और उसमें नाटकीयता का संचार करते हैं। संवादों के माध्यम से ही तनाव, रहस्य, और उत्सुकता का निर्माण होता है। यह शैलीगत विशेषता पाठक को अंत तक बाँधे रखने में सहायक होती है। सिनेमा और रंगमंच में तो संवाद ही दृश्य प्रभावों से अधिक महत्वपूर्ण हो जाते हैं। संवादों की प्रभावशीलता केवल उनके अर्थ या कथ्य में नहीं, बल्कि उनकी भाषा-शैली में निहित होती है। एक सफल संवाद वह है जो पात्र की आत्मा से उपजे, पाठक

के मन तक पहुँचे और रचना को जीवंत बना दे। साहित्य के क्षेत्र में संवादों की यह भाषा-शैली ही उन्हें केवल शब्दों का समूह नहीं, बल्कि विचारों, भावनाओं और संवेदनाओं का दर्पण बना देती है।

ममता कालिया समकालीन हिंदी साहित्य की एक प्रमुख कथाकार हैं, जिनकी कहानियों में स्त्री-जीवन, मध्यवर्गीय संघर्ष और सामाजिक विडंबनाओं का यथार्थ चित्रण मिलता है। उनकी रचनाओं की सबसे बड़ी शक्ति उनके संवादों की प्रभावशीलता में निहित है, जो भाषा-शैली की दृष्टि से अत्यंत स्वाभाविक, तीखे और सजीव होते हैं। उनके संवादों में नाटकीयता नहीं, बल्कि जीवन का खुरदुरापन है। पात्रों के कथन उनके वर्ग, परिवेश और मनोभावों के अनुरूप होते हैं। चाहे वह 'बेवफाई' जैसी कहानी हो या 'छोटे-छोटे ताजमहल', संवादों के माध्यम से वे नारी-मन की उलझनों, दांपत्य तनाव, और सामाजिक दोहरों को बहुत सहज किंतु तीव्र प्रभाव के साथ उकेरती हैं। ममता कालिया के संवाद संक्षिप्त, तीखे और व्यंग्यात्मक होते हैं। वे पात्रों के भीतर की बेचैनी, द्वंद्व और विरोध को उनकी बोलचाल की भाषा में इस तरह पिरोती हैं कि पाठक उसमें अपनी ही छाया देखने लगता है। उनका संवाद-शिल्प पाठक को भावुकता में नहीं, बल्कि तार्किक और वैचारिक प्रतिक्रिया में ले जाता है। इस प्रकार, ममता कालिया की कहानियों में संवाद केवल सहायक उपकरण नहीं, बल्कि कथ्य का केंद्रीय आधार बन जाते हैं, जो भाषा-शैली की दृष्टि से उनकी रचनाओं को अत्यंत प्रभावशाली और विशिष्ट बनाते हैं।

6.5.1 स्वाभाविकता और जीवन्तता

समकालीन हिंदी कथा साहित्य में ममता कालिया एक ऐसा नाम हैं जिन्होंने नारी मन की गहन संवेदनाओं, सामाजिक विसंगतियों और मध्यवर्गीय जीवन के यथार्थ को अत्यंत सहज, स्वाभाविक और सजीव भाषा के माध्यम से पाठकों तक पहुँचाया है। उनकी कहानियाँ न केवल विषयवस्तु की दृष्टि से सशक्त हैं, बल्कि उनकी भाषा-शैली भी पाठकों को गहरे स्तर पर प्रभावित करती है। इस लेख में हम उनकी कहानियों में भाषा-शैली की दृष्टि से स्वाभाविकता और जीवन्तता के विविध पहलुओं का विश्लेषण करेंगे। ममता कालिया की भाषा की सबसे बड़ी विशेषता उसकी स्वाभाविकता है। वे ऐसे शब्दों और वाक्य

संरचनाओं का चयन करती हैं जो आम आदमी की बोलचाल का हिस्सा हैं। उनकी कहानियों में कोई बनावटीपन नहीं है, न ही भाषा पर कृत्रिम अलंकरण थोपे गए हैं। 'बच्चा' कहानी का एक उदाहरण देखिए-

"मैंने नेहरूजी की 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा, "लो इसे पढ़ाना शुरू करो, यह हमेशा काम देगी।"

बच्चे ने कहा, "यह मैं पहले ही पढ़ चुका हूँ। नाइन्थ में मेरे कोर्स में थी।"

पार्टी में जाते वक्त मैं सोच रही थी, हम अपने बच्चे को कितना कम जानते हैं।

पार्टी में शोर था, शराब थी, कबाब थे। वहाँ ढेर ढेर बातें थी, बकवास थी। मेरा चित्त उखड़ा हुआ था। रह-रहकर बच्चे का भोला लेकिन गंभीर मुख मेरी आँखों के आगे आ रहा था।

तीसरे पैग के बाद मैं तिनतिना गई, "घर चलो।" (कालिया, 219)

इस कहानी में नायिका अपने बच्चे को यकायक बड़ा हो गया महसूस करती है, और बच्चे के बारे में आत्मगत चिंतन से व्याकुल नजर आती है। ममता कालिया के संवाद उनके पात्रों की पहचान बन जाते हैं। वे संवादों को पात्रों के सामाजिक वर्ग, आयु, लिंग और मानसिक स्थिति के अनुरूप ढालती हैं। उनके पात्र बोलते नहीं, जीते हैं, देखिए- कहानी 'सुपरमॉम की सुपर बेटियाँ' में माँ और बेटियों के बीच का वार्तालाप उनके रिश्तों की गर्मी और उलझनों को बड़ी सजीवता से दर्शाता है-

"मम्मी, आपको हर बार इतना परेशान होने की ज़रूरत नहीं है। हम लोग बच्चे नहीं हैं अब।"

"बच्चे नहीं हो तो घर की ज़िम्मेदारी भी उठाओ। सिर्फ फोन पर ज्ञान मत बाँटो।" (कालिया, 301)

माँ-बेटी का टकराव और स्नेह एक साथ इन पंक्तियों में झलकता है।

ममता कालिया की भाषा में हल्का हास्य और व्यंग्य भी छुपा होता है, जो समाज की विसंगतियों पर करारा प्रहार करता है। यह व्यंग्य न तो कटु होता है, न ही कृत्रिम; वह पात्र की सोच का स्वाभाविक विस्तार बन जाता है। 'एक अदद औरत' कहानी में नौकरी ढूँढते एक बेरोज़गार की मानसिकता को ममता कालिया इस तरह प्रस्तुत करती हैं- "इस बार तो रिज्यूमे में मैंने अंग्रेज़ी में 'क्रिएटिव' भी लिख दिया है। देखो, शायद कोई क्रिएटिव कंपनी फँस जाए।" यह व्यंग्य समाज की नौकरशाही और बेरोज़गारी की त्रासदी पर एक तीखी, लेकिन मुस्कुराती हुई टिप्पणी है।

ममता कालिया की कहानियों में भाषा-शैली की दृष्टि से जो स्वाभाविकता और जीवन्तता देखने को मिलती है, वह उन्हें समकालीन लेखिकाओं में एक विशिष्ट स्थान प्रदान करती है। उनकी कहानियों की भाषा किसी मंच की नहीं, बल्कि रसोई, ड्राइंग रूम, बस स्टॉप और ऑफिस की भाषा है- जिसमें स्त्री जीवन की पीड़ा, विरोध, प्रेम और व्यंग्य के सभी रंग सहजता से समाहित हैं। उनकी भाषा-शैली न केवल कथा को सजीव और संवादात्मक बनाती है, बल्कि पाठक को यह अनुभव कराती है कि ये कहानियाँ उसी की ज़िंदगी का कोई टुकड़ा हैं। यही उनकी सबसे बड़ी साहित्यिक सफलता है।

6.5.2 पात्रों की मानसिकता का प्रतिबिंब

हिंदी कथा साहित्य की समकालीन पीढ़ी में ममता कालिया का नाम उस लेखिका के रूप में लिया जाता है, जिनकी कहानियों में भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि पात्रों के मनोविज्ञान को उकेरने का सशक्त औज़ार बन जाती है। उनकी भाषा-शैली, वाक्य-विन्यास, संवाद और संकेतात्मक अभिव्यक्तियाँ पात्रों की आंतरिक संवेदनाओं, द्वंद्वों और मानसिक प्रवृत्तियों को अत्यंत प्रभावी ढंग से प्रकट करती हैं। इस लेख में हम विश्लेषण करेंगे कि कैसे ममता कालिया की भाषा पात्रों की मानसिकता को गहराई से उजागर करती है।

ममता कालिया के पात्र अक्सर आंतरिक संघर्षों से जूझते हैं। ये संघर्ष सामाजिक, पारिवारिक, या व्यक्तिगत होते हैं, और इनका प्रभाव पात्रों की भाषा पर साफ़ झलकता है। 'सफर' कहानी में, "मैं आकंठ भर गयी हूँ, मन रो रहा है, आँचल पकड़ कर

ठुनककर जब कहा- 'हम भी साथ चलेंगे माँ।' (कालिया, 274) ममता कालिया ने इन भावनाओं को भारी-भरकम शब्दों में नहीं, बल्कि भावनात्मक सरलता में पिरोया है। लेखिका अपने पात्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि के अनुसार भाषा का चयन करती हैं। उच्च, मध्यम या निम्न वर्ग- सभी वर्गों के पात्रों की मानसिकता उनके संवादों और सोचने के ढंग से झलकती है। ममता कालिया की भाषा में कई बार एक आंतरिक विडंबना होती है जो पात्रों की मानसिक स्थिति को गहराई से दर्शाती है। वे कभी सीधे नहीं कहतीं, बल्कि संकेतों और प्रतीकों के माध्यम से पात्रों की मनःस्थितियाँ उभारती हैं। 'श्यामा' कहानी का उदाहरण देखिए- "मैं पत्थर की तरह जड़ और निश्चल बैठी रही। मेरी स्मृतियाँ आठ साल पहले की एक सुबह में पहुँच गयी थी। जब एक श्याम सलोनी लड़कीनुमा महिला अपने सर्टिफिकेट्स लेकर मेरे पास आयी थी। उसने अपने भाई का पद और नाम बताते हुए गुजारिश की थी कि कॉलेज में उसे कोई नौकरी दे दूँ। वह हिन्दी में एम.ए. थी।" (कालिया, 257)।

ममता कालिया की भाषा में कोई अलंकारिक चमत्कार नहीं होता, लेकिन जीवन की सच्चाई और अनुभवों की तलखी उसकी ताकत होती है। यह शैली पात्रों की मानसिकता को सहजता से सामने लाती है। 'एक अकेला दुःख' कहानी में अपने बीमार भाई विचार की हालात से चिंतित बहन नीता बैठे बैठे अतीत का शरण लेती है, "उसे क्यों याद आ रहा है वह दिन जब उसके पैर के पंजे में फोड़ा निकला था और विचार उसे पीठ पर लादकर स्कूल ले गया था या वह वाला दिन जब उसे नींद आ गई थी और आधी रात तक जागकर विचार ने उसका होमवर्क पूरा किया था।" (कालिया, 204)। इस तरह ममता कालिया की कहानियों में भाषा न केवल संवाद का माध्यम है, बल्कि एक मनोवैज्ञानिक उपकरण के रूप में काम करती है, जो पात्रों की मानसिकता, सामाजिक दबाव, भावनात्मक खिंचाव और निजी चाहतों को अभिव्यक्ति देती है। उनकी भाषा में नाटकीयता नहीं, बल्कि जीवन की गहराई और यथार्थ की स्वाभाविकता है। यह विशेषता उन्हें न केवल एक कुशल कथाकार बनाती है, बल्कि उनकी कहानियों को सामाजिक और मनोवैज्ञानिक दस्तावेज़ के रूप में भी प्रस्तुत करती है। पाठक उनकी भाषा में पात्रों का मन पढ़ पाता है- यही ममता कालिया की साहित्यिक भाषा की असली शक्ति है।

6.5.3 स्त्री-विमर्श को मुखरता

हिंदी साहित्य में स्त्री-विमर्श की सशक्त अभिव्यक्ताओं की जब भी चर्चा होती है, ममता कालिया का नाम प्रमुखता से सामने आता है। उनके लेखन में स्त्री केवल एक भावुक पात्र नहीं, बल्कि एक संवेदनशील, विचारशील और संघर्षशील इकाई के रूप में उभरती है। विशेषकर उनकी भाषा-शैली स्त्री के आत्मबोध, असंतोष, विरोध और सामाजिक ढाँचे से टकराव को स्पष्ट रूप से सामने लाती है। उनकी भाषा न तो आक्रामक है, न ही अतिनाटकीय, बल्कि प्राकृतिक, व्यंग्यात्मक और विचारोत्तेजक शैली में स्त्री-विमर्श को प्रस्तुत करती है। ममता कालिया की भाषा सीधी, स्पष्ट और प्रभावशाली होती है। वे किसी दार्शनिक शब्दावली या विमर्श-प्रधान मुहावरे की बजाय दैनिक जीवन की बोलचाल में ही स्त्री की पीड़ा और विद्रोह को व्यक्त करती हैं। इस संदर्भ में 'मंदिरा' कहानी का यह अंश देखने योग्य है- "मंदिरा को लगा यह उसका दिल जो ओरिकल और वेन्ट्रिकल में चार अलग किस्म के खानों में बंटा हुआ है कुछ इस तरह का है। यह जो ऊपर की ओर का दायँ हिस्सा है, वह वृंदावन है, हर वक्त रास रचाये रहता है। आशा और उमंग के हिण्डोले चढ़ झूलता रहता है। कुछ इस कदर रोमान्टिक कि टैगोर-टाउन के आह-झरवाड़ भी इसे लता-कुंज नजर आने लगते हैं। यह दिल की बायीं तरफ पानीपत है। शायद यह हिस्सा कुछ कर गुजरने पर उतारू रहा करता है। किसी को काट खाने को आतुर किसी को चबा डालने को चंचल, इस हिस्से में हर वक्त कोई तलवार लिये घात में बैठा रहता है। यह निचली तरफ दो हिस्से में से एक तिजोरी लगी है।" (कालिया, 290)। यहाँ संवाद में कोई भारी भरकम विचारधारा नहीं है, फिर भी स्त्री के स्वाभिमान और आत्म-निर्णय की चेतना तीव्रता से प्रकट होती है।

ममता कालिया की कहानियों की नायिकाएँ केवल पारिवारिक दायरों तक सीमित नहीं होतीं, वे सोचती हैं, निर्णय लेती हैं और अपने अनुभवों के आधार पर संसार को समझती हैं। उनकी भाषा-शैली में स्त्री की यह मानसिक स्वतंत्रता स्पष्ट होती है। 'नींद क्यों रात भर नहीं आती' कहानी में नायिका कहती है- "अब मुझे किसी के लौटने का इंतज़ार नहीं होता। मैं खुद को सुला लेती हूँ, खुद से बातें कर लेती हूँ।" यह आत्मनिर्भर स्त्री की भाषा है- न शिकायत, न याचना, सिर्फ चेतना और आत्मस्वीकृति। ममता कालिया की कहानियाँ पारिवारिक ढाँचे में स्त्री की दबी हुई आवाज़ को मुखर करती हैं। वे पत्नियों,

बहनों, बेटियों की उस बोलती हुई चुप्पी को शब्द देती हैं, जो पारंपरिक साहित्य में अक्सर अनकही रह जाती है।

ममता कालिया की भाषा किसी बड़े विमर्श की शरण नहीं लेती, वह छोटे-छोटे अनुभवों को ही विमर्श में बदल देती है। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि ममता कालिया की कहानियों में भाषा-शैली स्त्री-विमर्श की संवाहिका है। वे भाषिक आडंबरों से दूर रहकर, सीधी-सादी, व्यंग्यात्मक और संवेदनशील भाषा में स्त्री के भीतर की चेतना, पीड़ा, संघर्ष और मुक्ति को प्रकट करती हैं। उनकी कहानियाँ स्त्री-विमर्श को शब्दों में नहीं, बल्कि अनुभवों और सवाल में ढालती हैं। यही कारण है कि उनकी भाषा संवेदना और प्रतिरोध का सशक्त माध्यम बन जाती है।

6.5.4 व्यंग्य और कटाक्ष का माध्यम

हिंदी कथा साहित्य में ममता कालिया एक प्रमुख और विशिष्ट लेखिका हैं, जिन्होंने अपनी कहानियों में समाज की विडंबनाओं, पारंपरिक सोच और सामाजिक आस्थाओं पर व्यंग्य और कटाक्ष के माध्यम से कड़ा प्रहार किया है। ममता कालिया की लेखन शैली की विशेषता यह है कि वे व्यंग्य का प्रयोग केवल मनोरंजन के लिए नहीं करतीं, बल्कि यह उनके कथानक का एक सशक्त आलोचनात्मक उपकरण है, जो न केवल समाज के अशिक्षित और रूढ़िवादी दृष्टिकोण को उजागर करता है, बल्कि पाठक को विचार और आत्म-विश्लेषण के लिए भी प्रेरित करता है। उनके व्यंग्य और कटाक्ष का उद्देश्य केवल किसी व्यक्ति या समूह का मजाक उड़ाना नहीं है, बल्कि यह समाज के उत्पीड़न, भेदभाव और अन्यायपूर्ण संरचनाओं को चुनौती देने का एक प्रभावशाली तरीका है।

ममता कालिया के लेखन में व्यंग्य एक सामाजिक आलोचना के रूप में उभरता है, जो विशेष रूप से सामाजिक असमानताओं और रूढ़िवादी परंपराओं को लक्ष्य बनाता है। उनका व्यंग्य न केवल तीखा और बुद्धिमत्तापूर्ण होता है, बल्कि समाज की उन चुप्पी और मौन स्वीकृतियों को उजागर करता है जो बड़े पैमाने पर सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता को खारिज करती हैं। 'मुखौटा' कहानी में सवर्ण से असवर्ण बना श्रवण जिसे ओ.बी.सी के नकली प्रमाणपत्र से डिग्री, नौकरी, पद, प्रतिष्ठा सबकुछ मिला है, परंतु दिल के हाथों मजबूर है, देखिए- "रातों में श्रवण करवटें बदलता जन्मपत्री के चौखटे पलटता।

जिस झूठ ने जिंदगी के दरवाजे खोले, उसी ने दरवाजे बंद करने शुरू कर दिए थे। सच और झूठ उसकी जिंदगी में गहु-मडु हो रहे थे।" (कालिया, 303)। यह संवाद समाज की उस द्विअर्थी मानसिकता और स्त्री की भूमिका के प्रति अपेक्षाओं पर एक कटाक्ष करता है, जिसमें एक ओर महिलाओं से घर के अंदर 'रानी' बनने की उम्मीद की जाती है, जबकि दूसरी ओर उन्हें गृहकार्य और परिवार की देखभाल के लिए अल्ट्रा-फेमिनिन और परिष्कृत नौकरानी का रूप दिया जाता है। यह व्यंग्य सीधे तौर पर पारंपरिक परिवार व्यवस्था और उसमें बंधी हुई महिलाओं की निर्विवाद स्थिति को चुनौती देता है।

ममता कालिया के लेखन में सामाजिक मान्यताओं और विकसित होती महिलाओं की नयी पहचान के बीच संघर्ष को एक व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। वे आधुनिक स्त्री के भीतर के संघर्ष और समाज द्वारा निर्धारित नई भूमिकाओं पर कटाक्ष करती हैं। 'आत्मकथा' कहानी में नायिका का यह संवाद- "यह समाज क्या जानता है कि हमें खुद से पहले हर किसी की खुशियाँ तलाशनी होती हैं?" (कालिया, 29)। यह वाक्य व्यंग्यात्मक रूप में समाज की महिलाओं से की गई उम्मीदों को चुनौती देता है। समाज महिला को हमेशा दूसरों की खुशियाँ खोजने वाला और खुद को बलिदान करने वाला बताता है, लेकिन यह संवाद उस दबाव और कुंठा को उजागर करता है जो महिलाओं पर अपनी इच्छाओं को छुपाने के लिए डाला जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियाँ व्यंग्य के माध्यम से न केवल सामाजिक आलोचना का कार्य करती हैं, बल्कि वे व्यक्तिगत संघर्षों, पारिवारिक रिश्तों और स्त्री के अधिकारों को भी उजागर करती हैं। उनका व्यंग्य कभी भी सामाजिक संरचनाओं और मानसिकताओं पर सीधा हमला करता है, कभी वह झूठी उम्मीदों और रूढ़िवादी परंपराओं पर बारीकी से प्रहार करता है। ममता कालिया के व्यंग्य के रूप में सामाजिक सच्चाइयाँ उजागर होती हैं, जो पाठकों को न केवल हंसी के साथ-साथ आत्म-विश्लेषण और सामाजिक सुधार की प्रेरणा भी देती हैं। उनका व्यंग्य समाज की सच्चाई को उजागर करने का एक शक्तिशाली माध्यम बनकर सामने आता है, जो केवल मनोरंजन का उद्देश्य नहीं रखता, बल्कि यह समाज की परंपराओं और मान्यताओं की गहरी समीक्षा करता है।

6.5.5 संवादों से ही कहानी का आगे बढ़ना

ममता कालिया की कहानियाँ साहित्यिक दृष्टिकोण से अत्यधिक प्रभावशाली हैं, और इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनकी कथाएँ संवादों से आकार लेती हैं। उनकी कहानियाँ सामाजिक संदर्भों, मानवीय रिश्तों और मनोवैज्ञानिक गहराई को उजागर करती हैं, जहाँ संवाद एक संवेदनात्मक पुल का काम करते हैं। ममता कालिया के संवाद न केवल कहानी का गति और दिशा तय करते हैं, बल्कि वे कथानक को जीवंत और रुचिकर भी बनाते हैं। संवादों के माध्यम से, ममता कालिया पात्रों की मानसिक स्थिति, उनकी जटिलताएँ और समाज के विभिन्न पहलुओं को खोलती हैं। संवाद उनके लिए कहानी के विकास का मुख्य उपकरण बनते हैं, और इन संवादों में जितनी सच्चाई और स्वाभाविकता होती है, उतना ही कहानी को बढ़ने का मौका मिलता है।

ममता कालिया की कहानियाँ अक्सर मानसिक द्वंद्व, सामाजिक दबावों और पारिवारिक संघर्षों के इर्द-गिर्द घूमती हैं। उनके संवाद इन पहलुओं को प्रत्यक्ष रूप से उजागर करते हैं, जिससे पाठक पात्रों की स्थिति और उनकी मानसिकता को बेहतर तरीके से समझ सकते हैं। संवाद न केवल पात्रों के व्यक्तिगत संघर्षों को व्यक्त करते हैं, बल्कि कहानी के विकास में भी सहायक होते हैं। ममता कालिया के लेखन में संवाद कथानक को आगे बढ़ाने का सबसे महत्वपूर्ण साधन होते हैं। वे अपने पात्रों के माध्यम से अपने विचारों और कथा के प्रमुख मुद्दों को व्यक्त करती हैं। जब पात्र आपस में संवाद करते हैं, तो वे केवल अपनी भावनाओं और विचारों को नहीं व्यक्त करते, बल्कि कहानी के मुख्य घटनाक्रम और संघर्ष को भी आगे बढ़ाते हैं। इस संदर्भ में 'परली पार' कहानी का संवाद देखिए-

किशन ने कहा, "ऐ सुन जरा, अर्जुन पोसी का पर कहाँ है ?"

मटमैली सलवार वाली कालभवानी बोली, "क्यों क्या काम है तुम्हें ?"

वह दो दिन से दूध दूहने नहीं आया।

फ्रॉकवाली एक छोटी लड़की ने कहा, "बाबू गये हैं फूलपुर के मेला, अपनी भैंस लेने।"

कालभवानी ने उसे घुड़का, "तू चुप कर।"

"कहाँ से आये हो ?" उसने किशन को सिर से पैर तक ताका।

"चौधरी जी के यहाँ से। " (कालिया, 82)

ममता कालिया की कहानियों में सामाजिक मुद्दों को प्रस्तुत करने का तरीका बहुत प्रभावशाली होता है। वे संवादों के माध्यम से समाज के समकालीन संकटों, नारीवाद, पारिवारिक दबाव, और व्यक्तिगत संघर्ष को स्पष्ट करती हैं। ये संवाद न केवल कहानी को समाज की वास्तविकता से जोड़ते हैं, बल्कि पाठकों को उन मुद्दों पर विचार करने के लिए मजबूर भी करते हैं। ममता कालिया इस संवाद के माध्यम से न केवल स्त्री के अधिकारों की वकालत करती हैं, बल्कि यह भी बताती हैं कि समाज में एक स्त्री को स्वतंत्र सोच रखने का कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इस संवाद के माध्यम से कहानी नारीवाद और सामाजिक बदलाव के विषय को आगे बढ़ाती है।

ममता कालिया के संवादों में अक्सर सामाजिक और पारिवारिक परिप्रेक्ष्य का बहुत महत्वपूर्ण स्थान होता है। वे संवादों के द्वारा समाज के पुराने और कठोर सिद्धांतों पर व्यंग्य और समाज का विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं। इन संवादों में पात्र अपनी पीढ़ीगत सोच, रिश्तों की जटिलता, और समाज की कठोरता को लेकर बात करते हैं, जिससे कहानी का प्रवाह और गहराई दोनों बढ़ती हैं। 'अस्तित्व' कहानी में पति-पत्नी के बीच का संवाद- "तुम हमेशा कहते हो कि मैं तुमसे ज्यादा समझदार हूँ, लेकिन क्या तुम जानते हो, मुझे समझना कभी नहीं आया।" (कालिया, 49)। यह संवाद पारंपरिक पारिवारिक रिश्तों के संघर्ष और अधिकार की समझ को उजागर करता है। ममता कालिया इस संवाद के माध्यम से न केवल पारिवारिक दबावों की बात करती हैं, बल्कि पति-पत्नी के रिश्तों में छिपे संवेदनात्मक जटिलताओं को भी व्यक्त करती हैं।

ममता कालिया की कहानियों में संवादों का प्रभाव केवल उनके अर्थ में नहीं, बल्कि उनकी रचनात्मकता और भाषाई सौंदर्य में भी छिपा होता है। उनके संवाद स्वाभाविक, संवेदनशील और जीवंत होते हैं। वे साधारण शब्दों के माध्यम से गहरी भावनाएँ और विचार

व्यक्त करती हैं, जो कहानी में एक नई ताजगी और गति का अहसास कराती हैं। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ममता कालिया की कहानियाँ संवादों के माध्यम से एक सशक्त संरचना प्राप्त करती हैं, जो न केवल कथानक को आगे बढ़ाती हैं, बल्कि पात्रों के विचार, समाज के दबावों, और मनुष्य की आंतरिक जटिलताओं को भी प्रभावशाली तरीके से व्यक्त करती हैं। उनके संवादों में सामाजिक सचाइयाँ, भावनात्मक संघर्ष, और संवेदनात्मक गहराई का अद्भुत मिश्रण होता है, जो कहानी के प्रमुख घटकों के रूप में काम करता है। संवादों की यह जीवंतता और स्वाभाविकता ममता कालिया की कहानियों को समय के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक आलोचना और रचनात्मकता का एक अमूल्य उदाहरण बनाती है। कुल मिलाकर ममता कालिया की भाषा-शैली अत्यधिक सहज, प्रवाहपूर्ण और विश्वसनीय है। वे अपनी कहानियों में संवादों, घटनाओं और पात्रों के मानसिक चित्रण के लिए सरल और समझने योग्य भाषा का चयन करती हैं, जिससे पाठक आसानी से उनसे जुड़ता है। उनकी कहानियाँ न केवल सजीव हैं, बल्कि वे समाज की गहरी और सूक्ष्म आलोचना भी करती हैं। उनकी सहज और प्रवाहपूर्ण भाषा एक नए दृष्टिकोण से समाज और व्यक्ति के यथार्थ को पाठक तक पहुँचाती है, जो आज भी हिंदी साहित्य में एक अद्वितीय स्थान रखती है।

संदर्भ सूची

- सिंह, नामवर. कहानी : नयी कहानी. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (1966). पृ. 49.
- कालिया, ममता. बोलने वाली औरत. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली (2001), पृ. 121, 127, 146, 204.
- कालिया, ममता. निर्मोही. वाणी प्रकाशन, दिल्ली (2020), पृ. 342.
- कालिया, ममता. खुशकिस्मत. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (2013), पृ. 34, 50, 97.
- कालिया, ममता. ममता कालिया की कहानियाँ, खंड-2. वाणी प्रकाशन, दिल्ली (2005), पृ. 74, 110, 138, 177, 209, 219, 248, 257, 274, 301, 377, 439.
- मानधाने, डॉ. धनराज. हिंदी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास. ग्रंथम, कानपुर (1971), पृ. 95.
- कालिया, ममता. ममता कालिया की कहानियाँ, खंड-1. वाणी प्रकाशन, दिल्ली (2005), पृ. 71, 133, 201, 212, 290, 298, 303.
- कालिया, ममता. जांच अभी जारी है. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली (2004), पृ. 97.
- कालिया, ममता. मुखौटा. वाणी प्रकाशन, दिल्ली (2018), पृ. 55.
- कालिया, ममता. काके दी हट्टी. वाणी प्रकाशन, दिल्ली (2020), पृ. 29.
- कालिया, ममता. थोड़ा-सा प्रगतिशील. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद (2014). पृ. 49, 82.

उपसंहार

आधुनिक काल की प्रमुखतम महिला साहित्यकारों में ममता कालिया का स्थान विशिष्ट एवं अन्यतम रहा है। साहित्य की कई विधाओं में एक साथ साहित्य सृजन करने वाली ममता कालिया एक कहानीकार के रूप में हिंदी साहित्य में प्रतिष्ठित हैं। ममता कालिया के हँसमुख व्यक्तित्व को एक बार अगर कोई देख लें तो वह उसे भूल नहीं सकता। उनके जीवन एवं साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात् कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य हमारे सामने आते हैं। उनके साहित्य में बम्बई, इलाहाबाद, दिल्ली जैसे शहरों का वर्णन आया है। कोई भी साहित्यकार अपने परिवेश से प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। ऐसा लगता है कि जरूर इन सभी स्थानों से ममता कालिया का कोई-न-कोई सम्बन्ध रहा होगा। उनके जीवन परिचय को जानने पर इस बात का पता चलता है कि ये तीनों ही उनकी कर्मभूमियाँ रही हैं। चाहे शिक्षा के संदर्भ में हो, चाहे अध्यापक के रूप में हो ये इन तीनों स्थानों से जुड़ी हैं। इसी वजह से बम्बई, दिल्ली जैसे महानगरों में होनेवाली समस्याएँ जैसे बेरोजगारी, अर्थाभाव, मकान समस्या आदि का चित्रण उन्होंने इतनी सहजतासे और सफलता के साथ किया है। उनकी जन्मभूमि मथुरा को वे अपने साहित्य का प्रेरणास्थान मानती हैं। जब हम उनके साहित्य में नौकरी पेशा स्त्रियों की समस्याएँ देखते हैं तो फौरन हमें उनके द्वारा बम्बई, दिल्ली, इलाहाबाद में समय-समय पर की गयी नौकरियों याद आती हैं। वे स्वयं भी नौकरी और घर की जिम्मेदारियाँ एक साथ कैसे निभाती होंगी, इस बात का पता चलता है। उन्हें स्वयं भी उन तकलिफों को झेलना पड़ा। नौकरी करते वक्त तो वे स्वयं बम्बई में और उनके पति दिल्ली में, इस प्रकार हो जाने से उन्हें काफी संघर्ष करना पड़ा था।

ममता कालिया के व्यक्तित्व में दूसरों की मदद करने की प्रवृत्ति, हँसमुख व्यक्तित्व, भावुकता, संवेदनशीलता, ईमानदारी, मिलनसरिता, अतिध्यशीलता, परिश्रम ये सारे गुण दिखाई देते हैं। ये सारे गुण उनकी नायिकाओं में भी दिखाई देते हैं। जब हम उनकी 'आपकी छोटी लड़की' जैसी कृति पढ़ते हैं तो हमें उनके द्वारा साक्षात्कार में अपनी

बहन के संदर्भ में कही गयी बातें याद आती है कि दोनों बहनें दो अलग ध्रुवों में केंद्रित थीं। ललित कलाओं में निपुण होनेवाली उनकी बहन की तुलना में आज वह स्वयं ही अधिक प्रसिद्ध रही है। 'साहित्य में नारी को पुरुष के समानांतर दिखाना' -यह ममता कालिया के साहित्य सृजन का उद्देश्य रहा है। वे नारी का वैचारिक विकास चाहती हैं। ममता कालिया द्वारा लिखी गयी साहित्य कृतियों को जब हम पढ़ते हैं तो पाते हैं कि अधिकतर नारियों का ही चित्रण उनके साहित्य में हुआ है। उनकी नायिकाएँ विद्रोही भूमिका निभानेवाली तथा पति के अधिनस्त भी हैं। परंतु वे पति के अधिनस्त नायिकाओं से अपेक्षा करती हैं कि वे विद्रोह करें। इस प्रकार हम यह देखते हैं कि ममता कालिया के साहित्य पर पूरी तरह से उनके परिवेश का प्रभाव पड़ा है। उनके व्यक्तित्व के कई पहलू उनके साहित्य में उभरते हैं। उनके जीवन के संघर्ष उनके साहित्य में नाम बदलकर ज्यों के त्यों प्रस्तुत हुए हैं। इसी वजह से साहित्य उनके जीवन का आईना बन गया है।

ममता कालिया की कहानियों का अनुशीलन करने पर यह पाया कि उनकी कहानियों में नारी केंद्र में रही है। फिर भी अन्य भी विषय उन्होंने चुने हैं। उनकी कहानियों में उच्च वर्ग में सभ्यता का गिरता स्तर, मकान की तंगी, मनुष्य की समझौतावादी वृत्ति, पैसों का महत्त्व, पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव, अकेलापन, शादी के बाद स्त्री में होनेवाला परिवर्तन, नैतिकता की रक्षा, नैतिकता का पतन, अविवाहित प्रौढ़ स्त्री की समस्या, बम्बई का आकर्षण, वक्त काटने के लिए स्त्री द्वारा प्रेम किया जाना, संयुक्त परिवार, आंतरजातीय विवाह समस्या, वृद्ध स्त्री का गुस्सा, घर में कैद स्त्री, पारिवारिक संघर्ष, मनोरुग्ण नारी, दफ्तर का उबाऊ वातावरण, अवकाश प्राप्ति, पत्नी की प्रशंसा न सुन पानेवाला मनोरुग्ण पति, दहेज समस्या, साहित्यकारों की मनोवृत्ति, बैंक में चलनेवाला भ्रष्टाचार, शादी की रजतजयंती, भ्रष्टाचार, पहली तारीख का महत्त्व, अफसरी जीवन, संस्कारहीनता, पति-पत्नी संघर्ष जैसे विषय दिखाई देते हैं। इन अलग-अलग विषयों पर उन्होंने अलग-अलग कहानियों में अपने विचार व्यक्त किये हैं। इनमें से अधिक विषय नारी से सम्बद्ध हैं। संक्षिप्त कहानीनक, घरेलू विषय, अल्प पात्र-संख्या, संवादों की सुंदर योजना, सार्थक शीर्षक आदि इनकी कहानियों की विशेषताएँ हैं। इनकी कहानियों में देश-काल तथा वातावरण का प्रयोग उचित मात्रा में हुआ है। ममता कालिया ने समस्या-प्रधान कहानियाँ अधिक लिखी हैं। उनकी कहानियों में नायक प्रधान अथवा पुरुष प्रधान कहानियाँ अत्यल्प हैं। इसी के साथ

हम यह भी पाते हैं कि समस्या-चित्रण जिनका प्रमुख उद्देश्य रहा है ऐसी कहानियों को सफलता के साथ अपने उद्देश्य तक पहुँचाया गया है। उनकी कहानियाँ पाठक को बाँधे रखती हैं।

ममता कालिया के कहानी-साहित्य की एक विशेषता यह है कि वे केवल समस्याओं को उजागर नहीं करतीं, बल्कि उन समस्याओं के मूल कारणों की पहचान करते हुए समाधान की ओर भी संकेत करती हैं। वे स्त्री को केवल एक 'पीड़िता' के रूप में प्रस्तुत नहीं करतीं, बल्कि उसे एक सोचने-समझने, निर्णय लेने वाली और प्रतिरोध करने वाली स्वतंत्र सत्ता के रूप में चित्रित करती हैं। यही कारण है कि उनका लेखन स्त्री-विमर्श के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान रखता है। उनकी कहानियों में वर्णित स्त्रियाँ सुशिक्षित भी हैं, आत्मनिर्भर बनने की आकांक्षा भी रखती हैं, फिर भी वे पारिवारिक और सामाजिक दायरों में अनेक प्रकार की उपेक्षा, संकीर्णता और असमानता का सामना करती हैं। ममता कालिया इस विरोधाभास को गहराई से उजागर करती हैं— कि एक ओर आधुनिकता और शिक्षा की बातें होती हैं, वहीं दूसरी ओर उसी शिक्षित स्त्री को निर्णय लेने, बोलने और अपनी पहचान गढ़ने का अधिकार नहीं दिया जाता। 'उमस' कहानी की नायिका रानी इस यथार्थ की एक सशक्त प्रतीक है। रानी दिन-रात घर के कामों में लगी रहती है, वह हर तरह से अपनी भूमिका को पूरी निष्ठा से निभाती है, फिर भी उसे वह सम्मान नहीं मिलता जिसकी वह अधिकारिणी है। उसका परिश्रम मान्यता नहीं पाता, बल्कि उसकी मामूली सी थकावट या झपकी भी आलोचना का कारण बन जाती है। यही नहीं, जब वह एक सामाजिक बातचीत में अपनी राय रखती है, तब उसका पति उसे अपमानित करता है— यह एक शिक्षित स्त्री के आत्मबल को कुचलने का उदाहरण है, जो हमारे तथाकथित सभ्य समाज में गहराई से व्याप्त है। यह कहानी स्पष्ट करती है कि शिक्षित होने के बावजूद स्त्रियों की स्थिति में बहुत अधिक बदलाव नहीं आया है, क्योंकि पुरुष-प्रधान मानसिकता आज भी उन्हें एक सीमित दायरे में बाँधकर देखना चाहती है। यहाँ ममता कालिया की लेखनी उस 'अदृश्य उत्पीड़न' को रेखांकित करती है, जो आधुनिक, मध्यमवर्गीय घरों की शिक्षित महिलाओं का यथार्थ है।

इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि ममता कालिया अपने कथा-साहित्य में स्त्री के बहुआयामी संघर्ष को न केवल उभारती हैं, बल्कि यह भी दिखाती हैं कि यह संघर्ष

केवल आर्थिक या सामाजिक नहीं, बल्कि मानसिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी जारी है। उनकी कहानियाँ पाठकों को आत्ममंथन के लिए प्रेरित करती हैं और समाज में व्याप्त उन जड़ सोचों पर प्रश्नचिह्न लगाती हैं, जो स्त्री की स्वतंत्रता, गरिमा और पहचान को निरंतर चुनौती देती हैं। इस प्रकार ममता कालिया का साहित्य स्त्री की पीड़ा का केवल बयान नहीं, बल्कि प्रतिरोध की भूमिका भी है। वे यथार्थ को मात्र दिखाती नहीं, बल्कि उसकी तह में जाकर उस बदलाव की आवश्यकता को भी इंगित करती हैं, जो आज के समाज में अत्यंत आवश्यक है। उनके लेखन में नारी सिर्फ पात्र नहीं है, वह विमर्श की केंद्रबिंदु है— चेतना, संघर्ष और परिवर्तन की वाहक।

दफ्तर में काम करने वाली स्त्रियों की समस्याएँ घरेलू स्त्रियों की समस्याओं से भिन्न और कहीं अधिक जटिल होती हैं। जहां घर की चारदीवारी में रहने वाली स्त्रियाँ सामाजिक और पारिवारिक बंधनों में जकड़ी होती हैं, वहीं कार्यालयीन जीवन में कदम रखने वाली महिलाओं को समाज की एक नई किस्म की आलोचना, अविश्वास और पक्षपात का सामना करना पड़ता है। पूरा समाज, जिसमें परिवार, पड़ोसी, रिश्तेदार, और यहां तक कि सहकर्मी भी शामिल हैं, उन पर संदेह की दृष्टि रखता है, उनके चरित्र पर सवाल उठाता है और उन्हें निरंतर जांच के दायरे में रखता है। ऐसे में दफ्तर में काम करने वाली स्त्रियाँ एक दुविधा की स्थिति में रहती हैं— वे अपनी आर्थिक स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता के लिए प्रयास करती हैं, लेकिन समाज उन्हें 'संस्कृति के खिलाफ' समझता है। इस संदर्भ में पुरुष अधिकारी की पत्नियाँ भी उन महिलाओं पर शक करती हैं, उन्हें प्रतिद्वंद्वी मानती हैं और उनके चरित्र को लेकर संदेह प्रकट करती हैं। इस तरह का माहौल स्त्री के लिए मानसिक तनाव, सामाजिक अलगाव और असहजता का कारण बनता है।

ममता कालिया की कहानी 'पच्चीस साल की लड़की' इस यथार्थ को बेहद संवेदनशील और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती है। इस कहानी की नायिका, जो एक युवा, शिक्षित और सक्षम महिला है, अपने कार्यस्थल पर अपने अधिकारी की पत्नी के शक और आलोचना की जद में आ जाती है। अधिकारी की पत्नी उसकी असमय शादी कर लेने की सलाह देती है, जो केवल एक उपदेश नहीं, बल्कि समाज के उस दबाव और पूर्वाग्रह का प्रतिनिधित्व है, जो महिलाओं को कामकाजी जीवन से हटाकर पारंपरिक पारिवारिक भूमिकाओं में सीमित करना चाहता है। इस प्रकार का उपदेश न केवल उसकी स्वतंत्रता

और इच्छाओं का अपमान है, बल्कि यह उसकी पहचान और आत्मसम्मान को भी चोट पहुँचाता है। कहानी में यह स्थिति समाज के उस दोहरे मापदंड को उजागर करती है, जिसमें स्त्रियों से उच्च शिक्षा और कार्यक्षमता की अपेक्षा की जाती है, परन्तु उनके व्यवहार और जीवनशैली को लेकर संदेह और नकारात्मकता बनी रहती है। इस विरोधाभास का शिकार होकर महिला स्वयं को असहाय और असुरक्षित महसूस करती है। ममता कालिया की इस कहानी के माध्यम से हम समझ पाते हैं कि दफ्तर में काम करने वाली महिलाओं के संघर्ष केवल कार्यक्षेत्र तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक दृष्टिकोण, पारिवारिक अपेक्षाओं और मानसिक दबावों से भी घिरी होती हैं। उनकी स्वतंत्रता और सम्मान की रक्षा के लिए समाज के सोच में गहरा परिवर्तन आवश्यक है।

‘मनहूसाबी’ कहानी की नायिका का जीवन जन्म से ही कठिनाइयों और निरंतर प्रताड़ना का सामना करता रहा है। उसके विवाह की बात भी बहुत देर से पक्की हुई, जिससे उसे पति के सामने विनम्रता और समर्पण का एक ऐसा भाव अपनाना पड़ा, जैसे उसने अपनी पूरी इच्छाओं और आत्मसम्मान को दबा दिया हो। प्रारंभ में उसकी नौकरी लगना उसकी स्वतंत्रता और आत्मसम्मान का एक स्रोत प्रतीत हुआ, परन्तु जैसे-जैसे समय बीता और उसके तीन बच्चे हुए, उसके भीतर का जोश और आत्मविश्वास धीरे-धीरे क्षीण हो गया। परिवार के सदस्य, जो कभी उसका सहारा थे, अब उसकी उपेक्षा करने लगे। घर की जिम्मेदारियों और बच्चों की देखभाल के बीच उसकी आवाज तक धीमी और भर्राई हुई हो गई, मानो वह अपने अस्तित्व को खोती जा रही हो। उसकी यह मानसिक स्थिति इतनी गहन थी कि वह खुद को बाथरूम के तिलचट्टों के समान मानने लगी— जो अनदेखा, असहाय और उपयोग के बाद फेंक दिए जाने वाला सामान हो। इसी प्रकार ‘मुहब्बत से खिलाइये’ कहानी में भी पति की मानसिकता बेहद नकारात्मक और तिरस्कारपूर्ण है। वह अपनी पत्नी की हर छोटी-बड़ी बात और गुण की आलोचना करता है, परन्तु जब वे किसी अन्य के घर जाते हैं, तो वहां की हर वस्तु और बात की प्रशंसा करता है। इस तरह का व्यवहार न केवल पत्नी को मानसिक चोट पहुँचाता है, बल्कि उसके आत्मसम्मान को भी तार-तार कर देता है। पति की यह द्वंद्वपूर्ण मानसिकता विवाह संबंधों में असंतोष और तनाव का कारण बनती है, जिससे पत्नी मानसिक रूप से अत्यंत असहाय और दबाव में महसूस करती है। बिल्कुल इसी प्रकार का ही चरित्र ‘मनोविज्ञान’ कहानी का नायक नवीन

है। नवीन का व्यवहार भी अपने घर और परिवार के प्रति असंतोष और तिरस्कार से भरा है। वह अपने स्वभाव और मानसिक स्थिति में इतने उलझे हुए हैं कि वे अपने नकारात्मक भावों को परिवार के सदस्यों पर व्यक्त करते हैं, जिससे परिवार का माहौल विषाक्त हो जाता है। उनकी मानसिक स्थिति उनके व्यवहार में झलकती है, जो पारिवारिक संबंधों को कमजोर करती है और घर में निरंतर तनाव और दुःख का कारण बनती है। इन सभी कहानियों की नायिकाएं और नायक समाज में व्याप्त विभिन्न मानसिक, सामाजिक और पारिवारिक संघर्षों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ममता कालिया ने इन पात्रों के माध्यम से यह दर्शाया है कि न केवल बाहरी संघर्ष, बल्कि आंतरिक मानसिक पीड़ा, उपेक्षा और असंतोष भी व्यक्ति के जीवन को किस प्रकार प्रभावित करते हैं। उनकी कहानियाँ इस बात पर भी प्रकाश डालती हैं कि समाज और परिवार के भीतर व्याप्त असमानताएं और मानसिक दबाव व्यक्तियों को कितना कमजोर और मानसिक रूप से क्षीण कर देते हैं।

समाज में कुछ ऐसी स्त्रियाँ भी होती हैं, जो विवाह के बाद भी अपने भीतर व्याप्त अकेलेपन और भावनात्मक शून्यता को भरने के लिए प्रेम-प्रसंग की ओर झुकाव रखती हैं। यह एक जटिल और संवेदनशील स्थिति है, जिसमें स्त्री अपने जीवन में खुशी, समझदारी और साथी की आवश्यकता महसूस करती है, लेकिन पारंपरिक सामाजिक ढाँचों और सीमाओं के कारण वह खुलकर अपनी भावनाओं को व्यक्त नहीं कर पाती। ममता कालिया की कहानी 'लगभग प्रेमिका' की नायिका सुजाता इसी प्रकार की स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है। सुजाता अपने पति से दूर है, दोनों के बीच संचार और समझदारी का अभाव है। ऐसे जीवन में वह अपने खालीपन को किसी छोटे प्रेम-प्रसंग से भरने की कल्पना करती है। उसका यह विचार कि "मेरा वर्तमान जीवन एक छोटे से प्रेम-प्रसंग से सार्थक और आकर्षक बन सकता था," उसके अंदर व्याप्त एक गहरे तन्हा दिल की अभिव्यक्ति है। वह न केवल एक साथी की चाह रखती है, बल्कि जीवन को एक नई दिशा और अर्थ देने की इच्छा भी उसके मन में व्याप्त है। हालांकि समाज इस तरह की महिलाओं को तिरस्कार की दृष्टि से देखता है और उन्हें नारी समाज के लिए 'बदनाम' करार देता है, लेकिन ममता कालिया की दृष्टि इस परंपरागत सोच से परे जाकर उनकी भावनात्मक जरूरतों, सामाजिक दबावों और मनोवैज्ञानिक संघर्षों को समझने और प्रस्तुत करने की है। वे यह दर्शाती हैं कि ये स्त्रियाँ सामाजिक बंदिशों और पुरुषप्रधान मानसिकता के कारण खुद को असमर्थ और

अकेला महसूस करती हैं, जिसके चलते वे भावनात्मक संजीवनी की तलाश में कहीं बाहर की ओर रुख करती हैं। इसी संदर्भ में 'मंदिरा' कहानी भी ऐसी ही स्त्री की कहानी कहती है, जो सामाजिक अपेक्षाओं और व्यक्तिगत आकांक्षाओं के बीच फंसी हुई है। मंदिरा की ज़िंदगी में भी अकेलापन, निराशा और प्रेम की चाह गहराई से व्याप्त है, जो उसे परंपरागत जीवन के बंधनों से बाहर निकलकर अपने लिए एक नया रास्ता तलाशने पर मजबूर करता है। ममता कालिया के इस प्रकार के पात्र समाज की संकीर्ण सोच को चुनौती देते हैं और नारी जीवन की जटिलताओं को समझने के लिए एक संवेदनशील दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। वे यह स्पष्ट करती हैं कि स्त्रियों की ऐसी भावनाएँ और संघर्ष समाज के लिए चिंता का विषय हैं, न कि कलंक का। उनके कथा-साहित्य में इन महिलाओं की पीड़ा, उनकी आकांक्षाएँ, और उनकी अस्मिता की लड़ाई को मानवीय संवेदनाओं के साथ दर्शाया गया है, जिससे पाठक इन पात्रों के साथ सहानुभूति और समझ विकसित कर पाते हैं।

आज के आधुनिक समाज में भी लड़कियों का घर से बाहर निकलना कई बार एक चुनौतीपूर्ण विषय बना हुआ है। खासकर जब वे लड़कियाँ शिक्षित होती हैं, तो उनके प्रति सामाजिक दृष्टिकोण और भी संकीर्ण और नकारात्मक हो जाता है। ममता कालिया की कहानियों में इस यथार्थ को सजीव रूप से प्रस्तुत किया गया है। 'तोहमत' कहानी की आशा और सुधा, जो पहले समाज की निगाहों में लगभग अदृश्य थीं, अब जब वे बाहर निकलती हैं और अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाती हैं, तो लोग उन पर शक की नजर से देखने लगते हैं। जो लोग पहले उनकी ओर आंख उठाकर भी देखने की हिम्मत नहीं करते थे, अब वे उनकी बातों को गलत अर्थों में लेते हैं और गंदी टिप्पणियाँ करते हैं। यह बदलाव केवल उनके व्यक्तित्व की वजह से नहीं, बल्कि समाज की बदलती मानसिकता और महिलाओं के प्रति द्वैतपूर्ण व्यवहार का परिणाम है। इसी प्रकार 'अपत्नी' कहानी में प्रबोध का अपने पहले विवाह से तलाक लिए बिना ही दूसरी महिला लीला के साथ रहना, समाज में एक बड़ी समस्या बन जाता है। हरि की पत्नी इस स्थिति को स्वीकार नहीं कर पाती, और लीला का गर्भपात भी उसके मन में असंतोष और पीड़ा पैदा करता है। बावजूद इसके, वह मजबूरी में लीला और प्रबोध के घर जाती रहती है क्योंकि हरि पहले उनके घर रहता था। यह कहानी पारिवारिक रिश्तों की जटिलताओं और सामाजिक मान्यताओं के संघर्ष को स्पष्ट करती है। 'पिछले दिनों का अंधेरा' कहानी में नायक रुचि के साथ अपने

घर पर रहकर, और 'ब्लैक आउट' के दौरान साथ सोने जैसी परिस्थितियों के माध्यम से सामाजिक प्रतिबंधों और व्यक्तिगत इच्छाओं के बीच टकराव को दर्शाया गया है। यह दर्शाता है कि आज के समाज में लोग बाहरी नजरिए से बंधे होते हुए भी अपने निजी जीवन में नई संभावनाओं की खोज करते हैं। 'साथ' कहानी में सुनंदा और अशोक के बिना शादी के साथ रहने का चित्रण इस सामाजिक विसंगति को उजागर करता है। सुनंदा की शादी की जिद के बावजूद, अशोक पहले पत्नी से तलाक न लेने की वजह से उसे टालता रहता है, जो समाज में विवाह और संबंधों को लेकर बने जटिल नियमों की ओर संकेत करता है। इस प्रकार के रिश्ते समाज में पारंपरिक मान्यताओं और आधुनिक जीवनशैली के बीच की खाई को प्रदर्शित करते हैं। 'दो जरूरी चेहरे' कहानी में शादी से पहले शारीरिक संबंधों को स्वीकार करने और खुलकर बातचीत करने की प्रवृत्ति को बड़े खुले और संवेदनशील ढंग से चित्रित किया गया है। नायक और नायिका ने पहले दिन ही अपने-अपने विचार और अपेक्षाएं स्पष्ट कर दीं, जो आज के समय में रिश्तों की बदलती जटिलताओं और नवयुवकों की सोच को प्रतिबिंबित करता है। मीनाक्षी की उस स्थिति में चुप्पी, जो "मैं डर के मारे चीख भी नहीं पायी," बताती है कि भले ही समाज में बदलाव आए हों, व्यक्तिगत स्तर पर इस बदलाव को स्वीकारना आसान नहीं होता।

ममता कालिया ने इस प्रकार के सामाजिक और व्यक्तिगत संघर्षों को अपने कथा-साहित्य में प्रमुखता से स्थान दिया है। वे न केवल शादी से पहले और शादी के बाद अवैध संबंधों की बढ़ती प्रवृत्ति को उजागर करती हैं, बल्कि उन जटिल भावनाओं, सामाजिक दबावों और मनोवैज्ञानिक द्वंद्वों को भी संवेदनशीलता से प्रस्तुत करती हैं, जो इस तरह के संबंधों के साथ जुड़ी होती हैं। उनका साहित्य आज के समाज के इन विवादित पहलुओं पर गहन विमर्श और चिंतन के लिए प्रेरणा देता है, साथ ही यह भी संकेत करता है कि सामाजिक संरचनाओं और मान्यताओं में सुधार की आवश्यकता अत्यंत महत्वपूर्ण है।

आधुनिक युग में जब महिलाएँ नौकरी के क्षेत्र में अधिक सक्रिय होने लगी हैं, तो उन्हें अनेक प्रकार की चुनौतियों और समस्याओं का सामना भी करना पड़ता है। घर की पारंपरिक जिम्मेदारियाँ, जैसे बच्चों की देखभाल, घरेलू कामकाज, परिवार का प्रबंधन आदि, अब उन्हें अपने कार्यस्थल की इ्यूटी के साथ संतुलित करनी होती हैं। इस गतिमान जीवनशैली में महिलाओं को कई बार अपनी सुरक्षा और प्रतिष्ठा को लेकर सतर्क रहना

पड़ता है, विशेषतः अपने सहकर्मियों और अधिकारियों के संदर्भ में। माता-पिता और समाज की अपेक्षाओं के बावजूद, कार्यस्थल पर महिलाओं के प्रति व्यवहार अक्सर असंवेदनशील और अनुचित हो सकता है। कई बार अधिकारी या उच्च पदस्थ पुरुष सहकर्मियों की ओर एक विशेष दृष्टि से देखते हैं, जो महिलाओं के लिए जोखिम भरा साबित हो सकता है। इस प्रकार के माहौल में स्त्रियाँ अनेक बार शोषण या उत्पीड़न की शिकार बन जाती हैं, लेकिन सामाजिक दबाव और काम की चिंता के कारण वे अपनी बात उठाने से हिचकती हैं।

ममता कालिया ने इस गंभीर समस्या पर अपनी जागरूकता और संवेदनशीलता को अपने साहित्य के माध्यम से उजागर किया है। उनकी कहानी 'जाँच अभी जारी है' की नायिका अपर्णा इसी यथार्थ की सजीव प्रतिमूर्ति है। अपर्णा बैंक के क्षेत्र को सामान्यतः सुरक्षित और श्रेष्ठ मानती थी और जब उसे अन्य पुरुषों से सावधान रहने की सलाह दी जाती है तो वह उस पर हँसती भी थी। परंतु जब धीरे-धीरे वह अनुभव करती है कि बैंक के अधिकारी, जिनके प्रति वह आदर और विश्वास करती थी, बार-बार उससे व्यक्तिगत और अनैतिक सवाल पूछने लगते हैं— "आज की शाम आप क्या कर रही हैं?" —तो उसकी दुनिया हिल जाती है। अपर्णा, अपनी माँ की बीमारी और पिता के प्रवास के बहाने बना कर इन अनचाहे सवालों से बचने की कोशिश करती है, लेकिन एक दिन उसे एक अधिकारी द्वारा काम खत्म होने के बाद बुलाई जाती है। वहाँ शराब की बोतलें खुलने लगती हैं और अपर्णा को असहज माहौल में छोड़ दिया जाता है, जिससे वह वहाँ से भागने को मजबूर हो जाती है। इसके बाद उसे अनेक प्रकार की बाधाओं और झूठे आरोपों में फंसा दिया जाता है। जब वह न्याय पाने के लिए अधिकारियों के सामने अपनी बात रखती है, तब भी उसे तिरस्कार और अविश्वास का सामना करना पड़ता है। अपने आत्मसम्मान की रक्षा करते हुए वह झुकने से इनकार कर देती है, जिसकी वजह से उसकी फाइल की जांच बार-बार लंबित रहती है और न्याय पाने की प्रक्रिया अनिश्चित काल तक स्थगित हो जाती है। ममता कालिया की यह कहानी स्त्रियों के प्रति कार्यस्थल पर व्याप्त लैंगिक भेदभाव, उत्पीड़न और न्याय की अनदेखी की मार्मिक तस्वीर प्रस्तुत करती है। यह न केवल महिलाओं के संघर्षों को सामने लाती है, बल्कि समाज और संस्थाओं को इस समस्या के प्रति सजग होने और सुधार की दिशा में कदम उठाने का आह्वान भी करती है।

ममता कालिया की कहानियाँ यथार्थबोध की समृद्ध परंपरा को न केवल निरंतरता देती हैं, बल्कि उन्हें समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक संदर्भों में नयी सजीवता और प्रासंगिकता से परिपूर्ण करती हैं। उनकी रचनाएँ समाज के विविध वर्गों, विशेषकर महिलाओं, निम्न एवं मध्यमवर्गीय समुदायों की वास्तविकताओं को सूक्ष्मता से उजागर करती हैं, जो पारंपरिक यथार्थवादी साहित्य में प्रायः उपेक्षित या संकीर्ण दृष्टि से देखे गए थे। शोध के विभिन्न अध्यायों में विस्तारपूर्वक विवेचित तथ्यों से स्पष्ट होता है कि ममता कालिया का यथार्थबोध केवल सतही या बाह्य घटनाओं का विवरण नहीं है, बल्कि यह मानवीय संवेदनाओं की गहन अंतर्दृष्टि, सामाजिक संघर्षों की जटिल परतों और समय के बदलते सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश की सूक्ष्म समझ का द्योतक है। वे अपने पात्रों के माध्यम से जीवन के विविध आयामों—जैसे पितृसत्ता के दबाव, लैंगिक असमानता, आर्थिक विषमताओं, शहरीकरण की चुनौतियों, राजनीतिक अन्याय और सामाजिक बदलाव—को न केवल प्रतिबिंबित करती हैं, बल्कि उन पर आलोचनात्मक विचार भी प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियों में सामाजिक यथार्थ का चित्रण संवादों की स्वाभाविकता, चरित्रों की मनोवैज्ञानिक गहराई और व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण के माध्यम से होता है, जो पाठक को उस यथार्थ के साथ जुड़ने और उसे समझने में मदद करता है। इसके अतिरिक्त, ममता कालिया का यथार्थबोध सांस्कृतिक संदर्भों के साथ भी गहरे जुड़ा हुआ है, जहां वे परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व, सांस्कृतिक विविधता और नवसांस्कृतिक बदलावों को बारीकी से पेश करती हैं।

राजनीतिक एवं आर्थिक परिवर्तनों को भी ममता कालिया की कहानियों में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है, जहाँ सत्ता, भ्रष्टाचार, सामाजिक न्याय, आर्थिक संघर्ष और स्त्री की स्वतंत्रता जैसे विषयों को समकालीन यथार्थ के सन्दर्भ में प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है। उनकी भाषा और शैली की सहजता तथा पात्रों के मनोभावों की सजीव अभिव्यक्ति उनके यथार्थबोध को और भी सशक्त बनाती है, जो उनकी कहानियों को न केवल साहित्यिक दृष्टि से समृद्ध बनाती है, बल्कि सामाजिक जागरूकता के भी प्रभावी माध्यम के रूप में स्थापित करती है। वास्तव में ममता कालिया की कहानी साहित्य में यथार्थबोध का स्वरूप बहुआयामी और गहन है, जो सामाजिक जीवन की जटिलताओं, मानवीय संवेदनाओं और समकालीन समस्याओं को संवेदनशीलता एवं सूक्ष्मता के साथ

उद्घाटित करता है। उनका यह यथार्थबोध समकालीन हिन्दी कहानी साहित्य को नयी दिशा और नई ऊर्जा प्रदान करता है, जिससे उनके कहानी साहित्य की प्रासंगिकता और साहित्यिक महत्व अत्यंत बढ़ जाता है।

प्रथम अध्याय में यथार्थबोध की सैद्धांतिक रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए यह स्पष्ट किया गया कि यथार्थबोध केवल जीवन की सतही, दृश्य या भौतिक वास्तविकता का प्रतिबिंब नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक और बहुआयामी अवधारणा है जो जीवन के विभिन्न पहलुओं का समग्र बोध प्रदान करती है। इस अध्याय में यथार्थबोध की परिभाषा, उसकी उत्पत्ति, विकास और साहित्य में उसकी भूमिका का गहन विवेचन किया गया, जिससे यह बात सामने आई कि यथार्थबोध का दायरा केवल बाह्य घटनाओं या सामाजिक परिवेश के वर्णन तक सीमित नहीं रहता। इसके विपरीत, यथार्थबोध में उन अंतर्निहित सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक संरचनाओं की समझ निहित होती है, जो किसी भी समाज के व्यवहार, उसकी समस्याओं और उसके व्यक्तियों के जीवन को प्रभावित करती हैं। साथ ही, यह मनोवैज्ञानिक आयामों को भी समेटे हुए है— जो मानवीय संवेदनाओं, अनुभूतियों, संघर्षों और जटिलताओं की गहन व्याख्या करता है। यथार्थबोध की यह व्यापकता साहित्यकार को न केवल बाहरी यथार्थ का चित्रण करने की अनुमति देती है, बल्कि उसे सामाजिक विसंगतियों, मानवीय द्वन्द्वों, मनोवैज्ञानिक अंतर्दृष्टियों तथा जीवन के छिपे हुए पहलुओं को भी उजागर करने में समर्थ बनाती है। इस सैद्धांतिक रूपरेखा के माध्यम से यह भी स्पष्ट हुआ कि यथार्थबोध साहित्य के लिए एक दार्शनिक एवं आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रदान करता है, जिसके अंतर्गत लेखक जीवन के जटिल सच को न केवल चित्रित करता है, बल्कि उसे समझने, विश्लेषित करने और पाठक के समक्ष प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। इसके अलावा, यथार्थबोध साहित्य में सामाजिक परिवर्तन और मानवीय संवेदनाओं के विकास के लिए प्रेरक तत्व भी प्रदान करता है। इस प्रकार, प्रथम अध्याय में स्थापित सैद्धांतिक आधार ने ममता कालिया के कहानी साहित्य में यथार्थबोध की गहराई और बहुआयामी स्वरूप को समझने की नींव रखी, जिससे आगे के अध्यायों में उनके सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक संदर्भों में यथार्थबोध के विविध आयामों का विश्लेषण संभव हुआ।

द्वितीय से पंचम अध्यायों में सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं आर्थिक संदर्भों का गहन और व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, जो ममता कालिया के कहानी साहित्य में यथार्थबोध की जटिलता और गहराई को उजागर करता है। इन अध्यायों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि उनकी कहानियाँ न केवल समकालीन समाज के सतही चित्रण तक सीमित हैं, बल्कि वे उस समाज की अंतर्निहित संरचनाओं, संघर्षों और विसंगतियों को भी विवेचनात्मक दृष्टि से उद्घाटित करती हैं।

सामाजिक संदर्भों के विश्लेषण में यह स्पष्ट रूप से देखा गया है कि ममता कालिया के कहानी संसार में पितृसत्तात्मकता न केवल एक सामाजिक व्यवस्था के रूप में विद्यमान है, बल्कि यह नारी पात्रों के जीवन में एक गहन और जटिल बाधा के रूप में भी स्थापित होती है। यह पितृसत्तात्मक संरचना उनके पात्रों की आज़ादी, स्वायत्तता और समानता की आकांक्षाओं के मार्ग में अनेक प्रकार की चुनौतियाँ और प्रतिरोध उत्पन्न करती है। कालिया की कहानियाँ नारी के व्यक्तित्व, उसकी इच्छाओं, सपनों और सामाजिक दायित्वों के बीच उत्पन्न संघर्षों को बेहद संवेदनशील और यथार्थपरक रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनकी रचनाओं में पारिवारिक संबंधों का चित्रण विशेष महत्व रखता है, जहाँ पितृसत्तात्मक नियंत्रण परिवार के भीतर महिलाओं के अधिकारों और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित करता है। इस नियंत्रण के कारण नारी पात्रों को अक्सर सामाजिक रूढ़ियों और परंपराओं के कठोर बंधनों में जकड़ा हुआ पाया जाता है, जो उनके व्यक्तित्व के विकास और सामाजिक सहभागिता के लिए बाधक सिद्ध होते हैं। पारिवारिक और सामाजिक संबंधों में यह द्वन्द्व न केवल व्यक्तिगत संघर्षों का कारण बनता है, बल्कि सामाजिक व्यवस्था की संरचनात्मक असमानताओं और अन्याय को भी प्रतिबिंबित करता है।

ममता कालिया की कहानियों में इस पितृसत्तात्मक दबाव के कारण उत्पन्न होती कई सामाजिक स्थितियाँ स्वाभाविक एवं जीवंत रूप में उभर कर सामने आती हैं—जैसे- घरेलू हिंसा, महिला उत्पीड़न, निर्णय लेने की क्षमता से वंचित रहना, सामाजिक प्रतिष्ठा के नाम पर महिलाओं के अधिकारों का हनन, तथा उनकी आकांक्षाओं और स्वप्नों का दमन। साथ ही वे इन कहानियों के माध्यम से नारी पात्रों के प्रतिरोध, स्वाधीनता की चाह और सामाजिक बदलाव की संभावनाओं को भी प्रभावशाली ढंग से दर्शाती हैं। हम कह

सकते हैं कि ममता कालिया का कहानी साहित्य पितृसत्तात्मक समाज की संरचनात्मक जटिलताओं और उनके प्रभावों को गहराई से उद्घाटित करते हुए नारी जीवन की वास्तविकताओं को समग्रता में प्रस्तुत करता है। उनके यथार्थबोध का यह पक्ष सामाजिक चेतना को जागृत करता है और पितृसत्तात्मक नियंत्रण की सीमाओं को चुनौती देने के लिए एक प्रगतिशील संवाद का मार्ग प्रशस्त करता है।

सांस्कृतिक संदर्भों के संदर्भ में ममता कालिया की कहानियाँ परंपरा और आधुनिकता के बीच गहरे द्वंद्व को प्रकट करती हैं, जो आज के समाज की सबसे प्रमुख सांस्कृतिक वास्तविकताओं में से एक है। उनकी रचनाओं में यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि वे न केवल इस द्वैत की पहचान करती हैं, बल्कि इसके बीच संतुलन स्थापित करने के विविध प्रयासों को भी समर्पित हैं। पारंपरिक मूल्यों, रीति-रिवाजों और सांस्कृतिक धरोहरों के संरक्षण की आवश्यकता को वे समझती हैं, साथ ही आधुनिकता के नवीनतम सामाजिक विचारों, स्वतंत्रता की मांगों और नवसांस्कृतिक मान्यताओं को भी स्वीकार करती हैं। इस द्वन्द्व के माध्यम से ममता कालिया अपने कहानी संसार में एक समृद्ध बहस और संवाद का मंच प्रस्तुत करती हैं, जो पाठकों को सांस्कृतिक अस्मिता के गहरे प्रश्नों से अवगत कराता है। उनकी कहानियों में सांस्कृतिक विविधता का भी विशेष महत्व है, जहाँ वे समाज के विभिन्न वर्गों, भाषा-भाषी समूहों और सामाजिक वर्गों के बीच व्याप्त सांस्कृतिक मतभेदों और सह-अस्तित्व की जटिलताओं को बारीकी से उकेरती हैं। यह विविधता केवल बाह्य भौगोलिक या भाषाई भेद नहीं है, बल्कि इसमें मानवीय अनुभवों, सामाजिक रीतियों, और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों की गहराई भी निहित है। ममता कालिया इस बहुलता को एक समरस समाज की संभावनाओं के संदर्भ में देखती हैं, जहाँ परंपरागत मान्यताओं और आधुनिक सांस्कृतिक प्रवृत्तियों के बीच संवाद चलता रहे।

ममता कालिया की कहानियों में नारी जीवन की जटिलताओं को सांस्कृतिक संदर्भ में संवेदनशीलता से उकेरा गया है। वे नारी पात्रों के माध्यम से सांस्कृतिक अस्मिताओं की गुत्थियों, सामाजिक अपेक्षाओं, और बदलते सामाजिक मानदंडों के बीच उत्पन्न द्वंद्वों को जीवंत और यथार्थपूर्ण रूप में प्रस्तुत करती हैं। नारी की भूमिका, उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा, और उसकी आज़ादी की मांगों के बीच चल रहे संघर्ष का चित्रण उनकी कहानियों का एक प्रमुख विषय है। यह द्वन्द्व न केवल व्यक्तिगत स्तर पर, बल्कि सामाजिक और

सांस्कृतिक स्तर पर भी स्पष्ट होता है, जहाँ नारी अपने अस्तित्व की खोज में परंपराओं और आधुनिकता के बीच की खाई को पाटने का प्रयास करती है। इस तरह ममता कालिया का सांस्कृतिक यथार्थबोध न केवल सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रिया को समझने का माध्यम है, बल्कि यह सामाजिक जागरूकता और समावेशी सोच को प्रोत्साहित करने वाला भी है। उनकी कहानियाँ समकालीन सांस्कृतिक यथार्थ की सजीव प्रस्तुति हैं, जो पाठकों को संस्कृति की जटिलताओं, संघर्षों और संभावनाओं से रूबरू कराती हैं तथा एक प्रगतिशील और संवेदनशील समाज की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा प्रदान करती हैं।

राजनीतिक संदर्भों के विश्लेषण में ममता कालिया के कहानी साहित्य में स्त्री-स्वतंत्रता, सत्ता-लोलुपता, भ्रष्टाचार तथा सामाजिक न्याय जैसे समसामयिक एवं गंभीर मुद्दे प्रमुखता से उभर कर सामने आते हैं। उनकी कहानियाँ राजनीतिक तंत्र की विभिन्न विडंबनाओं, प्रणालीगत असमानताओं और सत्ता के दुरुपयोग की जटिलताओं को गहराई से उद्घाटित करती हैं, जिससे पाठक को न केवल राजनीतिक व्यवस्था की क्रूर वास्तविकताओं का बोध होता है, बल्कि वे सामाजिक सुधार और प्रगति के संभावित मार्गों की ओर भी संकेत प्रदान करती हैं। ममता कालिया की रचनाओं में स्त्री-स्वतंत्रता का विषय विशेष महत्व रखता है। वे अपने नारी पात्रों के माध्यम से न केवल सामाजिक बल्कि राजनीतिक स्तर पर महिलाओं की आज़ादी, अधिकारों की मांग और उनकी भागीदारी के मुद्दों को प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियाँ महिलाओं के संघर्षों, उनके उत्पीड़न के विरोध और राजनीतिक जागरूकता की प्रक्रिया को संवेदनशीलता से उजागर करती हैं। इसके साथ ही, सत्ता-लोलुपता और भ्रष्टाचार के विरुद्ध उनकी तीव्र आलोचना उनकी सामाजिक जिम्मेदारी और राजनीतिक चेतना को दर्शाती है, जो सत्ता के दुरुपयोग को समाज के लिए एक गंभीर खतरे के रूप में चिन्हित करती है। राजनीतिक अन्याय और सामाजिक असमानता के विषयों को वे अपने कहानी साहित्य में विवेचनात्मक दृष्टि से पेश करती हैं, जहाँ सत्ता के केंद्रीकरण और भ्रष्टाचार की प्रवृत्तियाँ आम जनजीवन पर विपरीत प्रभाव डालती हैं। उनके कहानीनक इस बात पर भी बल देते हैं कि राजनीतिक व्यवस्था के सुधार के लिए सक्रिय भागीदारी, न्यायपूर्ण नीतियाँ और पारदर्शिता आवश्यक हैं। वे केवल राजनीतिक विसंगतियों की आलोचना नहीं करतीं, बल्कि सामाजिक न्याय, समरसता और समानता के निर्माण की संभावना को भी उजागर करती हैं।

ममता कालिया की कहानियों में यह दृष्टिकोण स्पष्ट है कि राजनीतिक यथार्थ का चित्रण केवल दोषारोपण या नकारात्मक आलोचना तक सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि उसमें सकारात्मक परिवर्तन, समाज में न्याय और समरसता के निर्माण की आशा और प्रयासों की झलक भी होनी चाहिए। इस प्रकार उनका कहानी साहित्य राजनीतिक चेतना के विकास का माध्यम बनता है, जो पाठकों को सामाजिक सुधार की दिशा में सोचने और सक्रिय होने के लिए प्रेरित करता है। अतः राजनीतिक संदर्भों में ममता कालिया का यथार्थबोध केवल वर्तमान व्यवस्थाओं की आलोचना तक सीमित न रह कर, सामाजिक सुधार, स्त्री-स्वतंत्रता और न्याय की दिशा में संवेदनशीलता एवं संभावनाओं का सशक्त द्योतक है, जो उनकी कहानियों को समकालीन साहित्य में विशिष्ट और प्रभावशाली स्थान प्रदान करता है।

आर्थिक संदर्भों में ममता कालिया की कहानियाँ मध्यम और निम्न वर्ग के जीवन संघर्षों, बेरोजगारी, आर्थिक विषमताओं तथा पूंजीवादी व्यवस्था के व्यापक और यथार्थपरक चित्रण को सजीव रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनकी कहानियों में आर्थिक असमानताओं के कारण उत्पन्न सामाजिक विसंगतियाँ और मानवीय पीड़ाएँ सहज और संवेदनशील तरीके से उद्घाटित होती हैं, जो समकालीन समाज की आर्थिक जटिलताओं को समझने में सहायक होती हैं। ममता कालिया न केवल आर्थिक कठिनाइयों के बाहरी पहलुओं को चित्रित करती हैं, बल्कि आर्थिक संघर्षों के अंदर छिपे मानवीय संवेदनाओं, भावनाओं और सामाजिक दबावों को भी गहराई से उजागर करती हैं।

ममता कालिया की कहानियों में बेरोजगारी, आय के असमान वितरण, और पूंजीवादी व्यवस्था के कारण उत्पन्न विषमताओं को इस तरह से प्रस्तुत किया गया है कि ये न केवल सामाजिक आर्थिक स्थिति की सूचक हैं, बल्कि सामाजिक संरचना में विद्यमान असंतुलन और उत्पीड़न की प्रक्रिया का भी प्रमाण हैं। आर्थिक संकट के दौर में लोगों के पारिवारिक संबंध, सामाजिक प्रतिष्ठा और व्यक्तिगत स्वाभिमान पर पड़ने वाले प्रभावों को ममता कालिया ने प्रभावशाली ढंग से रेखांकित किया है। विशेष रूप से आर्थिक संघर्षों में महिलाओं की भूमिका और उनकी आर्थिक स्वतंत्रता का विषय उनकी कहानियों का एक केंद्रीय पक्ष है। वे आर्थिक रूप से निर्भर और असहाय महिलाओं के संघर्षों को न केवल सामाजिक बल्कि आर्थिक संदर्भ में भी समझती हैं। उनकी कहानियाँ इस बात पर प्रकाश

डालती हैं कि आर्थिक स्वतंत्रता नारी जीवन की आज़ादी और स्वायत्तता के लिए कितनी महत्वपूर्ण है, और आर्थिक दमन किस प्रकार से महिलाओं के व्यक्तित्व, निर्णय क्षमता और सामाजिक स्थिति को प्रभावित करता है। इस प्रकार, वे महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण को सामाजिक बदलाव की कुंजी मानती हैं।

ममता कालिया के कहानी साहित्य में आर्थिक संदर्भों के माध्यम से प्रस्तुत सामाजिक विद्रूपताएँ, जैसे गरीबी, आर्थिक शोषण, श्रम बाजार में असमानता, और उपभोगवादी पूंजीवाद के हानिकारक प्रभाव, उनके यथार्थबोध को और भी व्यापक और प्रासंगिक बनाती हैं। उनके पात्र आर्थिक तंगी के बीच अपने अस्तित्व और सम्मान के लिए संघर्ष करते हुए, समकालीन सामाजिक यथार्थ की गहराई और जटिलता को दर्शाते हैं। अतः आर्थिक संदर्भों में ममता कालिया का यथार्थबोध न केवल आर्थिक समस्याओं के बाहरी स्वरूप का प्रतिबिंब है, बल्कि यह आर्थिक असमानताओं के सामाजिक, मानसिक और मानवीय आयामों की सूक्ष्म समझ और संवेदनशील अभिव्यक्ति है। उनकी कहानियाँ आर्थिक संघर्षों में महिलाओं की भूमिका और उनकी आर्थिक स्वतंत्रता की अनिवार्यता को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करते हुए सामाजिक विद्रूपताओं को उजागर करती हैं, जो समकालीन साहित्य में उनकी विशेष पहचान का आधार हैं।

द्वितीय से पंचम अध्यायों के गहन विश्लेषण से यह स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है कि ममता कालिया का कहानी साहित्य मात्र मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं आर्थिक यथार्थों के सूक्ष्म, समृद्ध एवं संवेदनशील चित्रण का सशक्त माध्यम है। उनकी कहानियों में समकालीन समाज के विभिन्न पहलुओं की गहरी समझ झलकती है, जो उनके यथार्थबोध की व्यापकता और गहराई को दर्शाती है।

ममता कालिया का लेखन समाज की उन सूक्ष्म और जटिल स्थितियों को उजागर करता है, जो अक्सर दृष्टिगोचर नहीं हो पातीं। वे न केवल व्यक्तिगत अनुभवों को प्रस्तुत करती हैं, बल्कि उन्हें व्यापक सामाजिक संरचनाओं, सांस्कृतिक मान्यताओं और राजनीतिक परिवर्तनों के संदर्भ में भी स्थापित करती हैं। इससे उनकी कहानियों में एक बहुआयामी दृष्टिकोण उत्पन्न होता है, जो पाठकों को समाज की विविधतापूर्ण

वास्तविकताओं से रूबरू कराता है। उनके साहित्य में आर्थिक पक्ष की संवेदनशीलता भी स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। वे गरीबी, वर्ग संघर्ष, और आर्थिक असमानताओं के विषयों को ऐसे सहज और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती हैं कि पाठक न केवल उन समस्याओं की गंभीरता को समझ पाते हैं, बल्कि उनमें सहानुभूति और जागरूकता भी उत्पन्न होती है।

सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भों की बात करें तो ममता कालिया के कहानी संसार में परंपरागत मान्यताओं, सामाजिक बंधनों, लिंग भेदभाव, और राजनीतिक उथल-पुथल की झलक मिलती है। वे इन मुद्दों को सरल, लेकिन प्रभावी भाषा में प्रस्तुत करती हैं, जिससे उनके पात्र और घटनाएं जीवंत हो उठती हैं। इससे उनका साहित्य सामाजिक जागरूकता के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि ममता कालिया का कहानी साहित्य न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह समाज के विभिन्न पहलुओं पर गहराई से प्रकाश डालते हुए सामाजिक जागरूकता और परिवर्तन के लिए एक प्रेरक शक्ति भी बनता है। उनकी कहानियां हमें अपने यथार्थ को नए दृष्टिकोण से देखने और समझने के लिए बाध्य करती हैं, जिससे समाज में सकारात्मक बदलाव की संभावना प्रबल होती है।

षष्ठ अध्याय में भाषा और शैली की भूमिका पर गहन विचार-विमर्श करते हुए यह स्पष्ट रूप सामने आता है कि ममता कालिया की सरल, प्रवाहपूर्ण और सहज भाषा उनकी कहानियों की सबसे महत्वपूर्ण ताकत है। उनकी भाषा न केवल पठनीयता को बढ़ाती है, बल्कि कहानी के भावों, पात्रों की मनोदशा तथा सामाजिक यथार्थ को सजीव और प्रभावशाली रूप से अभिव्यक्त करने में भी सहायक होती है। उनकी लेखनी में कहीं भी जटिलता या अस्पष्टता नहीं है, जिससे पाठक सहजता से कथा के प्रवाह में डूब जाते हैं और कहानी के भीतर छिपे संवेदनशील भावों को महसूस कर पाते हैं। प्रामाणिक संवाद उनकी कहानियों की अहम विशेषता है, जो पात्रों को वास्तविकता के करीब लाते हैं। संवादों के माध्यम से न केवल पात्रों के आंतरिक संघर्ष, इच्छाएं और भावनाएं स्पष्ट होती हैं, बल्कि वे सामाजिक परिवेश और संबंधों की जटिलताओं को भी बखूबी उजागर करते हैं। इन संवादों में नारी पात्रों की आवाज़ स्पष्ट और दृढ़ होती है, जो उनके आत्म-सम्मान, स्वतंत्रता की चाह और सामाजिक बंधनों के प्रति प्रतिरोध को उजागर करती है।

ममता कालिया का नारी विमर्श उनकी कहानियों में एक प्रबल स्वरूप लेता है। वे नारी को सिर्फ एक पारंपरिक भूमिका में सीमित नहीं रखतीं, बल्कि उसे अपनी पहचान, स्वतंत्रता और अधिकारों के लिए संघर्ष करती एक सशक्त व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत करती हैं। यह विमर्श स्त्री के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक पक्षों की जटिलताओं को सामने लाता है, जिससे उनकी कहानियों में स्त्रीत्व की विभिन्न परतें खुलकर सामने आती हैं। यह नारी विमर्श उनके यथार्थबोध की एक महत्वपूर्ण विशेषता है, जो समाज में नारी की स्थिति और उसके बदलाव की संभावनाओं पर गहरा प्रकाश डालता है। इस प्रकार षष्ठ अध्याय के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि ममता कालिया की भाषा और शैली उनके कथा साहित्य की आत्मा हैं, जो उनके सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टिकोण, नारी विमर्श और यथार्थबोध को प्रभावशाली रूप से संप्रेषित करती हैं। उनकी सरलता और प्रामाणिकता न केवल साहित्यिक सौंदर्य बढ़ाती है, बल्कि सामाजिक चेतना और नारी स्वाधीनता के आंदोलन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

अंततः यह निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि ममता कालिया का कहानी साहित्य सामाजिक यथार्थ के सूक्ष्म, समृद्ध एवं संवेदनशील चित्रण का एक सशक्त माध्यम है। उनके कथानक न केवल वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक परिवर्तनों का सजीव और यथार्थपूर्ण प्रतिबिंब प्रस्तुत करते हैं, बल्कि उनमें निहित जटिलताओं और विरोधाभासों को उजागर कर सुधार और प्रगतिशीलता की संभावनाओं को भी सामने लाते हैं। ममता कालिया की कहानियों में समाज के विभिन्न तबकों के संघर्ष, मानवीय संवेदनाएं, सामाजिक अन्याय और वर्गीय भेदभाव की विसंगतियां स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं। वे अपने पात्रों के माध्यम से उन आवाजों को प्रस्तुत करती हैं जो अक्सर समाज की मुख्यधारा से उपेक्षित रह जाती हैं। इस प्रकार उनका साहित्य सामाजिक बदलाव के लिए एक चेतन और प्रभावी मंच का कार्य करता है, जो न केवल समस्याओं को सामने लाता है, बल्कि उनके समाधान और बेहतर भविष्य की दिशा भी इंगित करता है।

हिन्दी कहानी साहित्य के क्षेत्र में ममता कालिया का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण और विशिष्ट है, क्योंकि उन्होंने यथार्थ के प्रति दृष्टिकोण को अधिक समावेशी, संवेदनशील एवं जागरूक बनाया है। उनके कथा संसार में विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आयामों का समावेश है, जिससे हिंदी कथा साहित्य की गहराई और विस्तार

दोनों में वृद्धि हुई है। उनके लेखन ने सामाजिक चेतना को जागृत करने के साथ-साथ मानवीय मूल्यों जैसे समानता, न्याय, स्वतंत्रता और सहिष्णुता को भी मजबूत किया है। इस तरह ममता कालिया का कहानी साहित्य केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रह जाता, बल्कि वह समाज में सकारात्मक परिवर्तन और मानवीय मूल्य जागरण के लिए एक प्रेरक शक्ति बन जाता है। उनके सशक्त और संवेदनशील लेखन ने हिंदी साहित्य को नए युग की चुनौतियों और संभावनाओं के साथ जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अतः उनका साहित्य न केवल वर्तमान सामाजिक यथार्थ का प्रतिबिम्ब है, बल्कि भविष्य के समाज के लिए मार्गदर्शक और प्रेरणास्रोत भी है।

इस शोध के माध्यम से ममता कालिया के कहानी साहित्य में व्याप्त यथार्थबोध की विविध और गूढ़ परतों को व्यापक रूप से समझने और विश्लेषणात्मक रूप से मूल्यांकन करने का प्रयास सफलतापूर्वक पूरा हुआ है। इस प्रक्रिया में यह स्पष्ट हुआ कि ममता कालिया की कहानियां केवल काल्पनिक कथानक नहीं हैं, बल्कि वे समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक यथार्थों के सजीव प्रतिबिम्ब हैं, जिनमें मानवीय संवेदनाएं, संघर्ष, आकांक्षाएं और परिवर्तन की संभावनाएं गहराई से समाहित हैं। इस शोध ने उनकी कहानियों के साहित्यिक महत्त्व को न केवल सशक्त किया है, बल्कि सामाजिक संदर्भों में उनकी प्रासंगिकता और उपयोगिता को भी व्यापक रूप से स्थापित किया है। ममता कालिया का कहानी साहित्य सामाजिक यथार्थ के सूक्ष्म, समृद्ध और संवेदनशील चित्रण के माध्यम से पाठकों को एक व्यापक सामाजिक चेतना और संवेदनशील दृष्टिकोण प्रदान करता है। उनकी कहानियां हमें न केवल समाज के विभिन्न आयामों को समझने का अवसर देती हैं, बल्कि हमें मानवीय मूल्यों, समानता, स्वतंत्रता और न्याय जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर भी गंभीर चिंतन के लिए प्रेरित करती हैं। अतः ममता कालिया का कहानी साहित्य समकालीन हिंदी साहित्य में यथार्थपरकता एवं मानवीय संवेदनाओं का एक विशिष्ट एवं प्रेरणादायक स्वरूप प्रस्तुत करता है। यह साहित्य न केवल साहित्यिक अध्ययन के लिए एक अमूल्य संसाधन है, बल्कि सामाजिक चिंतन और जागरूकता के लिए भी अनिवार्य और सार्थक आधार सिद्ध होता है। उनके कथा साहित्य की यह बहुआयामीता इसे न केवल एक कलात्मक अभिव्यक्ति बनाती है, बल्कि समाज के उत्थान और प्रगतिशील बदलाव के लिए भी एक शक्तिशाली माध्यम के रूप में स्थापित करती है।

इस प्रकार, इस शोध के परिणाम स्वरूप ममता कालिया के कहानी साहित्य की व्यापकता, गहराई और सामाजिक-सांस्कृतिक प्रासंगिकता का समग्र चित्र प्रस्तुत होता है, जो समकालीन साहित्यिक विमर्श में उनके योगदान को और अधिक सम्मानजनक एवं सार्थक बनाता है।

शोध-उपलब्धियां :

- 1 यथार्थवाद की अवधारणा की स्पष्ट पहचान और परिभाषा की गई।
- 2 यथार्थवाद के विभिन्न पक्षों का सम्यक बोध प्राप्त हुआ।
- 3 ममता कालिया की कहानियों में प्रयुक्त यथार्थवाद के स्वरूप और तकनीकों को समझा गया।
- 4 ममता कालिया की कहानियों में सामाजिक, आर्थिक और मानवीय यथार्थ की प्रस्तुति का विश्लेषण किया गया।
- 5 ममता कालिया की कहानियों में यथार्थवाद का साहित्यिक मूल्यांकन किया गया।
- 6 ममता कालिया की कहानियों में विकसित यथार्थवाद की समकालीन प्रासंगिकता स्थापित की गई।
- 7 हिंदी साहित्य में यथार्थवाद के आधुनिक प्रवाह में ममता कालिया के योगदान को रेखांकित किया गया।

शोध की नयी दिशाएं:

प्रस्तुत शोध विषय के अनुशीलन के दौरान इसके विविध आयाम मेरे समक्ष अभिव्यक्त हुए, जो स्वतंत्र रूप से अनुसंधान के विषय बन सकते हैं। यद्यपि, प्रस्तुत शोधप्रबंध की सीमाओं के कारण उन सभी आयामों का विस्तृत विवेचन इस अध्ययन का भाग नहीं है। अतः, आगामी शोधकर्ता भविष्य में निम्नलिखित विषयों पर स्वतंत्र रूप से अनुसंधान कर सकते हैं।

1. ममता कालिया की कहानियों में यथार्थवाद और अन्य साहित्यिक धाराओं (जैसे नाट्य यथार्थवाद, सामाजिक यथार्थवाद) के तुलनात्मक अध्ययन की संभावनाएं।
2. ममता कालिया के यथार्थवाद की तुलना समकालीन हिंदी साहित्य की अन्य लेखिकाओं/लेखकों के यथार्थवाद से करना।
3. ममता कालिया की कहानियों में यथार्थवाद और नारी विमर्श के संबंध की खोज।
4. ममता कालिया की कहानियों में यथार्थवाद और लोकजीवन के पहलुओं का गहराई से अध्ययन।
5. यथार्थवाद की अवधारणा को और विस्तार देते हुए ममता कालिया की रचनाओं में भाषाई और शैलीगत यथार्थवाद का विश्लेषण।
6. ममता कालिया की कहानियों में यथार्थवाद के माध्यम से सामाजिक सुधार या सामाजिक चेतना के पहलुओं का अध्ययन।
7. उनकी कहानियों में यथार्थवाद की प्रासंगिकता को विभिन्न सांस्कृतिक, सामाजिक और ऐतिहासिक संदर्भों में परखना।
8. यथार्थवाद के प्रयोग की तुलना अन्य भाषाओं (जैसे अंग्रेजी, क्षेत्रीय भाषाओं) की समकालीन कहानियों से करना।

संदर्भ सूची-

आधार ग्रंथ

अखिलेश. *तद्भव*. अगस्त, 2004.

कालिया, ममता. *उसका यौवन*. लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2011.

कालिया, ममता. *एक अदद औरत*. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001

कालिया, ममता. *काके दी हट्टी*. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017.

कालिया, ममता. *कितने शहरों में कितनी बार*. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010.

कालिया, ममता. *खुशकिस्मत*. लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2013.

कालिया, ममता. *छुटकारा*. लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010.

कालिया, ममता. *जाँच अभी जारी है*. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997.

कालिया, ममता. *जीते जी इलाहाबाद*. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2021.

कालिया, ममता. *तीन लघु उपन्यास*. किताबघर प्रकाशन, शाहदरा दिल्ली 2023.

कालिया, ममता. *थियेटर रोड के कौवे*. पेंगुइन बुक्स, दिल्ली. 2006.

कालिया, ममता. *थोड़ा-सा प्रगतिशील*. लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद. 2010.

कालिया, ममता. *दुखम-सुखम*. लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली 2011.

कालिया, ममता. *निर्मोही*. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013.

कालिया, ममता. *पच्चीस साल की लड़की*. रेमाधव पेपरबैक्स प्रकाशन, दिल्ली, 2023.

कालिया, ममता. *प्रतिदिन*. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2000.

कालिया, ममता. *प्रतिनिधि कहानियाँ*. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2023.

कालिया, ममता. *बोलने वाली औरत*. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001.

- कालिया, ममता. *मुखौटा*. वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2018.
- कालिया, ममता. *मेरी प्रिय कहानियाँ*. राजपाल एंड सन्ज़, दिल्ली, 2017.
- कालिया, ममता. *रवि कथा*. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2020.
- कालिया, ममता. *संगत (हिंदवी)*. E.P. 8, 2022.
- कालिया, ममता. *सीट नंबर छः*. राजकमल प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014.
- कालिया, रवींद्र. *ग़ालिब घुटी शराब*. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000.
- कालिया, रवींद्र. *सृजन के सहायत्री*. पॉकेट बुक्स, दिल्ली, 1980.
- सागी, पीटर, *स्त्री एवं सामाजिक प्रसंग: ममता कालिया का कथा-साहित्य*. वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2018.
- सिंह, नामवर. *कहानी: नयी कहानी*. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1966.
- सुबीर, पंकज. *जन सुलभ*. 10 जनवरी, 2024.
- मानधाने, डॉ. धनराज. *हिंदी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास*. ग्रंथम, कानपुर, 1971.

सहायक ग्रंथ

- द्विवेदी, डॉ. राम अवध. *साहित्य सिद्धांत*. बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, 1962.
- दिनकर, श्री रामधारी सिंह. *चार अध्याय*. साहित्य अकादमी, 1956.
- पटेल, नित्यानंद. *प्रेमचंद के उपन्यास-साहित्य में सांस्कृतिक चेतना*. 1980.
- पांडे, कृपाशंकर. *यथार्थ के विविध आयाम*. 1996.
- प्रेमचंद. *कुछ विचार*. डायमंड पॉकेट बुक्स, दिल्ली, 2011.
- प्रेमचंद, *साहित्य का उद्देश्य*. निबंध, लखनऊ, 1936.
- बद्रीनाथ, साक्षात्कार. *लमही प्रतिका*. जुलाई से सितंबर. 2007

- मिश्र, शिवकुमार. *यथार्थवाद*. वाणी प्रकाशन. द्वितीय संस्करण, नई दिल्ली, 2011.
- वाजपेई, नंददुलारे. *आधुनिक साहित्य*. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003.
- सिंह, त्रिभुवन. *हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद*. वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2022.
- सिंह, डॉ. अजब. *यथार्थवाद पूर्णमूल्यांकन*. विश्वविद्यालय प्रकाशन, वारणासी, 1998.
- सैनी, राजकुमार. *यथार्थवाद और सौंदर्यशास्त्र*. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009.